राजभाषा भारती विशेषांक
ISSN NO. 0970-9398

हिंदी दिवस-2026
एवं
छठा अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन
नवी मुंबई

वन्दे मातरम्

स्मारिका

राष्ट्रीय गीत के 150 वर्ष का स्मरणोत्सव

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग

हमारे प्रेरणा स्रोत

"हमारा यह निरंतर प्रयास रहना चाहिए कि
हिंदी भाषा समृद्ध कैसे बने।
कार्यशालाओं के द्वारा भाषाशास्त्री विभिन्न
भारतीय भाषाओं के शब्द हिंदी में जोड़कर
इसे समृद्ध बनाएं।"

—नरेन्द्र मोदी
प्रधान मंत्री

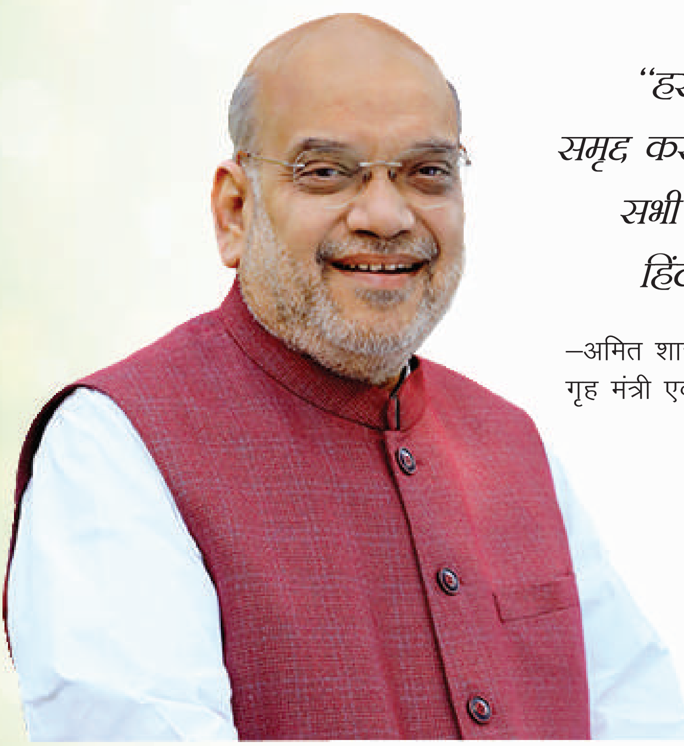

"हर भाषा को, हर बोली को
समृद्द करना हमारा लक्ष्य होना चाहिए।
सभी भाषाओं की समृद्धि से ही
हिंदी समृद्ध हो सकती है।"

—अमित शाह
गृह मंत्री एवं सहकारिता मंत्री

स्मारिका

हिंदी दिवस–2026 एवं छठा अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन
14–15 सितंबर 2026, नवी मुंबई (महाराष्ट्र)

संरक्षक
अंशुली आर्या
सचिव, राजभाषा विभाग

प्रधान संपादक
डॉ. निधि पाण्डेय
संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग

संपादन
वीरेन्द्र कुमार
सहायक निदेशक (पत्रिका)

विशेष सहयोग
भावना सक्सैना
अर्पिता भट्टाचार्जी
सुपर्णा घोष भड़

टंकण एवं वितरण सहयोग
विनोद कुमार, अनिल कनौजिया
प्रीतम सिंह, प्रत्युष यादव

@सर्वाधिकार राजभाषा विभाग द्वारा सुरक्षित।

राजभाषा भारती में प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु राजभाषा विभाग की पूर्व स्वीकृति आवश्यक होगी। प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के निजी विचार हैं; उनसे भारत सरकार अथवा राजभाषा विभाग का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र व्यवहार का पता:
सहायक निदेशक (पत्रिका)
राजभाषा विभाग, एनडीसीसी–II भवन, चतुर्थ तल, बी विंग, जय सिंह रोड, नई दिल्ली–110001
ईमेल–patrika-ol@nic.in
वेबसाइट–rajbhasha.nic.in

निःशुल्क वितरण के लिए

राष्ट्रपति का संदेश
उपराष्ट्रपति का संदेश
प्रधान मंत्री का संदेश
गृह मंत्री का संदेश
गृह राज्य मंत्री (एन) का संदेश
गृह राज्य मंत्री (बी एस) का संदेश
सचिव, राजभाषा विभाग का संदेश
संयुक्त सचिव (राजभाषा) का संदेश

क्र.सं.	शीर्षक	रचनाकार	पृष्ठ सं.
1.	राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' के 150 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में आयोजित एक वर्ष लंबे स्मरणोत्सव के उद्घाटन अवसर पर माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के संबोधन का मूल पाठ		11
2.	राष्ट्र जागरण का प्रथम मंत्र वन्दे मातरम्– माननीय केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह		18
3.	150वीं गौरवशाली वर्षगांठ के पावन अवसर पर राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' को विनम्र श्रद्धांजलि	जॉयदीप चट्टोपाध्याय	21
4.	भारतीय भाषाओं में 'वन्दे मातरम्' की अभिव्यक्ति	मिलिंद प्रभाकर सबनीस	31
5.	वन्दे मातरम् गीत की रचना : परिस्थितियाँ और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि	डॉ. शुभम सिंह	41
6..	वन्दे मातरम् का पाठ और भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना : एक शास्त्रीय विश्लेषण	सविता किरण	51
7.	बंकिमचंद्र चट्टोपाध्यायः व्यक्तित्व, कृतित्व और राष्ट्रभावना	डॉ. दुर्गाशरण मिश्र	59
8.	वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय अस्मिता, स्वाभिमान एवं आत्मगौरव का प्रतीक	डॉ. वेदप्रकाश प्रभाकर बोरकर	70
9.	'वन्दे मातरम्' गीत का ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं संवैधानिक महत्त्व	डॉ. शाहीन अख़लाक	79
10.	भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' गीत की प्रेरक भूमिका (कालक्रमानुसार)	आशीष पंवार	85
11.	वन्दे मातरम् : राष्ट्र प्रेम की अनश्वर धारा	मोहित कुमार	91
12.	भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' गीत की ऐतिहासिक एवं साहित्यिक पृष्ठभूमि	वैद्या हेतल प्रविणभाई बारैया	95

'वन्दे मातरम्' विषय से संबंधित चित्र उपलब्ध कराने के लिए श्री अखिलेश झा, मुख्य लेखा नियंत्रक, ग्रामीण विकास मंत्रालय के प्रति सादर आभार

रचनानुक्रम

क्र.सं.	शीर्षक	रचनाकार	पृष्ठ सं.
13.	वन्दे मातरम् : गुलामी के विरूद्ध वैचारिक जागृति का उद्घोष	शुभम दीक्षित	101
14.	वन्दे मातरम् : वैचारिक जागरण से राष्ट्रीय चेतना तक	नगेन्द्र कुमार सिंह	110
15.	वन्दे मातरम् : स्वाधीनता संग्राम का मूल मंत्र	उदय प्रताप सिंह	116
16.	वन्दे मातरम् : राष्ट्र जागरण से स्वतंत्र भारत की अमर गाथा	रमेश चन्द्र	120
17.	वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय चेतना का शाश्वत मंत्र	डॉ. निखिल कुमार गुप्ता	125
18.	काल और सीमाओं से परे : वन्दे मातरम् की यात्रा	श्रद्धा शर्मा	130
19.	वन्दे मातरम् : इतिहास से वर्तमान तक अनवरत यात्रा	विपिन कुमार	137
20.	वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय पुनर्जागरण से 'विकसित भारत @2047' की ओर	डॉ. दीपक कुमार	142
21.	आधुनिक भारत में वन्दे मातरम् : समकालीन संदर्भ	रमेश कुमार पाण्डेय	148
22.	युवा पीढ़ी और वन्दे मातरम् : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में चुनौतियाँ एवं संभावनाएं	डॉ. काजल पाण्डे	153
23.	वन्दे मातरम् : युवा पीढ़ी में राष्ट्रीय भाव का संचार	डॉ. शैलजा	162
24.	वन्दे मातरम् : युवा शक्ति और राष्ट्र निर्माण का संकल्प	शशि कांत पांडेय	166
25.	वन्दे मातरम् : देश प्रेम के शाश्वत स्वर से गूंजती युवा चेतना	बिक्रम सिंह	171
26.	वन्दे मातरम् : अतीत की विरासत, युवा भारत का स्वाभिमान	अमित कुमार	176
27.	भारतीय कला और संगीत का जीवंत वाहक : वन्दे मातरम्	रणधीर कुमार	181
28.	भारतीय कला, संगीत और रंगमंच में 'वन्दे मातरम्'	गौरव मिश्रा	187
29.	वन्दे मातरम् : भारतीय कला, संगीत और रंगमंच का अमर स्वर	रिंकल शर्मा	193
30.	वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय एकता, भाषा एवं संस्कृति का सेतु	विभा शर्मा	199
31.	भारतीय भाषाओं में वन्दे मातरम् की अभिव्यक्ति	हरे राम मिश्र	206
32.	वन्दे मातरम् और राष्ट्रीय चेतना का परिप्रेक्ष्य	डॉ. नवलकिशोर भाभड़ा	211
33.	वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना	निहारिका शर्मा	215
34.	राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में 'वन्दे मातरम्'	सत्येन्द्र कुमार शर्मा	222
35.	वन्दे मातरम् : हिंदी साहित्य और युगबोध	डॉ. आल अहमद	230
36.	वन्दे मातरम् : हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय धारा और युगीन चेतना का अंतर्संबंध	प्रो. गौरी त्रिपाठी	239

सत्यमेव जयते

राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र
संदेश

यह हर्ष का विषय है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा हिंदी दिवस, 2026 एवं छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन नवी मुंबई, महाराष्ट्र में किया जा रहा है। इस अवसर पर राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' पर आधारित विशेष स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय में 15 भारतीय भाषाओं में बहुभाषी अनुवाद की सुविधा प्रदान करने के लिए भारतीय भाषा अनुभाग का गठन किया गया है। यह एक स्वागत–योग्य पहल है। इससे हिंदी की स्वीकार्यता बढ़ेगी और हिंदी के साथ–साथ अन्य भारतीय भाषाओं का भी विकास होगा।

इस वर्ष का हिंदी दिवस समारोह विशेष महत्व रखता है, क्योंकि इसका आयोजन ऐसे समय में हो रहा है, जब देश 'वन्दे मातरम्' गीत की रचना के 150 वर्ष पूर्ण होने पर गर्व से स्मरणोत्सव मना रहा है। इस गौरवपूर्ण अवसर पर राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' को समर्पित स्मारिका का प्रकाशन अत्यन्त प्रासंगिक एवं समयोचित है। श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह अमर गीत मातृभूमि के प्रति असीम श्रद्धा, अखण्ड समर्पण, सांस्कृतिक जागरण और राष्ट्रीय एकता का शाश्वत प्रेरणादायी मंत्र है।

भारत के स्वाधीनता संग्राम के प्रत्येक निर्णायक चरण में 'वन्दे मातरम्' ने जन–जन में स्वतंत्रता की चेतना का संचार किया, असंख्य स्वतंत्रता सेनानियों एवं देशभक्तों को अदम्य साहस और त्याग की प्रेरणा दी तथा राष्ट्रीय एकता, आत्मगौरव और स्वाभिमान की भावना को सुदृढ़ किया। 'वन्दे मातरम्' भारत की आत्मा का उद्‌घोष है, राष्ट्रीय स्वाभिमान का अमर मंत्र है और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का अमिट प्रतीक है। आज भी राष्ट्रीय गीत के रूप में यह भारत की एकात्म सांस्कृतिक चेतना का सजीव आधार बनकर प्रत्येक नागरिक को राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखने की प्रेरणा देता है।

मुझे पूर्ण विश्वास है हिंदी दिवस के शुभ अवसर पर प्रकाशित यह विशेष स्मारिका देशवासियों में राष्ट्रभक्ति, सांस्कृतिक स्वाभिमान एवं राष्ट्रीय एकात्मता की भावना को और अधिक सुदृढ़ करते हुए विकसित एवं आत्मनिर्भर भारत के निर्माण के राष्ट्रीय संकल्प को नई ऊर्जा प्रदान करेगी।

द्रौपदी

द्रौपदी मुर्मु

नई दिल्ली

31 अगस्त 2026

सत्यमेव जयते

भारत के उपराष्ट्रपति

VICE - PRESIDENT OF INDIA

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा नवी मुंबई, महाराष्ट्र में 14–15 सितंबर, 2026 को आयोजित हिंदी दिवस एवं छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' पर केंद्रित एक विशेष स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

'वन्दे मातरम्' की 150 वर्षों की गौरवपूर्ण यात्रा हम सभी भारतीयों के लिए अपनी समृद्ध राष्ट्रीय विरासत के स्मरण, उसके प्रेरणादायी मूल्यों को आत्मसात करने तथा 'राष्ट्र प्रथम' के संकल्प को और अधिक सुदृढ़ करने का एक महत्वपूर्ण अवसर है। 'वन्दे मातरम्' केवल एक काव्य–रचना नहीं, अपितु भारत की राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक अस्मिता, गौरव और आत्मसम्मान का ओजस्वी स्वर तथा अखंड राष्ट्रीय एकता का कालजयी उद्घोष है।

इतिहास साक्षी है कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान 'वन्दे मातरम्' गीत ने जन–जन में स्वाधीनता की उत्कट आकांक्षा, अदम्य आत्मबल, त्याग और मातृभूमि के प्रति अटूट समर्पण की भावना को जागृत किया तथा राष्ट्रीय चेतना को सशक्त स्वर प्रदान किया। इस पावन अवसर पर हम उन असंख्य स्वतंत्रता सेनानियों को कृतज्ञतापूर्वक नमन करते हैं, जिन्होंने देश की स्वाधीनता और राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया।

हिंदी दिवस के पावन अवसर पर राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा 'वन्दे मातरम्' विषय पर इस विशेष स्मारिका का प्रकाशन अत्यंत सराहनीय पहल है। मुझे विश्वास है कि यह स्मारिका राष्ट्रीय गीत की ऐतिहासिक यात्रा, सांस्कृतिक गरिमा तथा प्रेरणादायी विरासत को भावी पीढ़ियों तक प्रभावी रूप से पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।

हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं !

मातृभूमि की सेवा में सदैव तत्पर!

(सी. पी. राधाकृष्णन)

नई दिल्ली

21.08.2026

सत्यमेव जयते

प्रधानमंत्री

PRIME MINISTER

संदेश

हिंदी दिवस, 2026 तथा छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर देशवासियों को हार्दिक शुभकामनाएँ। इस समय जब राष्ट्र 'वंदे मातरम्' के 150वें वर्ष का स्मरणोत्सव मना रहा है, तब राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा 'वंदे मातरम्' को समर्पित स्मारिका का प्रकाशन विशेष हर्ष एवं गौरव का विषय है।

'वंदे मातरम्' भारत की उस शाश्वत चेतना का स्वर है, जिसमें मातृभूमि के प्रति श्रद्धा और समर्पण का भाव समाहित है। 'वंदे मातरम्' के स्वर में भारत की आत्मा की अनुभूति होती है। इसका उद्घोष हमें उन असंख्य वीरों के त्याग और बलिदान का स्मरण कराता है, जिन्होंने मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया।

स्वतंत्रता आंदोलन के विभिन्न चरणों में 'वंदे मातरम्' जनजागरण और राष्ट्रीय एकता का सशक्त माध्यम बना। स्वदेशी आंदोलन से लेकर स्वतंत्रता की निर्णायक लड़ाई तक, इस उद्घोष ने देशवासियों में आत्मविश्वास का संचार किया। असंख्य स्वतंत्रता सेनानियों ने मातृभूमि के लिए संघर्ष करते हुए 'वंदे मातरम्' को अपने संकल्प और साहस का उद्घोष बनाया। यह केवल एक गीत नहीं रहा, बल्कि भारत की एकजुटता का प्रतीक बन गया।

आज जब राष्ट्र 'विकसित भारत' के संकल्प के साथ आगे बढ़ रहा है, तब 'वंदे मातरम्' का भाव और भी प्रासंगिक हो जाता है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान इस मंत्र ने देशवासियों को पराधीनता के विरुद्ध एकजुट किया, आज यही भावना हमें आत्मनिर्भर, सशक्त, समावेशी और विकसित भारत के निर्माण के लिए प्रेरित कर रही है।

आइए, 'वंदे मातरम्' के अमर भाव को अपने जीवन का संकल्प बनाएं और मिलकर ऐसे भारत का निर्माण करें, जिस पर आने वाली पीढ़ियां गर्व कर सकें। यही 'वंदे मातरम्' के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

मुझे विश्वास है कि यह सम्मेलन राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार को नई ऊर्जा देगा और 'वंदे मातरम्' की अमर प्रेरणा से प्रेरित होकर हम सभी विकसित भारत के निर्माण के अपने राष्ट्रीय संकल्प को और सशक्त करेंगे।

हिंदी दिवस, 2026 तथा छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर सभी प्रतिभागियों, आयोजकों एवं इससे जुड़े सभी साथियों को पुनः हार्दिक शुभकामनाएँ।

''वंदे मातरम्!''

(नरेन्द्र मोदी)

नई दिल्ली
भाद्रपद 14, शक संवत् 1948
05 सितम्बर, 2026

अमित शाह

गृह मंत्री एवं सहकारिता मंत्री
भारत सरकार

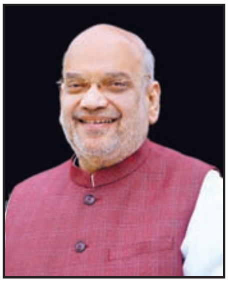

सत्यमेव जयते

दिनांक : 22 अगस्त 2026

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि **राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय** द्वारा **14–15 सितंबर, 2026** को **नवी मुंबई, महाराष्ट्र में हिंदी दिवस** एवं **छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन** का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर भारत की राष्ट्रीय एकात्मता के अमर प्रतीक राष्ट्रीय गीत **'वंदे मातरम्'** पर केंद्रित विशेष स्मारिका का प्रकाशन एक सराहनीय और समयोचित पहल है।

'वंदे मातरम्' भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की आत्मा, राष्ट्रचेतना का अमर स्वर और मातृभूमि के प्रति करोड़ों देशवासियों की अटूट श्रद्धा का सशक्त प्रतीक रहा है। इस गीत ने पराधीनता के कठिन कालखंड में जन–जन के भीतर स्वाधीनता का संकल्प, राष्ट्रभक्ति की भावना और त्याग का साहस जगाया। आज भी 'वंदे मातरम्' का प्रत्येक शब्द हमें राष्ट्र के प्रति समर्पण, सांस्कृतिक स्वाभिमान और एकता के पथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है।

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व में अमृतकाल का वर्तमान दौर **'विकास भी, विरासत भी'** के संतुलित दृष्टिकोण के साथ आगे बढ़ रहा है। 'आत्मनिर्भर भारत' और 'विकसित भारत@2047' का संकल्प केवल आर्थिक प्रगति का लक्ष्य नहीं, बल्कि भारत की सांस्कृतिक चेतना, स्वभाषा, स्वाभिमान और सभ्यतागत आत्मविश्वास को पुनः प्रतिष्ठित करने की व्यापक राष्ट्रीय यात्रा है। इस यात्रा में **हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं** की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। हिंदी ने स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर आज तक देश के विविध क्षेत्रों, समुदायों और जनसमूहों को जोड़ने वाली सशक्त संपर्क–भाषा के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 14 सितंबर, 1949 को संविधान सभा द्वारा हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया जाना स्वतंत्र भारत की लोकतांत्रिक, सांस्कृतिक और प्रशासनिक चेतना का ऐतिहासिक क्षण था। यह निर्णय शासन को जनसामान्य के अधिक निकट लाने और भारतीय भाषाओं के प्रति राष्ट्रीय सम्मान को अभिव्यक्त करने का प्रतीक था।

राजभाषा विभाग हिंदी के प्रभावी, व्यापक और तकनीक–सक्षम कार्यान्वयन के साथ–साथ भारतीय भाषाओं के परस्पर समन्वय और संवर्धन की दिशा में निरंतर कार्य कर रहा है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित 'भारती'–बहुभाषी अनुवाद, 'भारतीय भाषा अनुभाग' तथा विशाल डिजिटल शब्द–संपदा से समृद्ध 'हिंदी शब्द सिंधु' जैसी पहलें भाषा–प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में दूरदर्शी कदम हैं। ये प्रयास न केवल सरकारी कामकाज में हिंदी और भारतीय भाषाओं के प्रयोग को सरल बना रहे हैं, बल्कि भाषाई समन्वय, ज्ञान–विनिमय और जन–संवाद को भी नई शक्ति प्रदान कर रहे हैं।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि 'वंदे मातरम्' पर केंद्रित यह स्मारिका भारत की सांस्कृतिक एकता, राष्ट्रीय चेतना और भाषाई समृद्धि का प्रेरक दस्तावेज सिद्ध होगी। यह विशेषकर युवा पीढ़ी को राष्ट्रप्रेम, कर्तव्यबोध और मातृभूमि के प्रति समर्पण की भावना से जोड़ते हुए उन्हें विकसित भारत के निर्माण में सक्रिय और रचनात्मक योगदान के लिए प्रेरित करेगी। इस महत्वपूर्ण आयोजन तथा स्मारिका के सफल प्रकाशन के लिए मैं राजभाषा विभाग को हार्दिक बधाई देता हूँ और कार्यक्रम की पूर्ण सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

हिंदी दिवस की शुभकामनाओं सहित,

आपका

(अमित शाह)

नित्यानन्द राय
NITYANAND RAI

गृह राज्य मंत्री
भारत सरकार
कर्तव्य भवन–3, नई दिल्ली – 110001
MINISTER OF STATE FOR HOME AFFAIRS
GOVERNMENT OF INDIA
KARTAVYA BHAVAN-3, NEW DELHI - 110001

संदेश

यह बड़े हर्ष का विषय है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा हिंदी दिवस, 2026 एवं छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का भव्य आयोजन 14–15 सितंबर, 2026 को नवी मुंबई, महाराष्ट्र में किया जा रहा है। इस उपलक्ष्य में राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' की अमर विरासत पर आधारित स्मारिका का प्रकाशन विभाग का सराहनीय प्रयास है।

युगद्रष्टा साहित्यकार ऋषि बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह अमर गीत भारतीय जनमानस में राष्ट्रीय अस्मिता एवं सांस्कृतिक पुनर्जागरण का सशक्त माध्यम बना। स्वाधीनता संग्राम का महामंत्र राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' आज भी प्रत्येक देशवासी के हृदय में राष्ट्र–प्रथम की भावना को निरंतर प्रदीप्त करता है।

माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' के प्रेरणादायी नेतृत्व में केंद्र सरकार सभी भारतीय भाषाओं के संवर्धन, संरक्षण और विकास के लिए पूरी तरह दृढ़ संकल्पित है।

माननीय केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी के कुशल एवं ओजस्वी मार्गदर्शन में राजभाषा विभाग भारत संघ की राजभाषा नीति के प्रभावी कार्यान्वयन सहित भाषाई सौहार्द को अक्षुण्ण रखने के लिए प्रतिबद्ध है एवं सूचना प्रौद्योगिकी का अत्यंत कुशलता से उपयोग कर रहा है। इसी कड़ी में, भारतीय भाषाओं के समग्र संवर्धन हेतु एक इकाई के रूप में 'भारतीय भाषा अनुभाग' की स्थापना, देश की भाषाई विविधता को सहेजते हुए राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने की दिशा में सार्थक पहल है।

हिंदी दिवस, 2026 एवं छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के सफल आयोजन की बधाई देते हुए मैं राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' पर आधारित इस विशेष स्मारिका के सफल प्रकाशन की मंगलकामना करता हूँ।

हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं!

(नित्यानन्द राय)

नई दिल्ली
22 अगस्त, 2026

बंडी संजय कुमार
BANDI SANJAY KUMAR

गृह राज्य मंत्री
भारत सरकार
MINISTRY OF STATE FOR
HOME AFFAIRS
GOVERNMENT OF INDIA

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा 14–15 सितंबर, 2026 को नवी मुंबई, महाराष्ट्र में आयोजित हिंदी दिवस, 2026 एवं छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' पर केंद्रित स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

'वन्दे मातरम्' मात्र एक गीत नहीं, अपितु भारत की आत्मा का प्रखर उद्गार है। इसकी ओजस्वी ध्वनि ने असंख्य स्वतंत्रता सेनानियों में अदम्य साहस, राष्ट्रप्रेम और मातृभूमि के लिए सर्वस्व अर्पित करने की अमर प्रेरणा जगाई। यह कालजयी गीत भारत की स्वतंत्रता की आकांक्षा का सशक्त स्वर बना और इसने जन–जन में राष्ट्रीय एकता एवं आत्मगौरव की चेतना को जागृत किया। आज भी वन्दे मातरम् हमारे राष्ट्रीय जीवन में एकता, अखण्डता और राष्ट्रधर्म की भावना को सुदृढ़ करने वाला एक शाश्वत प्रेरणा–स्रोत बना हुआ है।

भारत की सभी भाषाएँ समृद्ध हैं और प्रत्येक भाषा का अपना एक गौरवशाली इतिहास है। भारत की विभिन्न भाषाओं एवं बोलियों के मध्य हिंदी सदैव एक सेतु के रूप में कार्य करती आ रही है। माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी के ओजस्वी एवं प्रेरक नेतृत्व में राजभाषा विभाग द्वारा हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के संवर्धन और विकास के लिए निरंतर सराहनीय एवं व्यापक प्रयास किए जा रहे हैं।

हिंदी दिवस के पावन अवसर पर प्रकाशित की जा रही 'वन्दे मातरम्' को समर्पित विशेष स्मारिका के सफल प्रकाशन के लिए मैं हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस स्मारिका में प्रकाशित उत्कृष्ट लेखों से सभी पाठक वैचारिक रूप से समृद्ध और लाभान्वित होंगे।

हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाओं सहित!

(बंडी संजय कुमार)

अंशुली आर्या, आई.ए.एस.
सचिव
ANSHULI ARYA, I.A.S.
Secretary

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF HOME AFFAIRS
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE

संदेश

यह अत्यंत हर्ष और गौरव का विषय है कि हिंदी दिवस, 2026 एवं छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन नवी मुंबई, महाराष्ट्र में किया जा रहा है। यह अवसर इसलिए भी विशेष और ऐतिहासिक है कि इसी वर्ष राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' की रचना के 150 वर्ष पूर्ण होने का स्मरणोत्सव मनाया जा रहा है। भारत की विविधता को एकता के सूत्र में पिरोने में हिंदी और 'वन्दे मातरम्'–दोनों की अपनी विशिष्ट और महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

हिंदी ने अपनी सहजता और सर्वग्राह्यता के माध्यम से देश के विभिन्न भू–भागों और भाषाई समुदायों के बीच संवाद का सेतु बनकर भारत को जोड़ा, तो 'वन्दे मातरम्' ने मातृभूमि के प्रति प्रेम, स्वाभिमान और राष्ट्रभक्ति की एक साझा भावना जगाकर जन–जन को एक सूत्र में बाँधा। इसी साझा राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक एकता की गौरवशाली परंपरा को स्मरण करते हुए राजभाषा विभाग द्वारा इस अवसर पर एक विशेष स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की कालजयी लेखनी से प्रसूत 'वन्दे मातरम्' भारत की राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक अस्मिता और मातृभूमि के प्रति अटूट समर्पण का अमर उद्घोष है। स्वाधीनता आंदोलन के दौरान इसकी ओजस्वी गूँज ने जन–जन में राष्ट्रभक्ति, त्याग, साहस और बलिदान की भावना का संचार किया तथा देशवासियों को राष्ट्रीय एकता के सूत्र में आबद्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

आज जब भारत माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के नेतृत्व में 'विकसित भारत@2047' के राष्ट्रीय संकल्प की ओर दृढ़तापूर्वक अग्रसर है, तब 'वन्दे मातरम्' की शाश्वत राष्ट्रभावना, हमारी युवा पीढ़ी को राष्ट्र–प्रथम के दायित्व का बोध कराते हुए निरंतर प्रेरणा और नव–ऊर्जा प्रदान कर रही है।

माननीय केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी तथा माननीय केंद्रीय गृह राज्य मंत्री श्री नित्यानन्द राय जी के दूरदर्शी एवं प्रेरणादायी मार्गदर्शन में राजभाषा विभाग भारत संघ की राजभाषा नीति के प्रभावी क्रियान्वयन के साथ–साथ हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के संवर्धन, संरक्षण एवं तकनीकी विकास के लिए निरंतर समर्पित भाव से कार्य कर रहा है। भारतीय भाषाओं का व्यापक प्रचार–प्रसार एवं उनके अधिकाधिक प्रयोग को प्रोत्साहन देना, हमारी भाषाई विविधता को समृद्ध करने के साथ–साथ राष्ट्रीय एकता, अखंडता और समरसता के भाव को भी सशक्त करता है।

मुझे पूरा विश्वास है कि हिंदी दिवस, 2026 के अवसर पर प्रकाशित यह विशेष स्मारिका 'वन्दे मातरम्' के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय महत्व तथा भारत की बहुभाषी राष्ट्रीय चेतना को नई पीढ़ी तक पहुँचाने में सार्थक भूमिका निभाएगी। यह स्मारिका युवाओं में राष्ट्रभक्ति, सांस्कृतिक स्वाभिमान, भाषाई गौरव, मातृभूमि के प्रति समर्पण और राष्ट्र–निर्माण के प्रति कर्तव्यबोध को सुदृढ़ करने की प्रेरणा बने, यही इसकी वास्तविक सार्थकता होगी।

हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ!

(अंशुली आर्या)

डॉ. निधि पाण्डेय, भा.प्र.से.
संयुक्त सचिव
Dr. Nidhi Pandey, I.A.S.
Joint Secretary

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF HOME AFFAIRS
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि 14–15 सितंबर, 2026 को हिंदी दिवस, 2026 एवं छठे अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन नवी मुंबई, महाराष्ट्र में किया जा रहा है। इस गरिमामयी अवसर पर राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' की राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक महत्ता और प्रेरक भूमिका पर केंद्रित विशेष स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

'वन्दे मातरम्' भारत की समृद्ध विरासत, राष्ट्रीय अस्मिता और मातृभूमि के प्रति अटूट श्रद्धा का कालजयी प्रतीक है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान इस गीत ने असंख्य देशवासियों के हृदय में मातृभूमि के प्रति प्रेम, त्याग, साहस और स्वाधीनता की भावना का संचार किया। इसकी प्रेरणादायी चेतना आज भी राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध, एकता और समर्पण की भावना को निरंतर सुदृढ़ करती है।

भारत की भाषाई विविधता हमारी सांस्कृतिक विरासत, सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकात्मता की विशिष्ट पहचान है। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत', 'आत्मनिर्भर भारत' और 'विकसित भारत@2047' के दूरदर्शी संकल्प को साकार करने में भारतीय भाषाओं को सशक्त आधार प्रदान करना हम सभी का साझा दायित्व है।

माननीय केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी तथा माननीय गृह राज्य मंत्री श्री नित्यानन्द राय जी के कुशल एवं ओजस्वी नेतृत्व में राजभाषा विभाग, संघ की राजभाषा हिंदी के प्रगामी एवं प्रभावी प्रयोग को निरंतर प्रोत्साहित करने के साथ–साथ भारतीय भाषाओं के मध्य संवाद, सहयोग और समन्वय को सुदृढ़ करने की दिशा में सतत प्रयासरत है।

मुझे विश्वास है कि हिंदी दिवस के पावन अवसर पर 'वन्दे मातरम्' की युगीन चेतना पर केंद्रित यह स्मारिका नई पीढ़ी में राष्ट्रभक्ति, भाषाई सौहार्द तथा मातृभूमि के प्रति कर्तव्य एवं समर्पण की भावना को और अधिक सुदृढ़ करने में सार्थक भूमिका निभाएगी।

हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाओं सहित!

(डॉ. निधि पाण्डेय)

राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' के 150 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में आयोजित एक वर्ष लंबे स्मरणोत्सव के उद्घाटन अवसर पर माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के संबोधन का मूल पाठ

वन्दे मातरम्!

वन्दे मातरम्!

वन्दे मातरम्!

वन्दे मातरम्, ये शब्द एक मंत्र है, एक ऊर्जा है, एक स्वप्न है, एक संकल्प है। वन्दे मातरम्, ये एक शब्द मां भारती की साधना है, मां भारती की आराधना है। वन्दे मातरम्, ये एक शब्द हमें इतिहास में ले जाता है। ये हमारे आत्मविश्वास को, हमारे वर्तमान को, आत्मविश्वास से भर देता है और हमारे भविष्य को ये नया हौंसला देता है कि ऐसा कोई संकल्प नहीं, जिसकी सिद्धि न हो सके। ऐसा कोई लक्ष्य नहीं, जो हम भारतवासी पा ना सकें।

साथियों,

वन्दे मातरम् के सामूहिक गान का ये अद्भुत अनुभव, ये वाकई अभिव्यक्ति से परे है। इतनी सारी आवाजों में एक लय, एक स्वर, एक भाव, एक जैसा रोमांच, एक जैसा प्रवाह, ऐसा तारतम्य, ऐसी तरंग, इस ऊर्जा ने हृदय को स्पंदित कर दिया है। भावनाओं से भरे इसी माहौल में, मैं अपनी बात को आगे बढ़ा रहा हूँ। मंच पर उपस्थित

कैबिनेट के मेरे सहयोगी गजेंद्र सिंह शेखावत, दिल्ली के उपराज्यपाल वी. के. सक्सेना, मुख्यमंत्री रेखा गुप्ता जी, अन्य सभी महानुभाव, भाइयों और बहनों।

आज हमारे साथ देश के सभी कोने से लाखों लोग जुड़े हुए हैं, मैं उनको भी मेरी तरफ से वन्दे मातरम् से शुभकामनाएं देता हूँ। आज 7 नवंबर का दिन बहुत ऐतिहासिक है, आज हम वन्दे मातरम् के 150वें वर्ष का महाउत्सव मना रहे हैं। ये पुण्य अवसर हमें नई प्रेरणा देगा, कोटि–कोटि देशवासियों को नई ऊर्जा से भर देगा। इस दिन को इतिहास की तारीख में अंकित करने के लिए आज वन्दे मातरम् पर एक विशेष कॉइन और डाक टिकट भी जारी किए गए हैं। मैं देश के लक्ष्यावदी महापुरुषों को, माँ भारती की संतानों को वन्दे मातरम्, इस मंत्र के लिए जीवन खपाने के लिए आज श्रद्धापूर्वक नमन करता हूँ, और देशवासियों को इस अवसर पर बहुत–बहुत बधाई देता हूँ। मैं सभी देशवासियों को वन्दे मातरम् के 150 वर्ष पूरे होने पर बहुत–बहुत शुभकामनाएं भी देता हूँ।

साथियों,

हर गीत, हर काव्य का अपना एक मूल भाव होता है, उसका अपना एक मूल संदेश होता है। वन्दे मातरम् का मूल भाव क्या है? वन्दे मातरम् का मूल भाव है– भारत, मां भारती। भारत की शाश्वत संकल्पना, वो संकल्पना जिसने मानवता के प्रथम पहर से खुद को गढ़ना शुरू कर दिया। जिसने युगों–युगों को एक–एक अध्याय के रूप में पढ़ा। अलग–अलग दौर में अलग–अलग राष्ट्रों का निर्माण, अलग–अलग ताकतों का उदय, नई–नई सभ्यताओं का विकास, शून्य से शिखर तक उनकी यात्रा और शिखर से पुनः शून्य में उनका विलय, बनता बिगड़ता इतिहास, दुनिया का बदलता भूगोल, भारत ने ये सब कुछ देखा है। इंसान की इस अनंत यात्रा से हमने सीखा और समय–समय पर नए निष्कर्ष निकाले। हमने उनके आधार पर अपनी सभ्यता के मूल्यों और आदर्शों को तराशा, उसे गढ़ा। हमने, हमारे पूर्वजों ने, हमारे ऋषियों ने, मुनियों ने, हमारे आचार्यों ने, भगवंतों ने, हमारे देशवासियों ने अपनी एक सांस्कृतिक पहचान बनाई। हमने ताकत और नैतिकता के संतुलन को बराबर समझा। और तब जाकर, भारत एक राष्ट्र के रूप में वो कुन्दन बनकर उभरा जो अतीत की हर चोट सहता भी रहा और सहकर भी अमरत्व को प्राप्त कर गया।

भाइयों–बहनों,

भारत की ये संकल्पना, उसके पीछे की वैचारिक शक्ति है। उठती–गिरती दुनिया से अलग अपना स्वतंत्र अस्तित्व बोध, ये उपलब्धि, और लयबद्ध, लिपिबद्ध होना, लयबद्ध होना, और तब जाकर के ह्रदय की गहराई से, अनुभवों के निचोड़ से, संवेदनाओं की असीमता को प्राप्त कर करके वन्दे मातरम् जैसी रचना मिलती है। और इसलिए, गुलामी के उस कालखंड में वन्दे मातरम् इस संकल्प का उद्घोष बन गया था, और वो उद्घोष था– भारत की आजादी का। माँ भारती के हाथों से गुलामी की बेड़ियाँ टूटेंगी और उसकी संताने स्वयं अपने भाग्य की भाग्य विधाता बनेंगी।

साथियों,

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार कहा था– "बंकिमचंद्र की 'आनंदमठ' केवल उपन्यास नहीं है, ये स्वाधीन भारत का एक स्वप्न है"। आप देखिए, 'आनंदमठ' में वन्दे मातरम् का प्रसंग, वन्दे मातरम् की एक–एक पंक्ति के, बंकिम बाबू के एक–एक शब्द के, उसके हर भाव के, अपने गहरे निहितार्थ थे, निहितार्थ हैं। ये गीत गुलामी के कालखंड में रचना तो जरूर हो गई उस समय, लेकिन उसके शब्द कुछ वर्षों की गुलामी के साये में कभी भी कैद नहीं रहें। वो गुलामी की स्मृतियों से आजाद रहे। इसलिए, वन्दे मातरम् हर दौर में, हर कालखंड में प्रासंगिक है, इसने अमरता को प्राप्त किया है। वन्दे मातरम् की पहली पंक्ति है– "सुजलाम् सुफलाम् मलयज–शीतलाम्, सस्यश्यामलाम् मातरम्" अर्थात् प्रकृति के दिव्य वरदान से सुशोभित हमारी सुजलाम् सुफलाम् मातृभूमि को नमन।

साथियों,

यही तो भारत की हजारों साल पुरानी पहचान रही है। यहाँ की नदियां, यहाँ के पहाड़, यहाँ के वन, वृक्ष और यहां की उपजाऊ मिट्टी, ये धरती हमेशा सोना उगलने की ताकत रखती है। सदियों तक दुनिया भारत की समृद्धि की कहानियाँ सुनती रही थी। कुछ ही शताब्दी पहले तक, ग्लोबल GDP का करीब एक चौथाई हिस्सा भारत के पास था।

लेकिन भाइयों–बहनों,

जब बंकिम बाबू ने वन्दे मातरम् की रचना की थी, तब भारत अपने उस स्वर्णिम दौर से बहुत दूर जा चुका था। विदेशी आक्रमणकारियों ने, उनके हमले, लूटपाट अंग्रेजों की शोषणकारी नीतियाँ, उस समय हमारा देश गरीबी और भुखमरी के चंगुल में कराह रहा था। तब भी, बंकिम बाबू ने, उस बुरे हालात की स्थितियों में भी, चारों तरफ दर्द था, विनाश था,

शोक था, सब कुछ डूबता हुआ नजर आ रहा था, ऐसे समय बंकिम बाबू ने समृद्ध भारत का आह्वान किया। क्योंकि, उन्हें विश्वास था कि मुश्किलें कितनी भी क्यों ना हों, भारत अपने स्वर्णिम दौर को पुनर्जीवित कर सकता है। और इसलिए उन्होंने आह्वान किया, वन्दे मातरम्।

साथियों,

गुलामी के उस कालखंड में भारत को नीचा और पिछड़ा बताकर जिस तरह अंग्रेज अपनी हुकूमत को justify करते थे, इस प्रथम पंक्ति ने उस दुष्प्रचार को पूरी तरह से ध्वस्त करने का काम किया। इसलिए, वन्दे मातरम् केवल आजादी का गान ही नहीं बना, बल्कि आजाद भारत कैसा होगा, वन्दे मातरम् ने वो 'सुजलाम सुफलाम सपना' भी करोड़ों देशवासियों के सामने प्रस्तुत किया।

साथियों,

आज ये दिन हमें वन्दे मातरम् की असाधारण यात्रा और उसके प्रभाव को जानने का अवसर भी देता है। जब सन् 1875 में बंकिम बाबू ने 'बंगदर्शन' में "वन्दे मातरम्" प्रकाशित किया था, तो कुछ लोगों को लगता था कि ये तो केवल एक गीत है। लेकिन, देखते ही देखते वन्दे मातरम् भारत के स्वतंत्रता संग्राम का, कोटि–कोटि जनों का स्वर बन गया। एक ऐसा स्वर, जो हर क्रांतिकारी की जबान पर था, एक ऐसा स्वर, जो हर भारतीय की भावनाओं को व्यक्त कर रहा था। आप देखिए, आजादी की लड़ाई का शायद ही ऐसा कोई अध्याय होगा, जिससे वन्दे मातरम् किसी न किसी रूप से जुड़ा नहीं था। 1896 में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कलकत्ता अधिवेशन में वन्दे मातरम् गाया। 1905 में बंगाल का विभाजन हुआ। ये देश को बांटने का अंग्रेजों का एक खतरनाक एक्सपेरिमेंट था। लेकिन, वन्दे मातरम् उन मंसूबों के आगे चट्टान बनकर के खड़ा हो गया। बंगाल के विभाजन के विरोध में सड़कों पर एक ही आवाज थी– वन्दे मातरम्।

साथियों,

बारिसाल अधिवेशन में जब आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चलीं, तब भी उनके होंठों पर वही मंत्र था, वही शब्द थे– वन्दे मातरम्! भारत के बाहर रहकर आजादी के लिए काम कर रहे वीर सावरकर जैसे स्वतंत्रता सेनानी, वो जब आपस में मिलते थे, तो उनका अभिवादन वन्दे मातरम् से ही होता था। कितने ही क्रांतिकारियों ने फांसी के तख्त पर खड़े होकर भी वन्दे मातरम् बोला था। ऐसी कितनी ही घटनाएँ, इतिहास की कितनी ही तारीखें, इतना बड़ा देश, अलग–अलग प्रांत और इलाके, अलग–अलग भाषा बोलने वाले लोग, उनके आंदोलन, लेकिन जो नारा, जो संकल्प, जो गीत हर जबान पर था, जो गीत हर स्वर में था, वो था– वन्दे मातरम्।

इसलिए, भाइयों–बहनों,

1927 में महात्मा गांधी ने कहा था– "वन्दे मातरम् हमारे सामने संपूर्ण भारत का ऐसा चित्र उपस्थित कर देता है, जो अखंड है।" श्री अरबिंदो ने वन्दे मातरम् को एक गीत से भी आगे, उसे एक मंत्र कहा था। उन्होंने कहा– ये एक ऐसा मंत्र है जो आत्मबल जगाता है। भीकाजी कामा ने भारत का जो ध्वज तैयार करवाया था, उसमें बीच में भी लिखा था– "वन्दे मातरम्"

साथियों,

हमारा राष्ट्र ध्वज समय के साथ कई बदलावों से गुजरा, लेकिन तब से लेकर आज तक हमारे तिरंगे तक, देश का झण्डा जब भी फहरता है, तो हमारे मुंह से अनायास निकलता है– भारत माता की जय! वन्दे मातरम्! इसीलिए, आज जब हम उस राष्ट्रीय गीत के 150 वर्ष मना रहे हैं, तो ये देश के महान नायकों के प्रति हमारी श्रद्धांजलि है। और ये उन लाखों बलिदानियों को भी श्रद्धापूर्वक नमन है, जो वन्दे मातरम् का आह्वान करते हुए, फांसी के तख्त पर झूलते हुए, जो वन्दे मातरम् बोलते हुए, कोड़ों की मार सहते रहे, जो वन्दे मातरम् का मंत्र जपते हुए बर्फ की सिल्लियों पर अडिग रहे।

साथियों,

आज हम 140 करोड़ देशवासी ऐसे सभी नाम–अनाम–गुमनाम राष्ट्र के लिए जीने–मरने वालों को श्रद्धांजलि देते हैं। जो वन्दे मातरम् कहते हुए देश के लिए बलिदान हो गए, जिनके नाम इतिहास के पन्नों में कभी दर्ज ही नहीं हो पाए।

साथियों,

हमारे वेदों ने हमें सिखाया है– "माता भूमिः, पुत्रोऽहं पृथिव्याः" अर्थात् ये धरती हमारी माँ है, ये देश हमारी माँ है। हम इसी की संतानें हैं। भारत के लोगों ने वैदिक काल से ही राष्ट्र की इसी स्वरूप में कल्पना की, इसी स्वरूप में आराधना की है। इसी वैदिक चिंतन से वन्दे मातरम् ने आजादी की लड़ाई में नई चेतना फूंकी।

साथियों,

राष्ट्र को एक geopolitical entity मानने वालों के लिए राष्ट्र को माँ मानने का विचार हैरानी भरा हो सकता है। लेकिन, भारत अलग है। भारत में माँ जननी भी है, और माँ पालनहारिणी भी है। अगर संतान पर संकट आ जाए, तो माँ संहारकारिणी भी है। इसलिए, वन्दे मातरम् कहता है– अबला केन मा एत बले। बहुबल–धारिणीं नमामि तारिणीं रिपुदल–वारिणीं मातरम्, वन्दे मातरम्, अर्थात् अपार शक्ति धारण करने वाली भारत माँ, संकटों से पार भी कराने वाली, और शत्रुओं का विनाश भी कराने वाली है। राष्ट्र को माँ, और माँ को शक्ति स्वरूपा नारी मानने का ये विचार, इसका एक प्रभाव ये भी हुआ कि हमारा स्वतन्त्रता संग्राम, स्त्री–पुरुष, सबकी भागीदारी का संकल्प बन गया। हम फिर से ऐसे भारत का सपना देख पाये, जिसमें महिला शक्ति राष्ट्र निर्माण में सबसे आगे खड़ी दिखाई देगी।

साथियों,

वन्दे मातरम्, आजादी के परवानों का तराना होने के साथ ही, इस बात की भी प्रेरणा देता है कि हमें इस आजादी की रक्षा कैसे करनी है, बंकिम बाबू के पूरे मूल गीत की पंक्तियाँ हैं– त्वम् हि दुर्गा दशप्रहरण–धारिणी कमला कमल–दल–विहारिणी वाणी विद्यादायिनी, नमामि त्वाम् नमामि कमलाम् अमलां अतुलाम् सुजलाम् सुफलाम् मातरम्, वंदेमातरम! अर्थात्, भारत माता विद्यादायिनी सरस्वती भी है, समृद्धि दायिनी लक्ष्मी भी हैं, और अस्त्र–शास्त्रों को धारण करने वाली दुर्गा भी हैं। हमें ऐसे ही राष्ट्र का निर्माण करना है, जो ज्ञान, विज्ञान और टेक्नोलॉजी में शीर्ष पर हो, जो विद्या और विज्ञान की ताकत से समृद्धि के शीर्ष पर हो, और जो राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए आत्मनिर्भर भी हो।

साथियों,

बीते वर्षों में दुनिया भारत के इसी स्वरूप का उदय देख रही है। हमने विज्ञान और टेक्नोलॉजी की फील्ड में अभूतपूर्व प्रगति की। हम दुनिया की पांचवी बड़ी अर्थव्यवस्था बनकर उभरे। और, जब दुश्मन ने आतंकवाद के जरिए भारत की सुरक्षा और सम्मान पर हमला करने का दुस्साहस किया, तो पूरी दुनिया ने देखा, नया भारत मानवता की सेवा के लिए अगर कमला और विमला का स्वरूप है, तो आतंक के विनाश के लिए 'दश प्रहरण–धारिणी दुर्गा' भी बनना जानता है।

साथियों,

वन्दे मातरम् से जुड़ा एक और विषय है, जिसकी चर्चा करना उतना ही आवश्यक है। आजादी की लड़ाई में वन्दे मातरम् की भावना ने पूरे राष्ट्र को प्रकाशित किया था। लेकिन दुर्भाग्य से, 1937 में वन्दे मातरम् के महत्वपूर्ण पदों को, उसकी आत्मा के एक हिस्से को अलग कर दिया गया था। वन्दे मातरम् को तोड़ दिया गया था, उसके टुकड़े किए गए थे। वन्दे मातरम् के इस विभाजन ने देश के विभाजन के बीज भी बो दिये थे। राष्ट्र निर्माण का ये महामंत्र, इसके साथ ये अन्याय क्यों हुआ? ये आज की पीढ़ी को भी जानना जरूरी है। क्योंकि वही विभाजनकारी सोच देश के लिए आज भी चुनौती बनी हुई है।

साथियों,

हमें इस सदी को भारत की सदी बनाना है। ये सामर्थ्य भारत में है, ये सामर्थ्य भारत के 140 करोड़ लोगों में है। हमें इसके लिए खुद पर विश्वास करना होगा। इस संकल्प यात्रा में हमें पथभ्रमित करने वाले भी मिलेंगे, नकारात्मक सोच वाले लोग हमारे मन में शंका–संदेह पैदा करने का प्रयास भी करेंगे। तब हमें आनंदमठ का वो प्रसंग याद करना है, आनंदमठ में जब संतान भवानंद वन्दे मातरम् गाता है, तो एक दूसरा पात्र तर्क–वितर्क करता है। वह पूछता है कि तुम अकेले क्या कर पाओगे? तब वन्दे मातरम् से प्रेरणा मिलती है, जिस माता के इतने करोड़ पुत्र–पुत्री हों, उसके करोड़ों हाथ हों, वो माता अबला कैसे हो सकती है? आज तो भारत माता की 140 करोड़ संतान हैं। उसकी 280 करोड़ भुजाएं हैं। इनमें से 60 प्रतिशत से भी ज्यादा तो नौजवान हैं। दुनिया का सबसे बड़ा डेमोग्राफिक एडवांटेज हमारे पास है। ये सामर्थ्य इस देश का है, ये सामर्थ्य माँ भारती का है। ऐसा क्या है, जो आज हमारे लिए असंभव है? ऐसा क्या है, जो हमें वन्दे मातरम् के मूल सपने को पूरा करने से रोक सकता है?

साथियों,

आज आत्मनिर्भर भारत के विजन की सफलता, मेक इन इंडिया का संकल्प और 2047 में विकसित भारत के लक्ष्य की ओर बढ़ते हमारे कदम, देश जब ऐसे अभूतपूर्व समय में नई उपलब्धियां हासिल करता है, तो हर देशवासी के मुंह से निकलता है– वन्दे मातरम्! आज जब भारत चंद्रमा के साउथ पोल पर पहुंचने वाला पहला देश बनता है, जब नए भारत की आहट अंतरिक्ष के सुदूर कोनों तक सुनाई देती है, तो हर देशवासी कह उठता है– वन्दे मातरम्! आज जब हम हमारी बेटियों को स्पेस टेक्नोलॉजी से लेकर स्पोर्ट्स तक में शिखर पर पहुँचते देखते हैं, आज जब हम बेटियों को फाइटर जेट उड़ाते देखते हैं, तो गौरव से भरा हर भारतीय का नारा होता है– वन्दे मातरम्!

साथियों,

आज ही हमारे फौज के जवानों के लिए 'वन रैंक, वन पेंशन' लागू होने के 11 वर्ष हुए हैं। जब हमारी सेनाएं, दुश्मन के नापाक इरादों को कुचल देती हैं, जब आतंकवाद, नक्सलवाद, माओवादी आतंक की कमर तोड़ी जाती है, तो हमारे सुरक्षाबल एक ही मंत्र से प्रेरित होते हैं, और वो मंत्र है–वन्दे मातरम्!

साथियों,

मां भारती के वंदन की यही स्पिरिट हमें विकसित भारत के लक्ष्य तक ले जाएगी। मुझे विश्वास है, वन्दे मातरम् का मंत्र, हमारी इस अमृत यात्रा में, माँ भारती की कोटि–कोटि संतानों को निरंतर शक्ति देगा, प्रेरणा देगा। मैं एक बार फिर सभी देशवासियों को वन्दे मातरम् के 150 वर्ष पूरे होने पर हृदय से बहुत–बहुत बधाई देता हूँ। और देशभर से मेरे साथ जुड़े हुए आप सबसे बहुत–बहुत धन्यवाद, मेरे साथ खड़े होकर के पूरी ताकत से, हाथ ऊपर करके बोलिए–

वन्दे मातरम्! वन्दे मातरम्!

वन्दे मातरम्! वन्दे मातरम्!

वन्दे मातरम्! वन्दे मातरम्!

वन्दे मातरम्! वन्दे मातरम्!

वन्दे मातरम्! वन्दे मातरम्!

बहुत–बहुत धन्यवाद!

(प्रधानमंत्री कार्यालय की आधिकारिक वेबसाइट तथा प्रधानमंत्री कार्यालय के आधिकारिक X हैंडल (@PMOIndia) से साभार)

राष्ट्र जागरण का प्रथम मंत्र वन्दे मातरम्

माननीय केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री
श्री अमित शाह

औपनिवेशिक भारत के सबसे अंधकारमय काल में लिखा गया वन्दे मातरम् जागृति का एक ऐसा प्रभात–गीत बन गया, जिसने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को सभ्यतागत गौरव के साथ जोड़ दिया।

हमारे देश के इतिहास में ऐसे कई महत्वपूर्ण पड़ाव आए, जब गीतों, कलाओं ने अलग–अलग रूपों में लोक भावनाओं को सहेजकर आंदोलन को आकार देने में महती भूमिका निभाई। चाहे छत्रपति शिवाजी महाराज जी की सेना के युद्धगीत हों, आजादी के आंदोलन में सेनानियों के गान हों या आपातकाल के विरुद्ध युवाओं के सामूहिक गीत, इन सबने भारतीय समाज को स्वाभिमान की प्रेरणा भी दी और एकजुट भी किया।

ऐसा ही है भारत का राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्', जिसका इतिहास किसी युद्धभूमि से नहीं, बल्कि विद्वान बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय जी के शांत, लेकिन अडिग संकल्प से शुरू होता है। 1875 में जगद्धात्री पूजा (कार्तिक शुक्ल नवमी या अक्षय नवमी) के दिन उन्होंने उस स्रोत की रचना की, जो भारत की स्वतंत्रता का शाश्वत गीत बन गया। इन पवित्र शब्दों को लिखते हुए वे भारत की गहनतम सभ्यतागत जड़ों से प्रेरणा ले रहे थे। अथर्ववेद के उद्घोष 'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः' से लेकर देवी महात्म्य में विश्वमाता के आह्वान से प्रेरणा ले रहे थे।

बंकिम बाबू का यह मंत्र प्रार्थना भी था और भविष्यवाणी भी। वन्दे मातरम् केवल भारत का राष्ट्रीय गीत ही नहीं, स्वतंत्रता आंदोलन का प्राण ही नहीं, बल्कि यह बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय जी द्वारा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की प्रथम उद्घोषणा है। इसने हमें याद दिलाया कि भारत केवल जमीन का एक टुकड़ा नहीं, बल्कि एक भू–सांस्कृतिक राष्ट्र है, जिसकी एकता उसकी संस्कृति और सभ्यता से आती है। यह केवल भू–भाग नहीं है, बल्कि तीर्थ है, स्मृति, त्याग, शौर्य और मातृत्व से बंधी पवित्र भूमि है।

जैसा कि महर्षि अरबिंद ने वर्णन किया, बंकिम आधुनिक भारत के एक ऋषि थे, जिन्होंने अपने शब्दों के माध्यम से राष्ट्र की

आत्मा को पुनर्जीवित किया। उनका 'आनंदमठ' केवल एक उपन्यास नहीं, बल्कि गद्य में एक मंत्र था, जिसने एक ऐसे राष्ट्र को जागृत किया, जो अपनी दिव्य शक्ति को भूल चुका था। अपने एक पत्र में बंकिम बाबू ने लिखा, ''मुझे कोई आपत्ति नहीं है, यदि मेरे सभी कार्य गंगा में बहा दिए जाएं। यह श्लोक ही अनंत काल तक जीवित रहेगा। यह एक महान गान होगा और लोगों के हृदय को जीत लेगा।'' ये शब्द भविष्यसूचक थे। औपनिवेशिक भारत के सबसे अंधकारमय काल में लिखा गया वन्दे मातरम् जागृति का प्रभात–गीत बन गया, एक ऐसी रचना, जिसने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को सभ्यतागत गौरव के साथ जोड़ दिया। ऐसी पंक्तियां केवल वही व्यक्ति लिख सकता था, जिसके रोम–रोम में राष्ट्र के प्रति भक्तिभाव कूट–कूट कर भरा हो।

वर्ष 1896 में रवींद्रनाथ टैगोर जी ने वन्दे मातरम् को धुन में पिरोया और कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में इसे गाया, जिससे इसे वाणी और अमरता प्राप्त हुई। यह गीत भाषा और क्षेत्र की सीमाओं से आगे बढ़कर पूरे देश में गूंज उठा। तमिलनाडु में सुब्रमण्यम भारती जी ने इसका तमिल अनुवाद किया और पंजाब में क्रांतिकारियों ने इसे गाते हुए, ब्रिटिश राज को खुली चुनौती दी। 1905 में बंग–भंग आंदोलन के दौरान बंगाल में विद्रोह भड़क उठा। अंग्रेजों ने वन्दे मातरम् के सार्वजनिक पाठ पर प्रतिबंध लगा दिया था, फिर भी 14 अप्रैल, 1906 को बारीसाल में हजारों लोगों ने इस आदेश की अवहेलना की। जब पुलिस ने शांतिपूर्ण सभा पर लाठीचार्ज किया तो पुरुष और महिलाएं सड़कों पर वन्दे मातरम् का नारा लगाते हुए लहूलुहान हो गए। वहां से 'वन्दे मातरम्' का मंत्र गदर पार्टी के क्रांतिकारियों के साथ कैलिफोर्निया पहुंच गया। यह आजाद हिंद फौज में भी गूंजा, जब नेताजी के सैनिक सिंगापुर से मार्च कर रहे थे। इसी तरह यह 1946 में रायल इंडियन नेवी की क्रांति में भी गूंजा, जब भारतीय नाविकों ने ब्रिटिश युद्धपोतों पर तिरंगा फहराया।

खुदीराम बोस से लेकर अशफाक उल्ला खां तक, चंद्रशेखर आजाद से लेकर तिरुपुर कुमारन तक, नारा एक ही था। यह अब केवल एक गीत नहीं रहा, बल्कि भारत की सामूहिक आत्मा की आवाज बन गया। महात्मा गांधी ने स्वयं स्वीकार किया था कि वन्दे मातरम् में ''सबसे सुस्त रक्त को भी जगाने की जादुई शक्ति'' थी। इसने उदारवादियों और क्रांतिकारियों तथा विद्वानों और नाविकों तक को एकजुट किया। महर्षि अरबिंद जी ने इसीलिए कहा था कि यह 'भारत के पुनर्जन्म का मंत्र' है।

26 अक्टूबर को 'मन की बात' कार्यक्रम में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने वन्दे मातरम् गीत के इस इतिहास की देशवासियों को फिर से याद दिलाई। राष्ट्रीय गीत वन्दे मातरम् के 150 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में 7 नवंबर, 2025 से भारत सरकार की ओर से अगले एक वर्ष तक अलग–अलग कार्यक्रमों का आयोजन करने का निर्णय लिया गया है। इन विभिन्न आयोजनों के माध्यम से देश भर में वन्दे मातरम् का पूर्ण गान होगा, जिससे देश की युवा पीढ़ी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के विचार को आत्मसात कर पाए।

आज जब हम भारत पर्व मना रहे हैं और सरदार पटेल की जयंती पर उन्हें श्रद्धापूर्वक स्मरण कर रहे हैं तो यह भी याद करते हैं कि कैसे सरदार साहब ने एक भारत का निर्माण कर वन्दे मातरम् की भावना को ही मूर्त रूप दिया। यह गीत केवल अतीत का स्मरण मात्र नहीं, बल्कि भविष्य के लिए एक आह्वान भी है। वन्दे मातरम् आज भी विकसित भारत @2047 के हमारे संकल्प को प्रेरणा दे रहा है। यह भारत के सभ्यतागत आत्मविश्वास का प्रतीक है। अब इस भावना को आत्मनिर्भर और श्रेष्ठ भारत में परिवर्तित करना हमारी जिम्मेदारी है। वन्दे मातरम् स्वतंत्रता का गीत है, अटूट संकल्प की भावना है और भारत के जागरण का प्रथम मंत्र है।

राष्ट्र की आत्मा से जन्मे शब्द कभी समाप्त नहीं होते, वे सदैव जीवित रहते हैं, पीढ़ियों तक गूंजते रहते हैं। यह जयघोष युगों और पीढ़ियों में अनंत काल तक प्रतिध्वनित होता रहेगा। समय आ गया है कि हम अपने समृद्ध इतिहास, अपनी संस्कृति, अपनी मान्यताओं और अपनी परंपराओं को भारतीयता की दृष्टि से देखें।

वन्दे मातरम्!

(दैनिक जागरण समाचार–पत्र एवं वेबसाइट
https://amitshah.co.in/myviewall से साभार)

150वीं गौरवशाली वर्षगांठ के पावन अवसर पर राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' को विनम्र श्रद्धांजलि

—जॉयदीप चट्टोपाध्याय

जॉयदीप चट्टोपाध्याय राष्ट्रवादी लेखक एवं कवि हैं तथा भारत के विख्यात साहित्यकार और साहित्यिक विभूति ऋषि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के प्रतिष्ठित परिवार की पाँचवीं पीढ़ी के वंशज हैं। उन्होंने अब तक 21 पुस्तकों का प्रकाशन किया है, जिनमें कविता के दस संग्रह शामिल हैं। प्रख्यात कवि श्री आशीष सान्याल के साथ संयुक्त रूप से निर्मित उनका ऑडियो एलबम 'दुई बसंत' पश्चिम बंगाल के तत्कालीन राज्यपाल माननीय श्री वीरेन जे. शाह द्वारा जारी किया गया था। वे 'बंकिम परंपरा' नामक सांस्कृतिक मंच के संस्थापक एवं मार्गदर्शक हैं। उन्हें आकाशवाणी, दूरदर्शन केंद्र, कोलकाता, विभिन्न सैटेलाइट टेलीविजन चैनलों तथा रेडियो कार्यक्रमों में आमंत्रित किया जाता रहा है। वे देश के विभिन्न राज्यों में आयोजित साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों तथा बांग्लादेश में भी अनेक अवसरों पर विशिष्ट कवि के रूप में आमंत्रित किए गए हैं। प्रेम, मानवता, सांस्कृतिक विरासत और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना उनकी साहित्यिक एवं रचनात्मक यात्रा के केंद्र में रही है। उन्होंने पत्रकारिता एवं जनसंचार में स्नातकोत्तर डिप्लोमा प्राप्त किया है तथा वे सत्यजीत रे फिल्म एवं टेलीविजन संस्थान के छात्र रहे हैं।

कविता की दुनिया का सफर आरंभ हुआ
बंजर जमीन पर तुमने पारिजात के फूल उगाए
भगीरथ बनकर अमृत धारा प्रवाहित की
हीरे की द्युति के समान कीर्ति ने रात के अंधियारे को मिटा दिया
बंकिम आप बंगाल का गौरव हो
हजारों सूर्य के समान स्वदेश का जयगान हो
नवजागरण राष्ट्र का उत्थान हो
बेड़ियों को तोड़कर चेतना युक्त प्राण हो।

आँखों में आँखें डालकर किया गया पुरजोर विरोध हो
ब्रिटिश सेना के सामने भी आपने शीश झुकाया नहीं
आश्चर्य है तुम्हारे निर्भीक अविरत लेखन पर
आप जीवनगाथा लिखने वाले सम्राट हैं।
इस उत्कृष्ट रचना में समय की गूंज ध्वनित होती है
मानवता आपके रोम–रोम में बसी है
देश में आज भी कापालिक–आनंदमठ

मुक्ति अभियान का गुणगान है।
इस जयगान में तुम्हारे संजीवनी के सुरों की तान है
जिससे कश्मीर से कन्याकुमारी तक जाग उठा प्राण है
इस अग्नि मंत्र के सामने फांसी का फंदा भी तुच्छ है
हृदय के रक्त प्रवाह में माता का आशीष और बल है।
हमारी प्रिय भाषा गरिमामय है
पारस मणि के प्रकाश के समान देदीप्यमान है
राष्ट्रीय अस्मिता में आप हमारे त्राता हो
एकता के गीत में अनंत लावण्यमय ध्वनि हो।

श्री बंकिमचंद्र जी एक अद्वितीय प्रतिभासंपन्न व्यक्तित्व थे जिनका अस्तित्व ही मातृभूमि से जुड़ा हुआ था। उनकी संपूर्ण सृजनशीलता देशप्रेम, स्वदेशी भावना से प्रेरित थी। उनके लिए देश की सेवा ही परम धर्म था। अंग्रेजी शासन में बंधे रहने और डिप्टी मजिस्ट्रेट के तौर पर नौकरी करने के बावजूद बंगाल से वह पहले व्यक्ति थे, जो बंगाल तथा भारतीय राष्ट्रवाद के बारे में चिंतनशील थे।

उनको इस बात का दुख था कि अंग्रेज यदि पक्षियों का शिकार भी करने जाते थे तो उसको लेकर इतिहास लिखा जाता था परंतु बंगाल को लेकर कभी भी कुछ नहीं लिखा गया।

श्री बंकिमचंद्र जी ने बंगाल और बंगाल के इतिहास तथा उनके अभिज्ञान को लिपिबद्ध करने के संकल्प से 'बंगदर्शन' पत्रिका का प्रकाशन और संपादन शुरू किया था। वे तत्कालीन लेखक, साहित्यकारों को भारतवर्ष के इतिहास, शिक्षा, संस्कृति, कला, विज्ञान, साहित्य, दर्शन, धर्म, समाजशास्त्र आदि विषयों पर निरंतर लिखने के लिए प्रोत्साहित करते थे। उपन्यास के अतिरिक्त विभिन्न विचारशील रचनाओं के माध्यम से श्री बंकिमचंद्र जी ने पराधीन भारतवासियों को जागरूक करने और उनके आत्मसम्मान को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से निरंतर 'बंगदर्शन' सहित विभिन्न पत्रिकाओं में विविध विषयों पर लेख लिखे हैं।

बंकिमचंद्र जी ने नए रचनाकारों को प्रेरित करते हुए कहा था कि सौंदर्य की सृष्टि हेतु लिखना चाहिए, समाज के कल्याण के लिए लिखना चाहिए, उत्कृष्ट रचना से स्वतः यश की प्राप्ति होती है। जो रचना पाठक के हृदय को छू जाती है, वही सही मायने में उत्कृष्ट रचना मानी जाती है।

श्री बंकिमचंद्र जी ने वर्ष 1872 में 'बंगदर्शन' पत्रिका के आरंभ में लिखा था कि अंग्रेजों के विश्वासपात्र विद्वानों के मतानुसार अंग्रेजों के पढ़ने योग्य कुछ भी बांग्ला भाषा में लिखा नहीं जाता है, उनके अनुसार बांग्ला भाषा के लेखक – मेधाहीन, लिपि कौशल रहित होते हैं अथवा केवल अंग्रेजी भाषा के अनुवादक मात्र होते हैं। अंग्रेजी राजभाषा है, रोजगार की भाषा है, विविध शिक्षा अधिगम का माध्यम है, रोजगार का भी एकमात्र माध्यम है। जबकि सच्चाई यह है कि हम अंग्रेजी भाषा का प्रयोग पढ़ने, बातचीत में या लेखन शैली में भले ही कर लें परंतु वह हमेशा बहुरूपिया के मुखौटे जैसा ही प्रतीत होगा। मुखौटे के उतरते ही असली चेहरा प्रकट हो जाएगा। तराशी हुई सुंदर नारी की मूर्ति की अपेक्षा अपनी जीवनसंगिनी के रूप में साधारण संस्कारी नारी ही

उपयुक्त होती है। अंग्रेजी भाषा का अनुसरण करने की बजाय शुद्ध बांग्ला भाषा में साहित्य लेखन बहतर होगा। जब तक सुशिक्षित ज्ञान से परिपूर्ण बंगाली अपने विचार बांग्ला भाषा में व्यक्त नहीं करेंगे तब तक बंगालियों की उन्नति की कोई भी संभावना नहीं है।

वर्ष 1885 के उत्तरार्ध में, 'प्रचार' पत्रिका में बंगाल के लेखकों को संबोधित करते हुए श्री बंकिमचंद्र ने लिखा था कि 'जिस साहित्य का उद्देश्य असत्य, धर्म के विरूद्ध, दूसरों की निंदा, अत्याचार अथवा स्वार्थ केंद्रित हो वह कृति कभी भी समाज के कल्याण हेतु नहीं रची गई इसलिए उसका त्याग करना ही समीचीन है। साहित्य का परम उद्देश्य ही सत्य और धर्म है। इसके अतिरिक्त अन्य किसी उद्देश्य से प्रेरित साहित्य को श्री बंकिमचंद्र जी ने महापाप की संज्ञा दी है।

श्री बंकिमचंद्र जी पाश्चात्य शैली की विचारधारा से प्रभावित होते हुए भी कभी भी उस ओर उन्मुख नहीं हुए। इसलिए उनकी शैली में यूरोपीय दर्शन, साहित्य, राजनीति, तर्कवाद पर आधारित विचार दिखाई देते हैं। इसके साथ ही, अध्यात्मवाद से जुड़ी सनातन धर्म–शिक्षा में भी उनका अपना निजी दर्शन और उत्कृष्ट सृजनशीलता दृष्टव्य है।

पराधीन भारतवर्ष में ऋषि बंकिमचंद्र ने हमें 'वन्दे मातरम्' का अतुलनीय उपहार दिया था।

वन्दे मातरम् अर्थात् – माँ की वंदना, मातृभूमि की वंदना।

श्री अरबिंदो जी के शब्दों में 'वन्दे मातरम्'– vision of the mother, महात्मा गांधीजी के शब्दों में– "when we sing that ode to the motherland, 'Bande Maataram' we sing it to the whole of India". विश्वगुरू रवींद्रनाथ ठाकुर जी के शब्दों में–'हमारे वन्दे मातरम् का मंत्र केवल बंगाल का वंदना मंत्र नहीं है, अपितु यह विश्वमाता की वंदना है। अगर हम आज इस स्तुति गीत के पहले अक्षर का भी उच्चारण करते हैं, तो भविष्य में यह मंत्र पूरे विश्व में गूंज उठेगा।''

भारत के राष्ट्रवाद का अग्नि मंत्र और जयगान है 'वन्दे मातरम्'।

हम सभी जानते हैं कि हमारे पूजनीय हजारों स्वतंत्रता सेनानियों ने इस महान मंत्र को अपने हृदय में संजोया, अपने कंठ में धारण किया, अत्याचारी ब्रिटिश पुलिस की तनी हुई राइफलों के सामने सीना तानकर खड़े हो गए, जेलों और काले पानी की सजा के दौरान असहनीय यातनाएँ सहते हुए क्रांतिकारियों ने अपनी जान दे दी।

हमारे क्रांतिकारियों ने, मृत्युंजय मंत्र 'वन्दे मातरम्' की अग्नि शपथ ली थी। उन्होंने पवित्र धर्मग्रंथ 'गीता' के समान 'आनंदमठ' उपन्यास को भी मान्यता दी थी।

एक गीत एक राष्ट्र को स्वदेश–मंत्र के माध्यम से किस प्रकार एकजुट कर सकता है और उनमें असीम साहस और दृढ़ विश्वास का संचार कर सकता है, इसका उदाहरण विश्व के इतिहास में अत्यंत दुर्लभ हैं।

अग्निकाल के क्रांतिकारी श्री अरबिंद घोष जी ने श्री बंकिमचंद्र को सबसे पहले 'ऋषि' कहकर संबोधित किया था।

श्री अरविन्द जी के शब्दों में – 'The mantra had been given and in a single day a whole people had been converted to the religion of patriotism:'

नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने वन्दे मातरम् के बारे में कहा था – 'वन्दे मातरम् हमारे बलिदान का प्रतीक है जो हमें स्वतंत्रता संग्राम के लिए प्रेरणा देता है।'

क्रांतिकारी भगत सिंह ने कहा था – 'वन्दे मातरम् हमारी स्वतंत्रता के लिए बलिदान का संकल्प है जो हमें संघर्ष में साहस और शक्ति प्रदान करता है।'

यह माना जाता है कि 'वन्दे मातरम्' गीत वर्ष 1875 में लिखा गया था। 'आनंदमठ' उपन्यास का पुस्तक के रूप में प्रकाशन पहली बार वर्ष 1882 में हुआ।

वन्दे मातरम् की रचना के संदर्भ में ज्ञात है कि 15 दिसंबर, 1873 को, श्री बंकिमचंद्र मुर्शिदाबाद जिले के डिप्टी मजिस्ट्रेट के रूप में अपने कार्यस्थल बहरामपुर से गंगा के किनारे स्थित अपने घर की ओर एक पालकी में लौट रहे थे। वे प्रतिदिन बहरामपुर स्क्वायर फील्ड से आते–जाते थे। उस दिन वहां गोरे सैनिकों का एक दल क्रिकेट खेल रहा था। उस मैदान में बहरामपुर के कई प्रतिष्ठित लोग भी दर्शक के रूप में उपस्थित थे। इनमें से एक लालगोला के राजा योगेंद्रनारायण राय भी थे।

डिप्टी मजिस्ट्रेट की पालकी जब मैदान से गुजरती है, तब एक अंग्रेज खिलाड़ी कर्नल डैफिन ने उनकी पालकी को रोक लिया और अभद्र भाषा का प्रयोग करते हुए दूसरे रास्ते से जाने का हुक्म दिया। बंकिमचंद्र ने उस आदेश का तिरस्कार करते हुए अपने रास्ते से ही पालकी ले जाने का प्रयास किया, तो उद्दंड डैफिन ने बंकिमचंद्र जी से दुर्व्यवहार किया।

यह समाचार 4 जनवरी 1874 को 'अमृत बाजार पत्रिका' में प्रकाशित हुआ। इस घटना से बंकिमचंद्र जी अपमानित हुए और उन्होंने प्रतिष्ठित नागरिकों को गवाह बनाकर कर्नल डफिन के खिलाफ एक आपराधिक मुकदमा दायर किया।

एक अंग्रेज के खिलाफ आरोपों और आरोपों की सच्चाई से इंकार नहीं किया जा सकता था। जिला मजिस्ट्रेट और एक अन्य न्यायाधीश ने बंकिमचंद्र जी से मामले को आपस में सुलझाने का अनुरोध किया। लेकिन बंकिमचंद्र जी अपने फैसले पर अड़े रहे और उन्होंने कर्नल डैफिन को अदालत में हाजिर होने के लिए मजबूर कर दिया।

अंत में, बंकिमचंद्र जी की इच्छा अनुसार, कर्नल डैफिन ने श्री बंकिमचंद्र जी का हाथ पकड़कर सार्वजनिक रूप से अदालत में माफी मांगी। उस दिन अदालत परिसर में हजारों लोग उपस्थित थे।

अदालत में जीत तो मिली लेकिन बंकिमचंद्र जी मन की पीड़ा से आहत हो गए। वह समझ गए कि यह अपमान और निरंतर पीड़ा पराधीनता के कारण ही है। कुछ सूत्रों से खबर आई कि अंग्रेज सैनिक बंकिमचंद्र जी को नुकसान पहुंचाने की साजिश रच रहे हैं, इसलिए लालगोला के महाराजा योगेंद्र नारायण राय जी ने उन्हें सुरक्षा प्रदान करने की पहल की। उन्होंने अपने महल में उन्हें आमंत्रित किया। बंकिमचंद्र ने आतिथ्य स्वीकार किया और यह घटना बंकिमचंद्र जी के लिए विशेष अनुभव था।

लालगोला के पास से बहने वाली कलकली नदी के उस पार एक घना जंगल था। यह वन क्षेत्र पद्मा, कलकली और भैरव नदियों से घिरा हुआ था। जंगल के बीचों–बीच एक प्राचीन मंदिर था। उस मंदिर में महाकाली की मूर्ति प्रतिष्ठित थी। उन्होंने देखा कि देवी के दोनों हाथ जंजीरों से बंधे हुए थे।

श्री बंकिमचंद्र जी का रूपांतरण हुआ। उन्होंने सोचा कि मेरे वैभवशाली देश रूपी जननी भी तो आज जंजीरों में जकड़ी हुई है! बाद में, किसी एक मंगलमय क्षण में, उनके कलम से मातृ–वंदना की महिमा जागृत हुई – 'वन्दे मातरम्'। 'वन्दे मातरम्' गीत बंकिमचंद्र जी ने लिखकर अपने पास रख लिया था। एक बार 'बंगदर्शन' पत्रिका के संपादन के दौरान पत्रिका में कुछ स्थान रिक्त रह गया। उस जमाने में सीसा के टाइप को सजाकर कंपोजिंग की जाती थी। पत्रिका के कार्यकारी अध्यक्ष श्री रामचन्द्र बन्द्योपाध्याय जी ने रिक्त स्थान को भरने के लिए शीघ्र ही कुछ लिखने के लिए कहा और कहा कि विलंब होने पर काम बंद हो सकता है। उन्होंने मेज पर रखी एक छोटी सी रचना को उठाकर कहा कि यह रचना बुरी नहीं है। उन्होंने कहा, कहें तो पृष्ठ भरने के लिए इसी को छाप देता हूँ अर्थात् उन्होंने 'वन्दे मातरम्' गीत को एक फिलर के रूप में छापने का प्रस्ताव दिया।

बंकिमचंद्र जी ने तब विमुख होकर उनके हाथ से वह कागज ले लिया और उसे दराज में रखते हुए कहा – 'यह अच्छा है या बुरा, यह तुम नहीं समझ पाओगे; कुछ समय बाद इसे समझोगे। तब शायद मैं जीवित नहीं रहूँगा, तुम रह भी सकते हो।'

ऋषि बंकिम जी एक क्रान्तिकारी कवि और सर्वमान्य साहित्यिक व्यक्तित्व थे। युवा रवींद्रनाथ और उस समय के कई अन्य साहित्यकार बंकिमचंद्र जी के पास अपने लेखन को दिखाने और थोड़ी पहचान पाने के उद्देश्य से नियमित रूप से आते थे।

श्री बंकिमचंद्र जी की मृत्यु के चार–पाँच वर्ष के पश्चात 'वन्दे मातरम्' पराधीन भारत का राष्ट्रवादी मंत्र बन गया था।

वन्दे मातरम् का उच्चारण करने पर, बेंत से प्रहार और गिरफ्तारी की जाती थी। अंग्रेजी सरकार ने विभिन्न तरीकों से परिपत्र जारी कर 'वन्दे मातरम्' गीत, ध्वनियों और रिकॉर्ड पर प्रतिबंध लगा दिया था। फिर भी हमारे महान क्रांतिकारियों और स्कूल–कॉलेजों के युवा वर्ग के बीच पुलिस के तमाम अत्याचारों की परवाह न करते हुए 'वन्दे मातरम्' का नारा सर्वत्र गुंजायमान था।

विष्णुपुर घराने के संगीतकार श्री यदुनाथ भट्ट जी ने सर्वप्रथम 'वन्दे मातरम्' गीत को राग मल्हार (या मियां की मल्लार) में ढाला था।

एक बार जब इस गीत को घरेलू समारोह में गाया गया, तो इससे श्रोतागण उतने मुग्ध नहीं हुए। इस पर बंकिम जी ने कहा था – 'अगर अच्छा नहीं लगे तो मत सुनो।'

बंकिमजी की बड़ी बेटी श्रीमती शरद कुमारी उस दिन पास के कमरे में ही थी। श्री बंकिम जी को अपनी बेटी की मधुर आवाज बहुत पसंद थी। बेटी ने कहा – पिताजी, लगता है कि किसी को यह गीत पसंद नहीं आया। बंकिम जी ने बेटी से पूछा – तुम्हारी क्या राय है? बेटी शांत बैठी रही। बंकिम जी अब थोड़े गंभीर हो गए।

थोड़ी देर बाद उन्होंने कहा, 'आज से बीस वर्ष बाद एक दिन यही गीत हिमालय से कन्याकुमारी तक गूंज उठेगा।'

श्री बंकिमचंद्र जी इस गीत की जय यात्रा को नहीं देख पाए। मात्र 56 वर्ष की आयु से पूर्व ही उनका देहांत हो गया।

वर्ष 1896 में कलकत्ता के बिडन स्क्वायर में आयोजित राष्ट्रीय कांग्रेस के उद्घाटन समारोह में, कवि रवींद्रनाथ ने अपने ही सुर में वन्दे मातरम् के दो छंद गाए। श्री प्रभात कुमार मुखोपाध्याय ने अपनी पुस्तक 'रवींद्र जीवनी' में उल्लेख किया है कि ऐसा प्रचलित है कि श्री बंकिमचंद्र जी को एक बार रवींद्रनाथ जी ने वन्दे मातरम् गीत की धुन बनाकर सुनाई थी। इस तथ्य का एक अन्य शोधकर्ता श्री नेपाल मजूमदार ने भी समर्थन किया है।

पांच वर्ष बाद सन् 1901 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में दक्षिणाचरण सेन ने इस गीत को गाया था। वर्ष 1905 में कांग्रेस के वाराणसी अधिवेशन में श्रीमती सरला देवी चौधरानी ने इस गीत को गाया था। श्री लाला लाजपत राय ने लाहौर में 'वन्दे मातरम्' नामक एक सामयिक पत्र प्रकाशित किया। वर्ष 1905 में, हीरालाल सेन ने भारत की पहली राजनीतिक फिल्म बनाई थी और इस फिल्म का समापन वन्दे मातरम् गीत के माध्यम से हुआ था।

'बंग–भंग' और 'स्वदेशी आंदोलन' के दौरान, स्वदेशियों ने 'वन्दे मातरम्' गीत के माध्यम से विरोध प्रदर्शन को एक नई दिशा दी थी।

वर्ष 1905 में 'वन्दे मातरम्' लिखे झंडे का जुलूस बारीसाल और कलकत्ता में निकाला गया। वर्ष 1906 में, क्रांतिकारी श्री अरबिंद घोष ने अंग्रेजी में 'वन्दे मातरम्' पत्रिका का प्रकाशन किया और अंग्रेजी में 'वन्दे मातरम्' गीत का अनुवाद भी किया। वर्ष 1907 में, मैडम कामा ने जर्मनी में देवनागरी लिपि में 'वन्दे मातरम्' लिखे झंडे का अनावरण किया और वर्ष 1908 में पेरिस से 'वन्दे मातरम्' पत्रिका का प्रकाशन किया।

भारत की संविधान सभा में राष्ट्रीय गीत से संबंधित कोई भी प्रस्ताव पेश नहीं किया गया है। संविधान सभा के अंतिम सत्र में इस बात को देखते हुए, सभापति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने प्रस्ताव रखा कि 'जन गण मन' भारत का राष्ट्रगान होगा और 'वन्दे मातरम्' के अतुलनीय योगदान को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने कहा कि 'जन गण मन' के साथ–साथ वन्दे मातरम्' को भी राष्ट्रगान के समान सम्मान दिया जाएगा।

5 नवंबर 2022 को दिल्ली उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका के संदर्भ में केंद्रीय गृह मंत्रालय की ओर से दाखिल किए गए हलफनामे में कहा गया है कि राष्ट्रगान और राष्ट्रीय गीत का स्थान समान है, इसलिए प्रत्येक नागरिक को 'वन्दे मातरम्' और 'जन गण मन' के प्रति समान सम्मान का भाव रखना चाहिए।

भारतवर्ष को पराधीनता की बेड़ियों मुक्ति दिलाने में 'वन्दे मातरम्' ने अहम भूमिका निभाई है। सहस्र क्रांतिकारियों ने पुलिस द्वारा किए गए अत्याचारों के दौरान और जीवन के अंतिम क्षणों में इस महामंत्र का जाप किया।

राष्ट्रवाद का विकास करने के लिए भारतवर्ष को एक सूत्र में पिरोने हेतु 'वन्दे मातरम्' का कोई विकल्प नहीं

है। यह सिर्फ एक गीत नहीं है। भारत की शाश्वत चेतना का एक जीवंत प्रतीक है। नैहाटी और चूंचड़ा का ऐतिहासिक परिवेश, श्री बंकिमचंद्र जी की साहित्यिक साधना, श्री क्षेत्रनाथ बंद्योपाध्याय और कविगुरू रवींद्रनाथ का संगीत संयोजन तथा भारत के स्वतंत्रता संग्राम में इसके राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रभाव, यह सब मिलाकर यह गीत अपने आप में एक अद्वितीय युगांतकारी महासंगीत है।

आज, इस अग्नि मंत्र 'वन्दे मातरम्' की 150वीं वर्षगांठ के अवसर पर, हम विनम्रतापूर्वक राष्ट्र के महर्षि बंकिमचंद्र और हमारे वंदनीय महान स्वतंत्रता सेनानियों के प्रति साष्टांग प्रणाम निवेदन करते हैं।

उस समय श्री बंकिमचंद्र जी मालदा के डिप्टी कलेक्टर थे और दुर्गा पूजा की छुट्टियों के दौरान मालदा से नैहाटी के कांटालपाड़ा में स्थित घर की गृह–दुर्गापूजा में उपस्थित होते थे। वर्ष 1875 में उन्होंने पहले 'आमार दुर्गोत्सव' नामक काव्य रचना की और बाद में 'वन्दे मातरम्' गीत की रचना की।

श्री अरविन्द ने सन् 1907 में 'वन्दे मातरम्' पत्र में लिखा था – 'It was 32 years ago that Bankim wrote his great song and few listened'; but in a sudden moment of awakening from long delusions the people of Bengal looked around for the truth and in a fated moment somebody sang 'Vande Mataram.'

वर्ष 1907 से 32 वर्ष पीछे जाने पर 1875 ईस्वी प्राप्त होती है अर्थात 'अमार दुर्गोत्सव' के प्रकाशन के बाद ही 'वन्दे मातरम्' का जन्म हुआ और यह बंकिमचंद्र के अपने जन्मस्थान, नैहाटी के कांटालपाड़ा के भद्रसन में हुआ।

'वन्दे मातरम्' की भाषा शैली में कुछ भाग संस्कृत में है और कुछ बांग्ला में। इस संबंध में भाटपाड़ा के पंडित समाज में काफी आलोचना हुई। श्री बंकिमचंद्र के अति प्रिय कवि नवीनचंद्र सेन ने भी 'वन्दे मातरम्' में संस्कृत और बांग्ला भाषाओं के मिश्रण (खिचड़ी भाषा) पर आपत्ति जताई थी।

श्री बंकिमचंद्र ने प्रत्युत्तर में कहा था – अच्छा भाई, अच्छा नहीं लगता तो मत पढ़ो। लोगों को पसंद आए या नहीं, यह सोचकर क्या लिखा जाए? अर्थात् बंकिम जी की रचना शैली में किसी प्रकार का समझौता नहीं था।

हमारे महान स्वतंत्रता सेनानियों ने एक अखंड भारतवर्ष के सपने को साकार करने के लिए अपना जीवन त्याग दिया परन्तु फिर भी देशवासियों को करोड़ों लोगों के जीवन में तबाही का अंधकार और रक्तरंजित कलंकित विभाजन को सहना पड़ा। 'वन्दे मातरम्' जैसे महान गीत को मुस्लिम लीग द्वारा मूर्तिपूजा से जोड़ने का आरोप दुखद था।

भारतवर्ष के स्वतंत्रता संग्राम में अलग–अलग समय में अनेक देशभक्ति गीतों और विविध नारों का प्रयोग किया गया, परंतु 'वन्दे मातरम्' की भूमिका सर्वोपरि थी। महात्मा गांधी जी ने 'हरिजन' पत्रिका के 1 जनवरी 1939 को प्रकाशित अंक में लिखा था – 'It is enthroned in the hearts of millions- The Flag & the Song will live, as long as the nation lives.'

हरप्रसाद शास्त्री जी ने लिखा है कि – बंकिम बाबू ने जो कुछ भी किया है, वह भारतवर्ष में किसी और ने नहीं किया। इसलिए वह हमारे पूज्य हैं, उनको हमारा नमन है, वह हमारे आचार्य हैं, वह हमारे ऋषि हैं, वह

हमारे मंत्र 'वन्दे मातरम्' के रचयिता हैं, वह हमारे द्रष्टा हैं।

वर्ष 2002 में बीबीसी वर्ल्ड सर्विस ने दुनिया के दस सबसे लोकप्रिय गीतों का चयन करने के लिए एक अंतरराष्ट्रीय सर्वेक्षण किया। इस सर्वेक्षण में 7000 गीतों में से ए.आर. रहमान द्वारा संगीतबद्ध 'वन्दे मातरम्' गीत को विश्व का दूसरा सबसे लोकप्रिय गीत चुना गया। प्रसंगवश यह उल्लेखनीय है कि पूरी बीसवीं शताब्दी में वन्दे मातरम् गीत लगभग 100 विभिन्न धुनों में रिकॉर्ड किया गया।

हमारा कर्तव्य है कि हम भविष्य की पीढ़ियों को भारत के गौरवशाली इतिहास और स्वतंत्रता संग्राम के वास्तविक इतिहास से परिचित कराएं और उन्हें देशभक्ति के लिए प्रोत्साहित करें।

ठाकुर श्री रामकृष्ण परमहंस देव के साथ तत्कालीन युवा डिप्टी मजिस्ट्रेट बंकिमचंद्र जी की ऐतिहासिक मुलाकात के बारे में हम सभी जानते हैं। परवर्ती काल में भारतीय आध्यात्मिकता के परम पुरुष स्वामी विवेकानंद जी, श्री बंकिमचंद्र जी तथा 'वन्दे मातरम्' के प्रति बहुत श्रद्धा रखते थे। स्वामी विवेकानंद जी ने अपना संपूर्ण जीवन सनातन भारतवर्ष के समग्र विकास और उन्नति के लिए समर्पित कर दिया था। नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने स्वामी विवेकानंद के आदर्शों को अपने हृदय में धारण करते हुए देश के स्वतंत्रता संग्राम में स्वयं को समर्पित कर दिया। ये वीर पुरुष बंगाल और भारत का गौरव तथा स्वाभिमान हैं।

बंकिमचंद्र जी सभी धर्मों का समान रूप से आदर करते थे। 'धर्मतत्व' में गुरु ग्रंथ की वाणी के अनुसार – "चाहे वह ईश्वर है या नहीं, मैं उन्हें प्रणाम करता हूं, जो एक ही समय में बुद्धदेव, ईसा मसीह, मुहम्मद, रामचन्द्र हैं, जो एक ही समय में सर्वशक्तिमान का आधार, सर्व–गुण–आधार, सर्व–धर्म–ज्ञानी, सर्वत्र प्रेममय हैं। चाहे वह ईश्वर हैं या नहीं, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।"

ब्रिटिश शासन में नौकरी करने के बावजूद, बंकिमचंद्र जी ने कभी अंग्रेजों के सामने अपना शीश नहीं झुकाया। इस सत्यनिष्ठ व्यक्ति को प्रताड़ित करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने नौकरी के दौरान अनेक बार विभिन्न स्थानों पर उनका स्थानांतरण किया और बार–बार स्थान बदलने के कारण उनके स्वास्थ्य में गिरावट आई। अत्याचारी नीलकर साहब सहित विभिन्न अंग्रेजों के अन्याय और अत्याचार के खिलाफ वे हमेशा गरजते रहे, यहाँ तक कि कई बार अंग्रेजों के विरुद्ध अदालत में उन्होंने कई मुकदमे किए। 'देवी चौधरानी' उपन्यास में उन्होंने पहली बार सशस्त्र संघर्ष के माध्यम से देश की स्वाधीनता का मार्ग प्रशस्त किया था।

पारिवारिक सूत्रों से पता चला है कि जब बंकिम चंद्र एक डिप्टी मजिस्ट्रेट के रूप में दूर–दराज के स्थानों की यात्रा करते थे, तो वे अपने माता–पिता के पैरों का पानी धुले हुए कांच की शीशी में भरकर अपने साथ ले जाते थे। वह मानते थे कि माता–पिता का आशीर्वाद उनके साथ है तो वे हमेशा विजयी होंगे।

बंकिमचंद्र जी ने प्रेसीडेंसी कॉलेज से बी.ए. पास किया। वर्ष 1858 में कलकत्ता विश्वविद्यालय के पहले स्नातक, उसी वर्ष डिप्टी मजिस्ट्रेट के रूप में सरकारी नौकरी मिली। उस समय उनकी उम्र केवल बीस वर्ष थी। मूल रूप से यह नौकरी बंकिमचंद्र जी ने अपने पिता, डिप्टी मजिस्ट्रेट यादवचंद्र के आदेश पर ग्रहण की थी। बंकिम जी को अंग्रेजों के अधीन नौकरी करना पसंद नहीं था। वह कहते थे – नौकरी उनके जीवन का अभिशाप है। हालांकि, कार्यक्षेत्र में उन्होंने सफलतापूर्वक, जिम्मेदारी के साथ अपना कर्तव्य निभाया।

बंकिमचंद्र जी के एक गुणग्राहक उत्तराधिकारी, ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता कथाकार श्री ताराशंकर बंदोपाध्याय राज्यसभा के सांसद थे। उन्होंने 'वन्दे मातरम्' के बारे में कहा था –''बंकिमचंद्र के 'वन्दे मातरम्' गीत से ही भारतवर्ष में राष्ट्रवाद का उद्घाटन हुआ था; 'आनन्दमठ' की परिकल्पना ही परवर्ती काल में बांग्लादेश और संपूर्ण भारतवर्ष के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास लेखन की भूमिका बनी।

जननी और देश की मातृभूमि के प्रति समर्पित बंकिमचंद्र जी के प्रति सम्मान तभी सार्थक होगा जब हम देश और देश के साधारण लोगों का सम्मान करेंगे, उनसे प्रेम करेंगे। राष्ट्र की उन्नति के लिए जाति, धर्म और वर्ण का भेद भूलकर स्वयं को समर्पित कर देंगे।

'वन्दे मातरम्' की माँ भारत माता है। वह सभी भारतीयों की माँ हैं। संस्कारों में भिन्नता होने पर भी माँ के लिए बच्चे की जाति–पहचान बड़ी नहीं होती।

डिजिटल इंडिया आज तेजी से आगे बढ़ रहा है, जो सनातन आदर्शों की नींव पर आधारित है। हम अपनी हजारों वर्ष पुरानी गौरवशाली विरासत और परंपराओं में विश्वास रखते हैं। यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि केंद्र सरकार के महान प्रयासों से 'वन्दे मातरम्' का पूर्ण स्वरूप हमारे राष्ट्रीय जीवन में एक बार पुनः प्रकाश–स्तंभ बनकर लौट आया है। पश्चिम बंगाल के विभिन्न विद्यालय और सरकारी कार्यक्रमों में अब राष्ट्रगान अनिवार्य रूप से प्रार्थना गीत बन गया है। इसके लिए हम हमारे माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी को धन्यवाद देते हैं।

आज देश में कई देश–विरोधी ताकतों के चेहरे और मुखौटे सामने आ रहे हैं। नए भारत की इस प्रगति को देखकर कई विदेशी ताकतें ईर्ष्या कर रही हैं। इसलिए, 5G प्रौद्योगिकी के इस युग में, इन सभी मतभेदों को भूलाकर प्रत्येक भारतीय के लिए देशप्रेम के लिए एक नई शपथ लेने का दिन आ गया है। हम सभी भारतीय एक ही मंजिल के सहयात्री हैं। हमें समृद्धि और उत्कृष्टता के लक्ष्य को एक साथ प्राप्त करना होगा। हमें प्राचीन सनातन विचारधारा और मूल्यों के साथ–साथ वर्तमान विज्ञान और प्रौद्योगिकी का लाभ लेते हुए देश को विश्व में सर्वश्रेष्ठ बनाने का संकल्प लेना होगा। हमारे महान विद्जनों और स्वतंत्रता सेनानियों के सपनों को पूरा करने की जिम्मेदारी हमारी है।

विश्व के विभिन्न हिस्सों में युद्ध की स्थिति और जिहादी शक्तियों की सक्रियता के इस संकटपूर्ण दौर में, यदि हम नई पीढ़ी में देशप्रेम की भावना को जगा सके, तो हमारा दृढ़ विश्वास है कि हम विश्व की एक महाशक्ति बनकर उभर पाएंगे।

भारतवर्ष ने सदैव शांति, सद्भाव, पारस्परिक सहानुभूति और विकास में आस्था रखी है।

हमारे महान ऋषि–मुनियों की उक्ति – 'वसुधैव कुटुम्बकम्', दैवीय मंत्र 'वन्दे मातरम्' हमारी परंपरा, हमारी सांस्कृतिक विरासत, हमारी प्रगति का गौरवशाली विरासत है। इसलिए हमें इसे हृदयस्पंदन की तरह सहेज कर रखना होगा।

यह गीत आज भी देश—प्रेम का संचार करता है
इतिहास को स्मरण करते हुए भारत माँ की स्तुति करता है
यह गीत अमर ज्योति प्राण की संजीवनी है
वन्दे मातरम् अपने में सबको समाए हुए है।

यह गीत अनेक अत्याचारों और उत्पीड़न की गाथा है
यह मंत्र कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक अमर है
फांसी की रस्सी सामने होते हुए भी असीम साहस से भरा हुआ है मन
अंग्रेजों द्वारा वन्दे मातरम् को प्रतिबंधित करने के बाद भी

महा संघर्ष का मंत्र हमारी आत्मा में बसा हुआ है
हवा के झोंकों में भारत माता की चेतना
के मंत्र की ध्वनि समाहित है
आत्मा का प्रकाश है – वन्दे मातरम्।

पृथ्वी पर नहीं है ऐसा मंत्र—घोष
हजारों सूर्य जिसके कण—कण में समाए हैं
धर्म जहां स्वदेश प्रेम है
पराधीनता की जंजीरें तोड़कर सपनों का देश बनाना है।

ऋषि बंकिम, आप सदैव प्रणम्य है,
राष्ट्रीय अस्मिता में एक दिव्य पहचान हैं
भारतमाता के गौरव की विजयगाथा
प्रगति के पथ पर अग्रसर – वन्दे मातरम्।

भारतीय भाषाओं में 'वन्दे मातरम्' की अभिव्यक्ति

— मिलिंद प्रभाकर सबनीस
पुणे, महाराष्ट्र

मिलिंद प्रभाकर सबनीस राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' के मूर्धन्य अध्येता, प्रख्यात शोधकर्ता एवं लेखक हैं। विगत तीन दशकों से अधिक समय से वे 'वन्दे मातरम्' के इतिहास, इसकी विविध धुनों, गायन–परंपरा तथा राष्ट्रीय चेतना पर इसके प्रभाव का गहन अध्ययन और शोध कर रहे हैं। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आधुनिक काल तक 'वन्दे मातरम्' के विभिन्न रागों एवं धुनों में किए गए गायन का व्यापक ऑडियो–संग्रह और अध्ययन किया है। इनमें पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर द्वारा प्रस्तुत राग काफी तथा आजाद हिंद फौज के मार्च में प्रयुक्त राग दुर्गा जैसी विशिष्ट प्रस्तुतियाँ भी शामिल हैं।

वर्ष 2002 में 'वन्दे मातरम्' के व्यापक प्रचार–प्रसार के उद्देश्य से स्थापित 'जन्मदा प्रतिष्ठान' के वे स्थापना–काल से ही अध्यक्ष हैं। उन्होंने 'वन्दे मातरम्' विषय पर अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकों एवं संकलनों का लेखन एवं संपादन किया है, जिनमें 'वन्दे मातरम् : एक शोध', 'वन्दे मातरम् : एक जयघोष' तथा दो खंडों में प्रकाशित 'समग्र वन्दे मातरम्' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

7 नवम्बर 1875 को बंकिमचंद्र की अलौकिक प्रतिभा से ''वन्दे मातरम्'' का जन्म हुआ। 'वन्दे मातरम्' के अलौकिक स्वरूप को सर्वप्रथम विश्व के समक्ष पूर्व जीवन के क्रांतिकारी और उत्तर जीवन के महान योगी अरविन्द घोष अर्थात् श्री अरविन्द जी ने प्रस्तुत किया। 1905 में बंग–भंग के विरोध में चल रहे आंदोलन के दौरान श्री अरविन्द ने लिखा–

''बंकिम बाबू ने यह गीत अनेक वर्ष पूर्व लिखा था। उस समय इसे बहुत ही कम लोगों ने सुना था। किन्तु दीर्घ मोह–निद्रा से मानो सहसा जाग उठी बंगभूमि की जनता ने सत्य की खोज में चारों ओर दृष्टि दौड़ाई और उसी सौभाग्यपूर्ण क्षण किसी ने गाना आरम्भ किया – 'वन्दे मातरम्!''

''मंत्र प्राप्त हो चुका था। और देखते ही देखते, एक ही दिन में सामान्य जन ने देशभक्ति–धर्म की दीक्षा ग्रहण कर ली थी। मातृशक्ति का दिव्य आविर्भाव हो चुका था। एक बार उस मातृदर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो जाने के बाद लोगों को न विश्राम रहा, न शांति। जब तक मातृमंदिर का पूर्ण निर्माण न हो जाए, उसमें मातृमूर्ति की प्रतिष्ठा न हो जाए और उसके चरणों में अपना सर्वस्व अर्पित न कर दिया जाए, तब तक उन्हें न निद्रा थी, न चैन। जिस महान राष्ट्र को एक बार इस दिव्य दर्शन की अनुभूति हो जाती है, उसके लिए आक्रमणकारियों के जुए के सामने अपना मस्तक झुका देना अथवा दासत्व स्वीकार कर लेना सर्वथा असंभव हो जाता है।''

एक अन्य लेख में उन्होंने लिखा–

''बंकिमचंद्र ने हमें ऐसा अनुपम साधन प्रदान किया, जिसके माध्यम से इस देश की जनता की आत्मा अपनी अभिव्यक्ति पा सकी; वह स्वयं अपने ही वास्तविक आत्मस्वरूप का उद्घाटन करने में समर्थ हुई। उन्होंने जिस

प्रकार अपने देश की भाषिक आवश्यकता की पूर्ति की, उसी प्रकार उसकी राजनीतिक आवश्यकता को भी अपनी दूरदर्शिता से भाँप लिया। ... 'आनंदमठ' और 'देवी चौधरानी' के माध्यम से उन्होंने जिन विविध स्वरूपों में अपना संदेश प्रसारित किया, वह निर्भीक शक्ति, तेजस्विता और ओजस्वी आवेग का प्रकटीकरण उद्घोष था। देशभक्ति का धर्म–राष्ट्रधर्म–तो बंकिमचंद्र के समस्त साहित्य का प्राणतत्त्व है।'' श्री अरविन्द के कथनानुसार, ''वन्दे मातरम्'' के इन शब्दों ने वास्तव में भारतीय स्वाधीनता संग्राम को एक नई दिशा प्रदान की। इस मंत्र का उद्घोष करते हुए हजारों–लाखों देशभक्तों और क्रांतिकारियों ने अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। किन्तु इस गीत का महत्त्व केवल इसी एक तथ्य तक सीमित नहीं है। विश्व के किसी भी देश के इतिहास में ऐसा दूसरा गीत नहीं मिलता, जिसने किसी स्वतंत्रता–संग्राम को इस प्रकार निर्णायक मोड़ प्रदान किया हो। इस गीत में अग्नि की ज्वाला है, स्वाधीनता की चेतना को जागृत करने का अद्भुत सामर्थ्य है; क्योंकि मूलतः यह एक अनुपम एवं अद्वितीय साहित्यिक कृति है। बंकिमचंद्र बंगाल प्रांत के निवासी थे और उन्होंने अपना अधिकांश साहित्य बांग्ला भाषा में ही रचा। यद्यपि उनके कुछ वैचारिक लेख और निबंध अंग्रेजी में भी लिखे गए। उनकी प्रथम कृति, उपन्यास 'राजमोहन्स वाइफ', भी अंग्रेजी भाषा में ही लिखा गया था। किन्तु शीघ्र ही उन्हें यह अनुभव हो गया कि जिस सहजता, संवेदनशीलता और आत्माभिव्यक्ति के साथ मनुष्य अपनी मातृभाषा में स्वयं को व्यक्त कर सकता है, वह किसी विदेशी भाषा में, चाहे वह अंग्रेजी ही क्यों न हो, संभव नहीं। इसी अनुभूति के फलस्वरूप उन्होंने अपनी सभी आगामी कृतियाँ और उपन्यास बांग्ला भाषा में ही लिखे।

बंकिमचंद्र का संस्कृत पर असाधारण अधिकार था। संस्कृत साहित्य की गहरी छाप उनके समस्त साहित्य पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। 'वन्दे मातरम्' की रचना हृदय की सहज प्रेरणा और भावावेग से हुई थी; इसलिए उसे किसी भाषा की सीमाओं में बाँध पाना स्वयं बंकिमचंद्र के लिए भी संभव नहीं था। यह गीत बांग्ला और संस्कृत, दोनों भाषाओं का अद्भुत समन्वय है। किन्तु इसकी विशेषता यह नहीं कि प्रत्येक वाक्य में कुछ शब्द बांग्ला के हैं और कुछ संस्कृत के; बल्कि इसकी रचना इस प्रकार हुई है कि इसके कुछ वाक्य पूर्णतः बांग्ला में हैं, जबकि कुछ पूर्णतः संस्कृत में रचे गए हैं। फिर भी, इस भाषिक समन्वय से उसकी प्रभावशीलता कहीं भी क्षीण नहीं होती। इसके विपरीत, यही विशेषता उसके सौंदर्य और गरिमा को और अधिक बढ़ा देती है। 'वन्दे मातरम्' की रचना के उपरान्त बंकिमचंद्र ने उसका प्रथम पाठ हरप्रसाद शास्त्री तथा अपने अन्य साहित्यकार मित्रों के समक्ष किया था। साहित्यिक जगत में उस समय इसे विशेष सराहना नहीं मिली। किसी ने इसके शब्दों को कर्णकटु कहा, तो किसी ने इसकी भाषा और व्याकरण पर आपत्ति उठाई। अनेक प्रकार की आलोचनाएँ हुईं, किन्तु बंकिमचंद्र अपने सृजन के प्रति अडिग रहे। उन्होंने 'वन्दे मातरम्' में एक भी शब्द या पंक्ति परिवर्तित करना स्वीकार नहीं किया।

लगभग पाँच वर्ष पश्चात्, 1880 से 1882 के मध्य 'बंग–दर्शन' पत्रिका में धारावाहिक रूप से प्रकाशित उपन्यास 'आनन्दमठ' में बंकिमचंद्र ने इस गीत को सम्मिलित किया। ऐसा प्रतीत होता है मानो यह गीत विशेष रूप से 'आनन्दमठ' उपन्यास के लिए लिखा गया हो। यह गीत उपन्यास के कथानक, उसके भावलोक और उसकी राष्ट्रीय चेतना से इस प्रकार एकरूप हो गया कि दोनों को एक–दूसरे से पृथक करके देखना असंभव सा प्रतीत होता है। 'आनन्दमठ' के माध्यम से 'वन्दे मातरम्' प्रभावशाली ढंग से सामान्य बंगाली पाठकों तक पहुँच गया। परन्तु इतनी विलक्षण रचना का संदेश केवल बंगाल तक सीमित रहना संभव नहीं था। अन्य भाषाओं के पाठकों तक भी इस प्रकार का गीत पहुँचना आवश्यक था। अगले सात–आठ दशकों में 'वन्दे मातरम्' के अनेक भारतीय

भाषाओं में अनुवाद किए गए और इस प्रकार यह गीत सम्पूर्ण राष्ट्र की सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना का अभिन्न अंग बन गया। विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि जिस 'आनन्दमठ' उपन्यास में 'वन्दे मातरम्' का समावेश किया गया था, उसी उपन्यास का संस्कृत, कोंकणी सहित अनेक भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ। किन्तु इन सभी अनुवादों में 'वन्दे मातरम्' को उसके मूल रूप में ही सुरक्षित रखा गया। इसका एकमात्र अपवाद श्री अरविन्द द्वारा किया गया 'आनन्दमठ' का अंग्रेजी अनुवाद है, जिसमें उन्होंने इस गीत का भी अंग्रेजी रूपान्तरण प्रस्तुत किया।

'वन्दे मातरम्' का प्रथम अनुवाद स्वयं बंकिमचंद्र के जीवनकाल में ही हुआ था। उल्लेखनीय है कि यह अनुवाद भारत की सर्वाधिक प्राचीन मानी जाने वाली भाषा संस्कृत में किया गया था। विजयलाल दत्त ने अपनी कविता 'जागो मा आमार' में प्रारम्भ में अपनी कुछ मौलिक पंक्तियाँ दीं, तत्पश्चात 'वन्दे मातरम्' का संस्कृत अनुवाद प्रस्तुत किया और अंत में पुनः अपनी ऐसी काव्य–पंक्तियाँ जोड़ीं, जिनमें 'वन्दे मातरम्' के महत्त्व का ओजस्वी प्रतिपादन किया गया है। सन् 1887 में 'जातीय समिति' के उपलक्ष्य में आयोजित आड़बालिया ज्ञान विकासिनी सभा में विजयलाल दत्त ने इस कविता का सार्वजनिक पाठ किया था। इस संस्कृत रूपान्तर की एक विशेषता यह थी कि मूल गीत में जहाँ–जहाँ बांग्ला भाषा के शब्द अथवा पंक्तियाँ थीं, केवल उन्हीं का संस्कृत में रूपान्तरण किया गया; शेष गीत को उसके मूल स्वरूप में ही यथावत् रखा गया। उदाहरण के लिए 'के बोले मा तुमी अबले' के स्थान पर 'कोऽभिधन्ते मातरबले' तथा 'बाहुते तुमी मा शक्ति' के स्थान पर

भुजयोस्त्वमसि शक्तिः।
चेतसि त्वमसि भक्तिः।
सृजामि ते प्रतिमूर्तिं मन्दिरे मन्दिरे।

जैसी पंक्तियाँ दी गई हैं।

ऋषि बंकिमचंद्र द्वारा रचित 'वन्दे मातरम्' के अधिकांश पद और शब्दावली मूलतः संस्कृतनिष्ठ हैं। यही कारण है कि इस संस्कृत रूपान्तर में लगभग सभी पंक्तियाँ सहज रूप से संस्कृत में रूपांतरित हो गई हैं। इस दृष्टि से इसे 'वन्दे मातरम्' का पूर्णतः स्वतंत्र और समग्र प्रथम अनुवाद नहीं माना जा सकता।

इस घटना से एक वर्ष पूर्व, 6 अगस्त 1886 को कलकत्ता में आयोजित राष्ट्रीय सभा के अधिवेशन में सुप्रसिद्ध बंगाली कवि हेमचंद्र बंदोपाध्याय ने अपनी स्वरचित कविता 'कि आनंद आज भारत भुवने, भारत जननी जागील' के साथ 'वन्दे मातरम्' की कुछ पंक्तियों का समावेश किया था। यह रचना 'राखीबंधन' नाम से प्रसिद्ध है। इसी प्रकार, सन् 1886 में रवीन्द्रनाथ ठाकुर परिवार द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'बालक पत्रिका' में प्रकाशित एक लेख में 'वन्दे मातरम्' का उल्लेख 'विख्यात गान' के रूप में किया गया था। इससे स्पष्ट होता है कि उस समय तक 'वन्दे मातरम्' की कीर्ति धीरे–धीरे बंगाल से निकलकर व्यापक जनमानस में फैलने लगी थी।

'वन्दे मातरम्' के इस संस्कृत रूपान्तर के पश्चात् कुछ समय तक इसके क्रमिक अनुवाद मुख्यतः अंग्रेजी भाषा में ही किए गए। इनमें से संस्कृत अनुवाद के तुरंत बाद किया गया अंग्रेजी अनुवाद 'वन्दे मातरम्' का प्रथम अधिकृत अनुवाद माना जाता है। यह अंग्रेजी रूपान्तर श्री अरविन्द के मातामह (नाना), ऋषि राजनारायण बसु ने किया था। ऋषि राजनारायण बसु ने ही सन् 1867 में 'हिन्दू मेला' नामक संस्था की स्थापना की थी। 'हिंदू मेला' को राष्ट्रीय सभा अर्थात् भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का पूर्वरूप माना जाता है। यद्यपि राष्ट्रीय सभा की

स्थापना के समय तक हिंदू मेला की गतिविधियां मंद पड़ चुकी थीं, तथापि उसके संस्थापक राजनारायण बसु का प्रभाव बंगाल के जनमानस पर पूर्ववत् बना हुआ था। इतना ही नहीं, समय के साथ उनके प्रति जनता का सम्मान और अधिक गहरा एवं व्यापक होता गया। 'हिंदू मेला' के संस्थापकों में से एक ऋषि राजनारायण बसु ने सन् 1888 में 'वन्दे मातरम्' का प्रथम अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत किया। चूँकि यह 'वन्दे मातरम्' का पहला अंग्रेजी रूपान्तर था और राजनारायण बसु की समस्त राष्ट्रीय गतिविधियां ब्रिटिश शासन की सतर्क निगाहों में थीं, इसलिए इस अनुवाद ने भी तत्काल ब्रिटिश प्रशासन का ध्यान आकर्षित किया। फलस्वरूप, सन् 1889 में पहली बार ब्रिटिश संसद में 'वन्दे मातरम्' के आशय पर संदेह व्यक्त किया गया। यह प्रश्न उठाया गया कि ''यद्यपि यह गीत ऊपर से काली माता अथवा देवी की उपासना का गीत प्रतीत होता है, किन्तु कहीं इसमें अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का अप्रत्यक्ष संकेत तो नहीं है?'' इस प्रसंग का उल्लेख करते हुए राजनारायण बसु पर शोधपूर्ण लेखन करने वाले डॉ. अश्रु कोले लिखते हैं कि उस समय ब्रिटिश संसद में यह तर्क दिया गया था कि हिंदू समाज में राष्ट्र की कोई अवधारणा नहीं है। तब सर जॉन वुडरॉफ तथा राजनारायण बसु के विचारों से प्रेरित कुछ विद्वानों ने एक विस्तृत और तर्कसंगत प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। उसमें यह प्रतिपादित किया गया कि हिंदू परम्परा में राष्ट्र को 'माता' के रूप में प्रतिष्ठित करने की अवधारणा अत्यन्त प्राचीन काल से विद्यमान रही है।'

श्री राजनारायण बसु का यह अनुवाद

I worship thee, O Mother

Thee the nice -watered, bearing nice fruits, cooled by zephyrs, verdant with the corn - plants,

32 पक्तियों के अनुवाद में अंतिम चरण में वो लिखते हैं . . .

The goddess of fortune, the pure and the peerless,
The nice-watered, bearing nice fruits,
The mother;
We adore thee again and again,
The verdant the simple, the well-decked
All bearing all cherishing the Mother

इस प्रकाशित विवरण के साथ निम्नलिखित संदर्भ भी उद्धृत है–

Old Hindu Hope or a Proposal for the Establishment of a Hindu National Congress, y. C. Bose & Co., Calcutta, pp. 45–46.

उपलब्ध साक्ष्यों के अनुसार, 'वन्दे मातरम्' के अंग्रेजी में कुल नौ अनुवाद हुए। राष्ट्रऋषि राजनारायण बसु के नाती श्री अरविन्द ने भी लगभग सन् 1907 के आसपास 'वन्दे मातरम्' का एक गद्यात्मक तथा एक पद्यात्मक अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत किया। यह तथ्य अत्यन्त विलक्षण और संभवतः अद्वितीय है कि दादा और नाती, दोनों ने एक ही काव्य का एक ही भाषा में, किन्तु भिन्न–भिन्न शैली में, स्वतंत्र रूप से अनुवाद किया। विश्व के अनुवाद–साहित्य में ऐसे उदाहरण अत्यन्त विरल और संभवतः एकमात्र माने जा सकते हैं। यद्यपि श्री अरविन्द द्वारा किए गए 'वन्दे मातरम्' के दोनों अंग्रेजी अनुवादों का मूल भाव एक ही है, तथापि उनकी शब्दावली, अभिव्यक्ति और प्रस्तुति में उल्लेखनीय वैविध्य दिखाई देता है। विशेषतः अपने गद्यात्मक अनुवाद के साथ

उन्होंने एक महत्त्वपूर्ण 'अनुवादक की टिप्पणी' भी संलग्न की है। उसमें वे लिखते हैं–

TRANSLATOR'S NOTE

It is difficult to translate the National Anthem of Bengal into verse in another language owing to its unique union of sweetness, simple directness and high poetic force. All attempts in this direction have been failures. In order, therefore, to bring the reader unacquainted with Bengali nearer to the exact force of the original, I give the translation in prose line by line.

श्री अरविन्द अनुवाद की शुरुआत में लिखते हैं,

Mother, I bow to thee,
Rich with thy hurrying streams,
Bright with thy orchards gleams,
Cool with thy winds of delight,
Dark fields waving, Mother of might,
Mother free.

श्री अरविन्द के अनुवादों के अतिरिक्त, 'वन्दे मातरम्' के अंग्रेजी रूपान्तरों की एक समृद्ध परम्परा भी देखने को मिलती है। इंडियन मिरर के 11 नवम्बर 1905 के अंक में एक अनाम कवि द्वारा किया गया अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हुआ था। इसी प्रकार, द स्टेट्समैन के 29 अक्तूबर 1905 के अंक में प्रकाशित एक अंग्रेजी अनुवाद के नीचे यह उल्लेख था, Translated by the Members of Indian Political Council in America. इसके अतिरिक्त नरेशचंद्र सेनगुप्त तथा राम शर्मा के अंग्रेजी अनुवाद भी लगभग 1980 के आसपास प्रकाशित हुए। अंग्रेजी अनुवादों में से एक अनुवाद लगभग 1900 के आसपास एक ब्रिटिश अधिकारी द्वारा भी किया गया था।

ब्रिटिश सेना में भारत में कार्यरत ब्रिटिश भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.सी.एस.) के अधिकारी विलियम हेनरी लाउन्ड्स लेफ्टविच (William Henry Lowndes Leftwich) ने 'वन्दे मातरम्' का अंग्रेजी अनुवाद किया था। किसी विदेशी द्वारा किया गया यह 'वन्दे मातरम्' का संभवतः एकमात्र ज्ञात अंग्रेजी अनुवाद है। उन्होंने अपने अनुवाद का आरम्भ इन शब्दों से किया– "My Mother-land I sing." लगभग सवा सौ वर्ष पूर्व किए गए इस अनुवाद में उस समय की अंग्रेजी भाषा का विशिष्ट स्वरूप स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। साथ ही, अंग्रेजी के उपयुक्त शब्दों का प्रयोग करते हुए भी उन्होंने विद्या, दुर्गा, लक्ष्मी और वाणी (विद्यादायिनी सरस्वती) जैसे भारतीय सांस्कृतिक पदों को उनके मूल रूप में ही सुरक्षित रखा।

अंग्रेजी के पश्चात् 'वन्दे मातरम्' के सर्वाधिक अनुवाद मराठी भाषा में हुए हैं। उपलब्ध जानकारी के अनुसार, मराठी में इसके कुल पाँच अनुवाद प्राप्त होते हैं। इनमें सबसे प्राचीन अनुवाद गोवा के आरम्भिक काल के कवि विष्णु रंगाजी शेलडेकर द्वारा रचित 'वंदन त्या जननीला' शीर्षक से उपलब्ध है। उस अनुवाद की भाषा, शब्दावली और काव्य–रचना का स्वरूप देखते हुए यह अनुमान किया जा सकता है कि उसकी रचना बीसवीं शताब्दी के प्रथम दो दशकों में, मराठी के सुप्रसिद्ध कवियों, बालकवी ठोंबरे और राष्ट्रकवि गोविन्द जी के समकालीन कालखंड में हुई होगी। यद्यपि इसके रचनाकाल के संबंध में प्रामाणिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं हैं, तथापि उसकी भाषिक शैली इस अनुमान को पर्याप्त आधार प्रदान करती है। वह अनुवाद अत्यन्त सरस, भावपूर्ण और काव्य–सौन्दर्य से सम्पन्न है।

इसके पश्चात् उपलब्ध अधिकांश मराठी अनुवाद आधुनिक काल, अर्थात् पिछले लगभग पच्चीस वर्षों में किए गए हैं। 'वन्दे मातरम्' की 125वीं जयंती के अवसर पर डॉ. प्रदीप आगाशे जी ने 1999 में 'वन्दे मातरम् : एक शोध' पुस्तक के लिए 'वन्दितो माते तुला मी' शीर्षक से एक स्वतंत्र पद्यानुवाद किया। इसमें कुल दस पद हैं। 2007 में प्रकाशित एक पुस्तक में श्री ज्ञानेश्वर कुलकर्णी जी का 'वंदन तुज माते' शीर्षक से किया गया अनुवाद प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त श्री नरेंद्र गोले जी ने 'आई तुला प्रणाम' शीर्षक से अनुवाद किया। 2014 में प्रकाशित 'समग्र वन्दे मातरम्' ग्रंथ के लिए विशेष रूप से वरिष्ठ कवि प्रवीण दवणे जी ने 'वन्दन मातृ भू' शीर्षक से मूल 'वन्दे मातरम्' के उसी छंद में अनुवाद किया। ऋषि बंकिमचंद्र की मूल रचना के छंद और संरचना का अनुसरण करने वाला यह मराठी का एकमात्र अनुवाद माना जाता है। प्रवीण दवणे जी का अनुवाद –

वन्दन मातृभू
सुजला सुफला मलयशीतल तू
सुपीक सावली माय तू
वन्दन मातृभू।।
कुमुदिनीबरसे, उमले रजनी
नवकुसुमांनी, बहरे अवनी
सुहासिनी, सुमधुरभाषिणी
सुखदा वरदा माय तू
वन्दन मातृभू

हिंदी में अब तक 'वन्दे मातरम्' के केवल तीन ही अनुवाद उपलब्ध हैं। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा मदनलाल वर्मा 'क्रान्त' द्वारा किए गए 'वन्दे मातरम्' के दो हिंदी अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। ये दोनों अनुवाद भी मुक्त छंद शैली में हैं। हाल ही में आकाशवाणी, मुंबई केंद्र के वरिष्ठ उद्घोषक जयंत पाथ्रीकर द्वारा किया गया 'वन्दे मातरम्' का एक नवीन हिंदी अनुवाद ध्वनिमुद्रित हुआ है। श्री पाथ्रीकर का हिंदी अनुवाद–

वंदन है मातृभूमि तेरी जय जय
यशगान तुम्हारा गाएं हम सब निर्भय
वंदन है मातृभूमि....
मलयानिल से शीतल तू सुजला सुफला
हरी–भरी तू रहे हमेशा रूप श्यामला
आनंदित सुख संस्कृति से आंगन है ।1।
वंदन है मातृभूमि तेरी जय जय

पुलकित है चांदनी से रात्रियां
शोभित है वृक्ष सुमन औ वल्लरियां

सुहासिनी तू सुभाषिनी
सुख दायिनी वर दायिनी अभिनंदन है ।2।
वंदन है मातृभूमि तेरी जय जय

कोटि—कोटि कण्ठों का स्वर गुंजायमान
खड्गधारी हैं भुजाएं तू शक्तिमान
कौन कहे अबला, तू बहुबलधारिणी
तारिणी है तू मां, करती रिपुओं का क्षय (3)
वंदन है मातृभूमि तेरी जय जय

तू विद्या तू ही धर्म है
हृदय में निहित मर्म है
ओज इस शरीर का तू बाहुओं की शक्ति
नित हृदय में वास तेरा तू ही तो भक्ति
गढ़ मंदिर मंदिर तेरी प्रतिमा
तेरा ही पूजन है।।4।।
वंदन है मातृभूमि तेरी जय जय

दशशस्त्रधारिणी दुर्गा तू शक्ति रूप है
कमलदलविहारिणी लक्ष्मी का अभिरूप है
वाणी विद्या दायिनी तुझको नमन
धन—धान्य दात्री परम शुचिता को नमन
श्यामल सरला माता सुस्मित अलंकारिता
धारिणी है मां तू निज संतानों की पोषिता
स्पंदित हो इस पूज्य भाव का आशय (5)
वंदन है मातृभूमि तेरी जय जय
यशगान तुम्हारा गाते हैं सब निर्भय।।

अन्य भारतीय भाषाओं में 'वन्दे मातरम्' के अनुवादों की संख्या भी अत्यंत सीमित है। तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और गुजराती—इन कुछ ही भाषाओं में इसके अनुवाद उपलब्ध हैं। कन्नड़ में संध्या दीक्षित द्वारा किया गया 'वंदन मातेगे' तथा गुजराती में चिरायु पंडित द्वारा किया गया 'वंदु मा तने' शीर्षक से अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। उल्लेखनीय है कि ये दोनों अनुवाद विशेष रूप से मेरे 'समग्र वन्दे मातरम्' ग्रंथ के लिए ही किए गए थे। इन अनुवादों में मूल रचना 'वन्दे मातरम्' की नादमयता और काव्यात्मक लय को अत्यंत सुंदर ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। विशेषतः कन्नड़ अनुवाद में "तुमि विद्या, तुमि धर्म" का रूपांतरण करते हुए अनुवादिका लिखती हैं—

नी विद्ये, नीने धर्म
नम्म हृदयदी नीने मर्म
नीनागिरुवी प्राण शरिरदी
बाहुगलली नी नम्म शक्ति
नीने हृदयदालद भक्ति .
निन्नदे मूर्ति गुडी गुडीगललिरे मातेगे ।
वन्दने मातेगे ।

तेलुगु के सुप्रसिद्ध कवि लक्ष्मी नरसिंह पंतलु ने 'वन्दे मातरम्' का तेलुगु रूपांतरण 'वंदनमम्मा भारतमाता' शीर्षक से किया था। प्रख्यात तमिल कवि सुब्रह्मण्य भारती की 'वन्दे मातरम्' शीर्षक से दो कविताएँ प्रकाशित हैं। यद्यपि इन रचनाओं में 'वन्दे मातरम्' का भाव और संदेश प्रतिबिंबित होता है तथापि इन्हें मूल काव्य का प्रत्यक्ष अनुवाद नहीं कहा जा सकता। विख्यात गायिका डॉ. एम. एस. सुब्बलक्ष्मी के स्वर में गाया गया तमिल 'वन्दे मातरम्' का ध्वनिमुद्रण भी अत्यंत लोकप्रिय और प्रसिद्ध है।

इसके अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं में भी 'वन्दे मातरम्' के अनुवाद हुए होने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता, किंतु वर्तमान में उनके संबंध में प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं हो सकी है।

सबसे आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि जहाँ एक ओर मुस्लिम समाज के अनेक नेताओं ने 'वन्दे मातरम्' का सबसे अधिक विरोध किया और यह दावा किया कि उर्दू में इस प्रकार की रचनाएँ पहले कभी नहीं हुईं, वहीं दूसरी ओर इसी धारणा का खंडन करने वाले 'वन्दे मातरम्' के कम–से–कम चार उर्दू अनुवाद उपलब्ध हैं। जिस समय बैरिस्टर जिन्ना 'वन्दे मातरम्' पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने की माँग कर रहे थे, उसी कालखंड में 7 अक्टूबर 1937 के उर्दू दैनिक 'पयाम' में काजी अब्दुल गफ्फार द्वारा किया गया 'वन्दे मातरम्' का उर्दू अनुवाद "मादरे–वतन! हम तुझे सलाम करते हैं" शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त भानू (संभवतः भानुशंकर मेहता) तथा सीमब अकबराबादी द्वारा किए गए उर्दू अनुवाद क्रमशः 1976 और 1983 में प्रकाशित हुए। हाल के वर्षों में बिहार के राज्यपाल आरिफ मोहम्मद खान द्वारा 'वन्दे मातरम्' के प्रथम पद का किया गया उर्दू अनुवाद भी विशेष रूप से चर्चित रहा है।

आज 'वन्दे मातरम्' के विभिन्न भाषाओं में 26 से अधिक अनुवाद उपलब्ध हैं। मूल 'वन्दे मातरम्' गीत का जनमानस पर अत्यंत गहरा प्रभाव रहा है। यही कारण है कि इसका अनुवाद करना सहज नहीं है, इस तथ्य का भान इन सभी कवियों को अवश्य रहा होगा। संभवतः इसी कारण पिछले लगभग डेढ़ सौ वर्षों में 'वन्दे मातरम्' के केवल पच्चीस–छब्बीस अनुवाद ही सामने आए हैं। निस्संदेह, यह संख्या छोटी नहीं कही जा सकती। इन सभी अनुवादकों ने अपनी–अपनी भाषा के माध्यम से बंकिमचंद्र के शब्दों, उनके भाव, उनकी काव्यात्मक गरिमा तथा मूल रचना की आत्मा के साथ न्याय करने का ईमानदार प्रयास किया है। उनके प्रत्येक अनुवाद में 'वन्दे मातरम्' के प्रति उनकी गहन श्रद्धा, आदर और भावसमर्पण स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त होता है।

प्रत्येक भाषा की अपनी विशिष्ट प्रकृति, अपनी सांस्कृतिक पहचान और अपनी अलग भाषिक लय होती है। 'वन्दे मातरम्' जैसे संस्कृत–प्रधान तथा बांग्ला–प्रभावित काव्य का किसी दूसरी, पूर्णतः भिन्न मातृभाषा में रूपांतरण

करना किसी भी कवि के लिए निस्संदेह एक बड़ी चुनौती है। किन्तु फिर भी 'वन्दे मातरम्' में निहित राष्ट्रभक्ति की तीव्र, भक्तिमय भावना कवि को शब्दों के माध्यम से उसे पुनः अभिव्यक्त करने के लिए प्रेरित करती है।

'वन्दे मातरम्' का अनुवाद करना वस्तुतः शब्दों के माध्यम से बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय को अर्पित एक सुंदर एवं भावपूर्ण श्रद्धांजलि है। इन सभी अनुवादकों के अंतर्मन में भी यही भावना विद्यमान रही है। 'वन्दे मातरम्' के प्रत्यक्ष अनुवादों के अतिरिक्त अनेक प्रतिष्ठित कवियों ने भी इस अमर गीत से प्रेरणा ग्रहण कर अपनी मौलिक काव्य–रचनाओं में 'वन्दे मातरम्' शब्दों का समावेश किया है। इनमें रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सरलादेवी चौधुरानी, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, कविवर बेनी माधव, क्रांतिकारी पंडित रामप्रसाद बिस्मिल, स्वामी श्रद्धानन्द के सुपुत्र कवि इन्द्र, मराठी के आधुनिक वाल्मीकि कवि गजानन दिगम्बर माडगूलकर, गुजराती के सुप्रसिद्ध कवि नानालाल दलपतराम तथा मलयालम के महाकवि वल्लतोल नारायण मेनन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्हीं में से मलयालम के महाकवि वल्लतोल नारायण मेनन लिखते हैं,

वंदिप्पिन् मातविन, वंदिप्पिन मातविन,
वंदिप्पिन वरेण्ययँ, वंदिप्पिन् वरदय।

(माता की वंदना करो, माता की वंदना करो, जो श्रेष्ठ है उनकी वंदना करो)

आदरणीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी भी 'वन्दे मातरम्' के संबंध में अपनी भावनाएँ व्यक्त करते हैं...

वन्दे मातरम्
अे गान नथी
आ शान, बान अने आन आपणी
आझादीना महायज्ञनी आहुति आ
राष्ट्रभक्तिनी आहलेक आ
गणतंत्रना उरतंत्रनो महामंत्र आ
विकासनी आ सतत धबकती
अणनम ओलख रहे आपणी

1857 नो प्रकाश पुंज आ
सत्यकाजे रक्तनो अभिषेक अविरत

वन्दे मातरम् अे शब्द नही ,
आ मंत्र आपणो
आझादीना ऊर्जानो धबकार आपणो
विकासनो आ राजमार्ग छे
संकल्पित आ राष्ट्रजीवननो महामार्ग छे
प्रजाजीवननी प्रत्येक प्रत्येक प्रभातनी
प्रत्येक प्रबुद्ध चेतनानो स्वर आ छे
वन्दे मातरम् . . . .

इस गीत का चिरायु पंडित द्वारा किया हिंदी अनुवाद –

वन्दे मातरम् नहीं है केवल गान
है हमारी आन बान और शान
आजादी के महायज्ञ की है आहुति ,
है राष्ट्रभक्ति का आह्वान
लोकतंत्र के अंतर्मन का महामंत्र यह
विकास की सदा धड़कती
ना झुकने वाली पहचान

अठ्ठारह सौ सत्तावन का यह प्रकाश पुंज
सत्य के लिए रक्त का अभिषेक अविरत
वन्दे मातरम् यह शब्द नहीं
है मंत्र हमारा
आजादी की ऊर्जा की हमारी धड़कन
विकास का यह राजमार्ग
संकल्पित राष्ट्र जीवन का यह महामार्ग
जनजीवन के हर प्रभात का
प्रबुद्ध स्वर है
वन्दे मातरम् ....

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि ऋषि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय रचित राष्ट्र को समर्पित 'वन्दे मातरम्' राष्ट्रीय गीत के अनुवाद भारतीय अनूदित गीतों के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

वन्दे मातरम् गीत की रचना : परिस्थितियाँ और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

–डॉ. शुभम सिंह
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
सरकारी कला और वाणिज्य महाविद्यालय,
जाफराबाद, गुजरात

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के परिप्रेक्ष्य में जब हम राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक अस्मिता तथा स्वाधीनता की परिकल्पना करते हैं, तब हमारे समक्ष अपनी संपूर्णता के साथ बंकिमचंद्र द्वारा रचित 'वन्दे मातरम्' गीत ही द्रष्टव्य होता है। बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारतीय राष्ट्रवाद की वैचारिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के रूप में हमारे समक्ष आता है। इस गीत के लेखन के संदर्भ में प्रसिद्ध बंगाली आलोचक कार्तिकचंद्र दत्त लिखते हैं कि 'आनंदमठ' से कई वर्ष पहले 1874–75 में किसी समय यह गीत लिखा गया था।"[1] इस गीत के प्रकाशन, इसके व्यापक राष्ट्र–बोध और प्रसिद्धि के संदर्भ में वे स्पष्ट करते हैं कि "यह गीत जब लिखा गया था तब इतना प्रसिद्ध नहीं हुआ, लेकिन बाद में यह सबकी जबान पर चढ़ गया। इसके 'आनंदमठ' से संयोजित होकर 1882 में प्रकाशन के दो वर्षों के भीतर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इस गीत के पहले दो छंदों की स्वरलिपि बनाई थी और बंकिमचंद्र को गाकर सुनाया था।"[2]

'वन्दे मातरम्' गीत केवल भारतीय जनमानस के जन–कण में रचा बसा ही नहीं है अपितु इस गीत के रचनाकार स्वयं बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय के हृदय में बसी राष्ट्रीय चेतना और देश–भक्ति का प्रतिबिम्ब है। इस बात की पुष्टि कार्तिकचंद्र दत्त के आलेख 'वन्दे मातरम् और भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन' के माध्यम से होती है, "यह गीत स्वयं बंकिमचन्द्र को बहुत ही प्रिय था। एक बार उन्होंने 'बंगदर्शन' के श्री रामचन्द्र बंद्योपाध्याय से कहा था, 'इस गीत का मर्म तुम लोग अभी नहीं समझोगे। कोई पच्चीस वर्ष जीवित रहे तो देखोगे कि इस गीत पर सारा बंगाल नाचेगा।"[3] देखा जाए तो इस गीत में भारतीय राष्ट्रवाद की वैचारिक और सांस्कृतिक अस्मिता के तत्त्व इसके प्रकाश में आने के साथ ही दिखने लगे थे। इस गीत ने न केवल पराधीन भारत के जनमानस में राष्ट्रप्रेम, स्वाभिमान, त्याग और स्वतंत्रता के प्रति अटूट विश्वास का संचार किया बल्कि स्वतंत्रता–संग्राम के व्यापक सरोकारों को जनजागरण से जोड़ने का प्रभावी माध्यम बना।[4] साहित्यिक दृष्टि से 'वन्दे मातरम्' भारतीय काव्य–परंपरा का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें मातृभूमि का रूपांकन प्रकृति, संस्कृति और शक्ति के समन्वित स्वरूप में किया गया है। यह गीत केवल भावात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि भारतीय राष्ट्रवाद के सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और वैचारिक आधारों को भी उद्घाटित करता है। इसी कारण इसकी महत्ता ऐतिहासिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक–तीनों स्तरों पर देखी जा सकती है।

'वन्दे मातरम्' के प्रारंभिक इतिहास का अध्ययन भारतीय राष्ट्रवादी चेतना के विकास को समझने की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। 'वन्दे मातरम्' गीत की महत्ता इस दृष्टि में महत्त्वपूर्ण है कि इस गीत के कारण सदियों से सुप्त और पराधीन देश जागृत हो उठा और बाद में यह गीत स्वतंत्रता आंदोलन का प्रेरक मंत्र बना, इस गीत से प्रेरणा लेकर लाखों युवाओं के हृदय में राष्ट्रप्रेम की ज्योति प्रज्वलित हुई। इस गीत के संबंध में श्री अरबिंदो घोष अंग्रेजी दैनिक 'वन्दे मातरम्' में लिखते हैं कि रचना के प्रारंभिक चरण में यह गीत सीमित पाठक–वर्ग तक ही पहुँचा था, किंतु जैसे–जैसे बंगाल में राष्ट्रीय चेतना और राजनीतिक जागरण का विस्तार

हुआ, 'वन्दे मातरम्' जनमानस में राष्ट्रभक्ति के सशक्त प्रतीक के रूप में स्थापित होता गया।

'वन्दे मातरम्' का साहित्यिक विकास भारतीय राष्ट्रचेतना के विकास से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। यह गीत केवल एक काव्य–रचना नहीं, बल्कि 'आनन्दमठ' की वैचारिक आत्मा और उसके राष्ट्रीय संदेश का सशक्त माध्यम है। 'आनन्दमठ' के पुस्तकाकार प्रकाशन से पूर्व यह उपन्यास बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय द्वारा संपादित बंगाली मासिक पत्रिका 'बंगदर्शन' में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ।[5] 'आनंदमठ' उपन्यास का ऐतिहासिक संबंध व्यापक रूप से संन्यासी–फकीर विद्रोह से जोड़ा जाता है, क्योंकि उस समय बंगाल और आसपास के क्षेत्रों में अंग्रेजी औपनिवेशिक शासन तथा उसके शोषणकारी आर्थिक तंत्र के विरुद्ध हिंदू संन्यासियों और मुस्लिम फकीरों–दोनों ने मिलकर प्रतिरोध किया था।[6] वर्ष 1881 के अंक में प्रकाशित इसकी प्रथम किस्त में ही 'वन्दे मातरम्' गीत को सम्मिलित किया गया था। उस समय यह गीत उपन्यास की कथावस्तु के साथ राष्ट्रीय चेतना का स्वर बनकर पाठकों के समक्ष उपस्थित हुआ। इसके पश्चात 1882 में 'आनंदमठ' के पुस्तकाकार प्रकाशन के साथ 'वन्दे मातरम्' को व्यापक लोकप्रियता प्राप्त हुई।

उपन्यास के संन्यासी पात्रों के मुख से निकला यह गीत केवल कथा का मात्र एक अंश नहीं रहा, बल्कि पराधीन भारत के लिए स्वाधीनता और आत्मगौरव का उद्घोष बन गया। भारतमाता की वंदना के रूप में रचित इस गीत ने राष्ट्रीय आदर्शों का प्रतीक बनकर पाठकों के हृदय को गहराई से प्रभावित किया। 'आनन्दमठ' उपन्यास ने जहाँ इस गीत को कथात्मक संदर्भ, वैचारिक आधार और सांस्कृतिक अर्थवत्ता प्रदान की वहीं 'वन्दे मातरम्' ने 'आनन्दमठ' को राष्ट्रीय कृति के रूप में प्रतिष्ठित किया। दोनों का संबंध इतना गहन है कि 'आनन्दमठ' के बिना 'वन्दे मातरम्' की ऐतिहासिक भूमिका अधूरी प्रतीत होती है और 'वन्दे मातरम्' के बिना 'आनन्दमठ' की राष्ट्रीय चेतना अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं प्राप्त कर सकती है। यही पारस्परिक संबंध 'वन्दे मातरम्' को भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का प्रेरणागीत और भारतीय राष्ट्रवाद के सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में स्थापित करता है।

किसी गीत की सार्थकता एवं ऐतिहासिक महत्त्व उसके प्रति व्यापक जन समर्थन और सामाजिक प्रभाव में निहित है। 'वन्दे मातरम्' गीत प्रकाश में आने के साथ ही साहित्यिक सीमाओं का अतिक्रमण कर राष्ट्रीय चेतना का स्वर बन गया। पहला अवसर था सन् 1886 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन, जहाँ इसके गायन ने इसे राष्ट्रीय मंच प्रदान किया, वहीं दूसरा अवसर सन् 1905 का बंग–भंग आंदोलन, जहाँ यह गीत ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध जनसंघर्ष का प्रमुख उद्घोष बन गया। इस संदर्भ में कार्तिकचंद्र दत्त लिखते हैं, "1886 में कांग्रेस के द्वितीय अधिवेशन में कविवर रवीन्द्रनाथ ने इस गीत को कांग्रेस मंच पर दूसरे राष्ट्रीय गीतों के साथ गाया था। यह गीत बंग–भंग आंदोलन (1905) के जमाने से ही वस्तुतः राष्ट्रीय संग्राम के बीज–मंत्र के रूप में फैलता चला गया। बंगाल के गाँवों, नगरों में जो जलसे होते उनमें यह गीत गाया जाता। 'वन्दे मातरम्' जुलूसों और जनसभाओं का नारा बनता चला गया।

अंग्रेज सरकार ने घबराकर इस गीत और नारे पर कई बार पाबंदी भी लगाई। लेकिन नतीजा उलटा हुआ। यह नारा और गीत बंगाल की सीमा को लाँघकर पूरे देश में फैल गया।"[7] इसी संदर्भ में नामवर सिंह भी अपने आलेख 'उपन्यास और राजनीति' में लिखते हैं कि "पहली बार 1896 में कांग्रेस अधिवेशन के अवसर पर कविवर रवींद्रनाथ ठाकुर ने मंच से यह गान गाया था, किंतु 1905 में बंगभंग के विरोध में उठे आंदोलन के दौरान यह गान बंगाल में जन–जन के कंठ से गूंज उठा।"[8] सन् 1905 से 1921 ई. तक निर्विवाद रूप से 'वन्दे मातरम्'

गीत भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का जय घोष बना रहा, किन्तु 1921 के उपरांत मुस्लिम लीग के बढ़ते प्रभाव और सांप्रदायिक राजनीति के सुदृढ़ होने के साथ मुस्लिम नेतृत्व के एक वर्ग ने इसके देवी–रूपक संबंधी अंशों को अपनी धार्मिक मान्यताओं के प्रतिकूल मानते हुए आपत्ति प्रकट की। इस घटनाक्रम के संबंध में बंगाली आलोचक कार्तिकचंद्र दत्त लिखते हैं, "उस युग में कई और लेखकों के देश–भक्तिपूर्ण गीतों में 'वन्दे मातरम्' की छाया स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। यह परिवेश चलता रहा 1905 से 1921 के असहयोग आंदोलन तक। उस समय तक इस गीत से सांप्रदायिकता की बू नहीं आती थी। 1921 से ही सांप्रदायिकता की छाया भारतीय राजनीति पर पड़ना आरंभ हो गई। 'वन्दे मातरम्' के नारे के साथ 'अल्ला–हु–अकबर' का नारा हिंदू–मुस्लिम एकता को जताने के लिए प्रयोग में लाया जाने लगा। लेकिन आखिरकार एक समय ऐसा आया जब यह नारा सांप्रदायिक दंगों में प्रयुक्त होने लगा। अब मुस्लिम लीग को 'वन्दे मातरम्' गीत में आए 'त्वं हि दुर्गा' में हिंदू बुतपरस्ती दिखाई दी।"[9]

1938 में मुस्लिम लीग के नेता मोहम्मद अली जिन्ना जिन ग्यारह मांगों को लेकर नेहरू जी को पत्र लिखते हैं, उनमें एक मांग यह भी थी कि "'वन्दे मातरम्' गीत का परित्याग किया जाए"।[10] 'वन्दे मातरम्' गीत के प्रति मुस्लिम लीग की आपत्ति एवं बढ़ते तनाव के बावजूद इस गीत की महत्ता एवं ऐतिहासिक मूल्यों को रेखांकित करते हुए सन् 1948 में जवाहरलाल नेहरू लोक सभा में भाषण देते हुए कहते हैं– "वन्दे मातरम् स्पष्टतः और निर्विवाद रूप से भारत का प्रमुख राष्ट्रीय गीत है और महान् ऐतिहासिक परंपरा है। हमारे स्वतंत्रता संग्राम से इसका निकट का संबंध रहा है। इसका स्थान सदा बना रहेगा और दूसरा कोई गीत इसे विस्थापित नहीं कर सकता।"[11] वस्तुतः देखा जाए तो 'वन्दे मातरम्' के बीज मंत्र को मुस्लिम लीग एवं अन्य सांप्रदायिक ताकतों द्वारा भले ही धूमिल करने के अनगिनत प्रयास हुए किन्तु इस गीत का जन–जन के कण–कण में बस जाना इसे राष्ट्रगान बनाता है। "राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन की प्रगति के साथ सारे भारत ने इसे राष्ट्रगान के रूप में अपना लिया।"[12] अंग्रेजों ने इस गीत पर और इसकी लोकप्रियता पर रोक लगाने का प्रयास किया परन्तु सारे प्रयास विफल ही हुए। वस्तुतः स्पष्ट है ब्रिटिश शासन के प्रतिबंध और कालांतर में मुस्लिम लीग का विरोध 'वन्दे मातरम्' गीत की प्रभावशीलता को दबा नहीं सके, बल्कि उन्होंने इसकी राष्ट्रीय प्रतिष्ठा को और अधिक सुदृढ़ किया। यह गीत बंगाल की सीमाओं से निकलकर समूचे भारत में स्वतंत्रता, राष्ट्रीय एकता और आत्मगौरव का प्रतीक बन गया। इस संदर्भ में नामवर सिंह लिखते हैं कि "1947 में भारत को स्वाधीनता मिलने के समय तक 'वन्दे मातरम्' हमारे स्वाधीनता संग्राम का राष्ट्रगान था।"[13]

ब्रिटिश शासन द्वारा 'वन्दे मातरम्' पर लगाए गए प्रतिबंधों ने इसकी लोकप्रियता को और अधिक बढ़ा दिया। जब किसी राष्ट्र की स्वतंत्रता की आकांक्षा को दबाने का प्रयास किया जाता है, तब उसके प्रतीक और अधिक शक्तिशाली बन जाते हैं। 'वन्दे मातरम्' के साथ भी यही हुआ। अनेक स्वतंत्रता सेनानियों ने जेल जाते समय, लाठीचार्ज का सामना करते समय और यहाँ तक कि फाँसी के तख्ते पर चढ़ते समय भी 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष किया। यह गीत स्वतंत्रता संघर्ष की भावनात्मक शक्ति का केंद्र बन गया। इसी संदर्भ में आगे वह स्वतंत्रता सेनानियों की बात करते हुए कहते हैं, "एक समय था जब भारत में विप्लवी एक हाथ में गीता और दूसरे हाथ में 'आनंदमठ' लेकर विप्लव–मंत्र की दीक्षा लेते थे।"[14] समय–समय पर इस गीत के स्वरूप में परिवर्तन भी होता चला गया, इस परिवर्तन को रेखांकित कर नामवर सिंह लिखते हैं, "इस कर्म में देश ने इसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किया। बंकिमचंद्र ने बंगाल की तत्कालीन जनसंख्या को ध्यान में रखकर मूल

गीत में 'सप्तकोटी कंठ' और 'द्विसप्तकोटि भुजैः' लिखा था। भारत की जनता ने इसकी जगह पहले तो 'त्रिशकोटि कंठ' और द्वित्रिंशकोटि भुजैः' किया, फिर 'कोटि–कोटि कंठ' और 'कोटि–कोटि भुजैः' कर लिया।"[15] बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ तक यह गीत राजनीतिक और सांस्कृतिक चेतना का माध्यम बन चुका था। इसका प्रभाव केवल भारत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि विदेशों में सक्रिय भारतीय क्रांतिकारियों के बीच भी समान रूप से दिखाई देता है।

इसका सर्वाधिक उल्लेखनीय उदाहरण 1907 में सामने आया, जब क्रांतिकारी नेता मैडम भीकाजी कामा ने जर्मनी के स्टटगार्ट में आयोजित अंतरराष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन में पहली बार भारत का तिरंगा ध्वज फहराया। उस ध्वज पर 'वन्दे मातरम्' अंकित था। यह घटना इस तथ्य की पुष्टि करती है कि उस समय तक 'वन्दे मातरम्' भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की वैचारिक पहचान और स्वतंत्रता की आकांक्षा का अंतरराष्ट्रीय प्रतीक बन चुका था।

कार्तिकचंद्र दत्त अपने आलेख ''आनंदमठ और वन्दे मातरम् : एक शताब्दी परिचर्चा'' में 'वन्दे मातरम्' गीत की लोकप्रियता को रेखांकित कर लिखते हैं, "वन्दे मातरम् को राष्ट्रीय मर्यादा मिली। गीत इतना जनप्रिय हो गया जिसकी कल्पना शायद बंकिमचंद्र ने भी न की थी। इस गीत पर आधारित कितने ही और गीत सब भारतीय भाषाओं में लिखे गए। भारत की सभी भाषाओं में गीत का अनुवाद हुआ। गीत मूलतः संस्कृत भाषा में था, इसी से इसका मूल रूप पूरे भारत में जनप्रिय हो गया।''[16]

'वन्दे मातरम्' गीत की सबसे बड़ी विलक्षणता है किसी राष्ट्र को माता के रूप में देखने की अभिनव कल्पना। 'आनंदमठ' उपन्यास में बंकिमचन्द्र ने भारत को मात्र एक भौगोलिक राष्ट्र के रूप में नहीं बल्कि सजीव, चेतन और पूज्य मातृशक्ति के रूप में रूपायित किया है। भारतमाता का यह स्वरूप राष्ट्र के प्रति श्रद्धा, भक्ति और

समर्पण की भावना को सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान करता है। इसी भावभूमि को केंद्र में रखकर बंकिमचंद्र ने उपन्यास में अमर राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' को शामिल किया, जिसमें मातृभूमि के प्राकृतिक सौंदर्य, समृद्धि, वैभव और सांस्कृतिक गरिमा का वर्णन करते हुए उसे देवी–स्वरूपा के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है।

इस प्रकार 'आनंदमठ' में भारतमाता का स्वरूप केवल धार्मिक या सांस्कृतिक प्रतीक तक सीमित नहीं रहता है, बल्कि वह राष्ट्रीय अस्मिता, स्वाधीन–चेतना और सांस्कृतिक गौरव का प्रतीक बनकर हमारे समक्ष आता है। 'आनंदमठ' और 'वन्दे मातरम्' को केंद्र कर बांग्ला समालोचक चितरंजन बंदोपाध्याय अपने आलेख 'आनंदमठ' में लिखते हैं, "यह एक उपन्यास से अधिक कुछ नहीं था, बावजूद इसके एक अजेय सेना से कम शक्तिशाली भी नहीं था। यह वही कहानी थी जिसने हमें 'वन्दे मातरम्' दिया.........वह जादुई गति जिसने हजारों लोगों को.....हिंसा या अहिंसा के रास्ते देश की आजादी के लिए अपनी जान न्योछावर करने की प्रेरणा दी। 'आनंदमठ' ब्रिटिश शासन के विरुद्ध कोई साधारण हथियार नहीं था।"[17]

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बंगाल में नवजागरण अपने चरम पर था।[18] राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, केशवचंद्र सेन और अन्य सुधारकों ने भारतीय समाज में नए विचारों का संचार किया था। साथ ही, यूरोपीय राष्ट्रवाद की अवधारणाएँ भी शिक्षित भारतीयों तक पहुँच रही थीं। फ्रांस, इटली और जर्मनी के राष्ट्रीय आंदोलनों ने भारतीय बुद्धिजीवियों को प्रभावित किया। राष्ट्र को एक जीवंत सत्ता और मातृभूमि को पूजनीय इकाई के रूप में देखने की प्रवृत्ति विकसित हो रही थी। बंकिमचंद्र ने भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं और आधुनिक राष्ट्रवादी विचारों का समन्वय करते हुए भारतमाता की कल्पना की। यह कल्पना केवल भौगोलिक भूमि की नहीं थी, बल्कि एक ऐसी सांस्कृतिक शक्ति की थी जो अपने पुत्रों से त्याग, साहस और समर्पण की अपेक्षा करती है।

'वन्दे मातरम्' की रचना में भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतीकों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। भारतीय परंपरा में भूमि को माता कहा गया है। अथर्ववेद में पृथ्वी सूक्त तथा विभिन्न पुराणों में मातृभूमि की वंदना के अनेक उदाहरण मिलते हैं। बंकिमचंद्र ने इस परंपरा को आधुनिक राष्ट्रीय संदर्भ प्रदान किया है। उन्होंने भारतभूमि को दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती के रूपों से जोड़ा। इस प्रकार मातृभूमि केवल भौतिक धरती नहीं रह जाती, बल्कि शक्ति, समृद्धि और ज्ञान की अधिष्ठात्री देवी का स्वरूप ग्रहण कर लेती है। यह प्रतीकात्मकता भारतीय जनमानस के लिए अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध हुई क्योंकि इससे राष्ट्र, धर्म और सांस्कृतिक भावनाओं का एक अद्वितीय समन्वय स्थापित हुआ। इसका उदाहरण 'अथर्ववेद संहिता' भाग दो के 'अथ द्वादशं काण्डम्' में मिलता है–

"भूमे मातर्नि धेहि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम्।
संविदाना दिवा कवे श्रियां मा धेहि भूत्याम्।।"[19]

अर्थववेद में ही फिर से इस बात की ओर संकेत किया गया है कि भूमि माता है–

"माता भूमिः पूत्रो अहं पृथ्वियाः"[20]

'आनंदमठ' में भारत माता को तीन रूपों में दिखाया गया है–'माँ जो थी' (जगद्धात्री), 'माँ जो है' (काली) और 'माँ जो होगी' (दुर्गा)।[21] ये तीनों रूप स्त्री शक्ति के ही विस्तार हैं। कल्याणी और शांति इन्हीं रूपों की मानवीय

अभिव्यक्ति हैं। कल्याणी जहाँ 'माँ जो थी' की करुणा और गरिमा को संजोए हुए हैं, वहीं शांति 'माँ जो होगी' के विजयी और शक्ति संपन्न स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनकी चेतना ने तत्कालीन बंगाल और कालांतर में पूरे भारत की स्वाधीनता को जागृत किया। उन्होंने यह संदेश दिया कि जब राष्ट्र संकट में हो, तो गृहस्थी के नियम बदल जाते हैं और राष्ट्र धर्म की रक्षा ही सबसे प्रमुख कर्तव्य हो जाता है। इस राष्ट्र धर्म की रक्षा में सबसे महत्वपूर्ण योगदान बंकिम द्वारा रचित 'वन्दे मातरम्' गीत है।

'वन्दे मातरम्' गीत का प्रारंभिक भाग विशेष रूप से भारत के प्राकृतिक सौंदर्य का चित्रण करता है। "सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्"[22] जैसे पद भारत की नदियों, खेतों, वनों और शीतल पवनों का स्मरण कराते हैं। यह चित्रण केवल प्रकृति–वर्णन नहीं है, बल्कि मातृभूमि के प्रति प्रेम और कृतज्ञता की अभिव्यक्ति है। बंकिमचंद्र भारतीयों को यह स्मरण कराना चाहते थे कि जिस भूमि ने उन्हें जीवन, अन्न और संस्कृति प्रदान की है, उसके प्रति समर्पण उनका नैतिक कर्तव्य है। इस प्रकार गीत का भावात्मक आधार मातृभूमि के प्रति श्रद्धा और प्रेम है।

"वन्दे मातरम्!
सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्
शस्यश्यामलाम् मातरम्"[23]

इस पंक्ति का पहला शब्द 'वन्दे' है। 'वन्दे' संस्कृत धातु 'वन्द्' से बना है, जिसका अर्थ होता है– नमन करना, प्रणाम करना, स्तुति करना अथवा सम्मान प्रकट करना। यहाँ कवि अपनी मातृभूमि के प्रति गहरी श्रद्धा और आदर व्यक्त करता है। यह केवल औपचारिक प्रणाम नहीं है, बल्कि उस भूमि के प्रति कृतज्ञता का भाव है जिसने अपने पुत्रों को जीवन, संस्कृति, ज्ञान और पहचान प्रदान की है। 'वंदे' शब्द के माध्यम से कवि राष्ट्र के प्रति भक्ति और समर्पण की भावना व्यक्त करता है।

दूसरा शब्द 'मातरम्' है, जिसका अर्थ है–'हे माता!' यहाँ माता से आशय जन्म देने वाली व्यक्तिगत माता नहीं, बल्कि मातृभूमि अर्थात भारतवर्ष से है। भारतीय परंपरा में भूमि को माता कहा गया है। जिस प्रकार माता अपने बच्चों का पालन–पोषण करती है, उसी प्रकार मातृभूमि भी अपने नागरिकों को अन्न, जल, आश्रय और संस्कृति प्रदान करती है। इसलिए कवि भारतभूमि को माता का स्थान देकर उसके प्रति श्रद्धा व्यक्त करता है। 'मातरम्' शब्द पूरे गीत का भावनात्मक केंद्र है, क्योंकि इसी के माध्यम से राष्ट्र को एक जीवंत और पूजनीय मातृसत्ता के रूप में स्थापित किया गया है।

इसके बाद आता है 'सुजलाम्'। यह शब्द दो भागों से मिलकर बना है–'सु' और 'जल'। 'सु' का अर्थ है उत्तम, सुंदर या भरपूर, जबकि 'जल' का अर्थ पानी है। इस प्रकार 'सुजलाम्' का अर्थ हुआ–"प्रचुर जल से सम्पन्न" या "जिसमें उत्तम जल की प्रचुरता हो।" भारत प्राचीन काल से नदियों की भूमि रहा है। गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, नर्मदा, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी जैसी नदियाँ देश को जीवन प्रदान करती रही हैं। जल किसी भी सभ्यता के विकास का आधार होता है। बंकिमचंद्र इस शब्द के माध्यम से भारत की प्राकृतिक संपन्नता और जीवनदायिनी शक्ति का वर्णन करते हैं। यह शब्द हमें स्मरण कराता है कि भारत की भूमि जल–संपदा से परिपूर्ण है और यही उसकी उर्वरता तथा समृद्धि का मूल आधार है।

इसके बाद आता है 'सुफलाम्' का अर्थ है—फल—फूलों से समृद्ध, उर्वर एवं संपन्न भूमि। 'वन्दे मातरम्' गीत के संदर्भ में यह शब्द भारतभूमि की उस मातृस्वरूप छवि का द्योतक है, जो अपनी संतानों को प्रकृति के अनुपम वैभव, मधुर फलों और समृद्धि का अनवरत उपहार प्रदान करती है। यहाँ शब्द केवल भौतिक संपन्नता का सूचक नहीं, बल्कि भारत की कृषि संस्कृति और प्रकृति की उदारता का प्रतीक है।

इसके बाद आता है 'मलयजशीतलाम्', जो इस पंक्ति का अत्यंत सुंदर और काव्यात्मक शब्द है। यह 'मलयज' और 'शीतलाम्' से मिलकर बना है। 'मलयज' का अर्थ है मलय पर्वत पर उत्पन्न चंदन। भारतीय काव्य परंपरा में मलय पर्वत की चंदन—सुगंधित हवाओं का उल्लेख बार—बार मिलता है। 'शीतलाम्' का अर्थ है शीतल, ठंडी, सुखद या ताजगी प्रदान करने वाली। अतः 'मलयजशीतलाम्' का अर्थ हुआ—"चंदन—सुगंधित शीतल वायु से युक्त।" इस शब्द के माध्यम से कवि भारत की प्राकृतिक रमणीयता और उसकी सुखद जलवायु का चित्रण करता है। यहाँ केवल भौतिक वातावरण का वर्णन नहीं है, बल्कि यह संकेत भी है कि भारत की संस्कृति और प्रकृति दोनों ही मन को शांति और आनंद प्रदान करने वाली हैं। मलयज की सुगंध भारतीय सांस्कृतिक जीवन की मधुरता और पवित्रता का प्रतीक भी मानी जा सकती है।

इसके बाद प्रयुक्त शब्द है 'शस्यश्यामलाम्'। यह 'शस्य' और 'श्यामलाम्' के योग से बना है। 'शस्य' का अर्थ है अन्न, धान या फसल, जबकि 'श्यामल' का अर्थ है हरा—भरा, हरितिमा से युक्त या गहरे हरे रंग वाला। इसलिए 'शस्यश्यामलाम्' का अर्थ हुआ—"लहलहाती फसलों से हरित और समृद्ध।" यह शब्द भारत की कृषि—प्रधान संस्कृति का अत्यंत प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत करता है। जब खेतों में धान, गेहूँ और अन्य फसलें लहलहाती हैं, तब धरती हरित चादर ओढ़े हुए प्रतीत होती है। कवि ने इसी दृश्य को 'शस्यश्यामलाम्' शब्द के माध्यम से व्यक्त किया है। यह शब्द केवल प्राकृतिक सौंदर्य का चित्रण नहीं करता, बल्कि देश की आर्थिक शक्ति और समृद्धि का भी संकेत करता है।

'वन्दे मातरम्'[24] गीत के प्रत्येक शब्द में निहित भाव का समग्र अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने भारतभूमि का रूपांकन एक ऐसी माँ के रूप में किया है, जो अपने अमृततुल्य जल, शस्य—श्यामला खेतों से उत्पन्न अन्न, मलयज—सुगंधित वायु तथा अनुपम प्राकृतिक वैभव के माध्यम से अपनी संतानों का स्नेहपूर्वक पालन—पोषण करती है। इस दृष्टि से 'वन्दे मातरम्' की ये पंक्तियाँ केवल प्राकृतिक—सौंदर्य का काव्यमय चित्रण ही नहीं हैं, बल्कि मातृभूमि के प्रति अनन्य श्रद्धा, प्रेम, सम्मान और कृतज्ञता की सशक्त अभिव्यक्ति हैं।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान यह गीत राष्ट्रीय चेतना का प्रखर उद्घोष बनकर जन—जन में स्वाधीनता की आकांक्षा जागृत करने वाला अमर गीत बना। इस संदर्भ में मनोज श्रीवास्तव लिखते हैं कि 'वन्दे मातरम्' की शुरुआत ही 'वन्दे मातरम्' सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम् शस्यश्यामलाम् मातरम्' से होती है—मातृभूमि को जल से भरपूर, फलदार, शीतल और फसलों से हरी—भरी बताते हुए। वन्दे मातरम् की यह प्रकृति के प्रति तात्कालिकता दर्शाने वाली काव्यात्मक शैली अनोखी है, जहाँ मातृभूमि को दिव्य, उपजाऊ देवी के रूप में पहली साँस से ही पूजा जाता है।"[25] वे फिर 'वन्दे मातरम्' शब्द पर विचार करते हुए लिखते हैं, "वन्दे मातरम्" का पहला ही उल्लेख प्रकृति की सुषमा और समृद्धि का है।"[26] साथ ही, वे उपन्यास के प्रमुख पात्र भवानंद, जिसके

कंठ से 'वन्दे मातरम्' का प्रथम उद्घोष होता है, को केंद्र में रखकर अपने विचार प्रस्तुत करते हैं, "पर एक दिलचस्प संयोग है कि जिस 'आनंदमठ' उपन्यास का अंग यह गीत है, उसमें यह गीत भवानंद नामक पात्र के द्वारा गाया गया है। भवानंद का अर्थ होता है सम्पूर्ण सृष्टि का आनंद। दुनिया का कोना नहीं, दुनिया का आनंद।"[27]

'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता इस दृष्टि से भी है कि इस गीत ने भारत में राष्ट्र की सामूहिक एकता का निर्माण किया है। यह गीत भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की वैचारिक और भावनात्मक नींव को समझने का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। यह गीत हमें बताता है कि राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक संघर्ष का परिणाम नहीं होता, बल्कि उसके पीछे सांस्कृतिक चेतना, ऐतिहासिक स्मृति और भावनात्मक एकता की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बंकिमचंद्र ने भारतभूमि को माता के रूप में चित्रित करके राष्ट्र को एक जीवंत और पूजनीय स्वरूप प्रदान किया। इस प्रकार उन्होंने भारतीय जनता को धर्म, जाति और क्षेत्रीय विभाजनों से ऊपर उठकर मातृभूमि के प्रति एक साझा भाव विकसित करने की प्रेरणा दी। वर्तमान समय में जब वैश्वीकरण, तकनीकी विकास और उपभोक्तावाद के प्रभाव से सांस्कृतिक पहचान का संकट उत्पन्न हो रहा है, तब 'वन्दे मातरम्' की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि हमें अपनी राष्ट्रीय और सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ने की प्रेरणा प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त यह विषय हमें यह समझने में भी सहायता करता है कि साहित्य किस प्रकार सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन का माध्यम बन सकता है। एक गीत किस प्रकार स्वतंत्रता आंदोलन का नारा बन गया और किस प्रकार उसने लाखों लोगों को प्रेरित किया, यह भारतीय इतिहास का अद्वितीय उदाहरण है।

'वन्दे मातरम्' गीत भारतीय राष्ट्रीय चेतना के इतिहास में एक मील का पत्थर है। इसकी रचना जिन ऐतिहासिक और सामाजिक परिस्थितियों में हुई, वे भारतीय राष्ट्रवाद के उदय और विकास को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने इस गीत की रचना ऐसे समय में की थी जब भारत अंग्रेजी शासन के अधीन था और भारतीय समाज राजनीतिक पराधीनता तथा मानसिक गुलामी का अनुभव कर रहा था। उस समय देश को ऐसे सांस्कृतिक प्रतीकों की आवश्यकता थी जो जनता के भीतर आत्मगौरव, एकता और स्वतंत्रता की भावना का संचार कर सकें। 'वन्दे मातरम्' ने इस आवश्यकता की पूर्ति की और शीघ्र ही राष्ट्रीय जागरण का प्रतीक बन गया। इस गीत की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें भारतभूमि को माता के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। यह मातृभूमि केवल एक भौगोलिक इकाई नहीं है, बल्कि वह शक्ति, समृद्धि, ज्ञान और करुणा का प्रतीक है।

बंकिमचंद्र ने भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं और आधुनिक राष्ट्रवादी विचारों का समन्वय करते हुए ऐसी भारतमाता की कल्पना की, जो अपने पुत्रों को प्रेम, त्याग और बलिदान के लिए प्रेरित करती है। यही कारण है कि यह गीत भारतीय जनता के हृदय में गहराई से स्थापित हो गया। 'आनंदमठ' में इसके समावेश ने इसे व्यापक लोकप्रियता प्रदान की, जबकि स्वदेशी आंदोलन और स्वतंत्रता संग्राम ने इसे राष्ट्रीय संघर्ष का घोष बना दिया। अनेक स्वतंत्रता सेनानियों ने 'वन्दे मातरम्' को अपने साहस और संकल्प का स्रोत माना। यह गीत केवल साहित्यिक रचना नहीं रहा, बल्कि स्वतंत्रता आंदोलन की प्रेरक शक्ति बन गया। इसके माध्यम से भारतीय जनता ने अपनी राष्ट्रीय पहचान को पहचाना और विदेशी शासन के विरुद्ध संघर्ष के लिए मानसिक रूप से स्वयं को तैयार किया। ऐतिहासिक दृष्टि से 'वन्दे मातरम्' यह प्रमाणित करता है कि

साहित्य, समाज और इतिहास की दिशा को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। एक गीत ने जिस प्रकार करोड़ों भारतीयों को एक सूत्र में बाँधा और स्वतंत्रता के लिए प्रेरित किया, वह विश्व इतिहास में एक विशिष्ट उदाहरण है। इसके साथ जुड़े विवादों और बहसों के बावजूद इसकी राष्ट्रीय भूमिका और ऐतिहासिक महत्ता निर्विवाद बनी हुई है।

वस्तुतः 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं, बल्कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की आत्मा, राष्ट्रीय स्वाभिमान का प्रतीक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का सशक्त स्वर है। यह गीत आज भी भारतीयों को अपनी मातृभूमि के प्रति प्रेम, कर्तव्य और समर्पण की प्रेरणा देता है तथा राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक गौरव के अमर प्रतीक के रूप में सदैव स्मरणीय रहेगा। यह भारत के इतिहास का पहला ऐसा गीत बना जिसने भारत में स्वदेशी आंदोलन को सशक्त बनाया। निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि इसकी ऐतिहासिक यात्रा भारतीय राष्ट्रीय चेतना के क्रमिक विकास का सशक्त दस्तावेज है।

संदर्भ

[1] (अनु.) दिलीपकुमार बनर्जी, आनंदमठ– बंकिमचंद्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2009, पृष्ठ–26

[2] वही, पृष्ठ 26

[3] वही, पृष्ठ 26

[4] भारत का मुक्ति–संग्राम अट्ठारहवीं और उन्नीसवीं सदी के विद्रोह–अयोध्या सिंह– प्रकाशन संस्थान–नई दिल्ली–110002–पृष्ठ संख्या–15

[5] 'बंग दर्शन' पत्रिका के शुरूआती छः अंकों में 'आनंदमठ' उपन्यास का जिक्र नहीं है। 'आनंदमठ' उपन्यास का प्रकाशन 'बंग दर्शन' पत्रिका के 7 वें अंक से शुरू हुआ है और 9 वे अंक तक धारावाहिक रूप में प्रकाशित होता रहा। देखें: इंटरनेट आर्काइव पर उपलब्ध.....

[6] द फकीर एण्ड संन्यासी रिबेलिअन– अतीस दासगुप्ता – सोशल साइंटिस्ट – जनवरी– 1982– पृष्ठ संख्या–45

[7] (अनु.) दिलीपकुमार बनर्जी, आनंदमठ– बंकिमचंद्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2009,पृष्ठ –27

[8] वही, पृष्ठ 7

[9] वही, पृष्ठ 28

[10] वही, पृष्ठ 29 ("Bande Matram Song to be given up.") (अनुवाद मेरा)

[11] वही, पृष्ठ 29

[12] वही, पृष्ठ 7

[13] वही, पृष्ठ 7

[14] ही, पृष्ठ 8

[15] वही, पृष्ठ 7

[16] वही, पृष्ठ 27

[17] 'बंकिमचंद्र चटर्जी : एसेज इन पर्सपेक्टिव' स.भाबातोश चटर्जी, साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, दिल्ली–प्रथम संस्करण–1994– पृष्ठ संख्या 220– ("IT was no more than a novel, yet no less potent than an invincible legion. It was the story that gave us Vande Mataram, the magic song which inspired thousand, both those who chose violence/non-violence, to brave their lives for the freedom of the country. Anandamath was no ordinary weapon against the British rule.") (अनुवाद मेरा)

[18] समाज का अध्ययनः भारत और उसके आगे – राष्ट्रीय शिक्षक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्–नई दिल्ली–प्रथम संस्करण– नवंबर 2025 – पृष्ठ संख्या – 106

[19] अथर्ववेद संहिता भाग–2– सं.–वेदमूर्ति तपोनिष्ठ, पं. श्रीराम शर्मा आचार्य–प्रकाशक– ब्रह्मवर्चस, शांतिकुंज हरिद्वार–पंचम आवृति–2002–पृष्ठ–57

[20] अथर्ववेद 12–1–15

[21] (अनु.) दिलीपकुमार बनर्जी, आनंदमठ– बंकिमचंद्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2009,पृष्ठ 65–67

[22] वही, पृष्ठ 59

[23] वही, पृष्ठ– 60

[24] वंदे मातरम– सव्यसाची भट्टाचार्य (अनु. चंदन श्रीवास्तव) – राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली – 110002 – प्रथम संस्करण–2008–पृष्ठ संख्या–76 से 99 – इतिहासकार सव्यसाची भट्टाचार्य ने शोध कर बताया है कि 'वन्दे मातरम्' की रचना बंकिमचंद्र ने स्वतंत्र ढंग से, एक कविता के तौर पर आनंदमठ की रचना से काफी पहले की थी। 'बंग–दर्शन' साहित्यिक पत्रिका के 7 नवम्बर 1875 वाले अंक में वंदे मातरम स्वतंत्र रचना के तौर पर प्रकाशित भी हुआ था।

[25] अक्षरा–सम्पादकीय–मनोज श्रीवास्तव –जनवरी–2026 अंक –राम–राज,3–पारिका–फेज–2.चूना भट्टी,कोलार रोड– भोपाल–462016 (म.प्र.)– पृष्ठ संख्या– 3

[26] वही, पृष्ठ 3

[27] वही, पृष्ठ 4

वन्दे मातरम् का पाठ और भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना : एक शास्त्रीय विश्लेषण

–सविता किरण
सहायक प्राध्यापिका, अंग्रेजी विभाग
जाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

किसी भी साहित्यिक कृति को समझने के लिए उसकी भाषा–संरचना और रचनात्मक विन्यास का अध्ययन आवश्यक है। वन्दे मातरम् इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। हालांकि यह गीत भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का प्रेरणास्रोत बनकर प्रसिद्ध हुआ, किन्तु मूलतः यह एक साहित्यिक कृति है, जिसकी शक्ति उसके काव्य, भाषा, सांस्कृतिक प्रतीकों तथा दार्शनिक दृष्टि की गहन अभिव्यक्ति में निहित है। इस गीत में प्रकृति, मातृभूमि, शक्ति, ज्ञान और आध्यात्मिक चेतना का ऐसा समन्वय है जो भारतीय सांस्कृतिक परम्परा और जीवन–दृष्टि को मूर्त रूप प्रदान करता है।

वन्दे मातरम् : रचना–परिस्थिति और भाषिक संरचना

बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय ने 'वन्दे मातरम्' की रचना 1870 के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में की और बाद में 1882 में इसे अपने उपन्यास 'आनन्दमठ' में सम्मिलित किया।[1] उपन्यास की कथावस्तु अठारहवीं शताब्दी के संन्यासी विद्रोह से जुड़ी है, जहाँ विदेशी शासन, सामाजिक संकट और आत्मसम्मान की पृष्ठभूमि दृष्टिगत होती है। इसी संदर्भ में इस गीत में मातृभूमि के प्रति श्रद्धा और सांस्कृतिक जागरण का स्वर मुखरित होता है। अनेक आलोचकों ने इसकी व्याख्या मुख्यतः उपन्यास की कथा–संरचना और उसके राजनीतिक संदर्भों के आधार पर की है। किन्तु शिशिर कुमार दास[2] ने स्पष्ट किया है कि वन्दे मातरम् की रचना 'आनन्दमठ' में सम्मिलित किए जाने से पूर्व स्वतंत्र रूप से हुई थी तथा बाद में उसे उपन्यास का अंग बनाया गया। जूलियस लिप्नर[3] भी अपनी भूमिका में संकेत करते हैं कि वन्दे मातरम् को अपने स्वतंत्र साहित्यिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक आयामों में देखा जाना चाहिए। इसी प्रकार श्री अरविन्द घोष[4] ने भी वन्दे मातरम् को एक ऐसे मंत्र के रूप में देखा है जिसने भारतीय राष्ट्रीय चेतना को जागृत किया और जिसका महत्व किसी एक साहित्यिक कृति की सीमाओं से कहीं अधिक व्यापक है। अतः वन्दे मातरम् की व्याख्या केवल 'आनन्दमठ' के आलोक में करना उसकी व्यापक सांस्कृतिक अर्थवत्ता को सीमित कर देता है। यह गीत भारतीय जीवन–दर्शन की सनातन, शाश्वत चेतना का काव्यात्मक स्वरुप है जिसमें समस्त चर–अचर जगत के परम सत्य का समावेश है। इस प्रकार वन्दे मातरम् केवल एक राष्ट्रवादी उद्घोष या उपन्यास का गीत नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना, प्रकृति–दृष्टि और सर्वव्यापी ईश्वर की अनुभूति की साहित्यिक अभिव्यक्ति है। इस गीत की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता इसकी भाषाई संरचना है। अधिकांश पद संस्कृतनिष्ठ हैं, जबकि कुछ पंक्तियां बांग्ला में हैं। यह भाषिक मिश्रण भारतीय संस्कृति का स्वाभाविक समवेषण है। संस्कृत भाषा भारतीय ज्ञान–परम्परा, दर्शन और सांस्कृतिक निरन्तरता का प्रतिनिधित्व करती है, जबकि बांग्ला भाषा गीत में आत्मीयता और लोकानुभूति का संचार करती है। भारतीय भाषाई परम्परा में संस्कृत और क्षेत्रीय भाषाएं पूरक रही हैं। इसी कारण वन्दे मातरम् किसी एक भाषा या प्रदेश का गीत न रहकर व्यापक भारतीय सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति है।

संरचनात्मक दृष्टि से वन्दे मातरम् गीत प्रकृति–सौन्दर्य से आरम्भ होकर मातृभूमि को शक्ति, ज्ञान और धर्म के रूप में प्रतिष्ठित करता है तथा अंत में उसे करुणा और वात्सल्य की प्रतीक माता के रूप में प्रस्तुत करता है। इसकी ध्वनि–संरचना, अनुप्रास, समास–प्रधान पदावली तथा 'वन्दे मातरम्' के आवर्तक प्रयोग से काव्यात्मक एकता और भाव–गाम्भीर्य सुदृढ़ होता है। इस प्रकार इसकी भाषिक, काव्यात्मक और ध्वन्यात्मक संरचना भारतीय सांस्कृतिक चेतना और विश्वदृष्टि की बहुस्तरीय अभिव्यक्ति प्रस्तुत करती है।

वन्दे मातरम्: पाठ का विश्लेषण

वन्दे मातरम् की पाठ संरचना, भाषा, बिम्ब, प्रतीक और ध्वनि, सभी स्तरों पर अत्यन्त सुविचारित है। गीत छह चरणों (पाद) में विभाजित है। प्रथम दो चरण में मातृभूमि के प्राकृतिक सौन्दर्य और समृद्धि का चित्रण है; तृतीय और चतुर्थ चरणों में वही मातृभूमि जनशक्ति, ज्ञान, धर्म और शक्ति का स्वरूप ग्रहण करती है; पांचवें चरण में वह दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती के रूप में प्रतिष्ठित है तथा अंतिम चरण में पुनः करुणामयी और पालनकर्त्री माता के रूप में उपस्थित होती है। इस प्रकार गीत प्रकृति से संस्कृति और संस्कृति से आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर होता है।

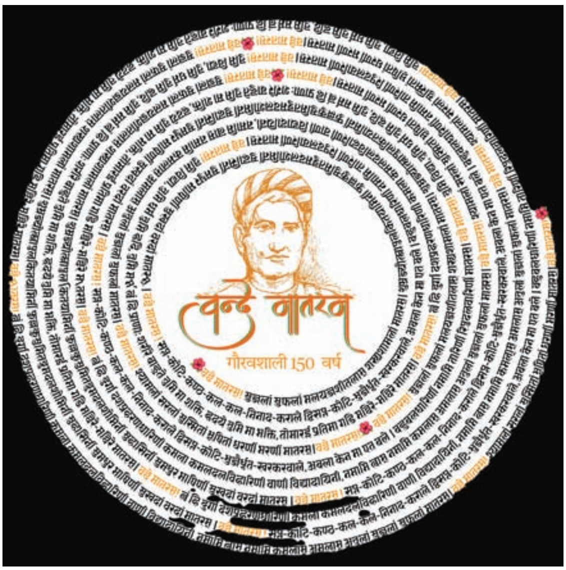

गीत का आरम्भ 'वन्दे मातरम्' से होता है। 'वन्दे' एक सकर्मक क्रिया है और 'मातरम्' उसका कर्म। इसलिए पूरे गीत में मातृभूमि उसके विविध गुणों और रूपों सहित कर्म के रूप में उपस्थित होती है। यही कारण है कि माता के लिए प्रयुक्त अधिकांश विशेषण द्वितीया विभक्ति में हैं। ये विशेषण मातृभूमि के गुणों का वर्णन करने के साथ यह भी स्पष्ट करते हैं कि कवि उसकी वन्दना किन–किन रूपों में करता है। निम्नलिखित तालिका में इन विशेषणों की व्युत्पत्ति, शाब्दिक अर्थ तथा भावार्थ प्रस्तुत किए गए हैं:–

शब्द	**व्युत्पत्ति / शाब्दिक अर्थ**	**भावार्थ**
मातरम्	माता	मातृभूमि
सुजलाम्	सु+जल	जल से सम्पन्न, जीवनदायिनी
सुफलाम्	सु+फल	फल–फूल और कृषि से समृद्ध

मलयजशीतलाम्	मलयज (चन्दन) + शीतल	चन्दन–सुगंधित शीतल समीर से युक्त
सस्यश्यामलाम्	सस्य+श्यामल	लहलहाती फसलों से हरित
शुभ्रज्योत्स्ना पुलकितयामिनीम्	शुभ्र+ज्योत्स्ना+पुलकित+यामिनी	चाँदनी से पुलकित रात्रि वाली
फुल्लकुसुमित द्रुमदलशोभिनीम्	फुल्ल+कुसुमित+द्रुम+दल+शोभिनी	पुष्पित वृक्षों और पत्तों से शोभायमान
सुहासिनीम्	सु+हासिनी	मधुर मुस्कान वाली
सुमधुरभाषिणीम्	सु+मधुर+भाषिणी	मधुर वाणी बोलने वाली
सुखदाम्	सुख+दा	सुख प्रदान करने वाली
वरदाम्	वर+दा	वरदान देने वाली, कल्याणकारी
बहुबलधारिणीम्	बहु+बल+धारिणी	अपार शक्ति से सम्पन्न
तारिणीम्	तृ (पार कराना)	उद्धार करने वाली, संकट से पार लगाने वाली
रिपुदलवारिणीम्	रिपु+दल+वारिणी	शत्रु–दल का नाश करने वाली
त्वाम्	तुम (द्वितीया)	तुम्हें (हे माते!)
कमलाम्	कमला (लक्ष्मी)	समृद्धि और ऐश्वर्य का स्वरूप
अमलाम्	अ+मल	निर्मल, निष्कलंक
अतुलाम्	अ+तुल	जिसकी तुलना न हो सके, अनुपम
सरलाम्	सरल	सहज, निष्कपट
सुस्मिताम्	सु+स्मित	मधुर मुस्कान से युक्त
भूषिताम्	भूषित	अलंकृत, शोभायुक्त
धरणीम्	धृ धातु	धारण करने वाली पृथ्वी
भरणीम्	भृ	पालन–पोषण करने वाली

इन विशेषणों का क्रम भी अत्यंत अर्थपूर्ण है। आरम्भ में सुजलाम्, सुफलाम्, मलयजशीतलाम्, सस्यश्यामलाम्, शुभ्रज्योत्स्नापुलकितयामिनीम् और फुल्लकुसुमितद्रुमदल–शोभिनीम् जैसे विशेषण मातृभूमि के प्राकृतिक स्वरूप का चित्रण करते हैं। इसके बाद सुहासिनीम्, सुमधुरभाषिणीम्, सुस्मिताम् और सरलाम् के माध्यम से उसका मानवीकरण किया गया है। आगे सुखदाम्, वरदाम्, तारिणीम् और भरणीम् जैसे विशेषण उसे पालन–पोषण करने वाली और कल्याणकारी माता के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। अंततः बहुबलधारिणीम्, रिपुदलवारिणीम्, कमलाम्, अमलाम् और अतुलाम् के द्वारा मातृभूमि का दैवी एवं शक्तिमयी स्वरूप उभरता है। इस प्रकार इन विशेषणों की क्रमिक योजना मातृभूमि को प्रकृति, माता, पालनकर्त्री और देवी, सभी रूपों में एक समन्वित सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करती है।

तृतीय चरण में गीत का स्वर राष्ट्र की सामूहिक चेतना का रूप ग्रहण करता है। 'कोटि–कोटि–कण्ठ–कल–कल–निनाद–कराले' और 'अनेक–कोटि–भुजैर्धृत–खरकरवाले' जैसे पद करोड़ों कण्ठों और करोड़ों भुजाओं के माध्यम से राष्ट्र की सामूहिक शक्ति का बिम्ब निर्मित करते हैं। यहाँ मातृभूमि जनसमूह की चेतना और सामूहिक सामर्थ्य का केन्द्र बन जाती है। इसी चरण में 'अबला केन मा एत बले?' प्रश्न के माध्यम से कवि स्पष्ट करता है कि यह माता बहुबलधारिणी, तारिणी और रिपुदलवारिणी है; अर्थात् वह अपार शक्ति से सम्पन्न, संकट से

उबारने वाली और शत्रुओं का विनाश करने वाली है। इस प्रकार मातृभूमि का स्वरूप करुणामयी माता के साथ–साथ शक्तिमयी रक्षिका के रूप में भी उभरता है।

अबला केन मा एत बले?' एक आलंकारिक प्रश्न है, जिसका उद्देश्य मातृभूमि के अपार सामर्थ्य की उद्घोषणा करना है। इससे ठीक पहले कवि 'कोटि–कोटि–कण्ठ' और 'अनेक–कोटि–भुजैः' के माध्यम से राष्ट्र की सामूहिक जनशक्ति का चित्र उपस्थित करता है। ऐसे राष्ट्र को, जिसके पास करोड़ों कण्ठों का स्वर और करोड़ों भुजाओं का बल हो, 'अबला' कैसे कहा जा सकता है? मातृभूमि की शक्ति उसके जनसमूह में निहित है। इसी कारण कवि अगले ही चरण में उसे 'बहुबलधारिणी', 'तारिणी' और 'रिपुदलवारिणी' कहकर संबोधित करता है। इस प्रकार राष्ट्र की शक्ति उसके जागृत, संगठित और सामूहिक जनबल की शक्ति के रूप में अभिव्यक्त होती है।

चतुर्थ और पंचम चरणों में मातृभूमि का स्वरूप और अधिक व्यापक हो जाता है। वह भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्वों की अभिव्यक्ति बन जाती है। 'तुमि विद्या, तुमि धर्म; तुमि हृदि, तुमि मर्म; बाहुते तुमि मा शक्ति; हृदये तुमि मा भक्ति' के माध्यम से ज्ञान, धर्म, शक्ति और भक्ति, सभी का आधार मातृभूमि को माना गया है। इसके बाद पंचम चरण में वही माता दुर्गा, कमला (लक्ष्मी) और वाणी (सरस्वती) के रूप में प्रतिष्ठित होती है। यहाँ दुर्गा रक्षा और शक्ति, लक्ष्मी समृद्धि तथा सरस्वती ज्ञान का प्रतीक हैं। इस प्रकार मातृभूमि भारतीय सांस्कृतिक आदर्शों के समन्वित रूप में प्रस्तुत होती है। इन देवी–रूपों का प्रयोग भारतीय सांस्कृतिक प्रतीक–परम्परा की अभिव्यक्ति के रूप में किया गया है।

गीत की भाषा संस्कृत और बांग्ला का समन्वित रूप है। संस्कृतनिष्ठ पदावली उसे शास्त्रीय गरिमा प्रदान करती है, जबकि बांग्ला के प्रयोग से उसमें आत्मीयता और लोकानुभूति का समावेश होता है। ध्वनि–संरचना, अनुप्रास, समास–प्रधान पदावली तथा 'वन्दे मातरम्' के आवर्तक प्रयोग से गीत में लय, संगीतात्मकता और भावात्मक एकता का निर्माण होता है।

भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना एवं ईश्वर की अवधारणा

इस गीत में मातृभूमि का जो स्वरूप उभरकर सामने आता है, उसकी जड़ें भारतीय दार्शनिक और सांस्कृतिक परंपरा में निहित हैं। भारतीय चिंतन में प्रकृति, पृथ्वी, शक्ति और ईश्वर एक ही सत्य के विविध स्वरुप हैं। इसी कारण वन्दे मातरम् भारतीय सांस्कृतिक चेतना की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है।

भारतीय दर्शन इस संबंध को और व्यापक अर्थ देता है। उपनिषदों में ईश्वर को सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त बताया गया है। ईशावास्योपनिषद् का महावाक्य, 'ईशावास्यमिदं सर्वम्', यह उद्घोष करता है कि समस्त जगत ईश्वर से आवृत है। इसी प्रकार छान्दोग्य उपनिषद् का 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' यह बताता है कि जो कुछ भी दिखाई देता है, वह उसी परम सत्य की अभिव्यक्ति है। इस दृष्टि से देखें तो वन्दे मातरम् में मातृभूमि का देवीरूप यह व्यक्त करता है कि जिस भूमि से जीवन मिलता है, वही ईश्वर की चरम अभिव्यक्ति है।

ऋग्वेद के उषा सूक्त में भी उषादेवी स्वयं को सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त शक्ति के रूप में प्रस्तुत करती है। वह ज्ञान, प्रेरणा, चेतना और समस्त जीवन की गतिशीलता का बोधक है। वन्दे मातरम् के चौथे और पाँचवें चरण इसी व्यापक दृष्टि को बोधित करते हैं। जब कवि कहता है– 'तुमि विद्या, तुमि धर्म', तब मातृभूमि ज्ञान और जीवन–मूल्यों का

आधार बन जाती है और जब वह कहता है– 'त्वं हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी, कमला कमलदलविहारिणी, वाणी विद्यादायिनी', तब मातृभूमि शक्ति, समृद्धि और ज्ञान के समेकित रूप में प्रतिष्ठित होती है। यहाँ दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती तीन अलग–अलग देवियाँ जीवन के तीन आवश्यक आयामों के प्रतीक हैं।

यही विचार देवीमहात्म्य में भी मिलता है, जहाँ देवी को आदिशक्ति कहा गया है, जो आवश्यकता के अनुसार अनेक रूप धारण करती है। कभी वह रक्षा के लिए दुर्गा है, कभी समृद्धि के लिए लक्ष्मी और कभी ज्ञान के लिए सरस्वती। वन्दे मातरम् भी इसी परंपरा का अनुसरण करता है। बंकिमचन्द्र मातृभूमि को इन देवियों से जोड़कर यह बताते हैं कि एक समृद्ध समाज के लिए शक्ति, ज्ञान और समृद्धि–तीनों समान रूप से आवश्यक हैं। मातृभूमि इन सभी मूल्यों का आधार बन जाती है।

भारतीय दर्शन की अद्वैत और शाक्त, दोनों परंपराएँ भी इस गीत को समझने में महत्त्वपूर्ण संकेत देती हैं। अद्वैत वेदांत सम्पूर्ण अस्तित्व के मूल में एक ही परम सत्य को स्वीकार करता है, जबकि शाक्त परंपरा उसी सत्य का अनुभव शक्ति के रूप में करती है। दोनों ही दृष्टियों में प्रकृति और पुरुष एक दुसरे के पूरक हैं। वन्दे मातरम् में भी यही भाव दिखाई देता है। पहले चरण की हरित, उर्वर और जीवनदायिनी धरती तथा पाँचवें चरण की दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती एक ही सांस्कृतिक दृष्टि के दो बिंदु हैं।

इन दार्शनिक संदर्भों के आलोक में यह कहा जा सकता है कि वन्दे मातरम् भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना में निहित अनेक शाश्वत प्रतिमानों का सृजनात्मक पुनर्संयोजन है। बंकिमचन्द्र भारतीय परंपरा में पहले से विद्यमान पृथ्वी–माता, सर्वव्यापी ईश्वर, आदि शक्ति और प्रकृति के प्रति श्रद्धा जैसे सांस्कृतिक सूत्रों को साहित्यिक भाषा में पुनः अभिव्यक्त करते हैं। यही अर्थ–यात्रा वन्दे मातरम् को भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना का एक अद्वितीय काव्य–पाठ बनाती है।

प्रतीकों का अर्थ–विस्तार: भारतीय सांस्कृतिक अर्थ–क्षेत्र

वन्दे मातरम् की सबसे बड़ी विशेषताओं में से एक इसकी समृद्ध प्रतीक–योजना है। इस गीत में प्रयुक्त शब्द भारतीय सांस्कृतिक स्मृति में निहित अनेक अर्थों को एक साथ जागृत करते हैं। भारतीय काव्य–परंपरा में प्रतीक का महत्व इसलिए है कि वह अपने प्रत्यक्ष अर्थ से आगे बढ़कर सांस्कृतिक, दार्शनिक और आध्यात्मिक अर्थों की ओर संकेत करता है। वन्दे मातरम् के जल, अन्न, मलय समीर, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती और माता जैसे प्रतीक भी इसी प्रकार भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना के व्यापक अर्थ–क्षेत्र को उद्घाटित करते हैं।

गीत का पहला शब्द है– 'सुजलाम्'। भारतीय परंपरा में जल जीवन, शुद्धता और निरंतरता का प्रतीक है। वैदिक साहित्य से लेकर पुराणों तक जल को सृष्टि के मूल तत्त्व के रूप में देखा गया है। गंगा, यमुना, नर्मदा और गोदावरी जैसी नदियाँ भारतीय संस्कृति की जीवंत धारा का प्रतिनिधित्व करती हैं। इसलिए 'सुजलाम्' शब्द मातृभूमि की उस जीवनदायिनी शक्ति का प्रतीक है, जिसके बिना जीवन की कल्पना संभव नहीं।

इसी प्रकार 'सुफलाम्' और 'सस्यश्यामलाम्'; भारतीय चिंतन में अन्न को ब्रह्म कहा गया है, क्योंकि वही जीवन का आधार है। खेतों की हरियाली आर्थिक सम्पन्नता के साथ ही श्रम, ऋतुचक्र, उर्वरता और लोकमंगल का भी प्रतीक है। यहाँ धरती एक ऐसी माता के रूप में सामने आती है, जो अपने सभी बच्चों का पालन–पोषण करती है। इस प्रकार मातृभूमि जीवन को धारण और पोषित करने वाली शक्ति बन जाती है।

'मलयजशीतलाम्' में मलय पर्वत से आने वाली शीतल, चन्दन–सुगंधित वायु का उल्लेख है। भारतीय काव्य में शीतल समीर करुणा और शांति का प्रतीक माना गया है। यह शरीर को शीतलता और मन को संतुलित करता है। बंकिमचन्द्र इस बिम्ब के माध्यम से मातृभूमि के वात्सल्यपूर्ण और संरक्षणकारी स्वरूप को व्यक्त करते हैं। यहाँ प्रकृति मनुष्य के जीवन को सहज और सुखद बनाने वाली शक्ति है।

दूसरे चरण में 'शुभ्रज्योत्स्ना' और 'फुल्लकुसुमितद्रुमदल' जैसे बिम्ब प्रकृति के एक और आयाम को सामने लाते हैं। चाँदनी भारतीय साहित्य में शीतलता, शांति और अंतःप्रकाश का प्रतीक है, फूलों से लदे वृक्ष सृजन, नवजीवन और प्रकृति की निरंतरता दर्शाते हैं। इन बिम्बों के माध्यम से बंकिमचन्द्र यह दिखाते हैं कि मातृभूमि जीवन को सौन्दर्य, आनंद और रस से भर देती है।

गीत के पाँचवें चरण में प्रतीकों का स्वरूप और अधिक व्यापक हो जाता है। दुर्गा साहस, न्याय, संरक्षण और नैतिक शक्ति की प्रतीक है। इसी प्रकार कमला अर्थात् लक्ष्मी समृद्धि, संतुलन और लोकमंगल का प्रतीक हैं। वाणी या सरस्वती ज्ञान, भाषा, स्मृति और सांस्कृतिक निरंतरता का प्रतिनिधित्व करती हैं। इन तीनों रूपों के माध्यम से बंकिमचन्द्र यह बताते हैं कि एक सशक्त समाज के लिए शक्ति के साथ समृद्धि और ज्ञान भी उतने ही आवश्यक हैं। मातृभूमि इन तीनों मूल्यों का आधार है।

इन सभी प्रतीकों के केंद्र में 'माता' का रूपक है। भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में जो जीवन का पोषण करती है, वह माता कहलाती है। इसी कारण पृथ्वी माता है, गंगा माता है और गौ माता है। मातृत्व यहाँ एक सांस्कृतिक और दार्शनिक अवधारणा है। बंकिमचन्द्र जब मातृभूमि को 'माता' कहकर संबोधित करते हैं, तो वे इसी व्यापक सांस्कृतिक परंपरा को स्वर देते हैं।

भारतीय कला और प्रतीकवाद के प्रमुख व्याख्याकार आनन्द कुमारस्वामी ने बार–बार इस बात पर बल दिया है कि भारतीय प्रतीकों को केवल उनके बाहरी रूप से नहीं समझा जा सकता; वे गहरे आध्यात्मिक और सांस्कृतिक सत्यों की दृश्य अभिव्यक्ति होते हैं। इसी प्रकार वासुदेव शरण अग्रवाल ने भारतीय प्रतीकों को सामूहिक सांस्कृतिक स्मृति का वाहक माना है। इन विचारों के आलोक में देखें तो वन्दे मातरम् के प्रतीक भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना में सदियों से विकसित अर्थ–परंपरा का प्रतिनिधित्व करते हैं।

संस्कृत और बांग्लाः एक सभ्यता

वन्दे मातरम् की सबसे विशिष्ट विशेषता उसकी भाषिक संरचना है। गीत का अधिकांश भाग संस्कृतनिष्ठ भाषा में रचा गया है, जबकि कुछ महत्त्वपूर्ण पंक्तियाँ बांग्ला में हैं। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यह भारतीय सभ्यता की बहुस्तरीय सांस्कृतिक संरचना का कलात्मक रूप है। बंकिमचन्द्र ने दो भाषाओं का प्रयोग भारतीय सांस्कृतिक चेतना के दो परस्पर पूरक आयामों को एक साथ अभिव्यक्त करने के लिए किया है।

भारतीय भाषिक इतिहास में संस्कृत और अन्य भारतीय भाषाओं का संबंध निरंतरता का रहा है। संस्कृत ने भारतीय दर्शन, शास्त्र, काव्य और सांस्कृतिक स्मृति को अभिव्यक्ति दी, जबकि प्राकृत, अपभ्रंश और उनसे विकसित अन्य भाषाओं ने उसी परंपरा को लोकजीवन, क्षेत्रीय अनुभव और दैनिक व्यवहार में जीवित रखा। इसलिए वन्दे मातरम् में संस्कृत और बांग्ला एक ही सांस्कृतिक परंपरा के शास्त्रीय और जीवंत रूप हैं।

गीत में प्रयुक्त संस्कृतनिष्ठ पद– 'सुजलाम्', 'सुफलाम्', 'सस्यश्यामलाम्', 'दशप्रहरणधारिणी', 'विद्यादायिनी'—भारतीय शास्त्रीय परंपरा की स्मृति को जागृत करते हैं। इन पदों की समास–प्रधान संरचना, ध्वन्यात्मक गरिमा और वैदिक–पुराणिक संकेत पाठक को एक दीर्घ सांस्कृतिक परंपरा से जोड़ते हैं।

इसके विपरीत, बांग्ला पंक्तियाँ– 'तुमि विद्या, तुमि धर्म', 'तोमारई प्रतिमा गड़ी मन्दिरे–मन्दिरे'—गीत में आत्मीयता और निकटता का भाव उत्पन्न करती हैं। यहाँ भाषा अधिक संवादात्मक हो जाती है। ऐसा लगता है मानो कवि सीधे अपनी माता से बात कर रहा है। इस प्रकार बांग्ला उसी सांस्कृतिक परंपरा के जीवित, आत्मीय और स्थानीय रूप को स्वर देती है।

भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो यहाँ भाषा–विन्यास का एक अत्यंत सूक्ष्म उदाहरण मिलता है। गीत के प्रारम्भिक भागों में, जहाँ प्रकृति, स्तुति और सांस्कृतिक गरिमा का वर्णन है, वहाँ संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग किया गया है और जहाँ संबोधन अधिक व्यक्तिगत और आत्मीय हो जाता है– 'तुमि विद्या, तुमि धर्म'—वहाँ भाषा का विन्यास बदल जाता है। बंकिमचन्द्र विषय और भाव के अनुरूप भाषा का चयन करते हैं। यह विशेषता भारतीय बहुभाषिक परंपरा की भी याद दिलाती है। भारतीय समाज में एक ही व्यक्ति शास्त्रीय अध्ययन के लिए संस्कृत, भक्ति के लिए क्षेत्रीय भाषा और दैनिक व्यवहार के लिए स्थानीय बोली का प्रयोग करता रहा है। भाषाओं के बीच यह संबंध कार्य–विभाजन और सांस्कृतिक सह–अस्तित्व का है। वन्दे मातरम् उसी बहुभाषिक सांस्कृतिक चेतना का काव्यात्मक रूप है।

भारतीय राष्ट्रबोधः राष्ट्रवाद से पूर्व की अवधारणा

वन्दे मातरम् की चर्चा प्रायः आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद के संदर्भ में की जाती है। यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में यह गीत भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का प्रेरणास्रोत रहा। किन्तु यदि इसकी व्याख्या केवल राजनीतिक राष्ट्रवाद तक सीमित कर दी जाए, तो इसके सांस्कृतिक और दार्शनिक आयाम अनदेखे रह जाते हैं। वन्दे मातरम् की भाषा–वैज्ञानिक व्याख्या से हम यह समझ पाते हैं कि यह गीत भारतीय सभ्यता में पहले से विद्यमान राष्ट्रबोध का ही काव्यात्मक रूप है। दूसरे शब्दों में, बंकिमचन्द्र ने आधुनिक राष्ट्रीय चेतना को व्यक्त करने के लिए उन सांस्कृतिक प्रतिमानों का सहारा लिया, जो भारतीय परंपरा में सदियों से विद्यमान थे।

यहाँ एक मूलभूत अंतर समझना आवश्यक है। 'राष्ट्रवाद' आधुनिक युग की अवधारणा है, जिसका विकास यूरोप में अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान हुआ। इसका संबंध राज्य, संप्रभुता, सीमाओं, नागरिकता और राजनीतिक स्वतंत्रता से है। इसके विपरीत भारतीय परंपरा में 'राष्ट्र' का विचार केवल राजनीतिक सत्ता तक सीमित नहीं था। वैदिक साहित्य, महाकाव्यों और पुराणों में राष्ट्र, जन, जनपद, भूमि और जननी जैसी अवधारणाएँ सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक संबंधों के आधार पर विकसित होती हैं।

शुक्ल यजुर्वेद में राष्ट्र की अवधारणा ज्ञान, वीरता, समृद्धि, कृषि, सामाजिक संतुलन और लोककल्याण से सम्पन्न एक समन्वित सांस्कृतिक व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत की गई है।[5] इस वैदिक दृष्टि में राष्ट्र की शक्ति उसके नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक आधारों में निहित है, जो वन्दे मातरम् में व्यक्त मातृभूमि की समृद्ध, शक्तिमयी और कल्याणकारी कल्पना से साम्य रखती है। वैदिक साहित्य में भूमि को राष्ट्र का मूल आधार माना गया है।

महाकाव्यों और पुराणों में यह अवधारणा और अधिक विकसित होती है। भारतवर्ष नदियों, पर्वतों, तीर्थों, आश्रमों, कथाओं और साझा सांस्कृतिक स्मृतियों से निर्मित एक सभ्यतागत क्षेत्र है। उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक फैली तीर्थ–परंपरा, महाकाव्यों का व्यापक प्रसार, पुराणों की कथाएँ और सांस्कृतिक आदान–प्रदान इस एकता को निरंतर सुदृढ़ करते रहे। इस सांस्कृतिक एकात्मता का आधार राजनीतिक केंद्रीकरण नहीं, बल्कि साझा जीवन–मूल्य, धर्म, आचार और परंपरा थे। इसलिए भारतीय राष्ट्रबोध का स्वरूप मूलतः सांस्कृतिक है, केवल राजनीतिक नहीं।

इस दृष्टि से देखें तो वन्दे मातरम् आधुनिक राष्ट्रवाद और भारतीय सांस्कृतिक परंपरा के बीच एक सेतु का कार्य करता है। बंकिमचन्द्र अपने समय की राष्ट्रीय चेतना को व्यक्त अवश्य करते हैं, किन्तु उसके लिए प्रतीक भारतीय दार्शनिक और सांस्कृतिक परंपरा से ग्रहण करते हैं। उन्होंने आधुनिक राष्ट्र की अवधारणा को वैदिक, उपनिषदिक और शाक्त प्रतिमानों के साथ जोड़ कर उसको एक विशिष्ट स्वरुप प्रदान किया।

इसलिए यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि वन्दे मातरम् भारतीय सभ्यता में पहले से विद्यमान राष्ट्रबोध का आधुनिक काव्यात्मक पुनर्पाठ है। इसकी शक्ति इसी तथ्य में निहित है कि यह राष्ट्र को प्रकृति, संस्कृति, मातृत्व और ईश्वर के समन्वित अनुभव के रूप में प्रतिष्ठित करता है।

परिसंहार

वन्दे मातरम् के शास्त्रीय विश्लेषण के आधार पर निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि यह रचना भारतीय सांस्कृतिक अवचेतना की सशक्त साहित्यिक अभिव्यक्ति है। बंकिमचन्द्र ने जिस भावभूमि में इसकी रचना की, वह भारतीय सभ्यता के मूल सांस्कृतिक, दार्शनिक और आध्यात्मिक विचारों से अनुप्राणित है। इस गीत में प्रकृति, मातृत्व, शक्ति, ज्ञान और धर्म के जिन प्रतिमानों का समन्वय हुआ है, वे भारतीय जीवन–दृष्टि के अभिन्न अंग हैं। यही कारण है कि वन्दे मातरम् कालजयी स्वरूप धारण कर भारतीय जनमानस में स्थायी रूप से प्रतिष्ठित हुआ तथा भारतीय सामूहिक सांस्कृतिक स्मृति, सभ्यतागत चेतना और आत्मबोध का एक अमिट प्रतीक बन गया।

संदर्भः

[1] भट्टाचार्य, सब्यसाची, 'वन्दे मातरम् : एक गीत की जीवनी'; राजकमल प्रकाशन, 2009, पृष्ठ 11.

[2] दास, शिशिर कुमार, The Artist in Chains: The Life of Bankim Chandra Chatterjee, नई दिल्लीः साहित्य अकादेमी, 1991.

[3] लिप्नर, जूलियस, Anandamath, or The Sacred Brotherhood, ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2005.

[4] अरविन्द, श्री, Bande Mataram: Early Political Writings, विशेषतः 16 अप्रैल 1907 का लेख।

[5] द्विवेदी, आभा, ''वैदिक साहित्य में राष्ट्र की अवधारणा'' इंटरनेशनल जर्नल ऑफ संस्कृत रिसर्च, खंड 11, अंक 2, 2025, पृ. 99–101। **DOI: 10.22271/23947519.2025.v11.i2b.2593d.**

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय: व्यक्तित्व, कृतित्व और राष्ट्रभावना

–डॉ. दुर्गाशरण मिश्र
उप महाप्रबंधक (राजभाषा)
भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण
क्षेत्रीय मुख्यालय, दक्षिणी क्षेत्र, चेन्नै

पूर्णप्रज्ञ बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय को भारतीय साहित्य और राष्ट्रवाद के क्षेत्र में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। वे आधुनिक बांग्ला साहित्य के प्रणेता होने के साथ, भारत के प्रारंभिक उपन्यासकारों में से थे। उनकी साहित्यिक प्रतिभा ने बांग्ला गद्य को सशक्त, सुरुचिपूर्ण और अभिव्यंजक भाषा शैली प्रदान की, जो सूक्ष्म व जटिल मानवीय भावनाओं, ऐतिहासिक घटनाओं तथा दार्शनिक विचारों को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करने में सक्षम थी। उनकी कालजयी कृतियों ने औपनिवेशिक काल के भारतीयों की एक पूरी पीढ़ी में श्रद्धामयी देशभक्ति और सांस्कृतिक गौरव का संचार किया। उनका अमर गीत 'वन्दे मातरम्' उनके सर्वाधिक चर्चित उपन्यास 'आनंदमठ' में प्रकाशित हुआ था तथा वह आगे चलकर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का प्रेरणादायी उद्घोष बना और वही आज स्वतंत्र भारत के राष्ट्रीय गीत के रूप में समादृत है। उनका योगदान केवल साहित्य सृजन तक सीमित नहीं रहा। वे विचक्षण दार्शनिक, निबंधकार, सफल प्रशासक और प्रखर राष्ट्रवादी चिंतक थे, जिनके प्रेरणादायी विचारों ने उन्नीसवीं शताब्दी के बंगाल के बौद्धिक परिवेश को गहनता से प्रभावित किया। उनके उपन्यासों, निबंधों तथा धार्मिक ग्रंथों ने भारत की प्राचीन संस्कृति में नूतन प्राण फूँके तथा सामाजिक सुधार तथा राष्ट्रीय नवजागरण का अमोघ संदेश दिया। उनकी विचारोत्तेजक रचनाएँ तत्कालीन समाज की आकांक्षाओं को सुस्पष्टता से प्रतिबिंबित करती हैं, जो औपनिवेशिक शासन में चिर दमित थीं और अपनी राष्ट्रीय पहचान की खोज में थीं।

प्रारंभिक जीवन और शिक्षा प्राप्ति

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का जन्म 27 जून 1838 को बंगाल के नैहाटी के निकट स्थित काँठलपाड़ा नामक गाँव में हुआ था। वे एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार से थे। उनके पिता यादवचंद्र चट्टोपाध्याय ब्रिटिश शासन में उपसमाहर्ता (डिप्टी कलक्टर) थे। उनकी माता दुर्गादेवी अत्यंत धार्मिक प्रवृत्ति की थीं और उन्होंने बंकिमचंद्र के नैतिक एवं आध्यात्मिक व्यक्तित्व के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी थी।

अपने बाल्यकाल से ही बंकिमचंद्र असाधारण प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने बहुत कम समय में बांग्ला की वर्णमाला सीख ली थी और आगे चलकर संस्कृत, बांग्ला तथा (बाद में) अंग्रेजी साहित्य में गहरी रुचि विकसित कर ली थी। उनकी शिक्षा में पारंपरिक भारतीय ज्ञान और आधुनिक पाश्चात्य शिक्षा का मणिकांचन समन्वय था, जिसने उनके बौद्धिक विकास को प्रखरता और व्यापकता दी। उन्होंने औपचारिक रूप से हुगली मोहसिन कॉलेज से पढ़ाई की और बाद में कलकत्ता (अब कोलकाता) के प्रेसीडेंसी कॉलेज में दाखिल हुए। वर्ष 1858 में वे नवस्थापित कोलकाता विश्वविद्यालय के प्रथम स्नातकों में शुमार हुए। सरकारी सेवा में आने के साथ–साथ उन्होंने कानूनी शिक्षा भी प्राप्त की। आगे, अंग्रेजी साहित्य के गहन अध्ययन ने उन्हें शेक्सपियर, वाल्टर स्कॉट, चार्ल्स डिकेंस जैसे प्रख्यात विदेशी लेखकों से परिचित कराया, जिनकी कथनशैली का प्रभाव उनके साहित्यिक

जीवन पर बखूबी पड़ा। दूसरी ओर भगवद्गीता, महाभारत, रामायण तथा संस्कृत के शास्त्रीय साहित्य के सुविस्तृत और प्रगाढ़ स्वाध्याय ने उन्हें भारतीय परंपराओं की अमूल्य विरासत से भी निरंतर जोड़े रखा।

प्रशासनिक उत्तरदायित्व का निर्वहन

औपचारिक शिक्षा पूरी करने के बाद, बंकिमचंद्र भारतीय सिविल सेवा में प्रविष्ट हुए तथा डिप्टी मजिस्ट्रेट एवं डिप्टी कलक्टर के रूप में उन्होंने लगभग तीस वर्षों तक बंगाल के विभिन्न जिलों में अपनी प्रशासनिक सेवाएँ दीं। अपने सुदीर्घ प्रशासनिक कार्यकाल में उन्होंने औपनिवेशिक शासन की दारुण कठोरता अत्यंत निकट से देखी। गरीबी, शोषण, भ्रष्टाचार, सामाजिक असमानता तथा जनसाधारण की विकट परेशानियों का प्रत्यक्ष अनुभव किया। तथापि उन्होंने पूर्ण निष्ठा से अपने प्रशासनिक दायित्वों का निर्वहन किया और साथ ही यह देखा—समझा कि औपनिवेशिक शासन व्यवस्था, भारतीय अधिकारियों पर किस प्रकार से विविध प्रतिबंध लगाती है। उनके व्यापक कटु अनुभवों ने उनके साहित्यिक मानस को गहराई से उद्वेलित किया। यही कारण है कि उनके अनेक उपन्यासों में सामान्य जनता की पीड़ा, शासक और प्रजा के बीच का संघर्ष तथा समाज के नैतिक द्वंद्वों का जीवंत चित्रण मिलता है। उनके सुदीर्घ प्रशासनिक अनुभव ने उनके इस विश्वास को और सघन किया कि राजनीतिक स्वतंत्रता तभी सार्थक हो सकती है, जब नैतिक अनुशासन, सामाजिक एकता और राष्ट्रीय चेतना का साथ—साथ विकास हो।

असाधारण व्यक्तित्व के धनी

नीतिवादी बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के व्यक्तित्व में बौद्धिक प्रखरता और व्यावहारिक विवेक का विलक्षण संयोग था। वे गहरे अनुशासित, घोर परिश्रमी, प्रबल धार्मिक तथा परम देशभक्त थे। उनके मित्र उनके शांत स्वभाव, विनोदप्रियता, तीक्ष्ण बुद्धि तथा भाषा पर असाधारण अधिकार के कायल थे। अति संवेदनशील लेखकों के विपरीत, वे सामाजिक और राजनीतिक प्रश्नों के समाधान पर अत्यंत तर्कसंगत एवं विवेकपूर्ण दृष्टिकोण अपनाते थे। उनका विश्वास था कि साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन करना नहीं, बल्कि समाज को हर प्रकार से जागृत करना है। उनके अनुसार एक उपन्यासकार का पुनीत कर्तव्य, समाज में नैतिक मूल्यों का बीजारोपण, राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण तथा सामाजिक सुधार को प्रोत्साहित करना है।

उनके विचारों में पूर्व की आध्यात्मिक परंपरा और पश्चिम के तर्कवाद का सुंदर समन्वय था। वे जहाँ वैज्ञानिक प्रगति और आधुनिक शिक्षा के प्रबल समर्थक थे, तो वहीं भारतीय दर्शन और संस्कृति में अटूट आस्था भी रखते थे। उन्होंने पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण का प्रबल विरोध किया और यह प्रतिपादित किया कि भारत को अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाए रखकर ही, विवेकसम्मत आधुनिकता अपनानी चाहिए। उन्होंने अपने लोककल्याणकारी विचारों की अभिव्यक्ति में उल्लेखनीय नैतिक साहस का परिचय दिया। उस समय जब ब्रिटिश शासन की खुली आलोचना करना बहुत कठिन था, उन्होंने ऐतिहासिक व पुरा कथाओं, मिथकों, प्रतीक कथाओं और रूपकों का सहारा लेकर, देशभक्ति के विचारों को प्रभावशाली ढंग से जनसाधारण के समक्ष प्रस्तुत किया और स्वयं को बुद्धिमतापूर्वक औपनिवेशिक सेंसरशिप के दंश से भी बचाकर रखा।

विलक्षण साहित्यिक यात्रा और बांग्ला गद्य को उनकी देन

बंकिमचंद्र ने प्रारंभ में अंग्रेजी में कविता लिखने का प्रयास किया, क्योंकि औपनिवेशिक शासन में अंग्रेजी

साहित्यिक शिक्षा की भाषा मानी जाती थी, किन्तु शीघ्र ही उन्होंने ने यह अनुभव किया कि उनकी वास्तविक सृजनात्मक क्षमता बांग्ला भाषा में ही पल्लवित हो सकती है। उनका यह निर्णय आगे चलकर बांग्ला (भाषा के) साहित्य के इतिहास में युगांतरकारी सिद्ध हुआ।

उन्होंने अपना पहला उपन्यास 'Rajmohan's Wife' (1864) अंग्रेजी में लिखा। ऐसे तो भारतीय अंग्रेजी उपन्यासों के इतिहास में इसका विशेष महत्त्व है, फिर भी इसे उस काल में व्यापक लोकप्रियता नहीं मिली। इसके बाद उन्होंने स्थायी रूप से बांग्ला भाषा को अपनी रचनात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम बना लिया, जिसमें उनकी साहित्यिक प्रतिभा पूर्णरूप से उजागर हुई। उनका पहला बांग्ला उपन्यास 'दुर्गेशनंदिनी' सन् 1865 ई. में प्रकाशित होते ही लोकप्रिय हो गया। इसमें सार्वभौम प्रेम, साहसिक घटनाओं, इतिहास और नाटकीय कथानक का अद्भुत चित्रण था। एक तरह से इस उपन्यास ने आधुनिक बांग्ला कथा साहित्य का श्रीगणेश किया तथा यह सिद्ध किया कि भारतीय भाषाओं में भी, यूरोपीय साहित्य के सदृश उत्कृष्ट रचा जा सकता है। 'दुर्गेशनंदिनी' की अपार सफलता से उत्साहित हो, बंकिमचंद्र ने पूरी निष्ठा से साहित्य सृजन को अपना सारस्वत धर्म बना लिया। अगले लगभग तीस वर्षों में उन्होंने अनेक उपन्यास, निबंध, धार्मिक ग्रंथ तथा विविध लेख लिखे, जिन्होंने बांग्ला गद्य और भारतीय साहित्य को ऊर्जस्वित किया और नयी दिशा दी। उनसे पहले बांग्ला गद्य में वह सुनम्यता, भाषिक परिष्कार, साहित्यिक अभिव्यंजना नहीं थी, जो उच्च कोटि के साहित्य सृजन के लिए आवश्यक समझे जाते हैं। उन्होंने संस्कृत शब्दावली को बोलचाल की (बांग्ला) भाषा के साथ जोड़कर, उसे समृद्ध, मधुर और प्रभावशाली बनाया। इसी वजह से उनके गद्य में भावों की सूक्ष्मता, लालित्य और सौंदर्य के अद्भुत दिग्दर्शन होते हैं। उन्होंने साहित्यिक गरिमा से युक्त भाषाशैली विकसित की, जो सुधी/सामान्य पाठकों के लिए सहज एवं सुग्राह्य बनी। उनमें प्रकृति–वर्णन, ऐतिहासिक वातावरण तथा मानवीय भावनाओं के जीवंत चित्रण की कलात्मकता असाधारण थी; इन्हीं उपलब्धियों के कारण वे बांग्ला उपन्यास के जनक माने जाते हैं। उनकी मुग्धकारी रचनात्मकता का प्रभाव केवल बंगाल तक सीमित नहीं रहा, बल्कि भारत की अनेक भाषाओं के रचनाकारों ने भी आधुनिक गद्य–कथा के विकास में उनके रचनाकर्म से प्रेरणा ली।

संपादन कला से परिपूर्ण

उपन्यास लेखन के अतिरिक्त बंकिमचंद्र ने 1872 में 'बंगदर्शन' नमक प्रभावशाली साहित्यिक पत्रिका की भी शुरुआत की। यह पत्रिका शीघ्र ही रचनाकारों के लिए उन्नीसवीं शताब्दी के बंगाल के प्रमुख बौद्धिक मंचों में प्रतिष्ठित हो गई। इसमें स्थापित लेखकों की रचनाएँ (निबंध, साहित्य समालोचना, ऐतिहासिक अध्ययन, दार्शनिक विमर्श इत्यादि) प्रकाशित होती थीं। 'बंगदर्शन' के माध्यम से शिक्षा, धर्म, साहित्य, सामाजिक सुधार और राष्ट्रीय पहचान जैसे महत्त्वपूर्ण विषयों पर गंभीर विचार–विमर्श को प्रोत्साहन मिला। उनका मत था कि सच्चे साहित्य का उद्देश्य आलोचनात्मक चिंतन को विकसित करना और जनमत को सशक्त बनाना होता है। इस पत्रिका ने शिक्षित मध्यम वर्ग को काफी प्रभावित किया और यह बंगाल पुनर्जागरण की साक्षी बनी। अपने साहित्यिक जीवन के प्रारंभिक चरणों तक वे भारत के प्रमुख साहित्यकारों में स्थापित हो चुके थे। उनका गरिमापूर्ण व्यक्तित्व, गहन वैदुष्य, भाषा पर असाधारण अधिकार तथा सांस्कृतिक पुनर्जागरण के प्रति उनकी चरम प्रतिबद्धता ने, उनकी आगामी कालजयी रचनाओं की आधारशिला रखी और वह फिर आगे चलकर भारतीय राष्ट्रवाद और राष्ट्रीय चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति का उल्लेखनीय माध्यम बनी।

सफल उपन्यासकार के रूप में

भारतीय कथा साहित्य के इतिहास में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का स्थान युगप्रवर्तक के रूप में है। उनके पूर्व बांग्ला साहित्य मुख्य रूप से कविताओं, लोककथाओं और अनुवादों तक ही सीमित था। उन्होंने आधुनिक उपन्यास को ऐसी साहित्यिक विधा के रूप में विकसित किया, जो इतिहास, प्रेम, सामाजिक जीवन और राजनीतिक विचारों का प्रभावशाली चित्रण करने में सक्षम हुआ। उनके उपन्यासों में कलात्मकता और नैतिकता का अद्भुत संगम हुआ, जिस कारण वे अपने पाठकों के बीच अत्यंत लोकप्रिय हुए। उनका मानना था कि साहित्य का परम उद्देश्य सामाजिक उत्थान होता है। वे यह मानते थे कि एक उपन्यासकार का दायित्व पाठकों का केवल मन बहलाना नहीं, बल्कि उनके भीतर नैतिक मूल्यों, देशभक्ति और अदम्य साहस का संचार करना भी है। इसलिए उनके उपन्यासों में प्रेरक चरित्र, रोचक कथानक, प्रकृति के मनोरम चित्रण के साथ, धर्म, समाज और राष्ट्रीय पहचान पर गंभीर चिंतन देखने को मिलता है।

दुर्गेशनंदिनी

बंकिमचंद्र के प्रथम बांग्ला उपन्यास 'दुर्गेशनंदिनी' (1865 में प्रकाशित) से आधुनिक बांग्ला कथा साहित्य का आरंभ माना जाता है। यह उपन्यास बंगाल के मुगल–अफगान संघर्ष की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर रचित है और इसमें निष्कलुष प्रेम, साहसिक कृत्यों, परम वीरता तथा ऐतिहासिक कल्पना का मनोहारी चित्रण है।

इसकी कथावस्तु जगत सिंह और तिलोत्तमा के अनन्य प्रेम के इर्द–गिर्द घूमती है, साथ ही उस समय के राजनीतिक संघर्षों का भी प्रभावशाली चित्र भी उपस्थित करती है। अपने रोचक कथानक, प्रभावोत्पादक चरित्र–चित्रण और उत्कृष्ट भाषा शैली की वजह से, यह उपन्यास विस्मयकारी ढंग से लोकप्रिय हुआ। इसने यह सिद्ध किया कि बांग्ला साहित्य भी यूरोपीय साहित्य के समान उच्च कोटि के उपन्यासों के सृजन में सक्षम है। इसने भारतीयों में अपने गौरवशाली अतीत के प्रति परम सम्मान और राष्ट्रीय विरासत के प्रति श्रद्धामय गर्व की भावना जागृत की।

कपालकुंडला

बंकिमचंद्र के उत्तम रोमांटिक उपन्यासों में 'कपालकुंडला' (1866 में प्रकाशित) का स्थान अन्यतम है। इसमें सभ्यता और प्रकृति के मध्य संघर्ष का मार्मिक चित्रण है। नायिका कपालकुंडला का लालन–पालन एक तांत्रिक तपस्वी द्वारा वन में किया गया है। जब उसका विवाह नबाकुमार से होता है और वह गृहस्थ जीवन में प्रवेश करती है, तो कुत्सित सामाजिक रीति रिवाजों के साथ खुद को अनुकूलित नहीं कर पाती और अंत में उसका जीवन दुखों से भर जाता है।

यह उपन्यास अपनी काव्यात्मक भाषा, गहन मनोवैज्ञानिक विश्लेषण तथा अविस्मरणीय नायिका के कृत्यों के कारण अत्यंत प्रशंसित है। इसमें निष्कपटता, पवित्रता, सहज मानवीय प्रवृत्तियों और सामाजिक परंपराओं के बीच के संघर्ष की मनोहारी प्रस्तुति है। इस कृति द्वारा बंकिमचंद्र ने जटिल एवं भावनात्मक गहराई से युक्त स्त्री पात्रों के सृजन में, अपनी विलक्षण रचनात्मक शक्ति का परिचय दिया है।

मृणालिनी

उपन्यास 'मृणालिनी' (1869 में प्रकाशित) प्रेम और देशभक्ति का सुंदर समन्वय प्रस्तुत करता है। इसकी कथा बंगाल पर मुस्लिम आक्रमणों काल की पृष्ठभूमि में विकसित होती है। इसमें यह संदेश है कि राष्ट्र के प्रति कर्तव्य, व्यक्तिगत सुख से सर्वोपरि होता है। इसका नायक हेमचंद्र इस बात की गवाही देता है कि कभी–कभी सघन प्रेम, प्रेमवंत जीवन और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा का परित्याग, राष्ट्र सेवा जैसे उच्च आदर्शों के लिए परमावश्यक हो जाता है। यद्यपि 'आनंदमठ' जितनी प्रसिद्धि इस उपन्यास को नहीं मिली, फिर भी इसमें बंकिमचंद्र के आरंभिक राष्ट्रवादी विचार परिलक्षित होते हैं। यह उनके इस विश्वास को प्रकट करता है कि राष्ट्रीय पुनर्जागरण के लिए साहस, त्याग और नैतिक अनुशासन अपरिहार्य होते हैं।

सामाजिक उपन्यास का प्रणयन

बंकिमचंद्र ने स्वयं को केवल ऐतिहासिक या रोमांटिक उपन्यासों तक सीमित नहीं रखा बल्कि उन्होंने परिवार, विवाह, स्त्री की स्थिति, नैतिकता और सामाजिक परंपराओं से सम्बद्ध अनेक सामाजिक उपन्यास भी लिखे।

विषवृक्ष

1873 में प्रकाशित यह उपन्यास प्रेम, ईर्ष्या और नैतिक दुर्बलता के विनाशकारी परिणामों के प्रति सुधी पाठकों को सावधान करता है। यह घरेलू जीवन और पारिवारिक संबंधों के यथार्थवादी चित्रण के माध्यम से, मानवीय भावनाओं तथा सामाजिक उत्तरदायित्वों का गहन विश्लेषण करता है। इसकी गणना बांग्ला साहित्य के प्रारंभिक मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में होती है। इस उपन्यास में पात्रों को केवल नायक या खलनायक के रूप में नहीं, बल्कि गुण–दोषों से युक्त साधारण मनुष्यों के रूप में चित्रित किया गया है।

कृष्णकांत का वसीयतनामा

1878 में प्रकाशित यह उपन्यास उत्तराधिकार, लालच, प्रेम विश्वासघात और नैतिक संघर्ष पर आधारित है। इसकी कथा एक विवादित वसीयत के इर्द–गिर्द घूमती है, जिस कारण अनेक परिवारों के जीवन में दुखद घटनाएँ घटित होती हैं। 'कृष्णकांत का वसीयतनामा' बंकिमचंद्र की परिपक्व मनोवैज्ञानिक समझ तथा रोचक कथानक सृजित करने की अद्‌भुत क्षमता का निदर्शन है। यह औपन्यासिक कृति नैतिक प्रश्नों को उठाते हुए, पाठकों को अंत तक बांधे रखती है और बांग्ला कथा–साहित्य की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में प्रशंसित है।

देवी चौधरानी

बंकिमचंद्र के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों में 'देवी चौधरानी' (1884 में प्रकाशित) का स्थान महत्त्वपूर्ण है। इसमें एक सशक्त और प्रेरणादायी महिला पात्र का चरित्र चित्रण किया गया है, जो एक पीड़ित और उपेक्षित स्त्री से विकास पाकर, अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने वाली साहसी नेत्री बन जाती है। इस उपन्यास की नायिका प्रफुल्ला, भवानी पाठक के संरक्षण में सैन्य प्रशिक्षण, नैतिक शिक्षा और आत्मानुशासन प्राप्त करने के बाद, देवी चौधरानी के रूप में स्थापित होती है। वह आगे चलकर एक अनुशासित दल का नेतृत्व भी करती है, जिसका उद्देश्य निर्धनों की रक्षा करना और अन्याय का घोर प्रतिकार करना होता है। इसमें स्त्रियों को सक्षम नेतृत्वकर्त्री

के रूप में प्रस्तुत करने के साथ, शिक्षा और आत्मानुशासन के महत्त्व पर बल दिया गया है तथा समाज सेवा को राष्ट्रभक्ति का अभिन्न अंग सिद्ध किया गया है। बंकिमचंद्र ने देशभक्ति को केवल भावनात्मक लगाव न मानकर, उसे न्याय, ईमानदारी और लोक कल्याण के प्रति अप्रतिम समर्पण के रूप में उपस्थापित किया है। बाद के राष्ट्रवादी नेताओं ने 'देवी चौधरानी' के साहस, त्याग और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष की भावना की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है।

आनंदमठ : अनुपम राष्ट्रीय थाती

उत्तम श्लोक बंकिमचंद्र की समस्त साहित्यिक रचनाओं में 'आनंदमठ' (1882 में रचित) का स्थान अन्यतम है। राजनीतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से यह उनकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृतियों में से है। यह उपन्यास अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुए 'सन्यासी विद्रोह' की पृष्ठभूमि पर विरचित है। इसमें अमानुषिक अत्याचार तथा विदेशी शासन के विरुद्ध, सन्यासी योद्धाओं के लोमहर्षक संघर्ष का वर्णन मिलता है। इसमें देशभक्त सन्यासियों के एक ऐसे संगठन का वर्णन है, जिसने मातृभूमि की सेवा के लिए सर्वस्व अर्पित कर दिया। वे व्यक्तिगत सुख–सुविधाओं का परित्याग कर, न्याय, स्वतंत्रता और राष्ट्रीय पुनर्जागरण के लिए संघर्ष करते हैं।

इस उपन्यास में मातृभूमि को केवल एक भौगोलिक क्षेत्र के रूप में नहीं, बल्कि पावन माता के रूप में रूपायित किया गया है, जो प्रेम, भक्ति और बलिदान की अधिकारिणी है। मातृभूमि की यह प्रतीकात्मक कल्पना, भारतीय राष्ट्रवाद के विकास पर अत्यंत गहरा प्रभाव डालने वाली साबित होती है। वैसे तो यह उपन्यास ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है, पर इसकी वास्तविक महत्ता इसके प्रतीकात्मक संदेश में निहित है। यह इस बात को रेखांकित करता है कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता केवल राजनीतिक संघर्ष से प्राप्त नहीं हो सकती, बल्कि उसके लिए नैतिक पवित्रता, आत्मानुशासन, साहस, संगठन, एकता और आत्मबलिदान भी उतने ही महत्त्व रखते हैं। इसमें वर्णित वीरता, त्याग और मातृभूमि के प्रति समर्पण की भावना ने, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान असंख्य देशभक्तों को प्रेरित किया और यह कृति आगे चलकर भारतीय राष्ट्रवाद का अमर साहित्यिक उद्घोष बन गया।

वन्दे मातरम्': राष्ट्रीय जागृति का उद्दाम गीत

'आनंदमठ' की सबसे बड़ी देन निस्संदेह 'वन्दे मातरम्' है। यह मातृभूमि के प्रति प्रेम और समर्पण की सर्वाधिक प्रेरणादायक अभिव्यक्तियों में से एक है। अत्यंत काव्यात्मक एवं संस्कृतनिष्ठ बांग्ला भाषा में विरचित यह गीत, मातृभूमि की स्तुति एक दिव्या माता के रूप में करता है, जो हरे–भरे खेतों, कल–कल बहती नदियों, घने वन प्रदेशों तथा आध्यात्मिक वैभव से संपन्न है। यह गीत शीघ्र ही अपने साहित्यिक स्वरूप से आगे बढ़कर, भारतीय राष्ट्रवाद का ज्वलंत प्रतीक बन गया।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में, इसे राजनीतिक सभाओं, जन–समूहों, सरकार विरोधी प्रदर्शनों तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशनों में गाया जाने लगा। अनेक स्वतंत्रता सेनानी, कठोरतम कारावास, यातनाओं और यहाँ तक की मृत्यु का वरण करते समय भी, 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष करके प्राणोत्सर्ग करते थे। इस गीत ने देश के विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को, देशभक्ति के एक साझा भावनात्मक प्रतीक के माध्यम से एक सूत्र में पिरो डाला। इसका प्रभाव इतना व्यापक था कि ब्रिटिश सरकार सार्वजनिक रूप

से इसके गायन को राजनीतिक विद्रोह के समान समझने लगी। स्वतंत्रता के पश्चात 'वन्दे मातरम्' के प्रथम दो पद भारत के 'राष्ट्रीय गीत' के रूप में अपनाये गये।

राष्ट्रीय भावना का प्रत्यक्षीकरण

क्रियावान बंकिमचंद्र का राष्ट्रवाद, महज राजनीतिक राष्ट्रवाद तक सीमित नहीं था। वे यह मानते थे कि वास्तविक राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए नैतिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पुनर्जागरण आवश्यक है। उनके अनुसार भारत केवल विदेशी शासन का विरोध करके शक्तिशाली नहीं बन सकता। भारतीयों को अज्ञान, सामाजिक विभाजन, अंधविश्वास और नैतिक दुर्बलताओं से भी मुक्त होना होगा। शिक्षा, अनुशासन, ईमानदारी, साहस और निस्वार्थ सेवा राष्ट्रीय प्रगति के लिए अनिवार्य हैं।

उनके उपन्यासों में बार–बार मातृभूमि के प्रति अतिशय प्रेम, भारत की अमूल्य सांस्कृतिक विरासत का सम्मान, जनता के बीच आपसी सौहार्द, धवल नैतिक चरित्र और आत्मानुशासन, अत्याचार का सघन प्रतिकार, लोकहित के लिए त्याग और राष्ट्रीय प्रगति की आधारशिला के रूप में शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण आदर्शों को रेखांकित किया गया है।

बंकिमचंद्र के लिए देशभक्ति का आधार किसी अन्य राष्ट्र के प्रति घृणा नहीं, बल्कि अपने देश के प्रति प्रेम और उसके कल्याण के प्रति एकनिष्ठ समर्पण था। उनका विश्वास था कि राष्ट्रीय पुनर्जागरण, नैतिक सुधार और आध्यात्मिक शक्ति के साथ ही संभव है।

रचनात्मकता का स्वतंत्रता आंदोलन पर प्रभाव

यद्यपि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का निधन 1894 में हो गया था, अर्थात् भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के चरम पर पहुँचने से बहुत पहले, फिर भी उनकी रचनाओं ने आने वाली राष्ट्रवादी पीढ़ियों पर अत्यंत गहरा प्रभाव डाला। महर्षि अरविंद, बिपिन चंद्रपाल, बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय तथा अनेक क्रांतिकारी संगठनों ने 'आनंदमठ' और 'वन्दे मातरम्' से प्रेरणा ग्रहण की। उनकी रचनाओं की भावनात्मक शक्ति ने हजारों भारतीय युवाओं को राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए अपना सर्वस्व समर्पित करने के लिए प्रेरित किया। राष्ट्र को एक पूज्या माता के रूप में देखने की उनकी अवधारणा ने, देशभक्ति को एक महान नैतिक और आध्यात्मिक आदर्श का स्वरूप प्रदान किया। इस प्रकार यह उपन्यास साहित्यिक एवं राजनीतिक जागरण का एक प्रभावशाली माध्यम बना। आगे चलकर यह सिद्ध हुआ कि रचनात्मक साहित्य जन चेतना को झंकृत करने की अद्भुत क्षमता रखता है। अपनी उत्कृष्ट साहित्यिक रचनात्मकता और राष्ट्रभक्ति के उच्च्य आदर्शों का समन्वय करके, बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने ऐसी अमर कृतियों का प्रणयन किया कि वे भारतीय साहित्य और भारतीय राष्ट्रवाद की चिरस्थायी धरोहर के रूप में समादृत एवं चिरस्मरणीय हैं।

प्रखर सामाजिक चिंतक

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय केवल एक महान उपन्यासकार ही नहीं थे, बल्कि वे उन्नीसवीं शताब्दी के भारत के अग्रणी सामाजिक चिंतकों में से थे। वे ऐसे समय जन्म लिए थे, जब भारत सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिवर्तनों के दौर से गुजर रहा था। ब्रिटिश राज ने पाश्चात्य शिक्षा, नवीन प्रशासनिक व्यवस्था और

आधुनिक विचारों से परिचित कराया था, जबकि भारतीय समाज अभी भी सामाजिक असमानता, दारुण रूढ़ियों, जातिगत विभाजनों तथा महिलाओं की निम्न सामाजिक स्थिति जैसी समस्याओं से दो–चार हो रहा था।

बंकिमचंद्र का विश्वास था कि भारत तभी वास्तविक रूप में प्रगति कर सकता है, जब वह अपनी प्राचीन सभ्यता/संस्कृति की श्रेष्ठ परंपराओं/मान्यताओं को आधुनिक ज्ञान–विज्ञान के अवदानों से स्वयं को बखूबी समन्वित करे। अपने निबंधों और उपन्यासों के माध्यम से उन्होंने देशवासियों को आत्मसम्मान, अनुशासन, समग्र शिक्षा और नैतिक उत्तरदायित्व को विकसित करने की दिशा में प्रेरित किया। उन्होंने अज्ञान, अंधविश्वास, आलस्य और भ्रष्टाचार जैसी सामाजिक बुराइयों की कटु आलोचना की। साथ ही उन्होंने शिक्षित भारतीयों को पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करने के विरुद्ध चेतावनी भी दी। उनके मत में वास्तविक प्रगति तभी संभव है, जब भारतीय अपनी सांस्कृतिक विरासत पर भावात्मक श्रद्धा रखते हुए, वैज्ञानिक और बौद्धिक उन्नति के लिए भी उपस्थित/प्रस्तुत रहें। कुछ समाज सुधारकों के उलट, जो व्यापक और त्वरित/क्रांतिकारी परिवर्तन के आकांक्षी थे, बंकिमचंद्र भारतीय परंपराओं पर आधारित क्रमिक सुधार में विश्वास रखते थे। उनका मानना था कि स्थायी सामाजिक परिवर्तन बाहरी दबाव से नहीं, बल्कि नैतिक शिक्षा और सुदृढ़ चरित्र के निर्माण से संभव है। उनकी लोक कल्याणकारी रचनाएँ पाठकों को समाज के कल्याण के लिए समर्पित, उत्तरदायी और आदर्श नागरिक बनने की प्रेरणा देती हैं।

धर्म संवलित दार्शनिक विचार

बंकिमचंद्र के चिंतन में धर्म का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है, किन्तु उनका धर्मबोध संकीर्ण कर्मकांडों तक सीमित न होकर व्यापक, तर्कसंगत और नैतिक है। वे हिन्दू दर्शन तथा 'भगवद्गीता' से अत्यधिक प्रभावित थे, जिसे वे धर्मपूर्ण आचरण और निस्वार्थ कर्तव्य का सर्वोत्तम मार्गदर्शक मानते थे। वे धर्म और नैतिकता में अन्योन्याश्रय संबंध के आकांक्षी थे। उनका विचार था कि सच्चा धार्मिक जीवन केवल पूजा–पाठ और धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं होता, बल्कि सत्यनिष्ठा, साहस, करुणा और लोक कल्याण की भावना से ओत–प्रोत होता है। वे मानते थे कि आध्यात्मिकता को समाज और राष्ट्र की सेवा के लिए प्रतिबद्ध होना चाहिए।

अपनी दार्शनिक रचनाओं में उन्होंने हिन्दू धर्म को आधुनिक ज्ञान और तर्क के आलोक में पुनर्व्याख्यायित करने का प्रयास किया। जहाँ उन्होंने अंधविश्वास का घोर विरोध किया, तो वहीं भारतीय सभ्यता और संस्कृति के स्थायी नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का दृढ़ समर्थन किया। 'कृष्णचरित्र' तथा 'धर्मतत्व' जैसी कृतियों में उन्होंने धर्म, नैतिकता और दर्शन पर गंभीर, विचारपूर्ण और मौलिक चिंतन प्रस्तुत किया। इन रचनाओं का उद्देश्य यह सिद्ध करना था कि हिन्दू धर्म में ऐसे गहन बौद्धिक और नैतिक संसाधन/उपादान विद्यमान हैं, जो आधुनिक समाज का सफल मार्गदर्शन कर सकने में सक्षम हैं। उनकी देशभक्ति की अवधारणा आध्यात्मिकता से गहरे जुड़ी हुई थी। उनके मत में मातृभूमि के प्रति प्रेम केवल राजनीतिक भावना नहीं, बल्कि पावन नैतिक कर्तव्य है। इस विचार की सर्वोच्च अभिव्यक्ति 'आनंदमठ' और 'वन्दे मातरम्' में मिलती है, जहाँ राष्ट्र को एक दिव्य माता के रूप में चित्रित किया गया है, जो श्रद्धा भक्ति और बलिदान की अधिकारिणी है।

रचनाओं में महिलाओं का चित्रण

बंकिमचंद्र के उपन्यासों की महत विशेषता महिला पात्रों का सशक्त चरित्र–चित्रण है। जिस समय साहित्य में

महिलाओं को प्रायः निष्क्रिय और अवलंबित पात्रों के रूप में प्रस्तुत किया जाता था, उस समय उन्होंने बुद्धिमती, साहसी और नैतिक रूप से दृढ़ नायिकाओं को स्थापित किया, जो कथा के केंद्र में रहती हैं। कपालकुंडला, कुंदनंदिनी, शांति और देवी चौधरानी जैसी पात्र अपनी भावनात्मक गहराई और विशिष्ट व्यक्तित्व के कारण आज भी हमारे बीच चिरस्मरणीय बनी हुई हैं। यद्यपि इनमें से कुछ पात्र पारंपारिक गुणों की (जैसे समर्पण और त्याग) प्रतीक हैं, फिर भी वे अदम्य साहस, आत्मिक स्वतंत्रता और नेतृत्व क्षमता का असाधारण परिचय देती हैं। उदाहरणार्थ, 'देवी चौधरानी' की नायिका एक साधारण और पीड़ित/प्रताड़ित स्त्री से उबरकर, कुशल प्रशासिका और सैन्य नेत्री बन जाती है, जो अपनी बुद्धिमत्ता, अनुशासन और ईमानदारी से सबका सम्मान अर्जित करती है। इस प्रकार का चित्रण महिलाओं की क्षमताओं के संबंध में प्रचलित धारणाओं को चुनौती देता है और समाज उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करता है। यद्यपि उनके विचारों पर उनके समय की ऐतिहासिक परिस्थितियों का कुछ प्रभाव था, फिर भी महिलाओं के प्रति उनका दृष्टिकोण अनेक दृष्टियों से प्रगतिशील था और उसने बाद में बांग्ला साहित्यकारों को भी गहनता से प्रभावित किया।

रचना शैली

बंकिमचंद्र की अप्रतिम रचना शैली उनकी सबसे बड़ी उपलब्धियों में है। उन्होंने बांग्ला गद्य को परिष्कृत, सुनम्य और प्रभावशाली माध्यम के रूप में रूपांतरित कर दिया, जो विविध भावनाओं और विचारों को अत्यंत प्रभावी ढंग से व्यक्त करने में सक्षम था। उन्होंने संस्कृत शब्दावली का संतुलित प्रयोग बोलचाल की सरल बांग्ला भाषा के साथ किया, जिससे उनकी भाषा गरिमामयी होने के साथ सहज और सुग्राह्य बनी। उनके गद्य में लय, सौंदर्य और स्पष्टता का अद्भुत संयोग मिलता है। उनके अनेक उपन्यास ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित हैं। उन्होंने केवल ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन ही नहीं किया, बल्कि सजीव चित्रण और नाटकीय शैली के माध्यम से अतीत के वातावरण को पुनर्जीवित भी किया। उनके पात्र केवल आदर्श नायक या कुटिल खलनायक नहीं है। वे प्रेम, ईर्ष्या, महत्वाकांक्षा भय, संदेह तथा नैतिक संघर्ष जैसी मानवीय भावनाओं का अनुभव करते हैं, जिस कारण वे अत्यंत स्वाभाविक और विश्वसनीय लगते हैं। उनके लगभग प्रत्येक उपन्यास में कोई–न–कोई नैतिक संदेश समाहित है। उनका कहना था कि साहित्य का उद्देश्य पाठकों में सद्गुण, आत्मानुशासन, देशभक्ति और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित करना होता है। उनकी अधिकांश रचनाओं में मातृभूमि के प्रति प्रगाढ़ प्रेम की भावना स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है चाहे उन्होंने ऐतिहासिक प्रेम कथा लिखी हों या पारिवारिक कथा, वे बार–बार पाठकों को समाज और राष्ट्र के प्रति उनके कर्तव्यों की याद दिलाते हैं।

परवर्ती साहित्यकारों पर प्रभाव

भारतीय साहित्य पर बंकिमचंद्र के साहित्य का प्रभाव अत्यंत व्यापक और गहरा पड़ा। उनकी साहित्यिक सफलता से प्रेरित होकर, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय तथा अन्य बांग्ला साहित्यकारों ने उपन्यास को एक प्रमुख साहित्यिक विधा के रूप में अपनाया। ललित भाषा, भावव्यंजक कथन–शैली और चरित्र–चित्रण में उनके नवाचारों ने बांग्ला गद्य को स्थायी रूप से बदल डाला।

उनका प्रभाव केवल बंगाल तक सीमित नहीं रहा। हिन्दी, मराठी, गुजराती, तमिल, मलयालम, उड़िया, असमिया तथा अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्यकारों ने भी उनकी रचनाओं से प्रेरणा प्राप्त की। उनके उपन्यासों के अनुवादों ने उन्हें पूरे भारत में लोकप्रिय बना दिया और साथ ही आधुनिक भारतीय साहित्य के विकास में उनकी रचनाएँ प्रतिमान सिद्ध हुईं। बंकिमचंद्र ने यह सिद्ध कर दिया कि भारतीय लेखक अपनी संस्कृति और इतिहास पर आधारित मौलिक साहित्य की रचना आधुनिक साहित्यिक तकनीकों का प्रयोग करते हुए भी कर सकते हैं। उनकी उपलब्धि ने परवर्ती लेखकों में अपनी भाषा और संस्कृति के माध्यम से भारतीय जीवन की अभिव्यक्ति करने का आत्मविश्वास उत्पन्न किया।

भारतीय राष्ट्रवाद पर सकारात्मक प्रभाव

भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में बंकिमचंद्र का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। जब राजनीतिक राष्ट्रवाद अपने प्रारंभिक चरण में था, तब उन्होंने भारतीयों को भावनात्मक और सांस्कृतिक कल्पना प्रदान की। उनकी रचनाओं ने भारत के इतिहास, उसकी परंपराओं और आध्यात्मिक विरासत के प्रति गर्व की भावना जागृत की। 'आनंदमठ' का प्रकाशन भारतीय राष्ट्रवादी चिंतन को महत्त्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में प्राप्त हुआ। मातृभूमि के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने वाले अनुशासित देशभक्तों के चित्रण ने पाठकों को गहरे से प्रभावित किया। सर्वाधिक प्रभावशाली 'वन्दे मातरम्' गीत था, जो स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान सबका कंठहार बन गया। 1905 में बंग–भंग के दौरान चले स्वदेशी आंदोलन के दौरान, यह गीत पूरे देश में गुंजायमान हो उठा। विद्यार्थी, राजनीतिक नेता और स्वतंत्रता संग्राम के क्रांतिकारी, अपनी सार्वजनिक सभाओं, जुलूसों और आंदोलनों में इसे मुक्तकंठ से गाते थे। अनेक स्वतंत्रता सेनानियों ने 'वन्दे मातरम्'का उद्घोष करते हुए मरणांतक कारावास और घोर मानसिक एवं शारीरिक यातनाएँ झेलीं। इस प्रकार यह गीत औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध चरम संघर्ष का अमर प्रतीक बन गया। उनका विश्वास था कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए सघन आत्मविश्वास, नैतिक चरित्र, सामाजिक एकता और आध्यात्मिक जागरण अत्यावश्यक हैं।

समालोचनात्मक मूल्यांकन

बंकिमचंद्र की रचनाओं का विभिन्न विद्वानों ने भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों से मूल्यांकन किया है। उन सबका निचोड़ यही रहा की बंकिमचंद्र ने आधुनिक भारतीय उपन्यास की नींव रखी, बांग्ला गद्य को समृद्ध किया तथा भारतीयों में राष्ट्रभक्ति की चेतना को गहरे स्थापित किया। वे उन्हें भारतीय सांस्कृतिक पुनर्जागरण के प्रमुख रचनाकारों में से एक मानते हैं। कुछ समालोचकों का मत है कि उनके उपन्यासों में इतिहास का चित्रण तत्कालीन वैचारिक परिस्थितियों से प्रभावित था, जिसके कारण बाद में चलकर उनकी विभिन्न प्रकार से व्याख्या की गई।

अन्य विद्वानों का कहना है कि उनका राष्ट्रवाद उन्नीसवीं शताब्दी के औपनिवेशिक भारत की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों से निर्मित था, इसलिए उसका मूल्यांकन इस ऐतिहासिक संदर्भ में किया जाना चाहिए। इन मतभेदों के बावजूद इस बात पर सबकी आम सहमति है कि बंकिमचंद्र की साहित्यिक उपलब्धियाँ असाधारण हैं। कथा कहने की उनकी कला, मनोवैज्ञानिक चरित्र–चित्रण, ऐतिहासिक कल्पनाशीलता तथा दार्शनिक चिंतन ने उन्हें भारतीय साहित्य में स्थायी और सम्मानजनक स्थान प्रदान कर दिया है।

अमूल्य साहित्यिक विरासत

कृतविद्य बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की विरासत आज भी उनके निधन के एक शताब्दी से अधिक समय बाद तक भारत को प्रेरणा देती है। वे आधुनिक बांग्ला उपन्यास के जनक, भारतीय गद्य–कथा साहित्य के अग्रदूत, भारत के राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' के अमर गीतकार, बंगाल पुनर्जागरण के प्रमुख सम्मानित नायक, महान दार्शनिक एवं प्रखर सामाजिक चिंतक और भारतीय राष्ट्रवाद के अद्वितीय/अनुपम शिल्पकार के रूप में सदैव याद किए जाएंगे।

उनके कालजयी उपन्यास आज भी विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाए जाते हैं। वे रंगमंचों और चलचित्रों के लिए रूपांतरित होते हैं तथा विभिन्न पीढ़ियों के पाठकों द्वारा समान रूप से सराहे जाते हैं। नैतिक और राष्ट्रीय पुनर्जागरण के साधन के रूप में, उनके साहित्यिक अवदान आज भी प्रसांगिक बने हुए हैं।

उपसंहार

कीर्तिशाली बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का आधुनिक भारत के बौद्धिक और सांस्कृतिक इतिहास में समादरणीय स्थान है। अपनी असाधारण साहित्यिक प्रतिभा के बल पर उन्होंने बांग्ला साहित्य का कायाकल्प किया और उपन्यास को सबसे प्रभावशाली साहित्यिक विधा के रूप में स्थापित किया। उनकी रचनाओं में कलात्मक सौंदर्य, दार्शनिक गहराई, ऐतिहासिक कल्पनाशीलता तथा उच्च नैतिक उद्देश्य का अद्भुत समीकरण है। प्रेरणादायी व्यक्तित्व के रूप में, वे विद्वत्ता, अनुशासन, देशभक्ति और आध्यात्मिक आस्था के सम्मानित प्रतीक हैं। एक महान साहित्यकार के रूप में उन्होंने ऐसी अमर औपन्यासिक कृतियों की रचना की, जिनमें प्रेम, इतिहास, समाज, धर्म और मानवीय मनोविज्ञान की उत्कृष्ट प्रस्तुति मिलती है। एक राष्ट्रवादी विचारक के रूप में उन्होंने करोड़ों भारतीयों के दिलों में राष्ट्र को सम्मानित मातृरूप में देखने की भावना जागृत की, जो प्रेम श्रद्धा और बलिदान की सच्ची अधिकारिणी है। जहाँ उनका अमर गीत 'वन्दे मातरम्' भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की भावनात्मक/काव्यात्मक वाणी बना, वहीं वह भावी पीढ़ियों के लिए साहस, आत्मविश्वास और दृढ़ संकल्प के साथ स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने का स्थायी प्रेरणास्रोत बनकर देशवासियों के हृदय में स्थापित हो गया। राष्ट्रीय पुनर्जागरण के संबंध में उनकी अवधारणा केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति तक सीमित न रहकर, शिक्षा, नैतिक आचरण, सामाजिक सुधार, सांस्कृतिक आत्मविश्वास और आध्यात्मिक शक्ति को एक समान रूप से प्राप्त करने की दिशा में अनुप्राणित थी। सारांश में, बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का वांग्मय तप पूरी मानव जाति को अपनी मातृभूमि को दैवीय सत्ता मानकर, उसकी अर्चना/उपासना करने का शाश्वत संदेश दे गया है, जो हर काल में प्रासंगिक रहेगा।

वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय अस्मिता, स्वाभिमान एवं आत्मगौरव का प्रतीक

–डॉ. वेदप्रकाश प्रभाकर बोरकर
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग,
राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, तिरुपति

वन्दे मातरम्' मात्र एक गीत नहीं, अपितु भारतीय राष्ट्रवाद का आध्यात्मिक बीजाक्षर मंत्र है, जिसने औपनिवेशिक दासता की वैचारिक एवं मानसिक कड़ियों को छिन्न–भिन्न करने में युगांतरकारी भूमिका निभाई।

देशोऽस्तु लक्ष्यं परमं त्वभीष्टं,
देशानुरागं परमोऽनुरागः।
स्याज्जीवनं वा मरणं च सद्यः,
तत् सर्वमेवास्तु स्वदेश–हेतोः।।
राष्ट्रस्य हेतोर्बलिदानभावो,
राष्ट्रस्य कल्याणविधौ प्रयत्नः।
रात्रिन्दिवं राष्ट्र–समृद्धि चिन्ता,
स्याज्जीवनस्य प्रथमोऽभिलाषः।।

किसी भी जीवंत राष्ट्र की सामूहिक चेतना मात्र उसकी भौगोलिक सीमाओं, राजनीतिक संधियों अथवा आर्थिक सांख्यिकी से निर्धारित नहीं होती, अपितु उसके सांस्कृतिक प्रतीकों, सामूहिक संकल्पों, ऐतिहासिक संघर्षों एवं आध्यात्मिक मूल्यों के अविच्छिन्न सातत्य में प्रतिबिंबित होती है। भारत के दीर्घकालीन इतिहास में उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध एक ऐसा संधिकाल था, जब पराधीनता की बेड़ियाँ संपूर्ण भारतीय जनमानस को जकड़े हुए थीं एवं औपनिवेशिक सत्ता अपनी कूटनीतिक चालों से देश के स्वाभिमान को कुचल रही थी। ऐसे नैराश्यपूर्ण वातावरण में एक ऐसे महामंत्र की महती आवश्यकता थी, जो न केवल खंडित एवं विखंडित समाज को एकात्मता के सूत्र में पिरो सके, बल्कि उसमें सुषुप्त राष्ट्र–गौरव की भावना को पुनर्जागृत कर सके।

इसी युगसंधि पर महान मनीषी ऋषि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित 'वन्दे मातरम्' गीत का प्रादुर्भाव हुआ, जिसने भारतीय राष्ट्रवाद के बीजाक्षर मंत्र के रूप में ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता की जड़ों को हिलाकर रख दिया। यह गीत मात्र कुछ छंदों, शब्दों अथवा ध्वनियों का समुच्चय नहीं था, वरन् यह भारतीय राष्ट्रवाद का वह आध्यात्मिक एवं वैचारिक उद्घोष था, जिसने सदियों से सोई हुई भारतीय आत्मा को झकझोर कर जगाया एवं उसे अपनी प्राचीन सांस्कृतिक विरासत पर गर्व करना सिखाया।

राष्ट्र की अस्मिता को जब तक कोई ठोस आधार नहीं मिलता, तब तक कोई भी समाज अपनी स्वाधीनता के लिए प्राणोत्सर्ग करने को उद्यत नहीं होता एवं 'वन्दे मातरम्' ने भारतीयों को वही सुदृढ़ सांस्कृतिक आधार एवं वैचारिक संबल प्रदान किया।

वन्दे मातरम्' गीत की रचना

इस कालजयी गीत की रचना ऋषि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा संभवतः वर्ष 1875 के आसपास की गई थी। उस समय वे ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के अधीन डिप्टी कलेक्टर के पद पर सेवारत थे। राजकीय सेवा में रहते हुए उन्होंने विदेशी सत्ता की क्रूरता, भारतीय समाज की दासता और स्वदेशी संस्कृति के प्रति शासकों की उपेक्षा को अत्यंत निकट से देखा था। इस परतंत्रता ने उनके अंतर्मन में एक गहरा क्षोभ उत्पन्न किया। इसी तीव्र वैचारिक मंथन, राष्ट्रीय अस्मिता की खोज और मातृभूमि के प्रति अगाध श्रद्धा के परिणामस्वरूप 'वन्दे मातरम्' का प्राकट्य हुआ।

बंकिमचंद्र जी ने 'वन्दे मातरम्' को केवल एक स्तुति गीत के रूप में नहीं, अपितु औपनिवेशिक हीनता का शमन करने वाले एक प्रखर वैचारिक अस्त्र के रूप में प्रतिस्थापित किया। ... यह गीत विभिन्न लोक–संस्कृतियों, क्षेत्रीय त्योहारों और लोक–कथाओं के बीच राष्ट्रीय एकता का ऐसा साझा और सर्वमान्य सूत्र बना, जिसने देश के अलग–अलग हिस्सों को 'माँ भारती के वंदन' की एक ही बृहत्तर राष्ट्रीय संस्कृति में सफलतापूर्वक पिरो दिया।

साहित्यिक दृष्टि से यह गीत संस्कृत और बांग्ला भाषा के अत्यंत अनूठे व दुर्लभ सम्मिश्रण (मणिप्रवाल शैली) से निर्मित है। प्रारंभ में इसके प्रथम दो पद संस्कृत में थे और उत्तरवर्ती पद बांग्ला भाषा में पिरोए गए थे। इस गीत की भाषा सरल, प्रवाहपूर्ण, ओजस्वी और अत्यंत गंभीर है।

बंकिमचंद्र जी ने इसमें मातृभूमि को केवल एक जड़ भौगोलिक भूभाग या मिट्टी का टुकड़ा मानने की पाश्चात्य अवधारणा को पूर्णतः खारिज कर दिया। उन्होंने देश को 'सुजलाम्, सुफलाम्, मलयजशीतलाम्' के रूप में चित्रित करते हुए एक साक्षात ममतामयी, जीवनदायिनी और शक्तिस्वरूपा अनन्त माता के रूप में प्रतिस्थापित किया।

बंकिमचंद्र जी ने कालांतर में इस रचना को अपने प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास 'आनंदमठ' (1882) में अंतर्विष्ट किया। इस उपन्यास की मूल कथावस्तु 1770 के दशक के ऐतिहासिक 'संन्यासी विद्रोह' पर आधारित थी। यह विद्रोह ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के बर्बर आर्थिक शोषण, दमनकारी कर–नीति और भीषण अकाल के विरुद्ध संन्यासियों तथा कृषकों का एक संयुक्त सशस्त्र प्रतिरोध था, जहाँ मातृभूमि की मुक्ति के लिए राष्ट्रभक्तों ने अपने प्राणों की आहुतियाँ दी थीं। उपन्यास के भीतर इस गीत का प्रयोग 'संतान सेना' द्वारा मातृभूमि की सामूहिक स्तुति, आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा और अत्याचारी सत्ता के विरुद्ध एक पवित्र युद्ध–घोष के रूप में किया गया है।

उपन्यास 'आनंदमठ' के माध्यम से बंकिमचंद्र ने यह नवीन वैचारिक सूत्र दिया कि देश की राजनीतिक मुक्ति तब तक संभव नहीं है, जब तक समाज में वैराग्य, कड़ा अनुशासन, संगठित सैन्य प्रतिरोध और मातृभूमि के प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण न हो। उनका राष्ट्रवाद मिट्टी या भौगोलिक सीमाओं की जड़ पूजा नहीं है, बल्कि वह कोटि–कोटि कंठों की सामूहिक संप्रभु शक्ति का एक जीवंत आह्वान है, जिसमें मातृभूमि साक्षात सर्वशक्तिशाली आदिशक्ति (दुर्गा और कमला) के रूप में अवतरित होती है।

तत्कालीन औपनिवेशिक शासक भारत की भाषाई और प्रांतीय विविधताओं का लाभ उठाकर 'फूट डालो और राज करो' की नीति चला रहे थे। ऐसे जटिल समय में 'वन्दे मातरम्' ने उत्तर और दक्षिण तथा पूर्व और पश्चिम की विविध प्रांतीय संस्कृतियों के मध्य एक अभेद्य और अटूट सेतु के रूप में कार्य किया।

जब पंजाब का कोई क्रांतिकारी, महाराष्ट्र का कोई समाज–सुधारक या दक्षिण भारत का कोई आम सत्याग्रही इस महामंत्र का सामूहिक उद्घोष करता था, तो समस्त प्रांतीय, क्षेत्रीय और भाषाई सीमाएं स्वतः समाप्त हो जाती थीं। यह गीत विभिन्न लोक–संस्कृतियों, क्षेत्रीय त्योहारों और लोक–कथाओं के बीच राष्ट्रीय एकता का ऐसा साझा और सर्वमान्य सूत्र बना, जिसने देश के अलग–अलग हिस्सों को 'मां भारती के वंदन' की एक ही वृहत्तर राष्ट्रीय संस्कृति में सफलतापूर्वक पिरो दिया।

भारतीय मनीषा में माता एवं मातृभूमि का आध्यात्मिक–वैदिक स्वरूप

भारतीय वाङ्गय में माता एवं मातृभूमि का स्थान साक्षात् स्वर्ग से भी बढ़कर माना गया है, जिसका मूल स्रोत महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण का प्रसिद्ध श्लोक ''जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'' है, जो सदियों से हमारी राष्ट्रीय अस्मिता का मार्गदर्शक रहा है। इस संसार में माता वह दिव्य शक्ति है जो नम्र, मधुर, प्रेम की साक्षात् प्रतिमा, क्षमाशील, स्नेह से परिपूर्ण, कोमल परंतु समय आने पर वज्र से भी अधिक कठोर एवं समृद्ध हो सकती है, जिसका महत्व अवर्णनीय, अद्वितीय एवं अतुलनीय है क्योंकि वह अपने धैर्य से अचल को, अपनी पवित्रता से सागर को, अपनी मिठास से अमृत को, अपनी आम्बा–शक्ति से संपूर्ण जगत को पोषित करती है।

वेदों, उपनिषदों एवं धर्मग्रंथों में माता का महत्व अनेक रूपों में वर्णित है, जहाँ यजुर्वेद में माता को पवित्र करने वाली एवं शुद्धिदाता कहा गया है तथा तैत्तिरीय उपनिषद में ''मातृदेवो भव'' का उपदेश देकर उसे साक्षात् देवता के तुल्य पूजनीय माना गया है।

न त्वत्तः परं मानदं लोकमध्ये न त्वत्तः परं सौख्यदं किंचिदस्ति।
त्वमेवासि लोकस्य चैतन्य दात्री सदा प्रेरणाभूः सदा शक्ति–स्रोतः।।

अर्थात् – इस संसार में तुमसे बढ़कर मान–सम्मान देने वाला और तुमसे बढ़कर सुख प्रदान करने वाला दूसरा कोई नहीं है। (हे मातृभूमि!) तुम ही संपूर्ण जगत को चेतना प्रदान करने वाली, सदैव प्रेरणा की भूमि और सदा शक्ति का अक्षय स्रोत हो।

पश्चिमी विद्वानों की यह धारणा रही है कि ब्रिटिश शासन के आगमन और पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव के कारण ही भारत में राष्ट्रवाद की भावना उत्पन्न हुई। परंतु यह स्थापना पूर्णतः भ्रामक और सत्य से परे है। वास्तव में, भारत में राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्र की अवधारणा वैदिक काल से ही अत्यंत प्रखर रूप में विद्यमान रही है।

विष्णु पुराण में भी भारत भूमि का यशोगान 'पृथ्वी पर स्वर्ग' के रूप में करते हुए इसे एक अद्वितीय 'कर्मभूमि' माना गया है, जहाँ जन्म लेने के लिए देवता भी लालायित रहते हैं। गरुड पुराण में पराधीनता को मृत्यु के तुल्य बताते हुए कहा गया है कि स्वाधीन वृत्ति ही जीवन की सार्थकता है।

वन्दे मातरम् : गुलामी के विरुद्ध वैचारिक जागृति का उद्घोष

हुतात्मना पावनमत्र वृत्त सुधा–रसः जीवन – ज्योतिरेव।
देशाभिमानं निज–देश–कीर्तिः स्वातन्त्र्य–भावं प्रथयत्यजस्रम्।।

भावार्थ – इस संसार में हुतात्माओं (देशभक्तों) का पवित्र चरित्र अमृत रस के समान जीवन–ज्योति जगाने वाला

है। यह पावन चरित्र जनमानस में देशाभिमान (राष्ट्रगौरव), स्वदेश की कीर्ति और स्वतंत्रता की भावना का निरंतर विस्तार करता है।

मातृभूमि को साक्षात् 'चिति–शक्ति' और जगदम्बा मान लेने के इस क्रांतिकारी वैचारिक परिवर्तन ने राष्ट्र–रक्षा के निमित्त सर्वस्व न्योछावर करने की भावना को एक धार्मिक पवित्रता और सांस्कृतिक गरिमा प्रदान की। इसके फलस्वरूप तत्कालीन भारतीय समाज में स्वदेश के प्रति कर्तव्यबोध का एक नया स्वर्णिम अध्याय प्रारंभ हुआ।

इस संपूर्ण ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में यह अकाट्य रूप से सिद्ध होता है कि 'वन्दे मातरम्' केवल एक साहित्यिक कृति नहीं थी, अपितु औपनिवेशिक शोषण और पराधीनता के विरुद्ध गूंजने वाली भारत की पहली संगठित वैचारिक एवं आध्यात्मिक आवाज थी, जिसने आगे चलकर स्वाधीनता आंदोलन की नींव रखी और दासता की बेड़ियों को पिघलाने में सर्वप्रमुख भूमिका निभाई।

त्वदीये पदाब्जे मुदा देशभक्ताः।
बलिं दत्तवन्तौ मुदं प्राप्तवन्तः।
त्वदर्चापरा ये नरा मातृ भक्ताा:
सदा स्यास्नु तेषां यशो राजतेऽत्र।।

भावार्थ : – तुम्हारे चरण–कमलों में देशभक्तों ने प्रसन्नतापूर्वक अपने प्राणों की आहुति दी और (परम) आनंद को प्राप्त किया। तुम्हारी आराधना में लीन रहने वाले जो मातृ–भक्त मनुष्य हैं, उनका यश इस संसार में सदा स्थिर (अमर) होकर चमकता रहता है।

औपनिवेशिक दासता केवल राजनीतिक नियंत्रण या आर्थिक शोषण तक सीमित नहीं होती, बल्कि उसका सबसे भयावह एवं घातक रूप मानसिक एवं वैचारिक गुलामी होता है, जिसके अंतर्गत ब्रिटिश शासकों ने निरंतर यह छद्म विमर्श स्थापित करने का कुत्सित प्रयास किया कि भारत का कोई साझा इतिहास, राष्ट्रीय अस्तित्व या सांस्कृतिक अस्मिता नहीं है एवं वे यहाँ के लोगों को सभ्य बनाने आए हैं।

इस अस्मिता के संकट के काल में 'वन्दे मातरम्' के महामंत्र ने इस साम्राज्यवादी एवं कूटनीतिक विमर्श को समूल नष्ट कर दिया क्योंकि जब बंकिमचंद्र ने अपनी मातृभूमि का स्तवन साक्षात् अष्टभुजाधारिणी दुर्गा एवं कमला के रूप में किया, उसने भारतीयों के मन से गोरी चमड़ी एवं ब्रिटिश साम्राज्य की अजेयता के भय को सदा के लिए उखाड़ फेंका। मातृभूमि को केवल एक भौगोलिक मानचित्र न मानकर उसे चेतनावान महाशक्ति के रूप में देखने की इस वैचारिक क्रांति ने स्वाधीनता आंदोलन को एक पवित्र आध्यात्मिक अनुष्ठान में बदल दिया। इसके कारण देश के कोने–कोने में गुलामी के विरुद्ध वैचारिक जागृति का ऐसा सिंहनाद हुआ, जिसने भारतीयों के सुषुप्त स्वाभिमान एवं आत्मगौरव को पुनर्प्रतिष्ठित कर स्वाधीनता को जन–जन का अनिवार्य संकल्प बना दिया।

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' गीत की प्रेरक भूमिका

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं, बल्कि स्वतंत्रता संग्राम का सबसे बड़ा हथियार एवं क्रांतिकारियों की प्राणवायु बन गया था, जिसका प्रभाव समूचे राष्ट्र को उद्वेलित करता रहा है।

वर्ष 1896 के कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा इस गीत के प्रथम संगीतमय गायन ने इसे राष्ट्रीय मंच पर प्रतिष्ठा प्रदान की, जिसके पश्चात वर्ष 1905 के बंग–भंग (बलात बंगाल विभाजन) विरोधी आंदोलन के समय यह समूचे भारत का सबसे शक्तिशाली नारा एवं ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध जन–प्रतिरोध का पर्याय बन गया।

वर्ष 1907 में जब वीर प्रसूता मैडम भीखाजी कामा ने जर्मनी के स्टटगार्ट में आयोजित अंतरराष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेस में भारत का प्रथम तिरंगा झंडा फहराया, तो उसके मध्य में भी 'वन्दे मातरम्' ही अंकित था, जो इस बात का प्रमाण है कि यह उद्घोष वैश्विक स्तर पर हमारी अस्मिता का प्रतीक बन चुका था। असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन एवं 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान लाठियाँ एवं गोलियाँ सहते हुए, फाँसी के फंदे को चूमते हुए खुदीराम बोस, राम प्रसाद बिस्मिल एवं भगत सिंह जैसे असंख्य हुतात्माओं के कंठ से निकला यही अंतिम शब्द था, जिसने भारतीय राष्ट्रवाद को एक अमर इतिहास दिया।

हुतात्मभिः कृता धरा, स्व–रक्त–कुंकुमार्चिता।
विदीर्य देश–दानवानु, स्वराज्य–शक्तिरर्पिता।।

अर्थात् – ''हुतात्माओं (देशभक्त बलिदानियों) ने अपने रक्त रूपी कुंकुम (तिलक) से इस धरती की अर्चना (पूजा) की है। उन्होंने देश के दुश्मनों (दानवों) का विदारण करके (उन्हें नष्ट करके) हमें यह स्वराज्य–शक्ति अर्पित की है।''

हुतात्म– शक्तिर्निज– देश–शक्तिः
हुतात्म– भक्तिर्निज – देश–भक्तिः।।

बलिदानियों की वह अदम्य शक्ति ही वास्तव में हमारे देश की शक्ति है और उन हुतात्माओं के प्रति श्रद्धा ही हमारी सच्ची देशभक्ति है।

वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य

वन्दे मातरम्' की मूल चेतना एवं आध्यात्मिक राष्ट्रवाद ने आधुनिक हिंदी साहित्य के रचनाकारों को गहराई से अनुप्राणित किया, जिसके फलस्वरूप हिंदी काव्य में देश–प्रेम एवं आत्मोत्सर्ग की एक अभूतपूर्व लहर प्रवाहित हुई।

भारतेंदु हरिश्चंद्र अपनी काव्य–रचना 'नये जमाने की मुकरी' में ब्रिटिश शासन की शोषक आर्थिक नीति को उजागर करते हुए लिखा है:

भीतर भीतर सब रस चूसै।
हँसि–हँसि कै तन मन धन मूसै।
जाहिर बातन मैं अति तेज
क्यों सखि सज्जन नहिं अंगरेज।।

राष्ट्रीय एकता और देशोद्धार पर बल देते हुए भारतेंदु की पंक्तियाँ:

''फूट बैर को दूरि करि,
बाँधि कमर मजबूत।
भारतमाता के बनो,
भ्राता पूत सपूत।''

भारतेंदु हरिश्चंद्र (आधुनिक हिंदी साहित्य के पितामह) ने 'तदीय समाज' के माध्यम से स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार और विदेशी कपड़ों के बहिष्कार का ऐतिहासिक प्रतिज्ञा पत्र 'कविवचनसुधा' (23 मार्च, 1874) में प्रकाशित किया। अपनी विरचित बहुचर्चित कविता 'भारत–दुर्दशा' में उन्होंने औपनिवेशिक आर्थिक शोषण के ड्रेन ऑफ वेल्थ (Drain of Wealth) सिद्धांत को बहुत पहले ही स्वर दे दिया था:

'अंगरेजी राज सुखसाज सजे अति भारी,
पर सब धन विदेश चलि जात ये ख्वारी।'

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की कालजयी कृति 'भारत–भारती' (1912) ने स्वाधीनता आंदोलन में वही भूमिका निभाई जो बंकिमचंद्र के उपन्यास ने निभाई थी। महात्मा गांधी ने उन्हें 'राष्ट्रकवि' की उपाधि दी। 'प्रभा' और 'कर्मवीर' जैसे प्रतिष्ठित पत्रों के माध्यम से ब्रिटिश शासन के खिलाफ बिगुल फूंकने वाले ''माखनलाल चतुर्वेदी (एक भारतीय आत्मा) जी ने बिलासपुर जेल में 18 फरवरी, 1922 को 'पुष्प की अभिलाषा' नामक कालजयी कविता लिखी, जो 'वन्दे मातरम्' के आत्मोत्सर्ग के भाव का ही काव्यात्मक रूपांतरण है। श्रीधर पाठक की 'सुंदर भारत' और 'देश–गीत' जैसी कविताएँ राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत हैं। वे अपनी कविता 'देश–गीत' में भारत माता का जय–जयकार करते हैं:

''जय जय शुभ्र हिमाचल–श्रृंगा,
कल–रव–निरत कलोलिनि गंगा,
भानु–प्रताप–समत्कृत अंगा,
तेज–पुंज तप–वेश
जय जय प्यारा भारत–देश।''

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने अपनी उत्कृष्ट रचना 'मातृवन्दना' में राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए अपने संपूर्ण जीवन के श्रम को अर्पित करने का दृढ़ संकल्प लिया:

नर जीवन के स्वार्थ सकल
बलि हों तेरे चरणों पर, माँ
मेरे श्रम सिंचित सब फल।

भारतीय संस्कृति के महान अमर उद्‌गाता जयशंकर प्रसाद ने अपने ऐतिहासिक नाटक 'चन्द्रगुप्त' के माध्यम से स्वाभिमान एवं राष्ट्रीयता की शाश्वत प्रेरणा प्रदान की –

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्वला स्वतंत्रता पुकारती

अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढ़े चलो!
असंख्य कीर्ति–रश्मियाँ विकीर्ण दिव्य दाह–सी।
सपूत मातृभूमि के– रुको न शूर साहसी!
अराति सैन्य सिन्धु में– सुवाड़वाग्नि–से जलो !
प्रवीर हो जयी बनो– बढ़ चलो, बढ़े चलो !

भारतीय भाषाओं में वन्दे मातरम् की अभिव्यक्ति एवं भाषाई एकात्मता

भारत अपनी भौगोलिक एवं सांस्कृतिक अवस्थिति में एक अत्यंत विविधतापूर्ण एवं बहुभाषी राष्ट्र है, जहाँ समय–समय पर अलगाववादी शक्तियों द्वारा इस भाषाई विविधता को आंतरिक संघर्ष का कारण बनाने का कुत्सित प्रयास किया गया, परंतु 'वन्दे मातरम्' ने एक सुदृढ़ सांस्कृतिक सेतु की भाँति कार्य करते हुए संपूर्ण भारतीय भाषाई एकात्मता को अक्षुण्ण बनाए रखा। यद्यपि इस गीत की मूल रचना संस्कृत एवं बांग्ला के अत्यंत मधुर समन्वय से हुई थी, परंतु इसके शब्द इतने सरल, तत्समनिष्ठ, सुगम एवं ध्वन्यात्मक दृष्टि से प्रभावशाली थे कि किसी भी भाषा को बोलने वाले नागरिक को इसके साथ भावात्मक तादात्म्य स्थापित करने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

तमिल में महाकवि सुब्रमण्यम भारती, तेलुगु में गरिमल्ला सत्यनारायण, मराठी, गुजराती, कन्नड़ एवं असमिया के मूर्धन्य साहित्यकारों ने इस गीत की अंतर्निहित राष्ट्रभावना को अपनी–अपनी भाषाओं के काव्यों में रूपांतरित किया, जिससे यह ऐतिहासिक तथ्य पुनः रेखांकित हुआ कि भारत की भाषाएँ भले ही भिन्न हो सकती हैं, परंतु उनके भीतर धड़कने वाला राष्ट्रीय स्वाभिमान का अंतःस्वर सदैव एक ही रहता है। यह भाषाई समन्वय ही भारत की वह असली ताकत है जो विविध संस्कृतियों को एक सूत्र में पिरोकर राष्ट्रीय एकता की नींव को सुदृढ़ करती है।

सांस्कृतिक नवजागरण की कलात्मक अभिव्यक्तिः दृश्य–विमर्श, संगीत एवं रंगमंच

वन्दे मातरम्' का व्यापक प्रभाव केवल साहित्य, राजनीति अथवा भाषणों तक ही सीमित नहीं रहा, वरन इसने भारतीय ललित कलाओं, शास्त्रीय संगीत एवं रंगमंच की विधाओं को भी नए आयाम प्रदान कर अत्यधिक समृद्ध किया। पारसी रंगमंच से लेकर देश के कोने–कोने में मंचित होने वाले देशभक्तिपूर्ण नाटकों एवं स्वाधीनता के विमर्शों में इस गीत का अंतर्भाव अनिवार्य रूप से किया जाने लगा, जिसने जनमानस को आंदोलित करने में महती भूमिका निभाई।

संगीत के क्षेत्र में पंडित ओंकारनाथ ठाकुर, मास्टर कृष्णराव एवं विष्णु दिगंबर पलुस्कर जैसे महान संगीत मनीषियों ने इस गीत को विभिन्न रागों में आबद्ध कर जन–जन के कंठ का हार बना दिया, जिससे इसकी स्वीकार्यता सार्वभौमिक हो गई।

चित्रकला के क्षेत्र में अवनींद्रनाथ टैगोर द्वारा वर्ष 1905 में बनाया गया 'भारत माता' का सुप्रसिद्ध चित्र इसी गीत की अद्‌भुत दृश्य अभिव्यक्ति माना जाता है। इसी प्रकार, समानांतर रूप से उर्दू साहित्य में भी देशभक्ति की यही अजस्र धारा प्रवाहित हुई। मोहम्मद इकबाल ने 'तराना–ए–हिन्द' (सारे जहाँ से अच्छा) के माध्यम से

राष्ट्रीय एकता का संदेश दिया। हसरत मोहानी ने वर्ष 1921 में 'इंकलाब जिन्दाबाद' का अमर नारा गढ़ा। कथाकार प्रेमचंद ने अपने पहले उर्दू कहानी संग्रह 'सोज–ए–वतन' (1908) के माध्यम से अंग्रेजी हुकूमत के दमन चक्र को चुनौती दी, जिसके कारण ब्रिटिश सरकार ने इस कृति को जब्त कर इसकी प्रतियों को जलवा दिया था।''

''सांस्कृतिक और भाषाई एकात्मता के इस महाविमर्श में आधुनिक संस्कृत साहित्य का अवदान भी अत्यंत श्लाघनीय रहा है। तत्कालीन औपनिवेशिक काल में पंडिता क्षमाराव कृत 'सत्याग्रहगीता' (1931) तथा पंडित मथुराप्रसाद दीक्षित रचित 'गाँधीविजयनाटकम्' जैसी कालजयी संस्कृत रचनाएँ इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इन ग्रंथों में राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' की अंतर्निहित चेतना और स्वाधीनता आंदोलन को मूल आधार बनाकर देशप्रेम एवं जन–जागृति का ऐसा ओजस्वी शंखनाद किया गया, जिसने भारतीय जनमानस को वैचारिक संबल प्रदान करने में युगांतरकारी भूमिका निभाई।''

आधुनिक भारत में 'वन्दे मातरम्' गीत की प्रासंगिकता एवं युवा पीढ़ी

24 जनवरी, 1950 को भारत की संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रगान 'जन गण मन' के समकक्ष संवैधानिक रूप से राष्ट्रीय गीत (National Song) का दर्जा दिया था।

आज के इक्कीसवीं सदी के तकनीकी युग, भूमंडलीकरण एवं डिजिटल क्रांति के दौर में कई बार यह भ्रामक प्रश्न उठाया जाता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात इस ऐतिहासिक गीत की क्या प्रासंगिकता शेष है, परंतु वर्तमान परिप्रेक्ष्य का सूक्ष्म विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इसकी प्रासंगिकता आज पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है। आज जब राष्ट्र के समक्ष आंतरिक सुरक्षा की चुनौतियाँ, वैचारिक विखंडन, क्षेत्रीय संकीर्णता, जातिवाद का जहर एवं उपभोक्तावादी अंधानुकरण के कारण युवा पीढ़ी अपनी गौरवशाली सांस्कृतिक जड़ों एवं नैतिक मूल्यों से विमुख होने की कगार पर है, तब 'वन्दे मातरम्' हमें हमारी वास्तविक पहचान की याद दिलाता है।

आधुनिक युवा पीढ़ी के लिए इस मंत्र का अर्थ केवल एक नारा लगाना या औपचारिकता निभाना नहीं है, बल्कि अपनी बौद्धिक क्षमताओं, सूचना प्रौद्योगिकी, वैज्ञानिक अनुसंधानों, अंतरिक्ष विज्ञान वैज्ञानिक नवाचारों, तकनीकी कौशलों एवं स्टार्ट–अप्स के माध्यम से देश को आत्मनिर्भर, सशक्त एवं वैश्विक पटल पर 'विश्वगुरु' के रूप में पुनः प्रतिस्थापित करने के संकल्प में जुटना है। यह गीत युवाओं को प्रेरित करता है कि वे तात्कालिक विसंगतियों एवं संकीर्ण स्वार्थों से ऊपर उठकर स्वामी विवेकानंद एवं अमर शहीदों के सपनों के अखंड भारत के निर्माण में अपनी काबिलियत का सदुपयोग करें।

वन्दे मातरम्' केवल अतीत की वीरगाथाओं का स्मरण कराने वाला एक राष्ट्रीय गीत नहीं है, वरन यह भारतीय राष्ट्रीय अस्मिता, स्वाभिमान एवं आत्मगौरव का वह अमर एवं कालजयी उद्घोष है जो युगों–युगों तक भारतवासियों की अंतरात्मा को आलोकित करता रहेगा। यह गीत हमें सिखाता है कि राष्ट्र की संप्रभुता एवं लोकतांत्रिक बुनियाद को अक्षुण्ण रखने के लिए नागरिकों का आपसी विश्वास, आंतरिक एकता एवं देश के प्रति अगाध निष्ठा अनिवार्य शर्तें हैं क्योंकि इतिहास साक्षी है कि जब–जब समाज ने अपनी आंतरिक एकता को खोया है, तब–तब देश पराधीनता एवं विखंडन के भीषण संकटों से घिरा है।

'वन्दे मातरम्' की मूल चेतना का व्यावहारिक विस्तार भारतीय संस्कृति के उस परम उदात्त सिद्धांत में होता है जो पूरी पृथ्वी को ही अपना परिवार मानता है, जैसा कि हमारे शास्त्रों में उद्घोषित है:

अयं निजः परो वेति, गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु, वसुधैव कुटुम्बकम्।।

'वन्दे मातरम्' का महामंत्र व्यक्तिगत एवं सामाजिक संकीर्णताओं को दूर कर, सामूहिक पुरुषार्थ के माध्यम से भारत की कीर्ति को 'स्वर्गादपि गरीयसी' के सर्वोच्च शिखर पर प्रतिस्थापित करने की एक शाश्वत, प्रामाणिक एवं सार्वभौमिक प्रेरणा है, जो अनंत काल तक संपूर्ण समष्टि का मार्गदर्शन करती रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ:

1. चट्टोपाध्याय, बंकिमचंद्र, आनंदमठ (1882), कलकत्ता।
2. शर्मा, डॉ. रामविलास – भारतेंदु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरण की समस्याएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
3. नवल, नन्दकिशोर – आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली.
4. सिंह, बच्चन– आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली.
5. तिवारी, डॉ. शशि – राष्ट्रीयता एवं भारतीय साहित्य, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2019.
6. चतुर्वेदी, माखनलाल; हिमकिरीटिनी ('पुष्प की अभिलाषा' कविता), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. त्रिपाठी 'निराला', सूर्यकांत; मातृवन्दना (अनामिका काव्य संग्रह), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. प्रसाद, जयशंकर; चन्द्रगुप्त नाटक (हिमाद्रि तुंग श्रृंग से..), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. हरिश्चंद्र, भारतेंदु; भारत–दुर्दशा नाटक (एवं मासिक पत्रिका 'कविवचनसुधा' 1874), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
10. अथर्ववेद संहिता – (काण्ड बारह, प्रथम सूक्त 'भूमि सूक्त'), चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
11. यजुर्वेद संहिता – (अध्याय दस, अठारह, छब्बीस एवं चालीस), वैदिक संशोधन मंडल, पूना।
12. ऋग्वेद संहिता – (प्रथम एवं दशम मंडल 'संज्ञान सूक्त'), ज्ञान प्रकाशन, नई दिल्ली।
13. चतुर्वेदी, माखनलाल; चौहान, सुभद्रा कुमारी; निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी; प्रसाद, जयशंकर – आधुनिक हिंदी राष्ट्रीय काव्यधारा संकलन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
14. शर्मा, रामविलास – महावीरप्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
15. गोपाल, मदन – भारतेंदु हरिश्चन्द्र
16. दीक्षित, सूर्यप्रसाद – राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त और साकेत, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।
17. तलवार, वीरभारत – राष्ट्रीय नवजागरण और साहित्य, किताबघर, नई दिल्ली
   (सहायक पुस्तकें सूची क्रमांक 88)

‘वन्दे मातरम्’ गीत का ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं संवैधानिक महत्त्व

–डॉ. शाहीन अख़लाक
अनुसंधान अधिकारी (यूनानी)
क्षेत्रीय यूनानी चिकित्सा अनुसंधान संस्थान
रायपुरम, चेन्नै

‘वन्दे मातरम्’, जिसकी रचना उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय द्वारा की गई, भारत की राष्ट्रीय चेतना में एक विशिष्ट एवं गौरवपूर्ण स्थान रखता है। यह केवल एक देशभक्ति गीत नहीं, बल्कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध प्रतिरोध, आत्मबल और राष्ट्रीय जागरण का एक सशक्त प्रतीक बनकर उभरा। इस गीत ने असंख्य स्वतंत्रता सेनानियों को राष्ट्र की स्वतंत्रता हेतु संघर्ष, त्याग और समर्पण के लिए प्रेरित किया। इसकी ऐतिहासिक भूमिका और राष्ट्रीय महत्व को स्वीकार करते हुए 24 जनवरी 1950 को भारतीय संविधान सभा ने जन गण मन को राष्ट्रगान के रूप में स्वीकार करने के साथ–साथ ‘वन्दे मातरम्’ को राष्ट्रीय गीत का सम्मान प्रदान किया। तब से यह देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक विरासत तथा राष्ट्रीय अस्मिता का प्रेरक प्रतीक बना हुआ है।

वर्तमान भारत, जो वैश्वीकरण, वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति, डिजिटल परिवर्तन तथा बढ़ती सांस्कृतिक विविधता के दौर से गुजर रहा है, उसमें ‘वन्दे मातरम्’ की प्रासंगिकता और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गई है। यह गीत अपने ऐतिहासिक संदर्भों से आगे बढ़कर नागरिकों में राष्ट्र के प्रति अपनत्व की भावना विकसित करता है, राष्ट्रीय एकीकरण को सुदृढ़ करता है, संवैधानिक मूल्यों को प्रोत्साहित करता है तथा समावेशी राष्ट्र–निर्माण के प्रति सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना को प्रेरित करता है। साथ ही, यह भारत की समृद्ध सांस्कृतिक एवं सभ्यतागत विरासत तथा आधुनिक लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में उसकी आकांक्षाओं के मध्य एक सशक्त सेतु का कार्य करता है। शिक्षा, सार्वजनिक समारोहों, साहित्य, संगीत, सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों तथा अंतरराष्ट्रीय मंचों पर इसकी निरंतर उपस्थिति इस तथ्य को रेखांकित करती है कि यह गीत प्रगति और आधुनिकता के साथ–साथ भारत की सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित रखने में आज भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

भारत के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और संवैधानिक माहौल में राष्ट्रीय गीत वन्दे मातरम् की प्रमुख जगह है। 1870 के दशक में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने इसे लिखा था और बाद में अपने उपन्यास आनंदमठ (1882) में शामिल किया।[1] यह गीत ब्रिटिश राज के खिलाफ संघर्ष के दौरान भारतीय राष्ट्रवाद के सबसे प्रभावशाली साहित्यिक अभिव्यक्तियों में से एक के रूप में उभरा। मातृभूमि के इसके भावपूर्ण चित्रण ने कई पीढ़ियों के स्वतंत्रता सेनानियों को प्रेरित किया और वन्दे मातरम् को एक साहित्यिक रचना से राष्ट्रीय जागृति, बलिदान और सामूहिक प्रतिरोध का एक शक्तिशाली प्रतीक बना दिया। स्वदेशी आंदोलन (1905–1908) के दौरान, यह गीत एकजुट करने वाला नारा बन गया, जिसने क्षेत्रीय और भाषाई सीमाओं को पार कर लिया, और राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए प्रयास कर रहे भारतीयों के बीच पहचान की एक साझा भावना को बढ़ावा दिया (बी. चंद्रा एट अल., 1988; सरकार, 1983)।

भारत के आजादी के आंदोलन में इसके अहम योगदान को पहचानते हुए, भारत की संविधान सभा ने 24 जनवरी 1950 को वन्दे मातरम् को राष्ट्रीय गीत का दर्जा दिया, जबकि जन गण मन को राष्ट्रगान के तौर पर अपनाया। संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने इस बात पर जोर दिया कि भले ही जन गण मन राष्ट्रगान के तौर पर काम करेगा, लेकिन आजादी की लड़ाई के दौरान देश को प्रेरित करने में अपनी ऐतिहासिक भूमिका के कारण 'वन्दे मातरम्' को बराबर सम्मान मिलता रहेगा।[2]

आजादी के सात दशक से ज्यादा समय बाद, भारत में बहुत बड़े सामाजिक, आर्थिक और प्रौद्योगिकी बदलाव हुए हैं। आज देश की पहचान तेजी से शहरीकरण, वैश्वीकरण, डिजिटल कनेक्टिविटी, वैज्ञानिक नवाचार और बढ़ती सांस्कृतिक विविधता है। ऐसे बदलते माहौल में, राष्ट्रीय प्रतीकों से उम्मीद की जाती है कि वे न सिर्फ अतीत को याद करें, बल्कि नागरिकों को संवैधानिक मूल्यों, नागरिक जिम्मेदारी, सामाजिक एकता और सबको साथ लेकर चलने वाले राष्ट्र–निर्माण के लिए प्रेरित भी करें। इसलिए, 'वन्दे मातरम्' का महत्व आजादी की लड़ाई के साथ इसके ऐतिहासिक जुड़ाव से कहीं आगे तक है। यह मातृभूमि के प्रति समर्पण, राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक निरंतरता और एक लोकतांत्रिक गणराज्य की साझा उम्मीदों का प्रतीक बना हुआ है।

'वन्दे मातरम्' का आज के समय में महत्व नेशनल एजुकेशन पॉलिसी (NEP) 2020 में बताए गए विजन से भी काफी मिलता–जुलता है, जो संवैधानिक मूल्यों, भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत, कई भाषाओं का इस्तेमाल और जिम्मेदार नागरिकता पर जोर देता है। इसी तरह, आजादी का अमृत महोत्सव, एक भारत श्रेष्ठ भारत, मेरी माटी मेरा देश और संविधान दिवस जैसे राष्ट्रीय कार्यक्रमों ने भारत की भाषाई, सांस्कृतिक और क्षेत्रीय विविधता का जश्न मनाते हुए राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने के महत्व को फिर से पक्का किया है। इस बड़े फ्रेमवर्क में, वन्दे मातरम् एक शाश्वत सांस्कृतिक प्रतीक के तौर पर काम करता रहता है जो भारत की ऐतिहासिक विरासत को आज के समय की विकास की उम्मीदों से जोड़ता है।[3]

साथ ही, 'वन्दे मातरम्' के बारे में चर्चाएं राष्ट्रीय पहचान, संवैधानिक आजादी और सांस्कृतिक बहुलता के बीच बदलते रिश्ते को दिखाती हैं। न्यायिक फैसलों ने लगातार इस बात पर जोर दिया है कि राष्ट्रीय प्रतीकों का सम्मान मजबूरी के बजाय अपनी मर्जी से किया जाना चाहिए, जिससे आजादी, बराबरी, जमीर की आजादी और भाईचारे के संवैधानिक सिद्धांतों को मजबूती मिले। यह संतुलित संवैधानिक नजरिया 'वन्दे मातरम्' को भारत के लोकतांत्रिक और बहु–सांस्कृतिक चरित्र का सम्मान करते हुए देशभक्ति की प्रेरणा का जरिया बनाए रखने में मदद करता है।[4]

वन्दे मातरम् का ऐतिहासिक विकास

प्रख्यात बंगाली उपन्यासकार बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय (1838–1894) ने 1870 के दशक में यह गीत लिखा था। बाद में इस गीत को उनके मशहूर उपन्यास 'आनंदमठ' में शामिल किया गया, जो 1882 में छपा था, जिसमें अठारहवीं सदी के आखिर में अत्याचारी शासन के खिलाफ संन्यासी विद्रोह को दिखाया गया था।

'वन्दे मातरम्' का साहित्यिक महत्व इसकी कविता की उत्कृष्टता से कहीं ज्यादा था। उन्नीसवीं सदी के आखिर में, ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों के कारण राष्ट्र को राजनीतिक गुलामी, आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक रूप से

हाशिए पर धकेला गया था। भारतीय बुद्धिजीवियों ने सांस्कृतिक प्रतिरोध के साधनों के रूप में साहित्य, भाषा और स्वदेशी परंपराओं की ओर तेजी से रुख किया। इस सामाजिक–राजनीतिक संदर्भ में, वन्दे मातरम् सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की एक शक्तिशाली अभिव्यक्ति के रूप में उभरा, जिसने भारतीयों को अपनी सभ्यता की विरासत को वापस पाने के लिए प्रोत्साहित किया और साथ ही राष्ट्रीय चेतना की सामूहिक भावना को बढ़ावा दिया। वन्दे मातरम् शांतिपूर्ण प्रतिरोध का अमोघ अस्त्र बन गया, जो औपनिवेशिक सत्ता के खिलाफ विरोध का प्रतीक था और राष्ट्रीय स्वतंत्रता के प्रति प्रतिबद्धता को फिर से पुख्ता करता था। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के कई प्रमुख नेताओं ने 'वन्दे मातरम्' की प्रेरणा देने वाली भूमिका को स्वीकार किया। श्री अरबिंदो ने इसे ''भारतीय राष्ट्रवाद का मंत्र'' माना, जबकि महात्मा गांधी ने इस गीत के बहुत ज्यादा भावनात्मक महत्व को पहचाना। बाल गंगाधर तिलक, बिपिन चंद्र पाल, लाला लाजपत राय और सुभाष चंद्र बोस जैसे नेताओं ने जनता में देशभक्ति की प्रतिबद्धता को प्रेरित करने की इसकी क्षमता की सराहना की।[5]

संवैधानिक मान्यता और कानूनी दर्जा

24 जनवरी 1950 को भारत की संविधान सभा ने आजादी की लड़ाई में 'वन्दे मातरम्' के असाधारण योगदान को औपचारिक रूप से मान्यता दी। जन गण मन को राष्ट्रगान के तौर पर अपनाया गया, जबकि वन्दे मातरम् को राष्ट्रीय गीत का दर्जा दिया गया। डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने कहा कि इसके ऐतिहासिक महत्व के कारण इसे बराबर सम्मान मिलता रहेगा। राष्ट्रीय गौरव अपमान निवारण (संशोधन) अधिनियम, 2026 के अंतर्गत राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' को भी राष्ट्रगान 'जन गण मन' के समान कानूनी सुरक्षा, सम्मान और दर्जा प्रदान किया गया है।

वन्दे मातरम् की संवैधानिक प्रासंगिकता संविधान के अनुच्छेद (51ए) में निहित मौलिक कर्तव्यों के माध्यम से और मजबूत होती है। इन कर्तव्यों के अनुसार प्रत्येक नागरिक को संविधान का पालन करना, इसके आदर्शों और संस्थानों का सम्मान करना, भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता को बनाए रखना, देश की समग्र सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करना और समाज के सभी वर्गों के बीच सद्भाव को बढ़ावा देना आवश्यक है।

वन्दे मातरम् की आज के समय में अहमियत, भारत गणराज्य को बताने वाले संवैधानिक आदर्शों से बहुत करीब से जुड़ी हुई है। हालांकि यह गीत संविधान से दशकों पहले बना था, लेकिन इसमें वे मूल्य हैं जो प्रस्तावना में दिए गए सिद्धांतों से मेल खाते हैं, जिनमें न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारा शामिल हैं (भारत का संविधान, 1950)। संविधान सभा का वन्दे मातरम् को राष्ट्रीय गीत के बराबर सम्मान देने का फैसला, भारत की आजादी में इसके ऐतिहासिक योगदान को पहचान देने के साथ–साथ नए गणराज्य के लोकतांत्रिक और बहुलवादी चरित्र की पुष्टि करता है (संविधान सभा की बहसें, 1950)।

आज की संवैधानिक देशभक्ति राष्ट्रीय प्रतीकों से भावनात्मक जुड़ाव से कहीं आगे जाती है और संवैधानिक नैतिकता, लोकतांत्रिक संस्थाओं और कानून के शासन के प्रति प्रतिबद्धता पर जोर देती है। इस संदर्भ में, वन्दे मातरम् सिर्फ मातृभूमि के प्रति समर्पण का ही प्रतीक नहीं है, बल्कि संवैधानिक मूल्यों को बनाए रखने और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने की हर नागरिक की जिम्मेदारी का भी प्रतीक है।

राष्ट्रीय पहचान

राष्ट्रीय पहचान साझे ऐतिहासिक अनुभवों, सांस्कृतिक परंपराओं, संवैधानिक आदर्शों और सामूहिक उम्मीदों पर आधारित होती है। भारत जैसे सांस्कृतिक, भाषाई एवं धार्मिक विविधताओं से समृद्ध देश में राष्ट्रीय प्रतीक नागरिकों में राष्ट्रीय एकता, साझा राष्ट्रीय पहचान तथा राष्ट्र के प्रति अपनत्व की भावना विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन प्रतीकों में, वन्दे मातरम् एक खास जगह रखता है क्योंकि यह भारत की आजादी की लड़ाई से अपने आप निकला और राष्ट्रीय जागृति की एक भावनात्मक अभिव्यक्ति बन गया।

भारत को एक पालने–पोसने वाली माँ के तौर पर दिखाकर, बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने देशभक्ति को एक नैतिक और भावपूर्ण प्रतिबद्धता में बदल दिया। मातृभूमि के उदाहरण ने लाखों भारतीयों को एक आम राष्ट्रीय लक्ष्य की तलाश में क्षेत्रीय, भाषाई और सामाजिक मतभेदों से ऊपर उठने के लिए प्रेरित किया। आज भी, वन्दे मातरम् बलिदान, साहस और देश सेवा की सामूहिक यादों को जगाता है, जिससे नागरिकों का देश के प्रति भावनात्मक लगाव और मजबूत होता है। स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, शैक्षणिक कार्यक्रम और सांस्कृतिक घटनाओं के दौरान इसका लगातार प्रदर्शन भारत की राष्ट्रीय पहचान को मजबूत करने में इसकी स्थायी भूमिका को दिखाता है।

समय के साथ बदलने वाली राजनीतिक विचारधाराओं के विपरीत, वन्दे मातरम् उन मूल्यों को दिखाता है जो हर जगह काम के हैं–अपने देश के लिए प्यार, अपनी विरासत का सम्मान और इसकी तरक्की के लिए सतत् प्रयास। नतीजतन, यह छोटे–मोटे हितों के बजाय साझा इतिहास में निहित एक सबको साथ लेकर चलने वाली राष्ट्रीय पहचान बनाने में योगदान देता रहता है।[3]

शिक्षा और युवा

ऐतिहासिक विरासत को बचाकर रखने और आने वाली पीढ़ियों तक राष्ट्रीय मूल्यों को पहुंचाने में शिक्षा एक अहम भूमिका निभाती है। क्योंकि भारत में दुनिया की सबसे बड़ी युवा आबादी है, इसलिए शिक्षा संस्थानों पर जानकार, जिम्मेदार और सामाजिक रूप से जागरूक नागरिक बनाने की बड़ी जिम्मेदारी है। इस संदर्भ में, वन्दे मातरम् एक जरूरी शिक्षा का जरिया है जो छात्रों को भारत के स्वतंत्रता आंदोलन, संवैधानिक विकास और सांस्कृतिक विरासत से परिचित कराता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 संवैधानिक मूल्यों, नैतिक आचरण, कई भाषाओं का इस्तेमाल, सांस्कृतिक जागरूकता और जिम्मेदार नागरिकता (शिक्षा मंत्रालय, 2020) पर आधारित पूरी शिक्षा पर जोर देती है। वन्दे मातरम् छात्रों को स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान की सराहना करने, भारत की सभ्यता की विरासत को समझने और एक लोकतांत्रिक समाज में राष्ट्रीय एकता के महत्व को पहचानने के लिए बढ़ावा देकर इन लक्ष्यों में योगदान देता है।

औपचारिक शिक्षा के अतिरिक्त, 'वन्दे मातरम्' विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, राष्ट्रीय कैडेट कोर (NCC), राष्ट्रीय सेवा योजना (NSS), युवा महोत्सवों तथा विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से युवाओं में देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता, अनुशासन, सेवा–भाव और उत्तरदायी नागरिकता की भावना का विकास करता है। वन्दे मातरम्

को सिर्फ एक रस्मी गाना मानने के बजाय, शैक्षिक संस्थानों को इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, साहित्यिक महत्व, संवैधानिक स्थिति और देश बनाने में इसकी भूमिका के बारे में गहराई से सोचने को बढ़ावा देना चाहिए।

डिजिटल इंडिया और सोशल मीडिया

डिजिटल क्रांति ने राष्ट्रीय प्रतीकों को अनुभव करने, उन्हें बताने और सहेजने के तरीके को बदल दिया है। ऑनलाइन प्लेटफॉर्म, स्ट्रीमिंग सर्विस, एजुकेशनल वेबसाइट और सोशल मीडिया के जरिए, वन्दे मातरम् युवा पीढ़ी के बीच अत्यन्त लोकप्रिय हो गया है। आजकल के म्यूजिकल गाने, डॉक्यूमेंट्री, वर्चुअल यादों और डिजिटल कैंपेन ने डिजिटल कम्युनिकेशन के जमाने में राष्ट्रीय गीत की अहमियत से जन–जन को जागरूक किया है।

'हर घर तिरंगा' जैसे सरकारी कैंपेन ने राष्ट्रीय समारोहों में बड़े पैमाने पर लोगों की भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए डिजिटल मीडिया का प्रभावशाली इस्तेमाल किया है। इसी तरह, शैक्षणिक संस्थान और सांस्कृतिक आयोजन 'वन्दे मातरम्' के बारे में ऐतिहासिक जानकारी प्रसारित करने के लिए तेजी से डिजिटल प्रोद्योगिकी का इस्तेमाल कर रहे हैं, जिससे यह गाना भौगोलिक सीमाओं के पार दर्शकों तक पहुँच रहा है।

भारत की वैश्विक पहचान में वन्दे मातरम् की भूमिका

दुनिया भर में लगभग 35 मिलियन से ज्यादा भारतीय डायस्पोरा–अक्सर स्वतंत्रता दिवस समारोह, रिपब्लिक डे इवेंट्स, कम्युनिटी गैदरिंग और विदेशों में भारतीय मिशन द्वारा आयोजित कल्चरल फेस्टिवल के दौरान 'वन्दे मातरम्' गाते हैं।[7] ये कार्यक्रम देश के साथ भावनात्मक रिश्तों को मजबूत करते हैं और साथ ही इंटरनेशनल दर्शकों को भारत के इतिहास, सांस्कृतिक परंपराओं और प्रजातांत्रिक मूल्यों से परिचित कराते हैं। इसी तरह, 'वन्दे मातरम्' को अक्सर सांस्कृतिक विनिमय कार्यक्रम, अंतरराष्ट्रीय संगीत उत्सव और इंडियन काउंसिल फॉर कल्चरल रिलेशंस (ICCR) के तहत आयोजित कार्यक्रमों में दिखाया जाता है, जो भारत की सांस्कृतिक पहुंच और सांस्कृतिक प्रभाव–शक्ति में योगदान देता है। हालांकि 'वन्दे मातरम्' मुख्य रूप से एक राष्ट्रीय प्रतीक है, लेकिन भारत के स्वतंत्रता आंदोलन, लोकतांत्रिक मूल्यों और सांस्कृतिक विरासत के साथ इसका जुड़ाव इसे एक बहुलवादी, शांतिपूर्ण और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध देश के रूप में भारत की अंतरराष्ट्रीय छवि में अप्रत्यक्ष रूप से योगदान देने में मदद करता है। इस तरह, राष्ट्रीय गीत न केवल देशभक्ति के प्रतीक के रूप में काम करता है, बल्कि भारत को उसके ग्लोबल डायस्पोरा और बड़े अंतरराष्ट्रीय समुदाय से जोड़ने वाले एक सांस्कृतिक सेतु के रूप में भी काम करता है।[8]

सारांश में 'वन्दे मातरम्' की अहमियत ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध आंदोलन में इसकी ऐतिहासिक भूमिका से कहीं ज्यादा है। आज के भारत में, यह राष्ट्रीय पहचान, संवैधानिक मूल्यों, सांस्कृतिक विरासत और नागरिक जिम्मेदारी को मजबूत करता रहता है। इसके आदर्श न्याय, आजादी, बराबरी, भाईचारा और एकता के संवैधानिक सिद्धांतों से मेल खाते हैं, जिससे देशभक्ति के एक ऐसे रूप को बढ़ावा मिलता है जो सबको साथ लेकर चलने वाला, प्रजातांत्रिक और भारत की समृद्ध सांस्कृतिक और धार्मिक विविधता का सम्मान करने वाला हो। वन्दे मातरम् भारत की सभ्यता की विरासत और लोकतांत्रिक उम्मीदों का जीता–जागता प्रतीक बना हुआ

है, जो नागरिकों को संवैधानिक आदर्शों को बनाए रखने, सांस्कृतिक विविधता का जश्न मनाने और देश की तरक्की में मिलकर योगदान देने के लिए प्रेरित करता है।

संदर्भ:

1. बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय, आनंदमठ (1882)
2. संविधान सभा–बहस–खण्ड–12, 24 जनवरी,1950
3. बिपिन चन्द्रा, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी–भारत का स्वतंत्रता संग्राम–पेनगुइन किताब–1988.
4. कुमार ए. नई शिक्षा नीति 2020–भारत का रोडमेप (2.0), दक्षिण फिलोरिडा (यूएसएफ) एम 3, प्रकाशन 2021 .3(2021):36
5. Mallick P- Introduction: What Is New India and How More Democratic Is It? नये भारत की रूपरेखा 2025 दिसंबर 8, (पी पी 1–29) रूटलेड्ज .

6 सरकार एस. आधुनिक भारत 1885 –1947 सीप्रिंजर 1989 जून 24.

7. प्रेस सूचना ब्यूरो (2025) वन्दे मातरम के 150 वर्ष.
8. विदेश मंत्रालय भारत सरकार. (2024) वार्षिक रिपोर्ट 2023–24
9. भारतीय परिषद एवं सांस्कृतिक सबंध (2023) वार्षिक रिपोर्ट 2022–23.
10. आनंदमठ –Adda 247 Publication, Metis Eduventures Private Ltd, Unitech Cyber Park, Sect-39, गुरूग्राम, हरियाणा–122002

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' गीत की प्रेरक भूमिका (कालक्रमानुसार)

—आशीष पंवार
कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी
सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय

राष्ट्रीय चेतना का अमर स्वर

भारत का स्वाधीनता संग्राम केवल राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने का संघर्ष नहीं था; यह एक बहुआयामी प्रक्रिया थी, जिसमें सांस्कृतिक पुनर्जागरण, भावनात्मक एकात्मता और राष्ट्रीय अस्मिता की पुनर्स्थापना समान रूप से निहित थी। इस महायज्ञ में अनेक महापुरुषों, आंदोलनों और विचारधाराओं ने अपनी—अपनी आहुति दी, परंतु कुछ ऐसे प्रतीक भी उभरे जिन्होंने जनमानस के अंतःकरण को आंदोलित कर उसे एक सूत्र में पिरोने का अद्वितीय कार्य किया।

'वन्दे मातरम्' ऐसा ही एक अमर गीत है — एक ऐसा स्वर, जो केवल उच्चारित नहीं हुआ, बल्कि युगों—युगों तक भारतीय आत्मा में गूंजता रहा और आज भी गूंज रहा है। यह गीत मात्र काव्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं था, बल्कि राष्ट्रप्रेम, आत्मगौरव और स्वतंत्रता की आकांक्षा का सजीव प्रतीक बन गया। इसकी ध्वनि में मातृभूमि के प्रति भक्ति, प्रकृति के प्रति अनुराग और स्वाधीनता के लिए संघर्ष की ज्वाला एक साथ स्पंदित होती है। यही कारण है कि एक साहित्यिक रचना के रूप में जन्मा यह गीत कुछ ही वर्षों में करोड़ों भारतीयों के कंठ का स्वर बन गया और अंततः स्वतंत्र भारत के राष्ट्रीय गीत के पद पर प्रतिष्ठित हुआ।

रचना—परिस्थिति और वैचारिक आधार (1870—1890)

'वन्दे मातरम्' की रचना उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा की गई। यह वह कालखंड था जब 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की असफलता के पश्चात भारतीय समाज निराशा और आत्मविस्मृति के गर्त में डूबा हुआ था। अंग्रेजी शासन की कठोर नीतियों ने न केवल राजनीतिक स्वाधीनता का हरण किया था, बल्कि भारतीय समाज के सांस्कृतिक आत्मविश्वास को भी गहरे रूप से क्षीण कर दिया था। शिक्षित भारतीय वर्ग के एक हिस्से में पश्चिमी सभ्यता के समक्ष हीनभावना घर करने लगी थी और राष्ट्रीयता की कोई सुसंगठित अवधारणा अभी आकार भी नहीं ले पाई थी।

ऐसे विषम समय में बंगाल के एक सुदूर ग्राम कांठालपाड़ा में जन्मे बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय, जो स्वयं एक डिप्टी मैजिस्ट्रेट के रूप में अंग्रेजी प्रशासन में कार्यरत थे, साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना जागृत करने के कार्य में जुट गए। उनकी दृष्टि में, किसी राष्ट्र का पुनर्जागरण केवल राजनीतिक संगठनों से नहीं, बल्कि उस राष्ट्र की संस्कृति, भाषा और भावनात्मक एकता से होता है। उन्होंने यह अनुभव किया कि भारतीय जनमानस को जागृत करने के लिए एक ऐसे प्रतीक की आवश्यकता है जो भूमि को मात्र भौगोलिक इकाई न मानकर, उसे एक सजीव, पूज्य सत्ता के रूप में प्रस्तुत करे।

इसी वैचारिक पृष्ठभूमि में बंकिमचंद्र ने 1875 के आसपास 'वन्दे मातरम्' की रचना की, और इसे अपने प्रसिद्ध बांग्ला उपन्यास 'आनंदमठ' (1882) में सन्निहित किया। यह उपन्यास संन्यासी विद्रोह की पृष्ठभूमि पर आधारित

था, जिसमें मातृभूमि की रक्षा के लिए संघर्षरत संन्यासियों के समूह को इस गीत के माध्यम से अपनी प्रेरणा प्राप्त होती दिखाई गई है। गीत में भारत को 'मातृभूमि' के रूप में चित्रित कर बंकिमचंद्र ने राष्ट्रीयता को एक भावात्मक और आध्यात्मिक आधार प्रदान किया।

यह गीत भारतीय मन को उसकी जड़ों से जोड़ता है और यह बोध कराता है कि राष्ट्र केवल भौगोलिक सीमा–रेखाओं में बंधी इकाई नहीं है, बल्कि एक जीवंत, सजीव सत्ता है, जिसकी रक्षा और सेवा प्रत्येक नागरिक का परम कर्तव्य है। संस्कृत और बांग्ला के मिश्रित स्वरूप में रचित इस गीत की भाषा इतनी सहज और हृदयस्पर्शी थी कि यह जन–जन के कंठ तक सरलता से पहुँच सकी। इस संदर्भ में प्रख्यात इतिहासकार बिपिन चंद्र ने अपनी कृति में इस बात को रेखांकित किया है कि बंकिमचंद्र का यह गीत भारतीय राष्ट्रवाद की सबसे प्रारंभिक सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों में से एक था – एक ऐसी अभिव्यक्ति, जिसने राजनीतिक राष्ट्रवाद से पहले ही सांस्कृतिक और भावनात्मक राष्ट्रवाद की नींव रख दी थी। यही वह विशेषता है जो 'वन्दे मातरम्' को अन्य देशभक्ति गीतों से अलग करती है – यह राजनीतिक मांगों से नहीं, बल्कि मातृभूमि के प्रति सहज, अकृत्रिम प्रेम से उत्पन्न हुआ था।

राष्ट्रीय मंच पर प्रतिष्ठा और प्रारंभिक प्रसार (1896–1904)

'आनंदमठ' में प्रकाशित होने के पश्चात भी 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रीय पहचान मिलने में लगभग एक दशक से अधिक का समय लगा। यह गीत प्रारंभ में बंगाल के साहित्यिक और सांस्कृतिक वर्ग तक ही सीमित रहा। इसे वास्तविक राष्ट्रीय मंच 1896 में मिला, जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कोलकाता अधिवेशन में रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इस गीत को अपनी मधुर स्वरलहरी में प्रस्तुत किया। यह क्षण भारतीय राष्ट्रवाद के इतिहास में एक मील का पत्थर साबित हुआ, क्योंकि यह पहली बार था जब यह गीत किसी अखिल भारतीय राजनीतिक मंच पर गाया गया।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर, जो स्वयं एक महान साहित्यकार और विचारक थे, ने इस गीत की धुन को इस प्रकार संयोजित किया कि यह सुनने वाले के हृदय में सीधे उतर जाए। उनकी इस प्रस्तुति के पश्चात 'वन्दे मातरम्' केवल एक साहित्यिक रचना नहीं रह गई, बल्कि यह भारतीय राष्ट्रवाद के स्वर का सार्वजनिक उद्घोष बन गई। इस अधिवेशन में उपस्थित प्रतिनिधियों और श्रोताओं पर इस गीत का जो प्रभाव पड़ा, उसने यह स्पष्ट कर दिया कि यह गीत आम जनमानस की भावनाओं को व्यक्त करने की अद्भुत क्षमता रखता है।

इस काल में 'वन्दे मातरम्' धीरे–धीरे बंगाल से बाहर निकलकर अन्य प्रांतों में भी अपनी जड़ें जमाने लगा। राजनीतिक सभाओं, साहित्यिक सम्मेलनों और सामाजिक आयोजनों में इसका गायन लोगों के भीतर राष्ट्रप्रेम की भावना को जागृत करने का एक सशक्त माध्यम बन गया। शिक्षण संस्थानों में भी विद्यार्थी इस गीत को गाने लगे, जिससे युवा पीढ़ी में राष्ट्रीय चेतना का बीजारोपण हुआ। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने आगे चलकर इस गीत के प्रभाव को रेखांकित करते हुए यह विचार व्यक्त किया कि इस गीत ने भारत की आत्मा को ही मानो स्पंदित कर दिया था – यह केवल शब्दों और स्वरों का संयोजन नहीं था, बल्कि एक संपूर्ण राष्ट्र की सामूहिक चेतना का प्रतिनिधित्व करने वाला माध्यम बन गया था। इसी कालखंड से 'वन्दे मातरम्' एक साहित्यिक रचना से आगे बढ़कर राष्ट्रीय चेतना के प्रतीक के रूप में स्थापित होने लगा और आने वाले वर्षों में यह और अधिक व्यापक स्वरूप लेने वाला था।

बंग–भंग और स्वदेशी आंदोलन : जन–जागरण का स्वर (1905–1911)

1905 में लॉर्ड कर्जन द्वारा बंगाल का विभाजन भारतीय इतिहास में एक निर्णायक मोड़ साबित हुआ। यह विभाजन प्रशासनिक सुविधा के नाम पर किया गया था, परंतु इसके पीछे की मूल मंशा हिंदू–मुस्लिम समाज के बीच विभाजन की रेखा खींचकर बंगाल में उभरते राष्ट्रवादी आंदोलन को कमजोर करना थी। इस विभाजन ने संपूर्ण बंगाल में आक्रोश की लहर पैदा कर दी और इसके विरोध में जो स्वदेशी आंदोलन प्रारंभ हुआ, उसमें 'वन्दे मातरम्' ने एक सशक्त जन–नारे का रूप धारण कर लिया।

इस आंदोलन के दौरान सड़कों पर उमड़ते जनसमूह, विदेशी वस्त्रों की होली जलाते हुए लोग और स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग का उद्घोष करते नागरिक – इन सबके बीच 'वन्दे मातरम्' की ध्वनि एक ऐसी ऊर्जा का संचार कर रही थी, जो औपनिवेशिक सत्ता के लिए वास्तविक चुनौती बन गई। छात्र वर्ग, महिलाएं, व्यापारी, श्रमिक – समाज के सभी वर्ग इस गीत के माध्यम से अपने प्रतिरोध को अभिव्यक्त करने लगे और देखते ही देखते यह गीत संपूर्ण आंदोलन की आत्मा बन गया।

इस आंदोलन की एक विशेष बात यह थी कि 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष केवल शाब्दिक विरोध नहीं था, बल्कि यह एक सामूहिक पहचान का निर्माण कर रहा था। जब हजारों लोग एक साथ "वन्दे मातरम्" का उच्चारण करते थे, तो यह क्षणभर के लिए सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक भेदों को मिटाकर सभी को एक राष्ट्रीय पहचान में बांध देता था। यही कारण था कि ब्रिटिश सरकार इस गीत की बढ़ती लोकप्रियता और इसकी एकीकरण–शक्ति से अत्यंत भयभीत हो गई। सरकार ने इस गीत पर प्रतिबंध लगाने का प्रयास किया, सार्वजनिक स्थलों पर इसके उच्चारण को दंडनीय अपराध घोषित किया और इसे गाने वाले विद्यार्थियों तथा कार्यकर्ताओं के विरुद्ध कठोर कार्रवाई की।

इतिहासकार सुमित सरकार ने अपनी रचनाओं में इस तथ्य को स्पष्ट किया है कि 'वन्दे मातरम्' स्वदेशी आंदोलन का युद्ध–घोष बन गया था – एक ऐसा नारा जिसने आंदोलन को भावनात्मक एकता और सामूहिक साहस प्रदान किया। यह उल्लेखनीय है कि इसी कालखंड में बारीसाल सम्मेलन (1906) में जब प्रशासन ने 'वन्दे मातरम्' के उद्घोष पर प्रतिबंध लगाया, तो प्रतिनिधियों ने मौन रहकर भी अपनी असहमति व्यक्त की और गीत प्रतिबंध के बावजूद भूमिगत रूप से और अधिक व्यापक होता गया। प्रतिबंध, दमन और लाठीचार्ज के बावजूद यह गीत दबाया नहीं जा सका अपितु प्रतिबंध ने इसे और अधिक लोकप्रिय बना दिया, क्योंकि निषिद्ध वस्तुएं सदैव अधिक आकर्षक बन जाती हैं। इस चरण में 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं रहा, बल्कि यह जन–आंदोलन का जीवंत, सशक्त प्रतीक बन गया, जिसने आगामी दशकों के संघर्ष की दिशा निर्धारित की।

क्रांतिकारी चेतना और आत्मोत्सर्ग का उद्घोष (1910–1930)

बीसवीं सदी के प्रारंभिक दशकों में जब भारत में क्रांतिकारी गतिविधियां अपने चरम पर पहुंच रही थीं, तब 'वन्दे मातरम्' ने एक नई और गहन भूमिका निभानी शुरू की। यह गीत अब केवल जन–जागरण और सामूहिक प्रतिरोध का माध्यम नहीं रह गया था, बल्कि यह आत्मोत्सर्ग और बलिदान का पावन मंत्र बन गया। क्रांतिकारी आंदोलन के युवा सेनानियों के लिए यह गीत किसी साधारण देशभक्ति गीत से कहीं अधिक था – यह उनके जीवन–दर्शन का सार बन गया था।

भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, बटुकेश्वर दत्त, राजगुरु, सुखदेव जैसे अनेक क्रांतिकारी युवा इस उद्घोष को अपने जीवन का अंतिम संकल्प मानते थे। जेलों की अंधकारमय कालकोठरियों में, जहां इन वीरों ने अमानवीय यातनाएं सहन कीं, फिर भी उनके मन में 'वन्दे मातरम्' की ध्वनि गूंजती रही और उन्हें साहस प्रदान करती रही। फांसी के तख्ते पर चढ़ते समय भी अनेक क्रांतिकारियों के मुख से यही उद्घोष निकला – यह दर्शाता है कि यह गीत मृत्यु के क्षण में भी भय को साहस में और निराशा को दृढ़ संकल्प में बदलने की अद्भुत क्षमता रखता था।

संघर्ष के प्रत्येक क्षण में, चाहे वह गुप्त बैठकों का आयोजन हो, बम बनाने का प्रशिक्षण हो, या अंग्रेजी अधिकारियों के विरुद्ध सशस्त्र प्रतिरोध हो – 'वन्दे मातरम्' की ध्वनि क्रांतिकारियों के हृदय में साहस, निर्भीकता और राष्ट्रसेवा की भावना का संचार करती रही। यह गीत उनके लिए एक प्रकार की आध्यात्मिक शक्ति का स्रोत था, जो उन्हें अपने व्यक्तिगत जीवन से ऊपर उठकर राष्ट्र के लिए सर्वस्व समर्पित करने की प्रेरणा देता था।

इस संदर्भ में लाला लाजपत राय, जिन्हें 'पंजाब केसरी' की उपाधि से सम्मानित किया गया, ने इस गीत को राष्ट्र की आत्मा के रूप में परिभाषित करते हुए कहा था कि यह कोई साधारण गीत नहीं, बल्कि संपूर्ण राष्ट्र की आत्मा का प्रतिनिधित्व करने वाला उद्घोष है। उनके इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि उस समय के राष्ट्रीय नेताओं ने भी इस गीत के गहन आध्यात्मिक और भावनात्मक महत्व को पूर्णतः स्वीकार किया था।

इसी काल में बंगाल के क्रांतिकारी संगठन, जैसे अनुशीलन समिति और युगांतर दल, अपनी गतिविधियों में 'वन्दे मातरम्' को एक प्रकार के मंत्र के रूप में उपयोग करते थे। यह गीत गुप्त संगठनों के सदस्यों के बीच पहचान और एकता का प्रतीक बन गया था। पंजाब, महाराष्ट्र और अन्य प्रांतों में भी क्रांतिकारी गतिविधियों के साथ इस गीत का घनिष्ठ संबंध स्थापित हो गया था।

गांधी युग : जनांदोलन की आत्मा (1920–1940)

महात्मा गांधी के नेतृत्व में जब असहयोग आंदोलन (1920–22) और सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930) का प्रारंभ हुआ, तब स्वाधीनता संग्राम ने एक नया स्वरूप ग्रहण किया – यह अब केवल बुद्धिजीवियों और क्रांतिकारियों का संघर्ष नहीं रह गया, बल्कि यह करोड़ों सामान्य भारतीयों का जनांदोलन बन गया। इस व्यापक जनांदोलन में 'वन्दे मातरम्' जन–जन की आवाज बन गया।

सत्याग्रहियों के विशाल समूह जब अंग्रेजी शासन के विरुद्ध अहिंसात्मक प्रतिरोध करते हुए आगे बढ़ते थे, तब 'वन्दे मातरम्' का सामूहिक स्वर उन्हें नैतिक शक्ति और संगठनात्मक एकता प्रदान करता था। नमक सत्याग्रह के दौरान दांडी यात्रा में और इसके पश्चात देशभर में फैले सविनय अवज्ञा के विभिन्न रूपों में, यह गीत प्रतिरोध की भावना को जीवंत बनाए रखने का एक प्रमुख माध्यम बना रहा। महिलाओं और बच्चों ने भी इस गीत के माध्यम से आंदोलन में अपनी सक्रिय भागीदारी दर्ज की।

महात्मा गांधी ने इस गीत के महत्व को सार्वजनिक रूप से स्वीकार करते हुए अपनी पत्रिका 'यंग इंडिया' में यह विचार व्यक्त किया था कि 'वन्दे मातरम्' ने राष्ट्रीय चेतना के जागरण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालांकि गांधीजी ने यह भी संकेत दिया था कि इस गीत का प्रयोग इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि इसमें भारत के सभी समुदायों हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई और अन्य की भावनाएं समान रूप से सम्मानित रहें, क्योंकि स्वाधीनता संग्राम की सफलता के लिए सांप्रदायिक सद्भाव अनिवार्य था।

गांधीजी की यह दृष्टि अत्यंत महत्वपूर्ण थी, क्योंकि इससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय के राष्ट्रीय नेतृत्व ने इस गीत को किसी एक धर्म या समुदाय विशेष से जोड़कर नहीं, बल्कि संपूर्ण भारतीय राष्ट्र के समवेत स्वर के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया था। देखते ही देखते इस काल में 'वन्दे मातरम्' ने एकता, संयम, अहिंसा और नैतिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करना प्रारंभ किया और यह कांग्रेस के अधिवेशनों तथा सार्वजनिक सभाओं में नियमित रूप से गाया जाने वाला गीत बन गया।

इस काल में सुभाषचंद्र बोस के नेतृत्व में आजाद हिंद फौज में भी इस गीत और इससे प्रेरित अन्य देशभक्ति गीतों का विशेष महत्व रहा, जिससे यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न विचारधाराओं के राष्ट्रीय आंदोलनों में भी इस गीत की स्वीकार्यता समान रूप से बनी रही।

भारत छोड़ो आंदोलन और स्वतंत्रता की अंतिम यात्रा (1940–1947)

1942 में आरंभ हुए 'भारत छोड़ो आंदोलन' के साथ भारतीय स्वतंत्रता संग्राम अपने सबसे निर्णायक और अंतिम चरण में प्रवेश कर गया। द्वितीय विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि में जब ब्रिटिश सरकार की दमनकारी नीतियां अपने चरम पर थीं, तब महात्मा गांधी के आह्वान पर ''करो या मरो'' के संकल्प के साथ संपूर्ण देश इस अंतिम संघर्ष में कूद पड़ा। इस ऐतिहासिक क्षण में 'वन्दे मातरम्' स्वतंत्रता की अंतिम और सबसे शक्तिशाली पुकार बन गया।

देश के कोने–कोने में यह गीत गूंज रहा था – जनसभाओं में, जहां नेता जनता को संगठित करने का प्रयास कर रहे थे, भूमिगत आंदोलनों में, जहां कार्यकर्ता गुप्त रूप से प्रतिरोध की योजनाएं बना रहे थे; और सबसे महत्वपूर्ण रूप से युवाओं के हृदय में, जो इस अंतिम संघर्ष में अपना सर्वस्व समर्पित करने के लिए तैयार थे। इस आंदोलन के दौरान हजारों सत्याग्रहियों को गिरफ्तार किया गया, अनेक स्थानों पर पुलिस की गोलीबारी में लोग शहीद हुए, परंतु 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष कभी नहीं थमा।

मूलतः यह गीत इस कालखंड में केवल विरोध और प्रतिरोध का स्वर नहीं था, बल्कि यह स्वतंत्र भारत के स्वप्न का सजीव प्रतीक बन गया था। जब भारतीय जनता इस गीत का उद्घोष करती थी, तो उसमें वर्तमान के संघर्ष की पीड़ा के साथ–साथ भविष्य के स्वतंत्र, समृद्ध भारत की कल्पना भी समाहित होती थी। यह दोहरा भाव – वर्तमान संघर्ष और भविष्य की आशा – इस गीत को विशेष रूप से शक्तिशाली बनाता था। इस अवधि में देश के विभिन्न भागों में स्वाधीनता सेनानियों ने भूमिगत रेडियो प्रसारणों के माध्यम से भी इस गीत का प्रसारण किया, जिससे यह संदेश दूर–दूर तक पहुंचता रहा कि स्वतंत्रता संग्राम अभी थमा नहीं है।

स्वतंत्रता और संवैधानिक मान्यता (1947–1950)

15 अगस्त 1947 को जब भारत स्वतंत्र हुआ, तब 'वन्दे मातरम्' की ऐतिहासिक भूमिका को राष्ट्र की कृतज्ञता और सम्मान प्राप्त हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात संविधान सभा के समक्ष यह प्रश्न आया कि स्वतंत्र भारत के लिए राष्ट्रगान और राष्ट्रीय गीत के रूप में किस रचना को मान्यता दी जाए। इस संदर्भ में 'वन्दे मातरम्' और रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा रचित 'जन गण मन' दोनों ही प्रबल दावेदार थे।

विस्तृत विचार–विमर्श के पश्चात संविधान सभा ने यह निर्णय लिया कि 'जन गण मन' को राष्ट्रगान का दर्जा दिया जाए, जबकि 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रीय गीत के रूप में समान सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान की जाए। 24 जनवरी 1950 को संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने अपने ऐतिहासिक वक्तव्य में इस निर्णय की

घोषणा की, जिसमें यह स्पष्ट किया गया कि 'वन्दे मातरम्', जिसने भारतीय स्वाधीनता संग्राम में ऐतिहासिक भूमिका निभाई थी, को 'जन गण मन' के समान सम्मान दिया जाएगा। यह निर्णय केवल औपचारिकता नहीं था, बल्कि उस गहन सांस्कृतिक और ऐतिहासिक योगदान का सम्मान था, जो इस गीत ने स्वतंत्रता संग्राम के लगभग सात दशकों के दौरान भारतीय राष्ट्र को दिया था।

14 सितंबर 1949 को जब हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में अंगीकार किया गया, और कुछ ही महीनों बाद 'वन्दे मातरम्' को संवैधानिक मान्यता मिली – यह दोनों घटनाएं भारतीय भाषाई और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की एक ही निरंतर यात्रा की कड़ियां हैं।

समकालीन परिप्रेक्ष्य

आधुनिक भारत में 'वन्दे मातरम्' केवल इतिहास की स्मृति नहीं है, अपितु यह वर्तमान की भी सजीव प्रेरणा है। यह गीत आज भी स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस और अन्य राष्ट्रीय पर्वों पर गूंजता है और प्रत्येक पीढ़ी को अपनी ऐतिहासिक जड़ों से जोड़ने का कार्य करता है। विद्यालयों और महाविद्यालयों में भी इस गीत का गायन छात्रों में राष्ट्रीयता की भावना जागृत करने का एक प्रमुख माध्यम बना हुआ है।

युवा पीढ़ी के लिए यह गीत अपनी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत से जुड़ने का एक सेतु प्रदान करता है। यह गीत हमें यह स्मरण कराता है कि वैश्विक होने के साथ–साथ अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े रहना भी समान रूप से आवश्यक है।

'वन्दे मातरम्' भारतीय स्वाधीनता संग्राम का एक ऐसा अमर एवं ओजस्वी स्वर है, जिसने सात दशकों से अधिक लंबे संघर्षपूर्ण कालखंड में भारतीय जनमानस को निरंतर जागृत किया, प्रेरित किया और संगठित किया। एक साहित्यिक रचना के रूप में जन्मे इस गीत ने राष्ट्रीय मंच, जन–आंदोलन, क्रांतिकारी संघर्ष, और अंततः संवैधानिक मान्यता तक की जो यात्रा तय की, वह स्वयं भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की एक संक्षिप्त गाथा प्रस्तुत करती है। यह गीत केवल अतीत की स्मृति नहीं है, बल्कि यह वर्तमान और भविष्य के लिए भी प्रेरणा का अक्षय स्रोत है। इसने भारतीयों को यह सिखाया कि मातृभूमि के प्रति प्रेम, त्याग और समर्पण ही किसी राष्ट्र की सच्ची और स्थायी शक्ति होती है। आज भी जब वन्दे मातरम् का स्वर गूंजता है, तो वह हमें हमारे गौरवशाली संघर्षपूर्ण इतिहास की याद दिलाता है और एक सशक्त, एकजुट, समृद्ध और आत्मनिर्भर भारत के निर्माण के लिए सतत प्रेरित करता रहता है। निस्संदेह, 'वन्दे मातरम्' का यह अमर उद्घोष भारतीय राष्ट्र चेतना की धरोहर के रूप में युगों–युगों तक भारत की सामूहिक आत्मा को अनुप्राणित करता रहेगा।

संदर्भः

1. बिपिन चंद्र, इंडियाज स्ट्रगल फॉर इंडिपेंडेंस, 1988
2. सुमित सरकार, मॉडर्न इंडिया, 1983
3. बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय, आनंदमठ, 1882
4. महात्मा गांधी, यंग इंडिया, 1921
5. संविधान सभा वाद–विवाद, 24 जनवरी 1950
6. रवीन्द्रनाथ ठाकुर – भाषण एवं लेखन–संग्रह

वन्दे मातरम् : राष्ट्र प्रेम की अनश्वर धारा

—मोहित कुमार
पीजीटी (हिंदी), जवाहर नवोदय विद्यालय,
रिभोई, मेघालय

किसी भी राष्ट्र की स्वतंत्रता केवल भौगोलिक सीमाओं को पुनः प्राप्त करने का संघर्ष नहीं होती, बल्कि वह उस राष्ट्र की सामूहिक आत्मा, उसकी संस्कृति और उसके स्वाभिमान की पुनर्स्थापना का महायज्ञ होती है। भारतीय स्वाधीनता संग्राम विश्व के इतिहास में एक ऐसा अनूठा अध्याय है, जहां केवल शस्त्रों और राजनीतिक रणनीतियों ने ही भूमिका नहीं निभाई, बल्कि साहित्य, संगीत और शब्दों ने करोड़ों हृदयों में राष्ट्रवाद की ऐसी अग्नि प्रज्वलित की, जिसने ब्रिटिश साम्राज्य की नींव हिला दी। इस वैचारिक और भावनात्मक क्रांति के केंद्र में जो महामंत्र विद्यमान था, वह था– 'वन्दे मातरम्'।

ऋषि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह पावन गीत केवल कुछ शब्दों का समुच्चय नहीं था, बल्कि पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ी भारत माता का जीवंत स्वरूप था। इसने देश की चेतना को जड़ता से मुक्त कर क्रियाशीलता की ओर अग्रसर किया। जब संपूर्ण देश अंधकार, हताशा और औपनिवेशिक दमन के दौर से गुजर रहा था, तब 'वन्दे मातरम्' ने एक राष्ट्रव्यापी सूत्र के रूप में काम किया, जिसने उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक फैले विविध भारत को एक सूत्र में पिरो दिया। यह गीत राष्ट्रीय एकता, भाषा और संस्कृतियों का ऐसा सेतु बना, जिसके दोनों छोर अटूट थे।

राष्ट्रीय चेतना का संगीतात्मक अवतार

वर्ष 1870 के दशक में ब्रिटिश शासक भारत की सांस्कृतिक पहचान को नष्ट करने और भारतीयों में हीनभावना भरने का निरंतर प्रयास कर रहे थे। उसी दौर में सरकारी आयोजनों में 'गॉड सेव द क्वीन' (ब्रिटिश राष्ट्रगान) का गायन अनिवार्य किया जा रहा था। बंकिमचंद्र के भीतर की राष्ट्रीय आत्मा इस मानसिक दासता को स्वीकार नहीं कर पा रही थी।

सन 1875 के आसपास (संभवतः 7 नवंबर 1875 को) बंकिमचंद्र ने इस गीत की प्रारंभिक रचना की। यह गीत मूलतः संस्कृत और बांग्ला भाषा के अद्भुत सम्मिश्रण में रचा गया था। इसकी भाषा में जो सहजता, माधुर्य और ओज था, वह सीधे अंतर्मन को छूता था। प्रारंभ में इस गीत को किसी पुस्तक का हिस्सा नहीं बनाया गया था, परंतु वर्ष 1882 में जब उनका ऐतिहासिक उपन्यास 'आनंदमठ' प्रकाशित हुआ, तब इस गीत को उस उपन्यास के कथानक में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

'आनंदमठ' की कथावस्तु संन्यासी विद्रोह (1770 के दशक के अकाल और दमन के विरुद्ध संन्यासियों का संघर्ष) पर आधारित थी। उपन्यास में देशभक्त संन्यासी जब अत्याचारी सत्ता के विरुद्ध युद्ध के मैदान में उतरते हैं, तो वे 'वन्दे मातरम्' का गूंजता हुआ गान करते हैं। बंकिमचंद्र ने इस गीत के माध्यम से देश की

मिट्टी को केवल भूमि का टुकड़ा मानने के बजाय 'सच्ची जननी' और 'महाशक्ति दुर्गा' के रूप में स्थापित किया। उन्होंने लिखाः

''त्वं हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी, कमला कमलदलविहारिणी, वाणी विद्यादायिनी, नमामि त्वाम्...''

इस अद्भुत उपमा ने भारतीयों के मन में अपनी मातृभूमि के प्रति अगाध श्रद्धा और भक्ति का भाव जगाया, जो आगे चलकर देश की स्वतंत्रता का मुख्य आधार बना।

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' की गूंज

स्वाधीनता आंदोलन के दौरान 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं रहा, बल्कि वह एक राजनीतिक हथियार, एक नारा और क्रांतिकारियों की अंतिम सांस बन गया। 'आनंदमठ' के प्रकाशन के साथ ही यह गीत प्रबुद्ध वर्ग और देशभक्तों के बीच तेजी से फैलने लगा। बंगाल के साहित्यिक और सांस्कृतिक मंचों पर इसका पाठ होने लगा। इस दौर में समाज के भीतर राष्ट्रीयता के बीज बोए जा रहे थे। यह वह समय था जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना (1885) हो चुकी थी और देश में एक संगठित राजनीतिक चेतना आकार ले रही थी। 'वन्दे मातरम्' इस प्रारंभिक चेतना को भाषाई और सांस्कृतिक आधार दे रहा था।

इस गीत के इतिहास में वर्ष 1896 का कलकत्ता (अब कोलकाता) कांग्रेस अधिवेशन एक युगांतरकारी मोड़ साबित हुआ। इस अधिवेशन में महान कवि रवींद्रनाथ टैगोर ने स्वयं इस गीत को अपनी मधुर और ओजस्वी आवाज में स्वरबद्ध करके गाया। टैगोर द्वारा किए गए इस गायन ने पूरे देश का ध्यान इस ओर खींचा। कांग्रेस के मंच से इस गीत के गायन ने इसे अखिल भारतीय स्वीकृति प्रदान कर दी। इसके बाद से कांग्रेस के प्रत्येक अधिवेशन का प्रारंभ 'वन्दे मातरम्' के सामूहिक गान से होना एक अटूट परंपरा बन गया।

वर्ष 1905 भारतीय इतिहास का वह मोड़ है जब 'वन्दे मातरम्' जन–जन का नारा बन गया। लॉर्ड कर्जन ने बंगाल को विभाजित करने की कुटिल चाल चली, जिसका उद्देश्य हिंदू और मुस्लिम एकता को तोड़ना तथा उभरते राष्ट्रवाद को कुचलना था। इसके विरोध में संपूर्ण बंगाल और देश भर में 'स्वदेशी आंदोलन' छिड़ गया। 7 अगस्त 1905 को कलकत्ता के टाउन हॉल में आयोजित विशाल जनसभा में हजारों की संख्या में लोगों ने हाथों में काली पट्टियां बांधकर ब्रिटिश शासन के विरुद्ध प्रदर्शन किया और गगनभेदी स्वरों में 'वन्दे मातरम्' का नारा लगाया। ब्रिटिश सरकार इस नारे से इतनी भयभीत हो गई कि उसने सार्वजनिक स्थानों पर इसके गायन और नारे लगाने पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया। बारीसाल में जब निहत्थे प्रदर्शनकारियों पर बर्बर लाठीचार्ज किया गया, तब भी क्रांतिकारियों के मुख से केवल 'वन्दे मातरम्' ही निकल रहा था। इस प्रतिबंध ने आग में घी का काम किया और यह नारा गुलामी के विरुद्ध वैचारिक जागृति का सबसे बड़ा उद्घोष बन गया।

बंग–भंग के बाद स्वाधीनता आंदोलन में क्रांतिकारी राष्ट्रवाद का उदय हुआ। खुदीराम बोस, प्रफुल्ल चाकी और बाद के वर्षों में भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, बिस्मिल जैसे महान क्रांतिकारियों के लिए यह मंत्र आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा बन गया। जब 1908 में मात्र 18 वर्ष की आयु में खुदीराम बोस को फांसी के फंदे

पर लटकाया जा रहा था, तब उनके हाथ में भगवद्गीता थी और उनके होठों पर 'वन्दे मातरम्' की अमर गूंज थी। इसी कालखंड में यह गीत भारतीय सीमाओं को पार कर अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भी गूंजने लगा। वर्ष 1907 में जर्मनी के स्टटगार्ट में आयोजित अंतरराष्ट्रीय समाजवादी कांग्रेस में मैडम भीखाजी कामा ने जब भारत का पहला राष्ट्रीय ध्वज फहराया, तो उस ध्वज के मध्य में देवनागरी लिपि में 'वन्दे मातरम्' अंकित था। लाला हरदयाल और उनकी 'गदर पार्टी' ने विदेशों से जो आंदोलन चलाया, उसमें भी इस मंत्र को वैचारिक रीढ़ की हड्डी माना गया। महात्मा गांधी के भारतीय राजनीति के पटल पर आने के बाद असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन और अंततः 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में 'वन्दे मातरम्' की गूंज लगातार बनी रही। गांधी जी स्वयं इस गीत के राष्ट्रीय और आध्यात्मिक महत्व के प्रशंसक थे। यद्यपि इस काल में कुछ राजनीतिक विवादों को हवा देने की कोशिश की गई, परंतु आम जनमानस के हृदय में इसकी स्वीकार्यता कभी कम नहीं हुई। देश के कोने–कोने में प्रभात फेरियों का आयोजन इसी गीत के साथ होता था, जो सोते हुए राष्ट्र को जगाने का कार्य करता था।

औपनिवेशिक शासन की सबसे बड़ी सफलता यह नहीं थी कि उन्होंने हमें शारीरिक रूप से गुलाम बनाया, बल्कि उनकी सफलता यह थी कि उन्होंने हमारे भीतर यह विश्वास पैदा कर दिया कि हम सांस्कृतिक और भाषाई रूप से पिछड़े हुए हैं। बंकिमचंद्र ने इस मानसिक दासता पर प्रहार किया। 'वन्दे मातरम्' के माध्यम से उन्होंने देशवासियों को अपनी भूमि के वैभव, उसकी नदियों के शीतल जल, उसके लहलहाते खेतों और उसकी समृद्ध परंपराओं का स्मरण कराया। यह गीत एक ओर शांत रस और माधुर्य से परिपूर्ण है, तो दूसरी ओर इसमें राष्ट्र की रक्षा के लिए उठ खड़े होने का वीर रस भी समाहित है। इसने भारतीयों के स्वाभिमान को जगाया और उन्हें यह याद दिलाया कि जिस देश की गोद में उन्होंने जन्म लिया है, वह कोई असहाय भूमि नहीं बल्कि करोड़ों भुजाओं वाली महाशक्ति है। इस वैचारिक जागृति ने ही देश के युवाओं को हंसते–हंसते जेल जाने और लाठियां खाने का साहस प्रदान किया।

राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' और भारतीय भाषाई व सांस्कृतिक एकात्मता

भारत एक बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक राष्ट्र है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि एक ऐसी भाषा या प्रतीक को कैसे खोजा जाए जो पूरे देश को स्वीकार्य हो। 'वन्दे मातरम्' इस कसौटी पर पूरी तरह खरा उतरा। यद्यपि इसकी रचना बंगाल की भूमि पर हुई थी, परंतु इसकी आत्मा संपूर्ण भारत की थी। इस गीत में प्रयुक्त तत्सम संस्कृत/बांग्ला शब्दावली ने एक जादुई प्रभाव पैदा किया। चूंकि भारत की अधिकांश भाषाएं (चाहे वे उत्तर भारत की हों या दक्षिण भारत की) संस्कृत के शब्द भंडार से गहरे से जुड़ी हैं, इसलिए तमिलनाडु के सुब्रमण्यम भारती से लेकर पंजाब और महाराष्ट्र के लोक नेताओं तक, सभी को इसके शब्दों को समझने और अपनाने में कोई कठिनाई नहीं हुई। महाकवि सुब्रमण्यम भारती ने इस गीत का तमिल में अनुवाद किया और इसे दक्षिण भारत के घर–घर तक पहुंचाया। विष्णु दिगंबर पलुस्कर ने इसे संगीतबद्ध कर राष्ट्रीय मंचों पर प्रस्तुत किया, जिससे इसकी सांस्कृतिक स्वीकार्यता और प्रगाढ़ हुई। इस प्रकार, 'वन्दे मातरम्' ने भाषा और संस्कृतियों के भेद को मिटाकर राष्ट्रीय एकता का एक मजबूत सेतु निर्मित किया।

15 अगस्त 1947 को जब भारत स्वतंत्र हुआ, और उसके पश्चात 24 जनवरी 1950 को संविधान सभा ने एक ऐतिहासिक निर्णय लेते हुए 'वन्दे मातरम्' को भारत के 'राष्ट्रीय गीत' (National Song) के रूप में अंगीकार किया। इसे राष्ट्रगान 'जन गण मन' के समकक्ष सम्मान प्रदान किया गया। आज, स्वतंत्रता के दशकों बाद भी, आधुनिक भारत के निर्माण में इस गीत की अहमियत रत्ती भर भी कम नहीं हुई है। आज का संघर्ष सीमाओं पर खड़े दुश्मनों से जितना है, उतना ही देश के भीतर मौजूद अशिक्षा, गरीबी, भ्रष्टाचार और क्षेत्रीयता जैसी बुराइयों से भी है। युवा पीढ़ी के लिए 'वन्दे मातरम्' केवल एक औपचारिक गीत नहीं होना चाहिए, बल्कि यह कर्तव्यबोध का एक माध्यम है। जब कोई युवा अपने देश की प्रगति के लिए पूरी ईमानदारी से कार्य करता है, पर्यावरण की रक्षा करता है और समाज के वंचित वर्गों को मुख्यधारा में लाने का प्रयास करता है, तो वह वास्तव में अपनी मातृभूमि की वंदना ही कर रहा होता है। यह गीत आज भी हमारे भीतर देश के प्रति सर्वस्व अर्पण करने की भावना को जीवित रखता है।

संक्षेप में कहा जाए तो, 'वन्दे मातरम्' भारतीय स्वाधीनता आंदोलन का वह प्राणतत्त्व है जिसने इतिहास की दिशा को बदलने का काम किया। यह केवल स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास नहीं, बल्कि भारत के आत्मगौरव और पुनरुत्थान की अमर गाथा है। ऋषि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की यह अमर कृति युगों–युगों तक भारतीय जनमानस को प्रेरित करती रहेगी और जब तक इस धरा पर सूर्य और चंद्रमा विद्यमान हैं, तब तक मातृभूमि के प्रति श्रद्धा का यह महामंत्र गूंजता रहेगा।

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' गीत की ऐतिहासिक एवं साहित्यिक पृष्ठभूमि

–वैद्या हेतल प्रविणभाई बारैया
सह–प्राध्यापक,
आयुर्वेद शिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान, जामनगर, गुजरात

किसी भी राष्ट्र का आत्मगौरव उसकी सांस्कृतिक अस्मिता और ऐतिहासिक यात्रा के प्रतीकों में निहित होता है। भारत जैसे पुरातन और सांस्कृतिक रूप से अत्यंत समृद्ध राष्ट्र के इतिहास में 26 जनवरी 1950 को 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रीय गीत के रूप में स्वीकार किया गया, किंतु इसका अस्तित्व मात्र एक संवैधानिक घोषणा पत्र तक सीमित नहीं है। वास्तव में, 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं, बल्कि भारतीय राष्ट्रवाद का वह बीज–मंत्र है जिसने सोए हुए राष्ट्र को उसकी सामूहिक शक्ति का भान कराया। यह परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ी भारत माता की मुक्ति का वह रणघोष था, जिसने कोटि–कोटि कंठों को एक स्वर, एक दिशा और एक संकल्प प्रदान किया।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब औपनिवेशिक सत्ता भारतीय मानस को सांस्कृतिक और मानसिक रूप से पंगु बना रही थी, तब इस महामंत्र का प्रादुर्भाव हुआ। डॉ. संदीप कुमार शर्मा के शब्दों में कहें तो, ''वन्दे मातरम् महर्षि बंकिमचंद्र के अंतःकरण से निकला वह आध्यात्मिक और राजनीतिक प्रकटीकरण था, जिसने भूगोल के एक टुकड़े को साक्षात् 'चित्–शक्ति' और 'जगजननी' के रूप में स्थापित कर दिया।'' स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास में यह गीत एक ऐसे उत्प्रेरक के रूप में उभरा जिसने वैचारिक मतभेदों, भाषाई सीमाओं और क्षेत्रीय दीवारों को हटाकर संपूर्ण आर्यावर्त को एक सूत्र में पिरो दिया।

आनंदमठ के सृजन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

वन्दे मातरम्' की रचना और उसके प्रकटीकरण की कथा भारतीय पुनर्जागरण के इतिहास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अध्याय है। महर्षि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने इस गीत की मूल रचना संभवतः 1870 के दशक के मध्य में (लगभग 1875) की थी, परंतु इसे पूर्ण अभिव्यक्ति मिली वर्ष 1882 में प्रकाशित उनके कालजयी उपन्यास 'आनंदमठ' में।

उपन्यास की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक 'संन्यासी विद्रोह' (1770–1777) पर आधारित है, जो बंगाल के भीषण अकाल और ईस्ट इंडिया कंपनी के अमानवीय शोषण के विरुद्ध संन्यासियों और कृषकों का एक सशस्त्र प्रतिरोध था। बंकिमचंद्र ने इस ऐतिहासिक घटना को अपने समकालीन दौर की राजनीतिक चेतना से जोड़ने के लिए एक रूपक की तरह प्रयोग किया। उपन्यास के भीतर 'वन्दे मातरम्' का आगमन एक अद्भुत और रोमांचक मोड़ पर होता है। जब भवानंद नामक संन्यासी (संतान दल का सदस्य) कथा के नायक महेंद्र को घने जंगलों के बीच ले जाता है, तब वह एकाएक इस गीत का गान करने लगता है। महेंद्र, जो अंग्रेजी शिक्षा और तत्कालीन व्यवस्था के प्रभाव में है, वह अचंभित होकर पूछता है कि यह किसका वंदन हो रहा है? वह पूछता है कि क्या यह प्रकृति या किसी देवी की स्तुति है? तब भवानंद उसे उत्तर देते हैं, जो भारतीय राष्ट्रवाद की मूल आत्मा को परिभाषित करता है:

''हम किसी अन्य माता को नहीं जानते – ''जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'। हमारी मातृभूमि ही हमारी माता है। हमारे पास न माता है, न पिता, न भाई, न स्त्री, न घर, न द्वार, हमारे पास केवल यह सुजलाम्, सुफलाम्, मलयजशीतलाम् माता है।''

'आनंदमठ' का संतान दल (संन्यासी विद्रोह)

मातृभूमि की आध्यात्मिक एवं राष्ट्रीय अवधारणा

'वन्दे मातरम्' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह भूगोल को दर्शन में और मिट्टी को माता में परिवर्तित कर देता है। बंकिमचंद्र से पूर्व, यूरोपीय राष्ट्रवाद की अवधारणा मुख्यतः राज्य और सीमाओं के इर्द–गिर्द घूमती थी। परंतु बंकिमचंद्र ने भारतीय वांग्मय की सनातन परंपरा से 'भूमि' को 'माता' मानने के सूक्त को पुनर्जीवित किया।

गीत की पंक्तियों में मातृभूमि का जो चित्रण है, वह अत्यंत अलौकिक है। 'सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्', यह भारत की प्राकृतिक संपदा, नदियों की पवित्रता और वायु के सौन्दर्य का गान है। 'त्वं हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी', यहाँ बंकिमचंद्र एक क्रांतिकारी वैचारिक छलांग लगाते हैं। वे केवल शांत और ममतामयी माता की बात नहीं करते, बल्कि उसे दस हाथों में अस्त्र–शस्त्र धारण करने वाली 'दुर्गा' के रूप में देखते हैं, जो दुष्टों का संहार करने में सक्षम है।

डॉ. संदीप कुमार शर्मा ने इस दर्शन का विश्लेषण करते हुए सटीक लिखा है कि बंकिमचंद्र ने तत्कालीन समाज की कायरता और हीनभावना को समाप्त करने के लिए माँ के शक्ति–रूप का आह्वान किया। जब

ब्रिटिश साम्राज्य भारतीयों को शारीरिक और मानसिक रूप से कमजोर घोषित कर रहा था, तब इस गीत ने घोषणा की कि जिस माता के कोटि–कोटि पुत्र उसकी रक्षा के लिए उद्यत हों, वह अबला कैसे हो सकती है? उपन्यास का यह आध्यात्मिक दर्शन स्वाधीनता संग्राम का मूल आधार बना। संन्यासी विद्रोह के माध्यम से बंकिम ने यह संदेश दिया कि जब तक राष्ट्र की मुक्ति के प्रयास को एक पवित्र धार्मिक अनुष्ठान नहीं माना जाएगा, तब तक विदेशी हुकूमत के दमन चक्र को तोड़ा नहीं जा सकता। 'वन्दे मातरम्' इसी अनुष्ठान का मंगलाचरण था।

वन्दे मातरम् गीत का स्वाधीनता संग्राम में कालक्रमिक प्रभावः

1896 का कांग्रेस अधिवेशनः राजनीतिक मंच पर दिव्य अवतरण

उपन्यास 'आनंदमठ' के माध्यम से जनमानस में कौंधने के बाद, 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रीय राजनीति के मुख्य पटल पर आने में अधिक समय नहीं लगा। इस महामंत्र के कालक्रमिक इतिहास का प्रथम स्वर्णिम मोड़ सन 1896 में आया, जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का 12वाँ अधिवेशन कलकत्ता (अब कोलकाता) में आयोजित हुआ। इस अधिवेशन की महत्ता इतिहास में इसलिए अमर है क्योंकि इसी मंच पर विश्वकवि रवींद्रनाथ टैगोर ने 'वन्दे मातरम्' को स्वरबद्ध कर इसका प्रथम सस्वर गायन किया था।

यह एक युगांतरकारी घटना थी। बंकिमचंद्र के अक्षरों को जब रवींद्रनाथ टैगोर के सुरीले और ओजस्वी कंठ का साथ मिला, तो सभा में उपस्थित राष्ट्र के तत्कालीन शीर्ष नेताओं के भीतर एक अपूर्व ऊर्जा का संचार हुआ। डॉ. संदीप कुमार शर्मा के शोधपरक विश्लेषण के अनुसार, 1896 के इस अधिवेशन ने 'वन्दे मातरम्' को एक बंगाली साहित्यिक कृति की परिधि से बाहर निकालकर संपूर्ण राष्ट्र की साझी राजनीतिक चेतना का अभिन्न अंग बना दिया। कांग्रेस के इस मंच से गीत के गायन ने ब्रिटिश हुकूमत के कानों में यह स्पष्ट संदेश दे दिया था कि भारत के बौद्धिक वर्ग ने अपनी राष्ट्रीय अस्मिता की पुनर्खोज कर ली है। इसके बाद कांग्रेस के हर वार्षिक अधिवेशन का प्रारंभ इसी ओजस्वी गान से होना एक अनिवार्य परंपरा बन गया।

1905 का बंग–भंग आंदोलनः वैचारिक जागृति से जन–क्रांति का उद्घोष

यदि 1896 ने इस गीत को शब्द और स्वर दिए, तो सन 1905 के 'बंग–भंग' (बंगाल विभाजन) विरोधी आंदोलन ने इसे एक अचूक अस्त्र में परिवर्तित कर दिया। लॉर्ड कर्जन द्वारा बंगाल को विभाजित करने की कुत्सित साम्राज्यवादी नीति के विरोध में जब पूरा बंगाल और भारत सुलग उठा, तब 'वन्दे मातरम्' इस असंतोष की सबसे प्रखर आवाज बनकर गूंजा।

7 अगस्त 1905 को कलकत्ता के टाउन हॉल में आयोजित विशाल विरोध सभा में हजारों–लाखों की संख्या में उमड़े जनसैलाब ने एक स्वर में 'वन्दे मातरम्' का नारा लगाया। यह वह ऐतिहासिक क्षण था जब यह गीत केवल बैठकों में गाया जाने वाला स्रोत नहीं रहा, बल्कि सड़कों पर औपनिवेशिक सत्ता की चूलें हिलाने वाला एक इंकलाबी नारा बन गया। बारीसाल में आयोजित प्रांतीय सम्मेलन (1906) के दौरान जब पुलिस ने शांतिपूर्ण प्रदर्शनकारियों पर बर्बर लाठीचार्ज किया, तब मूक दर्शक बनने के बजाय हर लाठी के प्रहार के साथ राष्ट्रभक्तों के कंठ से 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष निकलता था। क्रांतिकारी चित्तरंजन दास और

सुरेन्द्रनाथ बनर्जी जैसे नेताओं के नेतृत्व में युवाओं ने इस नारे को ब्रिटिश लाठियों से अधिक शक्तिशाली सिद्ध कर दिया।

इस गीत का प्रभाव इस सीमा तक फैल चुका था कि ब्रिटिश सरकार ने सार्वजनिक स्थानों पर 'वन्दे मातरम्' के उच्चारण पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया। इस प्रतिबंध ने आग में घी का कार्य किया। विद्यालयों के छात्रों से लेकर सामान्य दुकानदारों तक, हर कोई इस प्रतिबंध को तोड़कर गर्व से 'वन्दे मातरम्' चिल्लाता था। इस कालखंड में प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं ने भी इस मंत्र को आत्मसात किया। अरविंद घोष ने 'वन्दे मातरम्' नाम से एक अंग्रेजी समाचार पत्र का संपादन प्रारंभ किया, जिसने देश के बौद्धिक वर्ग में पूर्ण स्वराज्य की अलख जगाई। अरविंद घोष ने लिखा था कि ''वन्दे मातरम् कोई साधारण गीत नहीं है, यह एक दिव्य प्रेरणा है जो सीधे ईश्वर द्वारा बंकिमचंद्र को दी गई थी ताकि एक मृतप्राय राष्ट्र में प्राण फूंके जा सकें।'' इस प्रकार, 1905 का कालखंड भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास में वह मील का पत्थर बना जहाँ 'वन्दे मातरम्' ने भूगोल और भाषा की सीमाओं को लांघकर पूरे देश को यह अहसास कराया कि वे एक ही माँ की संतानें हैं और उनका साझा लक्ष्य केवल और केवल 'स्वाधीनता' है।

स्वतंत्रता आंदोलन का महामंत्र

जैसे–जैसे बीसवीं शताब्दी का प्रथम दशक आगे बढ़ा, 'वन्दे मातरम्' केवल राजनीतिक मंचों और शांतिपूर्ण जुलूसों का गीत नहीं रहा, बल्कि यह सशस्त्र क्रांति का पर्याय बन गया। भारत माता की मुक्ति के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले क्रांतिकारियों के लिए यह गीत एक ऐसा आध्यात्मिक संबल था, जिसने मृत्यु के भय को ही समाप्त कर दिया। वर्ष 1908 में मात्र 18 वर्ष की अल्पायु में जब खुदीराम बोस को मुजफ्फरपुर बम कांड के बाद फाँसी के फंदे की ओर ले जाया जा रहा था, तब उनके हाथ में भगवद्गीता थी और कंठ में 'वन्दे मातरम्' का निश्चल उद्घोष था। बंगाली जनमानस और समकालीन साक्ष्यों के अनुसार, फाँसी के चबूतरे पर चढ़ते समय उनके मुख पर कोई शिकन नहीं थी, बल्कि वे इस महामंत्र को गुनगुना रहे थे। इसी प्रकार वर्ष 1909 में लंदन की धरती पर कर्नल कर्जन वायली को ढेर करने वाले महान क्रांतिकारी मदनलाल ढींगरा ने जब वर्ष 1909 में फाँसी के फंदे को चूमा, तो उनके अंतिम शब्द थे–''वन्दे मातरम्! मुझे गर्व है कि मैं अपनी मातृभूमि के लिए प्राण दे रहा हूँ।'' चंद्रशेखर आजाद की पिस्तौल की हर गूँज में और भगत सिंह, सुखदेव व राजगुरु के वैचारिक संघर्षों की पृष्ठभूमि में भी 'वन्दे मातरम्' की वह अंतर्निहित चेतना विद्यमान थी, जो 'आनंदमठ' के संतान दल ने रोपी थी। डॉ. संदीप कुमार शर्मा ने अपनी पुस्तक में ठीक ही प्रतिपादित किया है कि औपनिवेशिक अदालतों में जब भी इन क्रांतिकारियों पर मुकदमे चलते थे, तो वे कार्यवाही की शुरुआत और अंत 'वन्दे मातरम्' के नारों से करके अंग्रेजी न्याय व्यवस्था की संप्रभुता को चुनौती देते थे।

ब्रिटिश हुकूमत इस बात से भली–भांति परिचित हो चुकी थी कि इस गीत का एक–एक शब्द युवाओं के भीतर देशभक्ति का बारूद भर रहा है। यही कारण था कि जिस किसी के पास 'आनंदमठ' उपन्यास या 'वन्दे मातरम्' की प्रतियां मिलती थीं, उन्हें राजद्रोह के आरोप में कठोर कारावास की सजा दे दी जाती थी। परंतु दमन जितना तीव्र हुआ, इस मंत्र की गूँज उतनी ही गहरी होती गई।

भारतीय भाषाई एकात्मता, संस्कृति और राष्ट्रीय एकता का सेतु

'वन्दे मातरम्' की एक अत्यंत विलक्षण विशेषता यह रही है कि इसने भारत की भाषाई विविधता को कभी अपने मार्ग की बाधा नहीं बनने दिया, बल्कि यह विभिन्न भाषा–भाषियों के मध्य सांस्कृतिक और भावनात्मक एकात्मता का सबसे सुदृढ़ सेतु बनकर उभरा। यद्यपि महर्षि बंकिमचंद्र ने इसकी रचना संस्कृत और बांग्ला के अनूठे मिश्रण में की थी, परंतु इसकी अनुगूँज सुदूर दक्षिण से लेकर पश्चिम और उत्तर भारत तक समान रूप से सुनाई दी।

तमिल साहित्य के मूर्धन्य कवि और स्वतंत्रता सेनानी महाकवि सुब्रमण्यम भारती 'वन्दे मातरम्' से इस सीमा तक प्रभावित थे कि उन्होंने इस गीत का तमिल भाषा में अत्यंत ओजस्वी काव्यानुवाद किया। उन्होंने तमिलनाडु के कोने–कोने में जनसभाओं के माध्यम से इस गीत को पहुँचाया। भारती जी का मानना था कि यह मंत्र उत्तर और दक्षिण भारत की भौगोलिक दूरी को काटकर उन्हें एक अखंड चेतना में विलीन करने वाला आध्यात्मिक रसायन है।

वहीं, महाराष्ट्र में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने जब 'केसरी' और सार्वजनिक गणेशोत्सव के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का शंखनाद किया, तब 'वन्दे मातरम्' वहाँ के युवाओं का मुख्य उद्घोष बना। गुजराती साहित्य में भी इस गीत के राष्ट्रवाद ने कवियों को स्वदेशी आंदोलनों के लिए प्रेरित किया। डॉ. संदीप कुमार शर्मा के शब्दों में, ''वन्दे मातरम् ने यह सिद्ध कर दिया कि भारत की आत्मा एक है, भले ही उसकी अभिव्यक्तियां भिन्न–भिन्न भाषाओं में क्यों न हों।''

'वन्दे मातरम्' और युवा पीढ़ी

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात 26 जनवरी 1950 को संविधान सभा ने 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रीय गीत का गौरव प्रदान किया। आज की युवा पीढ़ी के लिए 'वन्दे मातरम्' केवल एक ऐतिहासिक संस्मरण या स्वाधीनता संग्राम की गाथा नहीं है, बल्कि यह राष्ट्र–निर्माण का एक जीवंत संकल्प–पत्र है।

आज जब सीमाओं पर खड़ा सैनिक राष्ट्र की रक्षा करता है, अंतरिक्ष में भारतीय वैज्ञानिक नए प्रतिमान गढ़ते हैं या खेल के मैदान पर तिरंगा लहराता है, तब 'वन्दे मातरम्' की गूँज प्रत्येक भारतीय के भीतर आत्मगौरव और स्वाभिमान का संचार करती है। यह गीत वर्तमान पीढ़ी को यह स्मरण कराता है कि अधिकार और स्वतंत्रता के साथ–साथ मातृभूमि के प्रति हमारे कर्तव्य भी सर्वोपरि हैं। भूमंडलीकरण के इस दौर में जहाँ पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव बढ़ रहा है, वहाँ 'वन्दे मातरम्' हमें जड़ों से जुड़े रहने का संदेश देता है। यह नई पीढ़ी को सिखाता है कि पर्यावरण का संरक्षण (सुजलाम् सुफलाम्), प्रकृति के प्रति कृतज्ञता और मातृभूमि का सम्मान ही वास्तविक प्रगति की नींव हैं।

राष्ट्रीय गीत का नूतन गौरवः एक युगांतरकारी शासकीय निर्णय

आधिकारिक और राजकीय आयोजनों में राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' के केवल प्रथम दो छंदों के स्थान पर महर्षि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित सभी छह छंदों (संपूर्ण गीत) के सामूहिक गान को अनिवार्य कर दिया है।

संपूर्ण छह छंदों के इस आधिकारिक संस्करण के मर्यादित गायन की कुल अवधि लगभग 3 मिनट 10 सेकंड निर्धारित की गई है, जो राष्ट्र की संपूर्ण सांस्कृतिक और आध्यात्मिक चेतना को समेटे हुए है। सरकार का यह निर्णय केवल गायन की अवधि या छंदों की संख्या तक सीमित नहीं है, बल्कि यह इस महामंत्र को उसका वास्तविक संवैधानिक और विधिक गौरव लौटाने का अनुष्ठान है। इसी नीतिगत क्रम में केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा एक ऐतिहासिक प्रस्ताव पारित कर 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रगान 'जन गण मन' के समकक्ष लाते हुए 'राष्ट्रीय गौरव अपमान निवारण (संशोधन) अधिनियम 2026' के अंतर्गत समान विधिक और कानूनी संरक्षण प्रदान किया गया है। अब राष्ट्रीय गीत के प्रति किसी भी प्रकार का अनादर या अवमानना कानूनन दंडनीय अपराध की श्रेणी में आएगा। सरकार का यह युगांतरकारी कदम इस तथ्य को पुनर्स्थापित करता है कि स्वाधीनता के अमृत काल में राष्ट्र अपनी ऐतिहासिक धरोहरों और अमर बलिदानियों के प्रति पूर्णतः सजग व कृतज्ञ है तथा 'वन्दे मातरम्' की संपूर्ण आत्मा को बिना किसी संकोच के अंगीकार करने के लिए तत्पर है।

निष्कर्षतः 'वन्दे मातरम्' युगों–युगों तक आने वाली पीढ़ियों को 'राष्ट्र प्रथम' की भावना से अनुप्राणित करता रहेगा। भारत माता के चरणों में सस्नेह वंदन करते हुए प्रत्येक भारतीय का कंठ सदैव यही उद्घोष करता रहेगा–

वन्दे मातरम् ! वन्दे मातरम् !

संदर्भः

1. घोष, अरविंद. (1907). 'द डॉक्ट्रिन ऑफ पैसिव रेजिस्टेंस'. वन्दे मातरम् समाचार पत्र, खंड 1(2), पृष्ठ 4–7.
2. गुप्त, मैथिलीशरण. (1912). भारत–भारती. चिरगाँव (झाँसी): साहित्य सदन.
3. चतुर्वेदी, माखनलाल. (1943). हिम किरीटिनी. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन.
4. चट्टोपाध्याय, बंकिमचंद्र. (1882). आनंदमठ (मूल बांग्ला संस्करण). कलकत्ताः बंगदर्शन प्रेस.
5. चट्टोपाध्याय, बंकिमचंद्र. (2015). आनंदमठ (हिंदी अनुवाद). नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन.
6. भारत का राजपत्र (Gazette of India). (2026). अधिसूचना संख्या 452 विधिक–2026: राष्ट्रीय गौरव अपमान निवारण अधिनियम, 1971 में संशोधन, नई दिल्लीः विधि एवं न्याय मंत्रालय, भारत सरकार.
7. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस. (1896). कलकत्ता 12वें अधिवेशन की आधिकारिक कार्यवृत्त रिपोर्ट.
8. मजूमदार, रमेश चंद्र. (1963). हिस्ट्री ऑफ द फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया, खंड 2. कलकत्ताः फर्मा के. एल. मुखोपाध्याय.
9. शर्मा, डॉ. संदीप कुमार. (2022). वन्दे मातरम्: भारतीय स्वाधीनता संग्राम का महामंत्र. नई दिल्लीः अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स.
10. सरकार, सुमित. (1973). द स्वदेशी मूवमेंट इन बंगालः 1903–1908. नई दिल्लीः पीपल्स पब्लिशिंग हाउस.

वन्दे मातरम् : गुलामी के विरूद्ध वैचारिक जागृति का उद्घोष

–**शुभम दीक्षित**
सहायक निदेशक (राजभाषा)
भारतीय फिल्म और टेलीविजन संस्थान,
पुणे, महाराष्ट्र

''इतिहास साक्षी रहा है कि किसी भी युगांतरकारी सामाजिक पुनर्रचना अथवा व्यापक वैचारिक संक्रांति का अंकुर, सदैव किसी दारुण ऐतिहासिक त्रासदी अथवा सामूहिक चेतना को उद्वेलित करने वाली महा–विपत्ति के गर्भ से ही पल्लवित होता है।''

प्रथम स्वातन्त्र्य समर की विफलता और उसके पश्चात औपनिवेशिक दमन से उपजी मर्मांतक हताशा के तिमिर गर्भ से ही, अंततः 'वन्दे मातरम्' रूपी उस जाज्वल्यमान वैचारिक बीजांकुर का प्रादुर्भाव हुआ, जिसने पराधीन भारत की मूर्छित चेतना को एक महा–उद्घोष में परिवर्तित कर दिया। बंगाल के साहित्य सम्राट बंकिमचंद्र की लेखनी से प्रस्फुटित यह केवल कोई साधारण काव्य–सृजन नहीं था, अपितु यह वह संजीवनी मंत्र था, जिसने भौगोलिक सीमाओं के जड़ आवरण को 'भारत माता' के साक्षात दैवीय एवं चिन्मय स्वरूप में प्राण–प्रतिष्ठित कर दिया। इसी एक शब्द ने परतंत्रता की मनोवैज्ञानिक श्रृखलाओं को छिन्न–भिन्न करते हुए एक ऐसे सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का शंखनाद किया, जिसकी गगनभेदी हुंकार के समक्ष अंततः ब्रिटिश साम्राज्य के अजेय प्रतीत होने वाले लौह–स्तंभ भी प्रकंपित हो उठे।

दमन की पराकाष्ठा और जागृति का बीजारोपण

1857 की क्रांति की विफलता के तुरंत बाद का भारत एक गहरे आघात और खौफ के साए में जी रहा था। ब्रिटिश सेना ने इस विद्रोह को जिस बर्बरता से कुचला, उसने आम जनमानस को भीतर तक हिलाकर रख दिया। दिल्ली, लखनऊ, झांसी और कानपुर जैसे केंद्र खंडहरों में तब्दील हो चुके थे। हजारों लोगों को सरेआम पेड़ों से लटकाकर फांसी दे दी गई और गांवों के गांव आग की लपटों के हवाले कर दिए गए। दमन का यह चक्र इतना भयानक था कि समाज में एक लंबे समय के लिए एक अजीब सा सन्नाटा पसर गया, जहां लोग हुकूमत के खिलाफ आवाज उठाना तो दूर, उसके बारे में बात करने से भी कतराने लगे। इस विफलता ने भारतीयों की मनोस्थिति को गहरे अवसाद और हीनभावना से भर दिया था। लोगों को लगने लगा था कि आधुनिक हथियारों और सुगठित सैन्य तंत्र से लैस ब्रिटिश साम्राज्य को ताकत के बल पर हराना असंभव है। पारंपरिक नेतृत्व (राजाओं और जमींदारों) के पतन ने जनता को नेतृत्वविहीन कर दिया था।

1857 की क्रांति का भारत के राजतंत्र और शासन व्यवस्था पर सबसे तात्कालिक और युगांतरकारी प्रभाव पड़ा। ब्रिटिश संसद ने 'भारत सरकार अधिनियम 1858' पारित कर ईस्ट इंडिया कंपनी के सौ से अधिक वर्षों के शासन को हमेशा के लिए समाप्त कर दिया। भारत की संप्रभुता सीधे ब्रिटिश क्राउन (महारानी विक्टोरिया) के हाथों में सौंप दी गई। अब गवर्नर–जनरल को 'वायसराय' (क्राउन का सीधा प्रतिनिधि) कहा जाने लगा और भारत के शासन की देखरेख के लिए लंदन में 'सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इंडिया' (भारत सचिव) का एक नया पद और उसकी 15 सदस्यीय परिषद का गठन किया गया। इस प्रकार, भारत की प्रशासनिक व्यवस्था पूरी तरह से

केंद्रीकृत और अधिक औपचारिक औपनिवेशिक ढांचे में तब्दील हो गई।

औपनिवेशिक क्रूरता के इस मर्मांतक इतिहास को यदि साक्षात देखना हो, तो इतिहासकार फेलिस बियातो द्वारा खींची गई लखनऊ के 'सिकंदरा बाग' की वह रक्तरंजित छवि अंतरात्मा को झकझोर देती है। खंडहर हो चुकी इमारत के सम्मुख बिखरे हुए ये अस्थि–पंजर और कपाल (खोपड़ियां) केवल मृत देहों के अवशेष नहीं हैं, अपितु ये उस भीषण प्रतिशोध की मूक गवाही हैं। धूल और मलबे में तब्दील हो चुके यह नर–कंकाल इस बात के साक्षी हैं कि साम्राज्यवादी लोलुपता ने जिस बर्बरता से इस विद्रोह का दमन किया वह अकल्पनीय है। हालांकि, इसी हताशा के बीच भारत के नव–शिक्षित मध्यवर्ग में एक वैचारिक मंथन भी शुरू हुआ। इस वर्ग ने महसूस किया कि केवल तलवारों के दम पर नहीं, बल्कि आधुनिक शिक्षा, तार्किक सोच और संगठित राजनैतिक चेतना के जरिए ही इस विदेशी सत्ता का मुकाबला किया जा सकता है। इसी मनोस्थिति ने आगे चलकर सामाजिक–धार्मिक सुधार आंदोलनों की जमीन तैयार की। इसी तरह की तमाम बर्बर कार्रवाईयों के गर्भ से वह प्रतिरोधात्मक चेतना पल्लवित हुई, जिसने आगे चलकर 'वन्दे मातरम्' के रूप में राष्ट्रीय अस्मिता को पुनर्जीवित किया।

1870 का दशक प्रशासनिक रूप से पूरी तरह ब्रिटिश क्राउन के सीधे नियंत्रण का दौर था। 1857 के विद्रोह के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन खत्म हो चुका था और भारत की बागडोर पूरी तरह महारानी विक्टोरिया के हाथों में आ चुकी थी, जिन्हें 1876 में आधिकारिक रूप से 'भारत की साम्राज्ञी' घोषित कर दिया गया। इस दशक के उत्तरार्ध में वायसराय लॉर्ड लिटन के कार्यकाल में ब्रिटिश सत्ता का सबसे क्रूर और दमनकारी चेहरा सामने आया। वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट (1878) के जरिए भारतीय भाषाओं के समाचार पत्रों की आवाज दबाने की कोशिश की गई, तो वहीं आर्म्स एक्ट (1878) लागू करके भारतीयों को आत्मरक्षा के अधिकार से भी वंचित कर दिया गया।

आर्थिक मोर्चे पर यह काल भारत के सुनियोजित दोहन का चरम बिंदु था। भारत का कच्चा माल (जैसे कपास और नील) कौड़ियों के दाम ब्रिटेन भेजा जा रहा था और वहां की मिलों में तैयार मंदी का माल भारतीय बाजारों में खपाया जा रहा था, जिसने स्थानीय हस्तशिल्प और बुनकरों को भुखमरी के कगार पर ला खड़ा किया। इसी बीच 1876 से 1878 के दौरान देश ने इतिहास का सबसे भीषण अकाल झेला, जिसमें दक्षिण और पश्चिमी भारत के लगभग 55 लाख से अधिक लोग मारे गए। संवेदनहीनता की हद यह थी कि जब लोग भूख से दम तोड़ रहे थे, तब 1877 में ब्रिटिश सरकार ने महारानी के स्वागत में भव्य 'दिल्ली दरबार' का आयोजन कर पानी की तरह पैसा बहाया, जिसने भारतीयों के असंतोष को आक्रोश में बदल दिया।

वैचारिक पुनर्जागरण और सामाजिक सुधारों की बयार

1870 के दशक की प्रशासनिक परिस्थितियों और ब्रिटिश क्राउन के सीधे नियंत्रण ने बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के विचारों को बेहद प्रभावित किया। क्योंकि बंकिमचंद्र स्वयं उस समय औपनिवेशिक प्रशासनिक व्यवस्था में एक डिप्टी मजिस्ट्रेट के पद पर कार्यरत थे, जिसके कारण उन्होंने इस केंद्रीकृत नियंत्रण और दमन को बहुत निकट से देखा और भोगा था। उस दौर में जब महारानी विक्टोरिया को आधिकारिक रूप से 'भारत की साम्राज्ञी' घोषित किए जाने की चर्चा चहुं ओर थी, तो बेहद ही गहरे स्तर पर ब्रिटिश प्रशासन ने एक कृत्रिम राजभक्ति को भारतीयों पर थोपने के उपक्रम शुरु कर दिए।

इसके प्रत्युत्तर में बंकिमचंद्र के भीतर एक तीव्र वैचारिक विद्रोह उपजा। एक सरकारी अधिकारी होने के नाते बंकिमचंद्र सीधे तौर पर समकालीन ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ नहीं लिख सकते थे। इसीलिए, क्राउन के प्रशासनिक शिकंजे से बचने के लिए उन्होंने एक चतुर रणनीतिक मार्ग चुना। उन्होंने 'आनंदमठ' उपन्यास की पृष्ठभूमि को 1870 के दशक से पीछे ले जाकर 1770 के दशक के 'संन्यासी विद्रोह' और तत्कालीन नवाबों के शासन के दौर से जोड़ दिया। यह क्राउन की सेंसरशिप से बचने की एक सुरक्षात्मक युक्ति थी, जबकि उनका वास्तविक वैचारिक प्रहार 1870 के दशक के दमनकारी औपनिवेशिक तंत्र पर ही था। उन्होंने किसी विदेशी महारानी को अपना शासक मानने के विमर्श को खारिज करते हुए, भारत की भूमि को ही साक्षात जगत जननी और 'मां' (भारत माता) के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। 'वन्दे मातरम्' में राष्ट्र को दुर्गा, लक्ष्मी और वाणी (सरस्वती) के रूप में देखना, दरअसल ब्रिटिश क्राउन की संप्रभुता के समानांतर अपनी आध्यात्मिक व सांस्कृतिक संप्रभुता को खड़ा करना था।

औपनिवेशिक दमन के समानांतर यह दौर भारत के भीतर एक गहरी सामाजिक और धार्मिक जागृति का साक्षी भी बना। पढ़े–लिखे भारतीय समाज को यह अहसास होने लगा था कि राजनीतिक आजादी के लिए सामाजिक रूढ़ियों से मुक्ति अनिवार्य है। इसी दशक में स्वामी दयानंद सरस्वती ने 1875 में 'आर्य समाज' की स्थापना कर स्वदेशी और आत्मगौरव का शंखनाद किया, जबकि ज्योतिराव फुले ने 'सत्यशोधक समाज' (1873) के माध्यम से वंचित वर्ग के अधिकारों की लड़ाई शुरू की। वैचारिक धरातल पर हो रहे इस मंथन ने भारतीयों को अपनी संस्कृति और पहचान पर गर्व करना सिखाया।

सन 1878 में लॉर्ड लिटन द्वारा लाए गए वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट का तत्कालीन भारतीय जनमानस पर व्यापक और गहरा प्रभाव पड़ा। इस कानून ने न केवल औपनिवेशिक सरकार के तानाशाही रवैये को उजागर किया बल्कि इसने क्षेत्रीय भाषाओं (जैसे बंगाली, मराठी आदि) में छपने वाले समाचार पत्रों का गला घोंट दिया। औपनिवेशिक सरकार चाहती थी कि जनता की हर शिकायत और आलोचना को प्रशासनिक नियंत्रण में दबा दिया जाए। इसका भारतीय जनमानस पर यह प्रभाव पड़ा कि शिक्षित मध्यवर्ग से लेकर आम पाठकों तक में ब्रिटिश क्राउन की 'न्यायप्रियता' का भ्रम पूरी तरह टूट गया। अखबारों पर लगे इसे कड़े सेंसरशिप ने सरकार के खिलाफ सीधे लिखना एक गंभीर अपराध बन गया, तब भारतीय बौद्धिक वर्ग ने प्रतिरोध के नए, सूक्ष्म और प्रतीकात्मक रास्तों की खोज शुरू की। शब्दों पर लगे इस प्रशासनिक पहरे ने ही बंकिमचंद्र जैसे चिंतकों को प्रेरित किया कि वे सीधे राजनैतिक लेख लिखने के बजाय, साहित्य और रूपकों का सहारा लें।

चूंकि बंकिमचंद्र स्वयं एक सरकारी अधिकारी (डिप्टी मजिस्ट्रेट) थे, इसलिए वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट के दमनकारी प्रभाव और प्रशासनिक सेंसरशिप को वे भली–भांति समझते थे। इस कानून के लागू होने के ठीक बाद के वर्षों में जब वे अपने उपन्यास 'आनंदमठ' और 'वन्दे मातरम्' गीत को अंतिम रूप दे रहे थे, तो उन्होंने जानबूझकर सीधे समकालीन शासन पर प्रहार करने से परहेज किया। यह एक ऐसी सुरक्षात्मक युक्ति थी जिसने कानून की नजरों में उन्होंने खुद को बचाए रखा, लेकिन भारतीय जनता को यह स्पष्ट संदेश दे दिया कि वर्तमान औपनिवेशिक दमन के खिलाफ किस तरह उठ खड़े होना है। 'वन्दे मातरम्' इसी दमन की कोख से उपजा एक ऐसा ही अचूक प्रतीकात्मक हथियार था, जो किसी सीधे राजनैतिक दल या कानून की परिधि में नहीं आता था, लेकिन दिलो–दिमाग पर सीधा प्रहार करता था।

राजनैतिक चेतना का प्रादुर्भाव और बुनियादी ढांचे का प्रभाव

1870 के दशक में सुरेंद्रनाथ बनर्जी और आनंदमोहन बोस द्वारा स्थापित 'इंडियन एसोसिएशन' जैसी संस्थाओं ने भारत के नव–शिक्षित मध्यवर्ग को एक सुगठित राजनैतिक मंच प्रदान किया, जो आगे चलकर कांग्रेस की स्थापना का आधार बना। इन शुरुआती राजनैतिक संगठनों के उदय ने क्षेत्रीय सीमाओं से परे एक व्यापक राष्ट्रीय चेतना को जन्म दिया, जिसने 'वन्दे मातरम्' जैसे राष्ट्रवादी गीतों के प्रसार के लिए एक उर्वर जमीन तैयार की। जब राजनीतिक कार्यकर्ताओं और बुद्धिजीवियों को अपनी बात रखने के लिए ये मंच मिलने लगे, तब बंकिमचंद्र के इस गीत को केवल एक साहित्यिक रचना के रूप में नहीं, बल्कि औपनिवेशिक दमन के खिलाफ एक साझा राजनैतिक हथियार के रूप में अपनाया गया। इन राजनैतिक मंचों ने आगे चलकर कांग्रेस की स्थापना के साथ इस वैचारिक शंखनाद को देश के कोने–कोने में पहुंचाने का काम किया।

अंग्रेजों ने अपने व्यापारिक लाभ और सैन्य नियंत्रण को मजबूत करने के लिए जिस रेलवे और टेलीग्राफ नेटवर्क का तेजी से विस्तार किया था, उसने अनजाने में 'वन्दे मातरम्' के अखिल भारतीय प्रसार में एक अभूतपूर्व उत्प्रेरक की भूमिका निभाई। रेलवे के इस सघन जाल ने भारत के विभिन्न प्रांतों के बीच सदियों से चले आ रहे भौगोलिक अलगाव को हमेशा के लिए समाप्त कर दिया। अलग–अलग क्षेत्रों के नेताओं, विचारकों और आम नागरिकों का अब एक–दूसरे से सीधा संपर्क स्थापित हो रहा था, जिससे प्रांतीय सीमाएं टूट रही थीं। इस भौगोलिक गतिशीलता के कारण बंगाल की धरती से उपजा यह गीत बहुत तेजी से महाराष्ट्र, मद्रास और पंजाब तक पहुंच गया, और रेलगाड़ियों के माध्यम से यात्रा करते राष्ट्रवादियों के कंठों से गूंजते हुए पूरे देश की एक साझा राष्ट्रीय आवाज बन गया।

बुनियादी ढांचे के विकास और राजनैतिक चेतना के इस अद्भुत समन्वय ने बिखरे हुए समाज को एक 'साझा भारतीय राष्ट्रीयता' के सूत्र में पिरो दिया। जब 1905 के बंगाल विभाजन (बंग–भंग) के दौरान यह चेतना एक जन–आंदोलन के रूप में सड़कों पर उतरी, तब तक रेलवे और राजनैतिक संगठनों के माध्यम से 'वन्दे मातरम्' पूरे देश के जनमानस के दिलों में गहरे तक पैठ बना चुका था। लॉर्ड कर्जन के विभाजनकारी प्रशासनिक हथकंडों के खिलाफ यह गीत स्वदेशी आंदोलन का सबसे बड़ा वैचारिक ईंधन बना। इस प्रकार, अंग्रेजों द्वारा अपने स्वार्थ के लिए बनाया गया बुनियादी ढांचा ही उनके खिलाफ खड़ी हो रही राजनैतिक चेतना की रीढ़ बन गया, जिसने 'वन्दे मातरम्' को एक स्थानीय बंगाली गीत से उठाकर पूरे पराधीन भारत का अमर राष्ट्रीय उद्घोष बना दिया।

वन्दे मातरम् : गीत से आजादी के बीजमंत्र का सफर

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 'वन्दे मातरम्' के शुरुआती अंशों की रचना 1870 के दशक के मध्य में ही कर ली थी, किंतु एक स्वतंत्र गीत के रूप में यह लंबे समय तक उनकी डायरी में ही सीमित रहा। वर्ष 1881 में जब उन्होंने अपने ऐतिहासिक एवं राजनैतिक रूपक आधारित उपन्यास 'आनंदमठ' को बंगाली पत्रिका 'बंगदर्शन' में धारावाहिक के रूप में लिखना शुरू किया, तब उन्होंने इस गीत को कथानक के भीतर समाहित किया। वर्ष 1882 में जब आनंदमठ पूर्ण उपन्यास के रूप में पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ, तब यह गीत उपन्यास के भवानंद नामक पात्र के मुख से संन्यासियों के गुप्त संगठन के दीक्षा–मंत्र के रूप में जनता के सामने आया। उपन्यास

की इस पृष्ठभूमि ने गीत को एक साधारण स्तुति से उठाकर सीधे विदेशी और अत्याचारी सत्ता के विरुद्ध एक पवित्र वैचारिक कर्तव्य के रूप में प्रस्तुत किया।

'आनंदमठ' के प्रकाशन के तुरंत बाद यह गीत बंगाली बौद्धिक वर्ग और तत्कालीन साहित्यकारों के बीच तेजी से प्रसारित हुआ। शुरुआती दौर में लोगों की प्रतिक्रिया कौतूहल और एक गहरे वैचारिक जुड़ाव की थी। परतंत्रता और आर्थिक शोषण से त्रस्त बंगाली जनमानस ने इस गीत को मातृभूमि के प्रति एक अभूतपूर्व गौरव की अनुभूति के रूप में ग्रहण किया। हालांकि, बंकिमचंद्र स्वयं एक सरकारी पद (डिप्टी मजिस्ट्रेट) पर थे, इसलिए ब्रिटिश खुफिया तंत्र ने भी इसे बेहद सतर्कता और संदेह की दृष्टि से देखा। आम जनता के भीतर इस गीत ने शुरुआत में एक मूक देशप्रेम और सांस्कृतिक अस्मिता की भावना को जगाया, क्योंकि लोग उपन्यास के संन्यासियों के आत्मत्याग और मातृभूमि के प्रति उनके समर्पण से गहराई से प्रभावित हो रहे थे।

साहित्यिक पन्नों से निकलकर इस गीत के जन–जन तक पहुंचने में वर्ष 1896 का कांग्रेस का कलकत्ता अधिवेशन एक युगांतरकारी मोड़ सिद्ध हुआ। इस अधिवेशन में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने स्वयं 'वन्दे मातरम्' को एक भव्य और ओजस्वी धुन में पिरोकर मंच से गाया। टैगोर के इस संगीतमय गायन ने इस रचना को केवल बंगाल के पाठकों तक सीमित न रखकर देश के राजनैतिक पटल पर स्थापित कर दिया। इस घटना के बाद, कांग्रेस के अधिवेशनों और राजनैतिक सभाओं की शुरुआत या समापन इस गीत से होना एक परंपरा जैसी बन गई, जिसने इसे अखिल भारतीय स्तर पर एक विशिष्ट पहचान और सर्वमान्य स्वीकार्यता प्रदान की।

वर्ष 1905 में तत्कालीन वायसराय लॉर्ड कर्जन द्वारा किया गया बंगाल विभाजन औपनिवेशिक शासन की 'फूट डालो और राज करो' की नीति का सबसे क्रूर प्रशासनिक कदम था। अंग्रेजों का वास्तविक उद्देश्य उभरते हुए भारतीय राष्ट्रवाद के मुख्य केंद्र–बंगाल–को हिंदू और मुस्लिम बाहुल्य के आधार पर विभाजित कर कमजोर करना था। 16 अक्टूबर 1905 को जब यह विभाजन आधिकारिक रूप से प्रभावी हुआ, तो पूरे बंगाल में शोक की लहर दौड़ गई। लोगों ने उपवास रखे, कलकत्ता की सड़कों पर नंगे पैर मार्च किया और एक–दूसरे की कलाई पर एकता के प्रतीक रूप में राखियां बांधीं। इसी मर्मांतक जन–आक्रोश के बीच, बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा दो दशक पहले रचित 'वन्दे मातरम्' गीत अचानक धूल धूसरित पन्नों से निकलकर बंगाली अस्मिता और राष्ट्रीय प्रतिरोध का सबसे मुखर हथियार बनकर उभरा।

विभाजन के विरोध में उपजे स्वदेशी और बहिष्कार आंदोलन को 'वन्दे मातरम्' ने अभूतपूर्व वैचारिक वेग प्रदान किया। कलकत्ता के टाउन हॉल से लेकर बारीसाल की सड़कों तक, जब भी कोई जुलूस निकलता, तो लाखों कंठों से एक ही सामूहिक ध्वनि गूंजती थी–वन्दे मातरम्। इस नारे ने जाति, वर्ग और संप्रदाय के भेदों को मिटाकर जनमानस को 'भारत माता' की संतान के रूप में एकजुट कर दिया। यह उद्घोष ब्रिटिश हुकूमत के लिए इस कदर खौफ का सबब बन गया कि सरकार ने सार्वजनिक स्थानों पर इसके गायन और नारेबाजी पर कड़ा प्रतिबंध लगा दिया। बारीसाल सम्मेलन (1906) में शांतिपूर्ण प्रदर्शनकारियों पर पुलिस ने केवल इसलिए बर्बर लाठीचार्ज किया क्योंकि वे 'वन्दे मातरम्' गा रहे थे। इस दमन ने इस मंत्र को और अधिक पवित्र तथा प्रतिरोधात्मक बना दिया, जिसके बाद हर देशभक्त इसे अपनी छाती पर मेडल की तरह धारण करने लगा।

बंगाल की धरती से फूटा यह वैचारिक शंखनाद बहुत तेजी से प्रांतीय सीमाओं को लांघकर देश के कोने–कोने में फैल गया। बाल गंगाधर तिलक ने महाराष्ट्र में शिवाजी उत्सव और गणेशोत्सव के माध्यम से इस मंत्र को जन–जन तक पहुंचाया, तो पंजाब में लाला लाजपत राय और अजीत सिंह के नेतृत्व में यह उपनिवेशवाद विरोधी चेतना का मुख्य स्वर बना। दक्षिण में चिदंबरम पिल्लई और सुब्रमण्यम भारती जैसे राष्ट्रवादियों ने मद्रास प्रेसीडेंसी में 'वन्दे मातरम्' की गूंज से स्वदेशी की अलख जगाई। इस अखिल भारतीय विस्तार में उस समय विकसित हो चुके रेलवे नेटवर्क और राजनैतिक मंचों ने उत्प्रेरक का कार्य किया, जिसके कारण रेलगाड़ियों में यात्रा करते सेनानियों के माध्यम से यह गीत सुदूर गांवों और नगरों तक पहुंच गया। देखते ही देखते वन्देमातरम बंगाली भाषी प्रतिरोध से रूपांतरित होकर संपूर्ण परतंत्र भारत की साझी चेतना का महामंत्र बन गया।

आंदोलनों के क्रमिक विकास के साथ 'वन्दे मातरम्' केवल अहिंसक प्रदर्शनों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह सशस्त्र स्वतंत्रता संग्राम का सबसे बड़ा संबल बन गया। अरविंद घोष ने 'वन्दे मातरम्' नाम से एक अंग्रेजी समाचार पत्र का संपादन शुरू किया, जिसने युवा वर्ग में आध्यात्मिक राष्ट्रवाद का संचार किया। एक ओर जहां खुदीराम बोस, प्रफुल्ल चाकी से लेकर भगत सिंह और चंद्रशेखर आजाद जैसे अनगिनत क्रांतिकारियों के लिए यह शब्द फांसी के फंदे पर मुस्कुराते हुए झूल जाने की प्रेरणा बन गया तो वहीं दूसरी ओर यह आमजन के पटल पर अराजकता और परतंत्रता के विरुद्ध एक बीजमंत्र के रूप में अंकित हो गया। वर्ष 1896 के कांग्रेस अधिवेशन में रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा इसे संगीतमय धुन में गाए जाने के बाद से ही इसे राजनैतिक रूप से सर्वोच्च स्वीकार्यता मिल चुकी थी, जो 1905 के बाद एक राष्ट्रव्यापी संस्कृति में बदल गई और देखते ही देखते दमन की कोख से उपजा यह उद्घोष गुलामी के घने अंधकार को चीरते हुए आधुनिक भारतीय इतिहास का सबसे तेजस्वी, पवित्र और सर्वव्यापी राष्ट्रीय मंत्र बन गया।

सशस्त्र क्रांति का महामंत्र और अमर शहीदों की अंतिम सांस

1910 से 1940 के दशकों के बीच उभरे क्रांतिकारी राष्ट्रवाद के दौर में 'वन्दे मातरम्' ने आजादी के महायज्ञ में अपनी अहम भूमिका निभाई। अनुशीलन समिति और युगांतर जैसे संगठनों से लेकर भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद और अशफ़ाक उल्ला खाँ जैसे क्रांतिकारियों के लिए यह शब्द एक राजनैतिक नारे से ऊपर उठकर आध्यात्मिक दीक्षा बन चुका था। वर्ष 1915 में बाघा जतिन हों या सूर्य सेन (मास्टर दा) की चटगांव शस्त्रागार छापेमारी (1930) के जांबाज सेनानी–ब्रिटिश पुलिस के बर्बर टॉर्चर और फांसी के फंदे के सामने इन क्रांतिकारियों के होंठों से निकलने वाला अंतिम शब्द 'वन्दे मातरम्' ही होता था। इस शब्द ने मृत्यु के भय को मिटाकर देश के युवाओं में आत्मोत्सर्ग की एक ऐसी लहर पैदा की, जिससे औपनिवेशिक सत्ता की नींव हिल गई।

इस दौर में 'वन्दे मातरम्' ने केवल भारत की भौगोलिक सीमाओं के भीतर ही नहीं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी देश की आजादी का परचम लहराया। भीकाजी कामा (मैडम कामा) ने जब 1907 में स्टटगार्ट, जर्मनी में पहली बार भारत का राष्ट्रीय ध्वज फहराया था, तो उसके केंद्र में देवनागरी लिपि में 'वन्दे मातरम्' ही अंकित था, जो 1910 के बाद के दशकों में विदेशों में सक्रिय भारतीय क्रांतिकारियों (जैसे गदर पार्टी) का मुख्य संबल बना रहा। बाद के वर्षों में, नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने जब 'आजाद हिंद फौज' का गठन किया,

तब उन्होंने इसके संगीत की ओजस्वी धुन को राष्ट्रीय स्तर पर मार्चिंग सॉन्ग के रूप में अपनाया। इसने सिद्ध किया कि यह गीत सात समंदर पार भी गुलाम भारत की संप्रभुता और मुक्ति की सबसे बुलंद आवाज था।

1940 के दशक के आते–आते, 'भारत छोड़ो आंदोलन' (1942) के दौरान 'वन्दे मातरम्' आजादी के महायज्ञ की पूर्णाहुति का मंत्र बन गया। मातंगिनी हाजरा जैसी 73 वर्षीय वृद्ध वीरांगना ने हाथों में तिरंगा थामे, पुलिस की गोलियां खाते हुए भी मरते दम तक 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष करना नहीं छोड़ा। बंकिमचंद्र ने जिस 'सुजलाम्–सुफलाम्' भूमि की कल्पना की थी, वह 1910 के बाद के जन–आंदोलनों में करोड़ों भारतीयों के लिए साक्षात कर्तव्य–पथ बन चुकी थी। इस शब्द ने जनता के भीतर उस हीनभावना को समूल नष्ट कर दिया जो अंग्रेजों ने बोई थी, और अंततः 15 अगस्त 1947 को जब देश आजाद हुआ, तो आकाश इसी महामंत्र की गूंज से सराबोर था, जिसने सदियों की गुलामी के घने अंधकार को परास्त कर नए भारत का सूर्योदय किया।

स्वाधीनता के उजास में विभाजन की विभीषिका और राष्ट्र की खंडित मनोस्थिति

15 अगस्त 1947 को जब भारत ने नियति से अपना साक्षात्कार किया, तब देश का कोना–कोना एक तरफ स्वाधीनता के उल्लास से सराबोर था, तो दूसरी तरफ विभाजन की अकथ त्रासदी और सांप्रदायिक दंगों की आग में झुलस रहा था। सदियों से जिस 'वन्दे मातरम्' को एकीकृत अखंड भारत की 'जगत जननी मां' के रूप में गाया गया था, वह भूमि अब मजहबी लकीरों से दो हिस्सों में चीर दी गई थी। पंजाब, बंगाल और दिल्ली की सड़कें मानव रक्त से रंजित थी और करोड़ों विस्थापितों के मन में अपनी ही मिट्टी से बिछड़ने का गहरा अवसाद था। इस दारुण विभीषिका के बीच, राष्ट्रीय चेतना को बांधे रखने और घृणा के उस तिमिर काल में एक नई शुरुआत करने के लिए इस कालजयी गीत की भूमिका और अधिक प्रासंगिक किंतु संवेदनशील हो गई थी।

विभाजन के उस हिंसक वातावरण में 'वन्दे मातरम्' की भूमिका और स्थिति बेहद जटिल हो गई। मुस्लिम लीग और पाकिस्तान के समर्थकों ने इस गीत के तीसरे और चौथे अंतरे में प्रयुक्त दुर्गा और लक्ष्मी जैसी दैवीय अवधारणाओं का हवाला देकर इसे घोर 'हिंदूवादी' और 'इस्लाम–विरोधी' घोषित कर दिया। दंगों के दौरान, जहां एक ओर यह नारा बहुसंख्यक समाज के लिए अपनी सांस्कृतिक अस्मिता और रक्षा का संबल बना, वहीं दूसरी ओर दंगाइयों द्वारा इसका राजनीतिक दुरुपयोग भी देखा गया, जिसने दंगों से भयभीत अल्पसंख्यक जनमानस के भीतर इस शब्द के प्रति एक मनोवैज्ञानिक दूरी या आशंका पैदा कर दी। बंकिमचंद्र ने जिस गीत को औपनिवेशिक गुलामी के विरुद्ध सामूहिक चेतना का मंत्र बनाया था, वह दुर्भाग्यवश विभाजन के क्रूर दौर में सांप्रदायिक ध्रुवीकरण और पहचान की राजनीति की वेदी पर चढ़ा दिया गया।

दंगों की इस भयावह पृष्ठभूमि में महात्मा गांधी ने 'वन्दे मातरम्' की मूल आत्मा को पुनर्स्थापित करने का महती प्रयास किया। जब नोआखली और कलकत्ता के दंगा प्रभावित क्षेत्रों में शांति बहाली के लिए वे प्रार्थना सभाएं कर रहे थे, तब उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि 'वन्दे मातरम्' किसी एक मजहब का नहीं, बल्कि संपूर्ण राष्ट्र के त्याग और बलिदान का प्रतीक है। गांधी जी का मानना था कि इस पावन मंत्र को किसी के प्रति घृणा या जबरन थोपने का माध्यम नहीं बनाया जाना चाहिए। उन्होंने इसके शुरुआती अंशों (सुजलाम्–सुफलाम्)

की उदात्त प्रकृति–वंदना पर बल दिया, ताकि विभाजन के घावों से कराह रहे दोनों समुदायों के बीच एक साझा वैचारिक पुल बनाया जा सके और इस अमर उद्घोष की पवित्रता अक्षुण्ण रहे।

विभाजन और दंगों से उपजे इन तीखे अंतर्विरोधों के कारण ही स्वतंत्र भारत के नीति–नियंताओं के सामने इस गीत के भविष्य को लेकर एक गंभीर यक्ष–प्रश्न खड़ा था। एक वर्ग इसे पूर्णतः राष्ट्रगान बनाने का आग्रही था, तो दूसरा वर्ग अल्पसंख्यकों की धार्मिक संवेदनशीलता को देखते हुए इसके प्रति आशंकित था। इस वैचारिक गतिरोध का अत्यंत परिपक्व समाधान निकालते हुए, 26 जनवरी 1950 को संविधान सभा ने एक ऐतिहासिक निर्णय लिया। इसके तहत, प्रथम दो अंतरों की धर्मनिरपेक्ष व प्रकृति–प्रधान पंक्तियों को अंगीकार करते हुए 'वन्दे मातरम्' को आधिकारिक रूप से भारत का 'राष्ट्रीय गीत' घोषित किया गया, तथा इसे 'जन–गण–मन' के समकक्ष का दर्जा दिया गया। इस प्रकार, स्वतंत्र भारत में यह गीत विभाजन की त्रासदी के घावों को भूलकर, आधुनिक गणराज्य की साझी राष्ट्रीय अस्मिता और गौरव का एक अमिट संवैधानिक प्रतीक बन गया।

वन्दे मातरम् : भारत की आत्मा

औपनिवेशिक दासता की बेड़ियों को छिन्न–भिन्न करने के लिए बंकिमचंद्र ने जिस 'भारत माता' की वैचारिक संकल्पना को जन्म दिया था, उसे भौगोलिक और विग्रहात्मक रूप में स्थापित करने का ऐतिहासिक महती कार्य वाराणसी के 'भारत माता मंदिर' से प्रारंभ हुआ था। वर्ष 1936 में महात्मा गांधी द्वारा उद्घाटित काशी का यह अनूठा मंदिर किसी पारंपरिक देवी–देवता की मूर्ति के स्थान पर संगमरमर पर उत्कीर्ण अखंड भारत के भव्य मानचित्र को गर्भगृह में संजोए हुए है, जिसने राष्ट्रभक्ति को ही साक्षात धर्म में परिवर्तित कर दिया। वर्ष 2018 में हमारे यशस्वी प्रधानमंत्री के मार्गदर्शन में वाराणसी के ऐतिहासिक प्रतिमान को एक नया विस्तार देते हुए उज्जैन में महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग के समीप नवनिर्मित 'श्री महाकाल लोक' कॉरिडोर के पास 'भारत माता मंदिर' की प्राण–प्रतिष्ठा की गई है। वाराणसी के मंदिर की ही भांति उज्जैन का यह पावन परिसर भी किसी पारंपरिक विग्रह के बजाय अखंड भारत के भव्य मानचित्र और वेदों को धारण किए हुए भारत माता की दिव्य प्रतिमा को समर्पित है। एक ओर जहाँ वाराणसी राष्ट्र–साधना के उस ऐतिहासिक प्रादुर्भाव को दर्शाता है जिसकी आधारशिला महात्मा गांधी ने रखी थी, वहीं उज्जैन का परिसर आधुनिक भारत में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के उसी प्रवाह को निरंतरता प्रदान करता है। यहाँ प्रतिदिन गूंजने वाला 'वन्दे मातरम्' का ओजस्वी गान आगंतुकों के भीतर उसी साझी राष्ट्रीय चेतना का संचार करता है जो गुलामी के दौर में स्वतंत्रता सेनानियों की शक्ति बनी थी।

उज्जैन के इस भारत माता मंदिर के विकास और इसे 'श्री महाकाल लोक' जैसे भव्य सांस्कृतिक केंद्र से जोड़ने में केंद्र व राज्य सरकार की नीतिगत प्रतिबद्धता रही है। इस धार्मिक व राष्ट्रीय परिसर को एक वृहद् रूप प्रदान करने में सरकार ने सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण की अपनी वैचारिक लाइन के तहत महती भूमिका निभाई। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा 'श्री महाकाल लोक' के भव्य लोकार्पण के साथ ही इस पूरे परिक्षेत्र को राष्ट्रीय गौरव के एक बड़े केंद्र के रूप में पुनर्स्थापित किया गया, जिससे भारत माता के मंदिर की महत्ता और जन–पहुंच में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है।

वर्तमान में देश भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' की रचना के 150 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में एक वर्ष तक चलने वाले (7 नवंबर 2025 से 7 नवंबर 2026 तक) देशव्यापी राष्ट्रीय समारोह के आयोजन का साक्षी बन रहा है। इस ऐतिहासिक पहल को केंद्रीय मंत्रिमंडल की स्वीकृति के बाद संस्कृति मंत्रालय द्वारा क्रियान्वित किया गया, जिसका औपचारिक उद्घाटन नई दिल्ली के इंदिरा गांधी इनडोर स्टेडियम में भव्य स्तर पर किया गया। सरकार का मुख्य उद्देश्य इस अमर कालजयी रचना के 150 वर्षों के गौरव को पुनर्स्थापित करना और इसके मूल संदेश—वीरता, एकता और राष्ट्र—प्रेम से वर्तमान पीढ़ी, विशेषकर युवाओं और विद्यार्थियों को गहराई से जोड़ना है।

इस उत्सव को जन—आंदोलन का रूप देने के लिए देश भर के प्रमुख सार्वजनिक स्थलों, कार्यालयों, और शैक्षणिक संस्थानों में बड़े पैमाने पर 'सामूहिक वन्दे मातरम् गायन' अभियानों की शुरुआत की गई। इसके तहत न केवल स्कूली बच्चों और कॉलेज के विद्यार्थियों, बल्कि जन प्रतिनिधियों, पुलिस बलों, शिक्षकों, दुकानदारों और समाज के प्रत्येक वर्ग की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की गई है। इस अभियान को और प्रभावी बनाने के लिए सरकार ने विभिन्न चरणों (जैसे गणतंत्र दिवस, स्वतंत्रता दिवस के 'हर घर तिरंगा' अभियान और समापन सप्ताह) में विशेष रूप से इसके संपूर्ण संस्करण के सामूहिक गायन का रोडमैप तैयार किया है, जिसे एक समर्पित डिजिटल पोर्टल पर भी अपलोड किया जा रहा है।

150वें वर्षगांठ समारोह के अंतर्गत देश के उन सभी प्रमुख और ऐतिहासिक स्थलों को भी जोड़ा गया है जो भारत की अस्मिता और स्वतंत्रता संग्राम के प्रतीक रहे हैं। कारगिल वॉर मेमोरियल, अंडमान—निकोबार की सेल्युलर जेल, स्टैच्यू ऑफ यूनिटी, सोमनाथ मंदिर और गेटवे ऑफ इंडिया जैसे 150 से अधिक विशिष्ट राष्ट्रीय केंद्रों पर गौरवपूर्ण सामूहिक आयोजनों की रूपरेखा तैयार की गई है। इन गतिविधियों के माध्यम से बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के अमूल्य योगदान को रेखांकित करते हुए, संस्कृति मंत्रालय और सरकार के सभी विभाग देश के कोने—कोने में, विशेषकर उज्जैन के 'श्री महाकाल लोक' जैसे नवनिर्मित सांस्कृतिक केंद्रों के माध्यम से, 'वन्दे मातरम्' की गूंज को जन—जन की वैचारिक चेतना का हिस्सा बनाने की दिशा में पूरे मनोयोग के साथ सक्रिय हैं।

वन्दे मातरम् : वैचारिक जागरण से राष्ट्रीय चेतना तक

–नगेन्द्र कुमार सिंह
वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा),
इण्डियन ओवरसीज बैंक, केन्द्रीय कार्यालय, चेन्नै

"अपी स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते।
जननी जन्म–भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।। "

यह श्लोक महर्षि वाल्मीकि कृत महाकाव्य रामायण का है। जब भगवान श्री राम ने लंका पर विजय प्राप्त कर ली, तब लक्ष्मण ने लंका के वैभव और सोने की नगरी को देखकर वहाँ रहने की इच्छा या उसकी प्रशंसा व्यक्त की थी। तब श्री राम ने लक्ष्मण से कहा कि लक्ष्मण भले ही यह लंका सोने की बनी हुई है, फिर भी मुझे इसमें कोई रूचि नहीं है। चूंकि माता और जन्मभूमि का स्थान स्वर्ग से भी श्रेष्ठ होता है। हर युग एवं कालखंड में जन्मभूमि के लिए लोगों में अकुलाहट एवं अपार स्नेह देखने को मिला है।

निस्संदेह हमारे राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' की नींव हमारे धर्मग्रंथों में छिपी है। यह गीत बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय कृत उपन्यास 'आनंदमठ' में उल्लिखित है। यह गीत हमारे स्वतंत्रता सेनानियों के बीच एक सशक्त आवाज बनकर उभरा, इसने बंग–बंग आंदोलन में प्राण फूँक दिये। शोषण और दमन के बीच गुलामी की बेड़ियों को काटने के लिए कई रणबांकुरों ने अपने प्राणों की आहुति दी है। खुलकर समसामयिक मुद्दों को उठाया, प्रतिरोध एवं बढ़–चढ़कर विरोध किया। हमें आजादी थाली में सजाकर नहीं मिली, इसके लिए हमारे पूर्वजों ने कई वैचारिक एवं सशस्त्र लड़ाइयाँ लड़ी हैं। सशस्त्र और वैचारिक लड़ाई दोनों के अर्थ अलग हो सकते हैं। पर, दोनों का एकल उद्देश्य मातृभूमि की आक्रान्ताओं से मुक्ति ही था। वैचारिक आवाज की परिधि काफी विस्तृत होती है, वह असंख्य हृदय को जोड़ने की ताकत रखती है। पराधीन भारत को मुक्त कराने के लिए बहुतेरे साहित्यकारों, प्रबुद्ध जनों और स्वतंत्रता सेनानियों ने कलम की लेखनी से देशवासियों को उत्साहित और प्रेरित करने का अप्रतिम प्रयास किया। जिसमें 'वन्दे मातरम्' जयघोष का प्रमुख योगदान है।

यहाँ माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी के ''पंच प्रण'' (पाँच संकल्प) के आह्वान का उल्लेख करना समीचीन लगता है। उन्होंने वर्ष 2047 तक भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने (अमृत काल) का मार्गदर्शक ढांचा पेश किया है। पंच प्रण निम्नवत हैं –

1. **विकसित भारत का लक्ष्य** : देश को 2047 तक एक विकसित राष्ट्र बनाना जिसके लिए संकल्प और प्रयास जारी हैं।

2. **गुलामी के हर अंश से मुक्ति** : गुलामी की मानसिकता से मुक्ति यानी औपनिवेशिक (गुलामी की) सोच, कानूनों और प्रतीकों को पीछे छोड़ना। अपनी संस्कृति, भाषाओं, ज्ञान–परंपरा और क्षमताओं पर पूर्ण आत्मविश्वास और गर्व महसूस करना।

3. **विरासत पर गर्व** : यानी भारत के समृद्ध इतिहास, सांस्कृतिक विविधताओं और समृद्ध ज्ञान–परंपरा को संजोना। विकास के साथ–साथ अपनी जड़ों और सांस्कृतिक विरासत से जुड़ाव बनाए रखना।

4. **एकता और एकजुटता** : देश की अखडंता को बनाए रखने के लिए नागरिकों के बीच में एकता और आपसी सदभाव को बढ़ावा देना। 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना को सशक्त करना। भाषा, क्षेत्र, जाति या धर्म के भेदभाव से ऊपर उठकर 140 करोड़ देशवासियों की सामूहिक शक्ति को राष्ट्र निर्माण में लगाना।

5. **नागरिकों का कर्तव्य** : देश के विकास में हर नागरिक द्वारा अपने दायित्वों का ईमानदारी से पालन करना। व्यक्तिगत स्वच्छता, पर्यावरण संरक्षण, सार्वजनिक संपत्ति की सुरक्षा और अपने कार्य क्षेत्र में निष्ठा से योगदान देना।

पंच प्रण की परिकल्पना का मूल आधार है कि स्वतंत्रता के 100वें वर्ष (2047) तक भारत को अपनी प्राचीन विरासत पर गर्व करते हुए एक आधुनिक, एकजुट और ''विकसित भारत'' के रूप में स्थापित किया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि विरासत पर गर्व करने के साथ–साथ, उसका संरक्षण भी करें।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम केवल राजनीतिक संघर्ष नहीं था, बल्कि वह सांस्कृतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक पुनर्जागरण का भी आंदोलन था। इस आंदोलन को दिशा देने वाले अनेक विचार, प्रतीक और साहित्यिक कृतियाँ थीं, जिनमें "आनंदमठ" का स्थान सर्वोपरि है। इस रचना से उद्धृत गीत 'वंदे मातरम' केवल एक गीत नहीं था, बल्कि पराधीन भारत की आत्मा की पुकार, राष्ट्रीय चेतना का मंत्र और विदेशी शासन एवं आक्रांताओं के विरुद्ध वैचारिक प्रतिरोध का उद्‌घोष था।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब अंग्रेजी शासन भारतीय समाज को राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से नियंत्रित कर रहा था, तब भारतीयों में आत्मगौरव का ह्रास होने लगा था। ऐसे समय में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने भारतीय जनमानस में मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, समर्पण और आत्मोत्सर्ग की भावना का संचार किया। यह गीत शीघ्र ही राष्ट्रीय आंदोलन का प्रेरणास्रोत बन गया। स्वतंत्रता सेनानियों के लिए यह शब्द केवल अभिवादन नहीं, बल्कि राष्ट्रभक्ति की शपथ और संघर्ष का उद्‌घोष था। माना जाता है कि इस गीत की रचना 1870 के दशक में हुई और बाद में इसे उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'आनंदमठ' (1882) में स्थान मिला। यह उपन्यास अठारहवीं शताब्दी के संन्यासी विद्रोह की पृष्ठभूमि पर आधारित था, जिसमें विदेशी और दमनकारी शासन के विरुद्ध संघर्ष का चित्रण मिलता है।

'गीता' में जो सीख है – युद्ध करो, वही सीख 'आनंदमठ' में भी है। 'भगवद्‌गीता' और 'आनंदमठ' दोनों में पलायनवाद नहीं है। इसीलिए स्वाधीनता संग्राम के दौरान 'गीता' को जो महत्व मिला है, उससे कम 'आनंदमठ' को नहीं दिया गया। इसीलिए 'आनंदमठ' के संतान–व्रतधारियों का गीत 'वन्दे मातरम्' हमारा राष्ट्रीय गीत है। उपन्यास में मातृभूमि को देवी के रूप में चित्रित किया गया है। बंकिमचंद्र ने भारत माता को केवल भौगोलिक इकाई नहीं माना, बल्कि उसे जीवनदायिनी, पोषिका और शक्ति की अधिष्ठात्री देवी के रूप में प्रतिष्ठित किया। इस प्रकार "वन्दे मातरम्" भारतीय राष्ट्रवाद को सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आधार प्रदान करता है।

गीत की आरंभिक पंक्तियाँ हैं–

वन्दे मातरम्।
सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्,
शस्यश्यामलाम् मातरम्।

यहाँ भारत की प्राकृतिक समृद्धि, हरियाली और मातृत्व का अद्भुत चित्रण है। यह भाव भारतीयों को अपनी भूमि के प्रति गर्व और प्रेम से भर देता है। वन्दे मातरम् का मूल दर्शन मातृभूमि को माता मानने की भारतीय परंपरा में निहित है। भारतीय संस्कृति में पृथ्वी को "माता" कहा गया है –

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।

ऋग्वैदिक और पुराणिक परंपरा में भूमि को जीवन का आधार, पालनकर्ता और पूजनीय माना गया है। बंकिमचंद्र ने इसी सांस्कृतिक परंपरा को आधुनिक राष्ट्रवाद से जोड़ा। इस गीत में राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक अधिकार प्राप्ति का साधन नहीं है, बल्कि आध्यात्मिक अनुभूति है। भारतीय जनता को यह संदेश दिया गया कि राष्ट्र की सेवा केवल कर्तव्य नहीं, बल्कि पूजा है। यही कारण है कि "वन्दे मातरम्" सुनते ही भारतीयों में त्याग, बलिदान और आत्मसम्मान की भावना जागृत होती थी। यह गीत गुलामी की मानसिकता को चुनौती देता था और यह विश्वास जगाता था कि भारत केवल शासित प्रदेश नहीं, बल्कि पूजनीय मातृभूमि है।

'आनंदमठ' की शांति भारतीय साहित्य की सबसे सशक्त स्त्री पात्रों में गिनी जाती है। वह साहस, त्याग, राष्ट्रभक्ति, बुद्धिमत्ता और नारी–स्वाभिमान का अद्भुत संगम है। बंकिमचंद्र ने उसके माध्यम से यह संदेश दिया कि राष्ट्रनिर्माण और स्वतंत्रता–संग्राम में महिलाओं की भूमिका पुरुषों से कम नहीं होती। इसलिए शांति केवल उपन्यास की पात्र नहीं, बल्कि भारतीय नारी–शक्ति और राष्ट्रीय चेतना की प्रतीक बन जाती है।

इस उपन्यास में ब्रह्मचारी सत्यानंद भारत माँ भविष्य में कैसी होंगी उसकी परिकल्पना करते हुए बोलते हैं – दसों भुजाएं दसों दिशाओं में फैली हैं। उनमें विभिन्न आयुधों के रूप में विभिन्न शक्तियां शोभित हैं। पैरों के नीचे शत्रु विमर्दित हो रहा है। चरणाश्रित वीर केसरी भी शत्रु का पीड़न कर रहा है। माँ दिगभुजा है। इस उपन्यास में दर्शाया गया है कि अनुशासन के साथ माँ के संतान उसकी रक्षा के लिए सर्वस्व त्याग और बलिदान करने के लिए सदैव सजग हैं।

राष्ट्रीय चेतना का जागरण

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक भारतीय समाज अंग्रेजी सत्ता के प्रभाव में अपनी सांस्कृतिक पहचान खोता जा रहा था। अंग्रेज शिक्षा व्यवस्था भारतीयों में हीनता की भावना उत्पन्न कर रही थी। ऐसे समय में "वन्दे मातरम्" ने भारतीयों को उनकी सांस्कृतिक शक्ति का बोध कराया।

1896 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा "वन्दे मातरम्" का गायन किया गया। इसके बाद यह राष्ट्रव्यापी पहचान प्राप्त करने लगा। कांग्रेस के अधिवेशनों, सार्वजनिक सभाओं और स्वतंत्रता आंदोलनों में इसे बड़े उत्साह के साथ गाया जाने लगा।

इस गीत ने विविध भाषाओं, क्षेत्रों और समुदायों के लोगों को एक साझा राष्ट्रीय भावना से जोड़ा। भारतीयों को यह विश्वास हुआ कि उनका संघर्ष व्यक्तिगत नहीं, बल्कि संपूर्ण राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए है। "वन्दे मातरम्" ने राजनीतिक आंदोलन को भावनात्मक शक्ति प्रदान की। यह गीत लोगों को यह बताता था कि स्वतंत्रता केवल शासन परिवर्तन नहीं, बल्कि राष्ट्रीय आत्मा की मुक्ति है।

1905 में लॉर्ड कर्जन द्वारा बंगाल विभाजन की घोषणा भारतीय इतिहास की महत्वपूर्ण घटना थी। अंग्रेजों का उद्देश्य प्रशासनिक सुविधा के नाम पर राष्ट्रीय एकता को कमजोर करना था। बंग–भंग विरोधी आंदोलन में "वन्दे मातरम्" एक युद्धघोष बनकर उभरा। छात्र, शिक्षक, व्यापारी और सामान्य नागरिक सड़क पर निकलते समय "वन्दे मातरम्" का उद्घोष करते थे। ब्रिटिश सरकार इस नारे से इतनी भयभीत हुई कि अनेक स्थानों पर इसके सार्वजनिक उच्चारण पर प्रतिबंध लगाने का प्रयास किया गया। विद्यालयों और सरकारी संस्थानों में इसे बोलने वाले छात्रों एवं कर्मचारियों को दंडित किया गया। लेकिन जितना दमन बढ़ता गया, उतना ही "वन्दे मातरम्" जन आंदोलन का प्रतीक बनता गया। यह गीत जनता को यह संदेश देता था कि विदेशी शासन के सामने आत्मसमर्पण करना राष्ट्रमाता के प्रति अन्याय होगा।

भारतीय क्रांतिकारी संगठनों ने "वन्दे मातरम्" को अपने संघर्ष का प्रेरणामंत्र बनाया। अनेक क्रांतिकारी फाँसी के फंदे तक पहुँचते समय "वन्दे मातरम्" का उद्घोष करते थे। खुदीराम बोस, बाघा जतिन, अरविंद घोष और अनेक क्रांतिकारी नेताओं के लेखन और भाषणों में इसका उल्लेख मिलता है। क्रांतिकारी पत्रिकाओं, घोषणापत्रों और गुप्त बैठकों में यह उद्घोष राष्ट्रीय समर्पण का प्रतीक था। ब्रिटिश प्रशासन की रिपोर्टों में भी उल्लेख मिलता है कि "वन्दे मातरम्" राष्ट्रवादी गतिविधियों के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ चुका था। अंग्रेज अधिकारियों को भय था कि यह गीत जनता में विद्रोही चेतना उत्पन्न कर रहा है। वास्तव में यह गीत क्रांति का हथियार नहीं था, लेकिन वह चेतना का वह स्रोत था जिससे क्रांतिकारी ऊर्जा प्राप्त करते थे।

महात्मा गांधी के नेतृत्व में स्वतंत्रता आंदोलन ने व्यापक जनाधार प्राप्त किया। यद्यपि गांधीजी की राजनीति अहिंसा पर आधारित थी, फिर भी उन्होंने "वन्दे मातरम्" की राष्ट्रीय प्रेरणा को स्वीकार किया। गांधीजी ने कहा कि यह गीत करोड़ों भारतीयों की भावनाओं का प्रतिनिधित्व करता है। उनके अनुसार "वन्दे मातरम्" ने राष्ट्रीय आंदोलन को ऐसी आध्यात्मिक शक्ति दी, जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। असहयोग आंदोलन, नमक सत्याग्रह और भारत छोड़ो आंदोलन जैसे अभियानों के दौरान भी यह गीत जनसभाओं और जुलूसों में गूंजता रहा। यह महत्वपूर्ण है कि "वन्दे मातरम्" का प्रभाव केवल क्रांतिकारियों तक सीमित नहीं था; अहिंसक आंदोलन के कार्यकर्ता भी इसे राष्ट्रीय एकता और आत्मबल का स्रोत मानते थे।

वैचारिक जागृति का स्वर

गुलामी केवल राजनीतिक स्थिति नहीं होती; वह मानसिक और वैचारिक पराधीनता भी उत्पन्न करती है। अंग्रेज शासन ने भारतीयों को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि वे स्वयं शासन करने योग्य नहीं हैं। "वन्दे मातरम्" ने इस मानसिक गुलामी को चुनौती दी। इस गीत के माध्यम से तीन प्रमुख विचार उभरकर सामने आते हैं–

1. आत्मगौरव का जागरण

गीत भारतीयों को उनकी भूमि की समृद्धि, संस्कृति और गौरव का स्मरण कराता है। इससे राष्ट्रीय आत्मविश्वास का विकास हुआ।

2. मातृभूमि के प्रति समर्पण

यह गीत राष्ट्र को माता के रूप में स्थापित करता है। परिणामस्वरूप देशसेवा एक पवित्र कर्तव्य बन जाती है।

3. **स्वतंत्रता के लिए त्याग**

माता की रक्षा के लिए सर्वस्व समर्पण का भाव भारतीय युवाओं को संघर्ष के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार "वन्दे मातरम्" केवल भावनात्मक गीत नहीं, बल्कि राष्ट्रीय पुनर्जागरण का वैचारिक दस्तावेज था।

साहित्य और संस्कृति पर प्रभाव

"वन्दे मातरम्" ने भारतीय साहित्य, संगीत और कला को गहराई से प्रभावित किया। विभिन्न भाषाओं के कवियों और लेखकों ने मातृभूमि स्तुति की परंपरा को आगे बढ़ाया। रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अरविंद घोष, मैथिलीशरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर तथा अन्य अनेक साहित्यकारों ने राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में इसकी प्रेरणा स्वीकार की। यह गीत भारतीय राष्ट्रवाद के सांस्कृतिक आयाम का प्रतिनिधित्व करता है। आधुनिक भारत में भी यह अनेक राष्ट्रीय आयोजनों, शैक्षणिक संस्थानों और सांस्कृतिक कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण अंग बना हुआ है।

समकालीन संदर्भ में

आज हम स्वतंत्र हैं, परंतु "वन्दे मातरम्" की प्रासंगिकता समाप्त नहीं हुई है। स्वतंत्रता केवल राजनीतिक स्वराज्य नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक आत्मविश्वास और राष्ट्रीय एकता की निरंतर साधना है। वर्तमान समय में यह गीत हमें स्मरण कराता है कि जिन स्वतंत्रता सेनानियों ने राष्ट्र के लिए बलिदान दिया, उनकी प्रेरणा राष्ट्रप्रेम और कर्तव्यबोध से संचालित थी। "वन्दे मातरम्" आज भी राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक स्वाभिमान का संदेश देता है।

"वन्दे मातरम्" भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की सबसे प्रभावशाली प्रेरणाओं में से एक रहा है और राष्ट्रीय गीत के रूप में मान्यता प्राप्त है। आज यह हमें स्मरण कराता है कि राष्ट्र केवल राजनीतिक व्यवस्था नहीं, बल्कि साझा इतिहास, संस्कृति और मूल्यों का भी नाम है।

बंकिमचंद्र के समय यह गीत विदेशी शासन के विरुद्ध आत्मसम्मान जगाने का माध्यम था। आज प्रत्यक्ष राजनीतिक गुलामी नहीं है, किंतु अनेक चिंतक मानते हैं कि मानसिक पराधीनता, सांस्कृतिक हीनभावना और सामाजिक विखंडन जैसी चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं। इस दृष्टि से "वन्दे मातरम्" आत्मगौरव, आत्मविश्वास और राष्ट्रीय उत्तरदायित्व का संदेश देता है।

गीत का मूल भाव किसी के प्रति घृणा नहीं, बल्कि मातृभूमि के प्रति प्रेम है। इसकी पहली पंक्तियाँ भारत की प्रकृति, समृद्धि और सौंदर्य की स्तुति करती हैं। इसलिए इसकी प्रासंगिकता तब तक बनी रहेगी जब तक नागरिक अपने देश के प्रति कर्तव्यबोध, संवेदनशीलता और समर्पण को महत्व देते रहेंगे।

आज की पीढ़ी वैश्वीकरण और तकनीकी युग में जी रही है। ऐसे समय में "वन्दे मातरम्" यह स्मरण कराता है कि आधुनिकता और राष्ट्रीय पहचान एक–दूसरे के विरोधी नहीं हैं। कोई व्यक्ति विश्व नागरिक हो सकता है, फिर भी अपनी सांस्कृतिक जड़ों और मातृभूमि से जुड़ा रह सकता है।

आधुनिक भारत में "वन्दे मातरम्" का वास्तविक अर्थ है—संविधान का सम्मान, राष्ट्रीय एकता की रक्षा, सामाजिक समरसता, पर्यावरण संरक्षण, सार्वजनिक जीवन में ईमानदारी और राष्ट्रहित को व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर रखना।

यदि इन मूल्यों को अपनाया जाता है, तो 'वन्दे मातरम्' एक जीवंत राष्ट्रीय आदर्श बन जाता है। 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता केवल इसलिए नहीं है कि उसने स्वतंत्रता संग्राम को प्रेरित किया, बल्कि इसलिए भी है कि वह राष्ट्रप्रेम, आत्मगौरव, सांस्कृतिक चेतना और कर्तव्यबोध का संदेश देता है। उसके शब्दों का ऐतिहासिक संदर्भ बदल सकता है, लेकिन उसका मूल भाव – "मातृभूमि के प्रति सम्मान और समर्पण"–आज भी उतना ही सार्थक है जितना एक शताब्दी पूर्व था।

"वन्दे मातरम्" भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का अमर उद्घोष है। यह गीत केवल शब्दों का संयोजन नहीं, बल्कि राष्ट्र की सामूहिक चेतना की अभिव्यक्ति है। इसने गुलामी की बेड़ियों में जकड़े भारत को आत्मगौरव का बोध कराया, राष्ट्रीय एकता को मजबूत किया और स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए संघर्षरत करोड़ों भारतीयों को प्रेरणा दी।

बंकिमचंद्र जी की यह अमर रचना भारतीय राष्ट्रवाद के इतिहास में मील का पत्थर है। इसने भारतीयों को यह सिखाया कि मातृभूमि केवल भूमि का टुकड़ा नहीं, बल्कि हमारी पहचान, संस्कृति और अस्तित्व का आधार है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान "वन्दे मातरम्" ने जिस वैचारिक जागृति को जन्म दिया, वह आज भी भारतीय लोकतंत्र और राष्ट्रीय चरित्र की आधारशिला बनी हुई है।

संदर्भः

1. चट्टोपाध्याय, बंकिमचंद्र –आनंदमठ
2. मजूमदार, आर.सी.– History of the Freedom Movement in India
3. बिपिन चंद्र –भारत का स्वतंत्रता संघर्ष
4. ताराचंद –भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास
5. अरविंद घोष –Bande Mataram and Nationalism
6. गांधी, महात्मा – Collected Works of Mahatma Gandhi
7. भारतीय संविधान सभा की कार्यवाही – 24 जनवरी 1950
8. सुमित सरकार – Modern India 1885-1947
9. रवीन्द्रनाथ ठाकुर –राष्ट्रीय आंदोलन संबंधी भाषण एवं लेख
10. रामधारी सिंह दिनकर –संस्कृति के चार अध्याय

वन्दे मातरम् : स्वाधीनता संग्राम का मूल मंत्र

–उदय प्रताप सिंह
सहायक निदेशक (राजभाषा)
महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)
बेंगलुरु, कर्नाटक

किसी भी पराधीन राष्ट्र के इतिहास में कुछ शब्द, कुछ गीत या कुछ नारे ऐसे होते हैं जो केवल संवाद का माध्यम नहीं रह जाते, बल्कि वे एक सोए हुए समाज की सामूहिक चेतना को झकझोर कर जगाने वाले महामंत्र बन जाते हैं। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित गीत 'वन्दे मातरम्' इसी प्रकार का एक वैचारिक उद्‌घोष था। यह केवल एक काव्यात्मक रचना नहीं थी, बल्कि ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध भारतीय मानस की वैचारिक जागृति, अस्मिता की खोज और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का शंखनाद था। गुलाम भारत की सोई हुई आत्मा को जगाने और देशवासियों में राष्ट्रभक्ति का संचार करने में इस गीत ने अद्वितीय भूमिका निभाई।

अंग्रेजों के आने से पहले भारत राजनीतिक रूप से विभिन्न रियासतों में बंटा हुआ था। 'वन्दे मातरम्' ने पहली बार देश को केवल एक भौगोलिक जमीन का टुकड़ा मानने के बजाय उसे 'मां' (भारत माता) के रूप में प्रतिष्ठित किया। इस गीत ने राष्ट्र का मानवीकरण किया, जिससे लोगों के भीतर देश के प्रति भक्ति और पुत्र–भाव जागृत हुआ। जब जनता ने अपनी मातृभूमि को एक संकट में फंसी 'मां' के रूप में देखा, तो उसे गुलामी से मुक्त कराना हर नागरिक का परम धर्म बन गया। इसने बिखरे हुए समाज को सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के सूत्र में पिरो दिया।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब भारत में 'उदारवादी' और 'सांस्कृतिक' राष्ट्रवाद की लहर चल रही थी, ब्रिटिश हुकूमत भारतीयों में यह हीनभावना भर रही थी कि उनका कोई गौरवशाली इतिहास या राष्ट्र की अवधारणा नहीं है। ऐसे समय में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने भारत भूमि को 'साक्षात् चेतन स्वरूप'– भारत माता – के रूप में प्रतिष्ठित किया। इस कालजयी मंत्र 'वन्दे मातरम्' ने ब्रिटिश औपनिवेशिक दासता की बेड़ियों में जकड़ी हुई भारतीय आत्मा को झकझोरने और गुलामी के विरुद्ध एक अभूतपूर्व वैचारिक क्रांति का सूत्रपात करने का कार्य किया। यह गीत पराधीनता के अंधकार को चीरकर निकलने वाली वह दिव्य ध्वनि थी, जिसने भारतीयों को अपनी मातृभूमि के प्रति अगाध प्रेम, कर्तव्य और आत्मगौरव का बोध कराया।

वन्दे मातरम् की रचना

'वन्दे मातरम्' पहली बार साहित्यिक पत्रिका 'बंगदर्शन' में 7 नवंबर 1875 में प्रकाशित हुआ था। यह गीत संस्कृतनिष्ठ बांग्ला भाषा में लिखा गया है। साल 1882 में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का प्रसिद्ध उपन्यास 'आनंदमठ' प्रकाशित हुआ। उन्होंने इस गीत को अपने इस अमर उपन्यास में शामिल किया, जहाँ इसे संन्यासी विद्रोह जो 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मुख्यतः ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की आर्थिक नीतियों, कर वसूली और धार्मिक–सामाजिक प्रतिबंधों के विरोध से संबंधित था, के संदर्भ में देशभक्त संन्यासियों द्वारा गाया गया था।

इस गीत को सबसे पहले संगीतबद्ध (धुन में पिरोने) करने और सार्वजनिक रूप से गाने का श्रेय गुरुदेव

रवींद्रनाथ टैगोर को जाता है। उन्होंने 1896 के कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में पहली बार 'वन्दे मातरम्' को लयबद्ध तरीके से गाया था। इस गीत को कई संगीतकारों ने अलग–अलग समय पर धुनों में पिरोया है। आधिकारिक तौर पर रेडियो और सरकारी समारोहों में जो धुन बजाई जाती है, उसे प्रसिद्ध संगीतकार पंडित रविशंकर ने तैयार किया था।

वन्दे मातरम् : वैचारिक जागृति का उद्घोष

वन्दे मातरम्' ने तात्कालिक समाज में गुलामी के विरुद्ध वैचारिक जागृति पैदा करने में एक उत्प्रेरक की भूमिका निभाई। औपनिवेशिक शिक्षा और दुष्प्रचार ने भारतीयों को यह मानने पर मजबूर कर दिया था कि वे शासित होने के लिए ही बने हैं। 'वन्दे मातरम्' ने देशवासियों को याद दिलाया कि उनकी मातृभूमि कोटि–कोटि भुजाओं वाली महाशक्ति है, जिससे उन्हें अपनी अंतर्निहित शक्ति का अहसास हुआ। इस गीत ने राष्ट्र को केवल एक भौगोलिक टुकड़ा मानने के बजाय 'माता' के रूप में पूजने की अवधारणा को सुदृढ़ किया।

इस वैचारिक बदलाव ने देशभक्ति को एक पवित्र धार्मिक और आध्यात्मिक कर्तव्य बना दिया। 'वन्दे मातरम्' के उद्घोष ने देश के बुद्धिजीवियों, कवियों और विचारकों को एक नया दृष्टिकोण दिया। इसके प्रभाव से हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का एक नया प्रवाह शुरू हुआ। 'वन्दे मातरम्' ने न सिर्फ भारतीयों की सोई पड़ी आत्मा को झकझोरा बल्कि उनमें एकता का भाव जागृत किया और अपनी आने वाली पीढ़ियों के सुरक्षित तथा सुनहरे भविष्य के बारे में सोचने को मजबूर किया।

वन्दे मातरम् एक अस्त्र के रूप में

स्वतन्त्रता आंदोलन के दौरान वन्दे मातरम् राजनीतिक गुलामी के विरुद्ध भारतीय जनता का सबसे सशक्त वैचारिक और व्यावहारिक अस्त्र बन चुका था, जिसने क्रांतिकारियों के मन से लाठियों और गोलियों के भय को पूरी तरह समाप्त कर दिया। इसने न केवल बंगाल बल्कि पूरे राष्ट्र को उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक एक वैचारिक सूत्र में पिरो दिया, जिससे भारतीय भाषाई और सांस्कृतिक एकता को अभूतपूर्व बल मिला। आजादी के दीवाने भगत सिंह, खुदीराम बोस, रामप्रसाद बिस्मिल और अशफाक उल्ला खाँ जैसे अनगिनत क्रांतिकारियों ने फांसी के फंदे को चूमते समय 'वन्दे मातरम्' का ही नारा बुलंद किया था। असहनीय यातनाओं के बीच, लाठीचार्ज या जेल की कोठरियों में ब्रिटिश पुलिस की अमानवीय यातनाएं सहते हुए भी स्वतंत्रता सेनानी अपनी जुबां से 'वन्दे मातरम्' बोलना नहीं छोड़ते थे।

साल 1907 में, भीकाजी कामा जिन्हें लोग मैडम कामा कहकर बुलाते थे उन्होने जर्मनी के स्टटगार्ट में आयोजित अंतरराष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेस में भारत का जो पहला तिरंगा झंडा फहराया था, उसके मध्य में भी वन्दे मातरम्' अंकित था। इस घटना ने अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत की आजादी की आकांक्षा को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित कर दिया था।

वन्दे मातरम् का प्रभाव

संक्षेप में, बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित 'वन्दे मातरम्' ने भारत भूमि को केवल एक भौगोलिक टुकड़ा न मानकर उसे 'शस्य श्यामलां मातरम्' (फसलों से हरी–भरी माँ) के रूप में पूजने की दृष्टि दी। 'वन्दे मातरम्'

केवल एक गीत नहीं, बल्कि पराधीनता की बेड़ियों को पिघलाने वाली एक 'वैचारिक अग्नि' थी। इसने भारतीयों को उनकी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ा, उनमें स्व–गौरव का बोध कराया और औपनिवेशिक सत्ता के सामने सीना तानकर खड़े होने का साहस दिया जिसने अंततः ब्रिटिश साम्राज्य की नींव हिला दी। इस गीत ने भारतीयों के मन से भय को निकालकर स्वाभिमान और स्वतंत्रता की तीव्र आकांक्षा को प्रतिस्थापित किया। आज भी यह गीत हर भारतीय के दिल में राष्ट्र के प्रति अगाध प्रेम और गौरव की भावना पैदा करता है।

राष्ट्रीय गीत का दर्जा

भारत के स्वतंत्र होने के बाद, संविधान सभा के समक्ष राष्ट्रगान और राष्ट्रीय गीत को चुनने की जिम्मेदारी थी। 24 जनवरी 1950 को संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने एक ऐतिहासिक घोषणा की, जिसके तहत 'जन गण मन' को भारत का 'राष्ट्रगान' और 'वन्दे मातरम्' को 'राष्ट्रीय गीत' का दर्जा दिया गया। डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने कहा था– ''वन्दे मातरम् गीत, जिसने भारतीय स्वतंत्रता के संघर्ष में एक ऐतिहासिक भूमिका निभाई है, को 'जन गण मन' के समान ही सम्मानित किया जाएगा और इसके साथ समान दर्जा दिया जाएगा।'' संविधान सभा ने यह स्पष्ट किया कि ऐतिहासिक रूप से स्वतंत्रता संग्राम में 'वन्दे मातरम्' की अद्वितीय भूमिका को देखते हुए इसे 'जन गण मन' के बिलकुल बराबर का सम्मान और दर्जा प्राप्त रहेगा।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और एकता का सूत्र

आधुनिक भारत में जब हम 'आत्मनिर्भर भारत' और वैश्विक नेतृत्व की बात करते हैं, तब यह गीत हमें हमारे सांस्कृतिक मूल्यों, राष्ट्रीय अस्मिता और स्वाभिमान की याद दिलाता है। 'वन्दे मातरम्' आज की युवा पीढ़ी को अपनी जड़ों से जोड़ने और राष्ट्र निर्माण में अपना सर्वस्व योगदान देने के लिए प्रेरित करने वाला एक शाश्वत मार्गदर्शक है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जिस 'वन्दे मातरम्' ने गुलामी की बेड़ियों को तोड़ने के लिए

वैचारिक जागृति का शंखनाद किया था, वह आज 21वीं सदी के स्वतंत्र भारत में भी उतना ही प्रासंगिक और जीवंत है। आज इसके मायने केवल एक औपनिवेशिक सत्ता के विरोध तक सीमित नहीं हैं, बल्कि आधुनिक भारत की चुनौतियों और आकांक्षाओं के संदर्भ में इसके गहरे निहितार्थ हैं।

भारत विविधताओं (भाषा, धर्म, क्षेत्र) का देश है। वर्तमान समय में जहाँ क्षेत्रीय और भाषाई संकीर्णता कभी–कभी राष्ट्रीय अखंडता के सामने चुनौती बनती है, वहाँ 'वन्दे मातरम्' एक एकीकृत सूत्र का काम करता है। यह गीत किसी भौगोलिक सीमा या राजनीतिक दल का नहीं, बल्कि भारत की साझी विरासत का प्रतीक है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक, यह उद्घोष हर भारतीय में ''राष्ट्र प्रथम'' की भावना का संचार करता है।

महिला सशक्तिकरण का प्रतीक और नागरिक कर्तव्यों का बोध

वन्दे मातरम्' में राष्ट्र की परिकल्पना एक असहाय या पराश्रित के रूप में नहीं, बल्कि 'महाशक्ति' (दुर्गा और लक्ष्मी) के रूप में की गई है "त्वं हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी, कमला कमलदलविहारिणी...यह गीत मातृशक्ति को सर्वोच्च स्थान देता है। वर्तमान समाज में महिला सुरक्षा, उनके अधिकारों और नेतृत्व क्षमता को बढ़ावा देने के लिए यह एक महान सांस्कृतिक और वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है। अक्सर आधुनिक समाज में अधिकारों की बात तो होती है, लेकिन कर्तव्यों को भुला दिया जाता है। 'वन्दे मातरम्' व्यक्ति को अपने संकीर्ण स्वार्थों से ऊपर उठकर समष्टि के लिए सोचने के लिए प्रेरित करता है। यह याद दिलाता है कि राष्ट्र की प्रगति नागरिकों के सामूहिक पुरुषार्थ और त्याग से ही संभव है।

संक्षेप में कहें तो, 'वन्दे मातरम्' कल 'स्वाधीनता' का मंत्र था, तो आज समृद्ध और सशक्त भारत के निर्माण का 'संकल्प सूत्र' है। यह आधुनिक भारत के नागरिकों को अपनी जड़ों से जुड़े रहते हुए वैश्विक क्षितिज पर उड़ान भरने की वैचारिक शक्ति देता है। जब तक यह राष्ट्र है, इसकी नदियाँ हैं और इसकी संस्कृति है, तब तक 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता अक्षुण्ण रहेगी।

संदर्भ–

1. आनंदमठः बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय

2. द बायोग्राफी ऑफ ए सॉन्गः सव्यसाची भट्टाचार्य

3. बंकिम रचनावलीः बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय

4. भारत का स्वतंत्रता संघर्षः बिपिन चंद्र

5. दीपकमः वन्दे भारतमातरम्ः एन.सी.ई.आर.टी

वन्दे मातरम् : राष्ट्र जागरण से स्वतंत्र भारत की अमर गाथा

–रमेश चन्द्र
गुरुग्राम, हरियाणा

'वन्दे मातरम्' से तात्पर्य है 'मातृभूमि! मैं तुझे प्रणाम करता हूँ'। 'वन्दे मातरम्' गीत उन्नीसवीं सदी के प्रसिद्ध बांग्ला साहित्यकार बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय का राष्ट्रभावना से ओत–प्रोत एक ऐतिहासिक गीत है। इसकी रचना उन्होंने ऐसे काल में की थी, जब देशी लेखक, पत्र–पत्रिकाएँ आदि सभी अंग्रेजों का डटकर विरोध कर रहे थे। तब देशभक्ति की उसी भावना से बंकिम चन्द्र ने 'वन्दे मातरम्' गीत लिखा था, जो केवल गीत नहीं था, साहित्यिक सौंदर्य, अर्थ की प्रतीकात्मक गहनता, प्रेरणात्मक सांस्कृतिक दाय, समकालीन राजनीतिक परिस्थितियों के प्रति सौम्य प्रतिरोध, परतंत्रता के विरुद्ध वैचारिक आंदोलन का उद्घोष, देश को एक सूत्र में पिरोने का सेतु और राष्ट्रीय अस्मिता तथा स्वाभिमान का प्रतीक भी था।

बंकिमचंद्र चटर्जी का जन्म बंगाली ब्राह्मण परिवार में 24 परगना शहर के कांथलपारा गाँव में यादव चन्द्र चट्टोपाध्याय तथा दुर्गादेबी के घर 26 जून, 1838 को हुआ था। उनका साहित्यिक नाम कमलकांत था। ब्रिटिश सरकार में उन्होंने विभिन्न पदों पर काम किया था और सरकार ने उन्हें 1891 में 'राय बहादुर' तथा 1894 में 'कंपेनियन ऑफ द मोस्ट एमिनेंट आर्डर ऑफ द इंडियन एम्पायर' की उपाधि दी।

बंकिम चन्द्र ने अपने साहित्यिक सफर की शुरुआत ईश्वर चन्द्र गुप्ता के साप्ताहिक पत्र 'संबाद प्रभाकर' से की। उन्होंने एक काव्य–संग्रह, 18 उपन्यासों, 4 धार्मिक विवेचनाओं, 4 निबंध–संग्रहों तथा 3 अन्य पुस्तकों की रचना की। 1872 में उन्होंने 'बंगदर्शन' नामक बांग्ला पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। 'वन्दे मातरम्' गीत की रचना उन्होंने पश्चिमी बंगाल में जोरा घाट के निकट चिंसुरा में स्थित आध्या परिवार के श्वेत रंग के घर में संस्कृतमय बांग्ला भाषा में की थी, जिसमें मूल रूप से छह पद थे। यह गीत सर्वप्रथम 'बंगदर्शन' नामक बांग्ला पत्रिका के 7 नवंबर, 1875 के अंक में प्रकाशित हुआ था।

इस बात की पुष्टि श्री अरबिंद घोष द्वारा संपादित अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र ''वन्दे मातरम्'' में दिनांक 16 अप्रैल, 1907 को प्रकाशित एक पैरा से होती है। 'बंगदर्शन' के मार्च–अप्रैल, 1881 अंक में यह गीत छपा था। यह गीत तब लिखा गया था जब रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'जन–गण–मन' भी नहीं लिखा था। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'जन–गण–मन' राष्ट्रगान वन्दे मातरम् के 36 साल बाद 1911 में लिखा था। 'जन–गण–मन' भारत के भविष्य के निर्माता ईश्वर से एक प्रार्थना थी, जबकि वन्दे मातरम् स्वतंत्रता आंदोलन में देशभक्ति की भावना अनुप्रेरित करने वाला गीत था, जो देश के हर जन द्वारा उच्चारित किए जाते रहने तथा तरह–तरह से अपनाए जाते रहने के कारण सनातन धर्म का सनातन गीत बन गया।

1882 में बंकिमचंद्र ने 'आनंदमठ' नामक बंगाली उपन्यास की रचना की, जो बंगाल में 1763 से 1800 ई. तक अंग्रेजों के विरुद्ध फैले सन्यासियों के आंदोलन पर आधारित था। उन सन्यासियों को उन दिनों सनातन

कहा जाता था। 'आनंदमठ' उपन्यास में यह गीत सनातनों द्वारा गाया हुआ दिखाया गया है। गीत के प्रकाशन के बाद जदुनाथ सरकार ने इसे सबसे पहले संगीतबद्ध किया। 8 अप्रैल, 1894 को कलकत्ता में बंकिमचंद्र की मृत्यु हो गई। परंतु उस समय के राजनीतिक माहौल में यह गीत लोगों को इस कदर भा गया था कि उनकी मृत्यु के बाद भी यह गीत जन–जन के हृदय में उतर गया और स्वतंत्रता आंदोलन का प्रेरक गीत बन गया।

1896 में स्वयं श्री रवींद्रनाथ टैगोर ने बीडन स्कवेयर, कलकत्ता में रहिमतुल्लाह मुहम्मद सयानी की अध्यक्षता में आयोजित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 12वें अधिवेशन में इस गीत को अपने संगीत के साथ गाया। फिर 1901 में कलकत्ता में ही दिनशा एडलजी वाचा की अध्यक्षता में आयोजित इंडियन नैशनल कांग्रेस के 17वें अधिवेशन में इसे गाया गया। इसके बाद इस गीत को गाकर अथवा संगीतबद्ध करके गौरव प्राप्त करने की परम्परा बन गई।

7 अगस्त, 1905 को गोपाल कृष्ण गोखले की अध्यक्षता में आयोजित इंडियन नैशनल कांग्रेस के 21वें अधिवेशन में सरला देवी चौधुरानी ने इसे फिर गाया। 7 अगस्त, 1905 को ही हजारों विद्यार्थियों ने कलकत्ता में टाउन हाल की तरफ जाते समय इसी गीत को तब गाया था, जब विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और स्वदशी वस्तुओं के प्रयोग की शपथ ली गई थी। इस तरह यह गीत अंग्रेजी राज के विरुद्ध भारत का सर्वाधिक लोकप्रिय गीत बन गया था।

इसकी बढ़ती लोकप्रियता को देखकर इंडियन नैशनल कांग्रेस ने पूरे गीत को स्वतंत्रता आंदोलन के अखिल भारतीय उद्‌घोष के रूप में अपना लिया। अक्टूबर, 1905 में उत्तरी कलकत्ता में 'वन्दे मातरम् संप्रदाय' की स्थापना हो गई। उसी वर्ष राष्ट्रभावना से प्रेरित होकर बंगाल के रंगपुर के स्कूल में 200 विद्यार्थियों ने इस गीत को गाया, जिस पर अंग्रेजों ने उन पर पाँच–पाँच रुपये का भारी जुर्माना लगा दिया। फिर 1905 में हीरा लाल सेन ने भारत की पहली राजनीतिक फिल्म बनाई, जिसके अंत में 'वन्दे मातरम्' का गायन भी दिखाया गया।

एक वर्ष बाद अप्रैल, 1906 में बंगाल प्रोविंसियल कांफ्रेंस की बैठक के दौरान लगभग 10,000 हिंदुओं और मुस्लमानों ने बारीसाल (आधुनिक बांग्ला देश में) में 'वन्दे मातरम्' के झंडों वाला जुलूस निकाला। तब अंग्रेजों ने 'वन्दे मातरम्' गाने पर रोक लगा दी और कांफ्रेस पर ही प्रतिबंध लगा दिया। फिर मातृभूमि की भावना से प्रेरित होकर बिपिन चन्द्र पाल ने अगस्त, 1906 में अरबिंद घोष के सह–संपादकत्व में 'वन्दे मातरम्' नामक अंग्रेजी समाचार–पत्र आरंभ कर दिया।

शीघ्र ही बंगाल से निकलकर इस गीत का जयघोष पूरे भारत में फैलने लग गया था। नवंबर, 1906 में महाराष्ट्र के धुलिया में आयोजित एक बड़ी बैठक में भी लोगों ने वन्दे मातरम् के नारे लगाए और 1906 में ही लाला लाजपतराय ने भी वन्दे मातरम् नामक उर्दू का समाचार पत्र निकालना आरंभ कर दिया। इस गीत की लोकप्रियता से प्रेरित होकर 1906 में नरेश चन्द्र सेन ने 'वन्दे मातरम्' सहित आनंदमठ का ''एबे ऑफ ब्लिस'' नाम से अंग्रेजी अनुवाद किया।

रावलपिंडी में स्वदेशी आंदोलन के नेताओं की गिरफ्तारी को लेकर मई, 1907 में नवयुवकों ने लाहौर में भी 'वन्दे मातरम्' के नारे लगाए। 1907 में इसकी पहली ऑडियो रिकार्डिंग भी की गई। 1907 तक इस गीत की ख्याति विदेशों तक भी पहुँच गई थी। 1907 में मैडम भीकाजी कामा ने जर्मनी के स्टटगार्ट में रहते हुए भारत का प्रथम राष्ट्रीय ध्वज बनाया, जिसके मध्य में उन्होंने 'वन्दे मातरम्' शब्द लिखे।

27 फरवरी, 1908 को टुटिकोरिन (तमिलनाडु) की कोरल मिल्स के हजारों कामगारों ने भी स्वदेशी स्टीम नैवीगेशन कंपनी के साथ एकजुटता दिखाते हुए हड़ताल के दौरान वंदे वातरम् गीत गाया। जून, 1908 में लोकमान्य तिलक पर मुकदमे का विरोध करने के लिए हजारों लोगों ने बोम्बे पुलिस कोर्ट के सामने इकट्ठे होकर 'वन्दे मातरम्' गीत गाया और 1908 में लोकमान्य तिलक के बर्मा की मांडले जेल में स्थानांतरण के समय कर्नाटक के बेलगाम में भी हजारों लोगों ने विरोध प्रकट किया और पुलिस के कहर के दौरान भी वे 'वन्दे मातरम्' के नारे लगाते रहे। 17 अगस्त, 1909 को जब मदन लाल ढींगड़ा को इंग्लैंड में फाँसी दी जा रही थी, तब अपने अंतिम शब्दों के रूप में उन्होंने भी वन्दे मातरम् के नारे लगाए।

पेरिस में रह रहे भारतीयों ने भी 1909 में ही जेनेवा से 'वन्दे मातरम्' नामक पत्रिका प्रकाशित करनी आरंभ की। 1909 में ही अरबिंद घोष ने वन्दे मातरम् का अंग्रेजी पद्य में अनुवाद किया, जो 'कर्मयोगिन' पत्रिका के 20 नवंबर, 1909 के अंक में प्रकाशित हुआ। बाद में उसी अनुवाद को भारत सरकार ने भी अपनाया। श्री अरबिंद घोष ने बाद में उसका काव्य में भी अनुवाद किया। 1909 में ही तमिल पत्रिका 'विजय' ने अपने एक अंक के कवर पेज पर भारत माता का चित्र छापते हुए उसके नीचे 'वन्दे मातरम्' लिखा।

अक्टूबर, 1912 में जब गोपाल कृष्ण गोखले दक्षिणी अफ्रीका के केप टाउन गए, तो वहाँ भी उनका स्वागत वन्दे मातरम् से किया गया। 21 जून, 1914 को तिलक की जेल से रिहाई के समय पुणे में उनका स्वागत भी वन्दे मातरम् से ही किया गया। 1923 में पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर ने इस गीत के लिए राग कैफी में एक धुन बनाई, जो इंडियन नैशनल कांग्रेस के 1923 के अधिवेशन में बजाई गई।

1929 में आर्य प्रिंटिंग प्रेस, लाहौर और भारतीय प्रेस, देहरादून ने भी अपनी एक पुस्तक में वन्दे मातरम् के पहले दो पद शामिल किए। राम प्रसाद बिस्मिल ने भी 'क्रांति गीतांजलि' नामक अपनी पुस्तक में इस गीत को शामिल किया। 1932 में पुलिस के अत्याचार से प्राण छोड़ते समय तिरुप्पुर कुमारन ने भी वन्दे मातरम् का नारा लगाया। 1942 में क्राउन पुलिस द्वारा गोली मारे जाने पर पश्चिमी बंगाल के पूर्व मेदिनीपुर के तामलुक शहर की मतंगिनी हाजरा ने भी वन्दे मातरम् का नारा लगाया था। 1946 में महात्मा गांधी ने भी अपने गुवाहाटी भाषण में वन्दे मातरम् अपनाने और गाने का समर्थन किया।

24 जनवरी, 1950 को राजेंद्र प्रसाद की अध्यक्षता में आयोजित संविधान सभा ने वन्दे मातरम् के पहले दो पदों को भारत के राष्ट्रीय गीत के रूप में अपना लिया और इसे 'जन–गण–मन' के समकक्ष दर्जा दे दिया, परंतु इसके गाने के लिए कोई धुन अथवा समय निर्धारित नहीं किया। यही गीत 1947 में जारी हुई फिल्म 'अमर आशा' में फिल्माया गया। फिर 1952 में हेमंत कुमार ने 'आनंदमठ' नामक फिल्म में इस गीत की धुन बनाई। 1964 में जारी हुई 'लीडर' फिल्म में भी यह गीत फिल्माया गया। बाद में रवि शंकर ने ऑल इंडिया रेडियो

के लिए 'देश' राग में भी इस गीत की धुन बनाई। 1997 में ए. आर. रहमान ने 'वन्दे मातरम्' नामक स्टूडियो एल्बम जारी किया। 2002 में बीबीसी ने भी सर्वाधिक लोकप्रिय दस गाने चुनने का सर्वेक्षण किया था, जिसमें वन्दे मातरम् को दूसरा दर्जा मिला था।

जुलाई, 2017 में मद्रास हाई कोर्ट ने निर्णय दिया कि वन्दे मातरम् तमिलनाडु के सभी स्कूलों, विश्वविद्यालयों और अन्य शैक्षणिक संस्थाओं में सप्ताह में कम से कम दो बार तथा सरकारी कार्यालयों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों में माह में कम से कम एक बार गाया जाए। 2017 में विश्व मोहन भट्ट ने वन्दे मातरम् गीत मोहन वीणा पर गाया। बिहार के पूर्व राज्यपाल आरिफ मोहम्मद खान ने भी 'वन्दे मातरम्' गीत का उर्दू में अनुवाद किया।

वर्ष 2025 में वन्दे मातरम् की रचना के 150 वर्ष पूरे होने के अवसर पर प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में मंत्रिमंडल ने इसके देशव्यापी स्मरणोत्सव मनाने की सिफारिश की, जिसके बाद इस गीत के स्मरणोत्सव के रूप में चार चरणीय गतिविधियाँ आयोजित की गईं।

दिनांक 7 नवंबर, 2025 को प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में उद्घाटन समारोह आयोजित किया गया। तहसील स्तर पर वीआईपी की भागीदारी के साथ सार्वजनिक कार्यक्रम किए गए। अवसर की यादगार के रूप में एक डाक टिकट और एक सिक्का जारी किया गया। वन्दे मातरम् के इतिहास पर एक प्रदर्शनी आयोजित की गई और एक लघु फिल्म भी दिखाई गई। हर सरकारी कार्यक्रम में डाक टिकट और सिक्का जारी करने की फिल्में दिखाई गईं। अभियान की वेबसाइट पर इन कार्यक्रमों के फोटो और वीडियो भी डाले गए। राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रम में देश के विभिन्न गायकों ने भी हिस्सा लिया, जिसमें वन्दे मातरम् को भिन्न–भिन्न धुनों के साथ गाया गया।

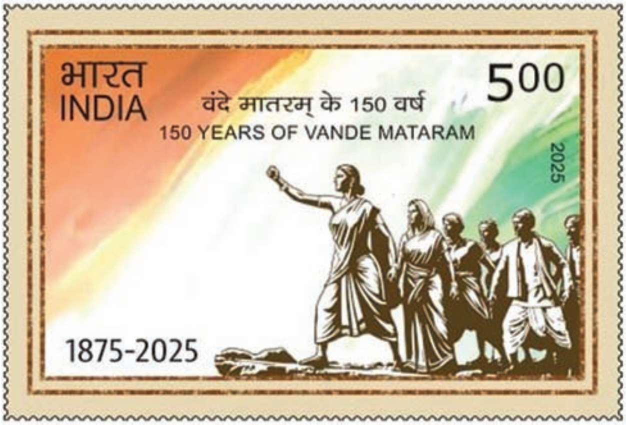

8 दिसंबर, 2025 को इस गीत पर संसद में भी चर्चा की गई। ऑल इंडिया रेडियो, दूरदर्शन और एफएम रेडियो पर इस पर आधारित विशेष कार्यक्रम प्रसारित किए गए। पीआईबी ने छोटे शहरों में चर्चाएँ और संवाद कार्यक्रम आयोजित किए। विश्व भर के सभी भारतीय दूतावासों और चौकियों में भी वन्दे मातरम् की भावना को दर्शाती हुई एक सांस्कृतिक संध्या का आयोजन किया गया तथा विश्व संगीत उत्सव मनाया गया। 'वन्दे मातरम्: मातृभूमि को प्रणाम' नामक पौधारोपण अभियान भी चलाए गए। महामार्गों के किनारे देशभक्ति के चित्र भी बनाए गए।

राष्ट्रीय गीत के संबंध में ऑडियो संदेश तथा विशेष उद्घोष भी किए गए। रेलवे स्टेशनों और हवाई अड्डों पर गीत के संबंध में एलइडी डिस्प्ले भी लगाए गए। साथ ही वन्दे मातरम् के विभिन्न पहलुओं, बंकिंम चन्द्र चटर्जी की जीवनी, स्वतंत्रता संग्राम तथा भारत के इतिहास में वन्दे मातरम् की भूमिका पर एक–एक मिनट की लघु फिल्में भी बनाई गईं और सोशल मीडिया पर दिखाई गईं। इनके अतिरिक्त देश भर में वन्दे मातरम् अभियान तथा 'हर घर तिरंगा' अभियान भी चलाए गए।

इस प्रकार 'वन्दे मातरम्' केवल बंगाल का गीत नहीं रहा, बल्कि देश के पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक एक प्रेरक गीत के रूप में उभर आया। चाहे कोई राजनीतिज्ञ हो, साहित्यकार हो, कामगार हो, सैनिक हो अथवा कोई और, स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान सबके मुख पर यही गीत था। गीत ने विदेशों में रह रहे भारतीयों पर भी अपना प्रभाव डाला। इस गीत को लेकर उन्होंने भी उपर्युक्त तरह–तरह की गतिविधियाँ करके विदेशों में भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में अपना योगदान दिया। सारांश में, 'वन्दे मातरम्' गीत ने लोगों में देशभक्ति की जो भावना 150 वर्ष पहले जगाई थी, उस भावना से यह लोगों को आज भी प्रेरित कर रहा है।

वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय चेतना का शाश्वत मंत्र

–डॉ. निखिल कुमार गुप्ता
वरिष्ठ प्रबंधक, बैंक ऑफ बड़ौदा
बरेली, उत्तर प्रदेश

''वन्दे मातरम् वह सर्वव्यापी मंत्र है जिसने आजादी, त्याग, शक्ति, पवित्रता, समर्पण और दृढ़ता के लिए हमे प्रेरित किया है।''

– (माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी)

भारत के राष्ट्र गीत 'वन्दे मातरम्' के 150 वर्ष पूरे होने पर विश्व की सबसे बड़ी संसद (लोक सभा) में प्रधान मंत्री का यह कथन पराधीनता से स्वाधीनता की यात्रा और हमारे आधारभूत मूल्यों का पुनर्जन्म प्रतीत होता है। यह पुनर्जन्म इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि भारतीय संस्कृति और मूल्यों की प्रासंगिकता निरंतर हमारे विराट देश को मार्ग दिखाती रही है। इसी मार्गदर्शन के कारण आज भारत विश्व का आध्यात्मिक गुरु बना है और तीव्रता से एक बहुआयामी वैश्विक नायक की भूमिका निभाने की तैयारी कर रहा है।

भारतीय भू धरा एवं संस्कृति को अनेक रचनाकारों ने विभिन्न रूप से अलंकृत किया है। इस संदर्भ में भारतीय भू धरा और संस्कृति की अलौकिकता को रूपक और अनुप्रास अलंकार में बाँधते हुए श्री बंकिमचन्द्र ने भारतीय संस्कृति को मानवीकरण रूप दे कर वन्दे मातरम् को प्रत्येक भारतीय के आध्यात्मिक मूल में प्रज्वलित किया है। वन्दे मातरम् गीत हमारी भारतीयता का प्रतीक है जो हमे भविष्य की राह दिखाता है और यह सुनिश्चित करता है कि विकास और वृद्धि की इस राह पर हमारा देश भटक ना जाए।

वन्दे मातरम् भारतीय आदर्शों का संगम

"वन्दे मातरम् सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम् शस्यश्यामलाम् मातरम्।
शुभ्रज्योत्स्ना पुलकितयामिनीम् फुल्लकुसुमित द्रुमदलशोभिनीम्
सुहासिनीम् सुमधुरभाषिणीम् सुखदाम् वरदाम् मातरम्।।"

क्षेत्रवाद और विभिन्न विभेदनों को लाँघते हुए वन्दे मातरम् एक ज्ञानगंगा की तरह हमारी प्राकृतिक धरोहर की वंदना कर प्रत्येक भारतीय में कृतज्ञता एवं सद्भाव की भावना जगाता है। यह ज्ञानगंगा भारत की स्तुति कर हमारी जैविक धरोहर, भौगोलिक एवं कृषि–संबंधित बहुआयामी समृद्धि और ऐसे सौभाग्यशाली समाज की गाथा व्यक्त करती है। भारत माँ के प्रतिरूप की अनुभूति हमे वन्दे मातरम् में प्रत्यक्ष रूप से देखने को मिलती है।

वन्दे मातरम् का प्रभाव भारत के संविधान और उसकी प्रस्तावना में भी प्रत्यक्ष रूप से देखने को मिलता है। संविधान की प्रस्तावना (Preamble) भारत की अखंडता और संप्रभुता का वर्णन करते हुए बताती है कि–

"... हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व–संपन्न...

... राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए..."।

भारतीय संविधान में की गई इस उद्घोषणा का प्रेरणास्रोत 'वन्दे मातरम्' जैसे गीत हैं। इतिहास के पृष्ठों में देखा जाए तो वन्दे मातरम् गीत का सृजन बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा किया गया, जिसे 1882 में उनके प्रसिद्ध ग्रंथ 'आनंदमठ' में प्रकाशित किया गया। राष्ट्रीय चेतना और वन्दे मातरम् के बीच एक समरूपता 1896 में जागृत हुई जब श्री रबीन्द्रनाथ टैगोर ने पहली बार वन्दे मातरम् की गर्जना द्वारा भारत की उभरती चेतना में प्राण प्रवाहित किए।

एक अखंड और सुदृढ़ भारत की परिकल्पना वन्दे मातरम् में चर्चित भारत की समृद्ध रूपरेखा के बिना अपूर्ण एवं अकल्पनीय है। यही कारण है कि स्वतंत्रता उपरांत भी वन्दे मातरम् भारत की अखंडता की उद्घोषणा बनकर प्रत्येक भारतीय के हृदय में वास करता है।

"कोटि–कोटि–कण्ठ कल–कल निनाद कराले,
कोटि–कोटि भुजैर्धृत खरकरवाले, के बॉले मां तुमि अबले।
बहुबलधारिणीं नमामि तारिणीम् रिपुदलवारिणीं मातरम्।।"

करोड़ों भारतीयों की शक्ति केवल हमारी संख्या में नहीं अपितु हमारे विश्वास और दृढ़ता में है। भारत की अनेकता में एकता ही हमारी सबसे बड़ी ताकत है। वन्दे मातरम् गीत भारत की इस बहुआयामी शक्ति को उचित रूप से पहचान कर हमारे स्वर्णिम इतिहास का एक जीवंत स्मरण करता है। यदि आज के संदर्भ में देखा जाए तो इस प्राणदायी ऊर्जा की प्रासंगिकता पल–प्रतिपल सिद्ध होती प्रतीत होती है।

आज जब भारतवर्ष प्रतिदिन नई उभरती चुनौतियों का सामना कर रहा है तो भारतवासियों के लिए अपने देश की शक्ति, क्षमता और श्रेष्ठता से परिचित होना अपरिहार्य हो जाता है। इस परिपेक्ष्य में वन्दे मातरम् की धुन प्रत्येक भारतीय को साहस की एक अटूट गाथा में बाँधती है जो सदा प्रगति और उन्नति के लिए हमे प्रेरित करता है।

वन्दे मातरम् का संदेश अँधेरे में एक दीपक की तरह आशावादिता का मार्ग भी दिखाता है। भारत माता की करोड़ों संतानें, जिन्हें अक्सर पाश्चात्य सभ्यता द्वारा एक चुनौती के रूप में देखा जाता है, वन्दे मातरम् गीत में भारत माँ के बल, कौशल और स्वर्णिम कल की उम्मीद जगाते हैं। जिस देश के युवा समकालीन भारत में 'प्रतिभा पलायन' (Brain Drain) से ग्रस्त होकर देश का होंसला कमजोर करने लगते हैं, उनके लिए वन्दे मातरम् का संदेश एक संजीवनी की तरह कार्य करता है।

यदि आज की परिस्थिति में वन्दे मातरम् के मूलभूत सिद्धांतों को भारतीय लोकतंत्र का हिस्सा बनाया जाए तो निःसंदेह 2047 में अखंड और विकसित भारत का सपना साकार होता दिखेगा। शायद यही कारण है कि वन्दे मातरम् गीत को युवा पीढ़ी के लिए अनिवार्य एवं अपरिहार्य बनाया जा रहा है।

"तुमि विद्या तुमि धर्म, तुमि हृदि तुमि मर्म
त्वं हि प्राणाः शरीरे, बाहुते तुमि मा शक्ति,
हृदये तुमि माँ भक्ति, तोमारेइ प्रतिमा गड़ि मन्दिरे–मन्दिरे।"

भारतवर्ष को सदा से ही सभ्यताओं के एक विशाल कलश के रूप में सराहा गया है। निःसंदेह भारतीय संस्कृति और सभ्यता किसी एक समुदाय की धरोहर ना होकर विभिन्न समुदायों और पहचानों की एक सुंदर रंगोली है। भारतीय संस्कृति को एक विशेष जीवनशैली के रूप में सराहा गया है जो बाहरी संस्कृतियों से मिलने पर खंडित होने की जगह और भी अलंकृत हो जाती हैं। वन्दे मातरम् की धुन इस विशिष्ट जीवनशैली को विस्तृत करते हुए माँ भारती को प्रणाम करती है और उसके प्रति चेतना जागृत करती है।

यदि संवैधानिक रूप से देखा जाए तो हमारे संविधान द्वारा सुरक्षित 'मौलिक अधिकार' भी इस 'संस्कृति कलश' की और संकेत देते हैः

"...धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिबंध..." – (अनुछेद 15(1))

जहाँ आज विश्वभर में भेदभाव और जातीय–विवाद हर देश और समाज को अंदर से खोखला कर रहे हैं, वहीं भारतीय संवैधानिक व्यवस्था प्रत्येक व्यक्ति और समुदाय के मौलिक हितों की रक्षा कर स्वयं राष्ट्र को यह उत्तरदायित्व देती है। शायद यही कारण है कि जहाँ भारत के पड़ोसी देशों में लोकतंत्र कभी परिपक्वता की और नहीं बढ़ पाया वहीं भारत को विकासशील देशों के लिए एक आदर्श माना जाता है।

किंतु लोकतंत्र और राजनीतिक व्यवस्था का ऐसा स्थिर और परिपक्व संयोग बिना सांस्कृतिक संवेदनशीलता के सम्भव नहीं। यह सांस्कृतिक संवेदनशीलता वन्दे मातरम् की धुन स्वतंत्रता के कई दशक पहले से हमारी पीढ़ियों को सीखा रही है। कोई भी राष्ट्र उसके राजनीतिक नायकों या सैन्य शक्ति से नहीं बनता। एक सुदृढ़ राष्ट्र बनने के लिए आवश्यक है, एक समावेशी समाज का सृजन जो समय और संस्कृति के साथ पीढ़ी दर पीढ़ी हमारी जीवनशैली का एक हिस्सा बन जाता है।

वन्दे मातरम् गीत की महानता इस बात छिपी है कि यह किसी व्यक्ति विशेष या गुट विशेष से नहीं जुड़ा। वन्दे मातरम् भारतवर्ष की एक अखंड वंदना है जो अपने राष्ट्र को नमन करती है और उस संस्कृति को नमन करती है जिसने ऐसा समावेशी एवं उदारवादी समाज बनाया। वन्दे मातरम् गीत ने 19वी शताब्दी के अंत से ही जनता में एक बहुसांस्कृतिक भाव उत्पन्न करने का कार्य आरम्भ कर दिया था जिसके कारण भारतीय मूल्य हमारे सामाजिक और राजनैतिक संस्थानों में व्यापक रूप से प्रत्यक्ष हुए।

बहुसांस्कृतिकवाद की यह अवधारणा वसुधैव कुटुम्बकम के विचार से उत्पन्न होती है जो भारत के विभिन्न ग्रंथों और ऐतिहासिक दर्शनशास्त्रियों में देखने को मिलती है।

भारतवर्ष के विभिन्न और विराट रूपः

"त्वं हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी, कमला कमलदलविहारिणी, वाणी विद्यादायिनी,
नमामि त्वाम् नमामि कमलाम् अमलाम् अतुलाम् सुजलाम् सुफलाम् मातरम्।।"

आज के संदर्भ में यदि वन्दे मातरम् के अप्रत्यक्ष संदेश को समझा जाए तो अपने देश और संस्कृति पर गर्व का अनुभव होता है। यह गर्व की भावना जगाना आज अति आवश्यक है क्योंकि आज भारत की छवि बँधती प्रतीत होने लगी है। इस संकीर्ण दृष्टिकोण के कारण जहाँ कुछ देश भारत के विराट रूप को देख नहीं पाते वहीं

कुछ भारतवासी भी भारत की विविधता और बहुआयामी शक्ति को जान नहीं पाते। इस परिस्थिति में यह अपरिहार्य हो जाता है कि भारतवासियों को भारतवर्ष के विभिन्न रूपों और प्रभाव से अवगत करवाया जाए।

वन्दे मातरम् गीत मात्र एक मधुर धुन नहीं अपितु भारतवर्ष की विविधता और महानता के साथ एक साक्षात्कार है। यह गीत हमे अवगत करवाता है कि जहाँ एक और भारत की सैन्य शक्ति माँ दुर्गा की तरह शक्तिरूपा है, वहीं दूसरी और भारतवर्ष लक्ष्मी माँ के वरदान से समृद्ध विश्व की सबसे तीव्र गति से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था भी है। इसके अतिरिक्त भारत वही भूमि है जहाँ माँ सरस्वती की विशेष कृपा निरन्तर रही है और जिसके फलस्वरूप भारतीय धरती ने विभिन्न दर्शनशास्त्री और बुद्धिजीवियों को जन्म दिया है। वन्दे मातरम् में दिए गए यह संकेत आज सत्य सिद्ध होते दिख रहे हैं।

सांख्यिकीय रूप से भी देखा जाए तो भारत विश्व के सबसे शक्तिशाली देशों में आता है। किंतु हमारी सैन्य शक्ति शांति और संधि बनाने को प्राथमिकता देती है। इसी कारणवश भारत को विकासशील देशों का नायक माना जाता है। वन्दे मातरम् गीत इस नायक की भूमिका को बहुत उत्कृष्ट रूप से पहचान देता है। वहीं आर्थिक दृष्टि से भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व में सबसे तीव्र गति से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्थाओं में शामिल है। स्वतंत्रता के केवल आठ दशकों में भारतीय अर्थव्यवस्था ने एक ऐसा मुकाम हासिल किया है जिसे कोई भी देश या उद्यमी अनदेखा नहीं कर सकता।

वन्दे मातरम् की धुन माँ सरस्वती की उस कृपा को भी नमन करती है जिसके कारण आज विकसित देशों में भी 5 में से 3 डॉक्टर और इंजीनियर भारतीय मूल के हैं। गुरुकुल परंपरा और अध्यात्म की आधारशिला पर विकसित हमारी संस्कृति समकालीन परिप्रेक्ष्य में मानव को कृतज्ञता का भाव एवं मानवता के मूल्य सिखाती है। साथ ही वन्दे मातरम् गीत आज की पीढ़ी को यह ज्ञान भी देता है कि– जो देश आज शांत, सहिष्णु और उदार लगता है उस देश में अपार शक्ति और क्षमता भी वास करती है, जो जरूरत पड़ने पर अपने नागरिकों की रक्षा के लिए सुदृढ़ और विकराल रूप भी ले सकता है।

"श्यामलाम् सरलाम् सुस्मिताम् भूषिताम् धरणीम् भरणीम् मातरम्।।"

ऐतिहासिक रूप से बहुमूल्य होने के अतिरिक्त वन्दे मातरम् साहित्यिक रूप से भी बहुमूल्य है। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा विभिन्न अलंकारों का रचनात्मक प्रयोग वन्दे मातरम् को एक कालनिरपेक्ष रचना बनाता है जो स्वतंत्रता से पूर्व भी और आज भी उतनी ही सार्थक है। इस गीत में शब्दों का चयन और रचनात्मक प्रसंगों का प्रयोग वन्दे मातरम् को एक अनंत प्रवाह की तरह प्रासंगिक करता है। वन्दे मातरम् की धुन में जिस धरती माँ की स्तुति की गई है वह ना तो किसी विशिष्ट धर्म से जुड़ी है, ना ही किसी जाति से। ना ही किसी बोली से जुड़ी है, और ना ही किसी माटी से। यही कारण है कि वन्दे मातरम् की धुन राष्ट्र एकता के लिए एक लंगर का काम करती है। यह गीत इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह हमें विश्वास और कृतज्ञता की राह सीखता है। धरती माँ के लाखों पुत्रों और पुत्रियों ने बलिदान देकर इस देश को समृद्ध और सुदृढ़ बनाया है, उसके लिए हम भारत के नागरिक सदा कृतज्ञ हैं। यह कृतज्ञता का भाव हर युवा पीढ़ी के लिए अपरिहार्य है और देश के स्वर्णिम भविष्य के लिए आवश्यक है।

ऐसा माना जाता है कि किसी बालक के लिए अपनी माँ की स्मृति सबसे पवित्र और निश्छल होती है। वन्दे मातरम् की धुन प्रत्येक भारतीय में वही भावना उत्पन्न करने की चेष्ठा करती है। आज जब देश के अंदर कौशल पलायन और निराशा के विषाणु देश के युवा को हतोत्साहित कर रहे हैं तो ऐसी परिस्थिति में वन्दे मातरम् की धुन युवा पीढ़ी में आशा का प्रकाश प्रज्ज्वलित करती है और अपने राष्ट्र की विरासत और महानता के प्रति जागरूक बनाती है।

यदि वन्दे मातरम् की प्रासंगिकता को भारतवर्ष और भारतीय जनता के लिए सारांशित किया जाए तो कहना उचित होगा कि वन्दे मातरम् की धुन उस परवरिश की तरह है जो यदि किसी बच्चे को बचपन से और उचित रूप से मिले तो वह एक आदर्श व्यक्ति के रूप में विकसित होता है। भारतवर्ष का जो मानवतावादी रूप आज विश्वभर के लिए आदर्श है उस रूप का पोषण वन्दे मातरम् जैसे गीतों द्वारा हुआ है।

किसी बुद्धिजीवी ने कहा है कि कोई भी राष्ट्र महान तभी बनता है जब उसमें रहने वाले लोग अपने राष्ट्र से भावनात्मक रूप से जुड़े होते हैं। जब किसी राष्ट्र के नागरिक अपने देश से इस प्रकार जुड़ जाते हैं तो विषम परिस्थितियों में भी राष्ट्र का उदय होता है। उदाहरण के लिए जापान के इतिहास को देखा जा सकता है जहाँ परमाणु हथियार से हुई आपदा के बाद भी वहाँ के लोगों ने राष्ट्र निर्माण की एक नई मिसाल स्थापित की। आज जापान अपनी देशभक्ति और शिष्ट सभ्यता के लिए जाना जाता है। वन्दे मातरम् गीत देश की भावी पीढ़ी को सही दिशा और मार्ग दिखाने के लिए परम प्रासंगिक सिद्ध हुआ है और भविष्य में भी होता रहेगा।

संदर्भ :

1. https://www.legislative.gov.in/static/uploads/2025/07 cbc558cf8229691801 dc9dafc1abbc2b.pdf
2. https://www.legislative.gov.in/static/uploads/2025/08/575648bd8ecb7654db902b 93115d35e4.pdf

काल और सीमाओं से परे : वन्दे मातरम् की यात्रा

–श्रद्धा शर्मा
पीएचडी शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय

"वन्दे मातरम्" पहली बार साहित्यिक पत्रिका 'बंगदर्शन' में 07 नवंबर 1875 को प्रकाशित हुआ था, जिसे बाद में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने अपने उपन्यास 'आनंदमठ' में शामिल किया। इसकी रचना संस्कृतनिष्ठ बंगाली भाषा में हुई थी। मार्च 1876 में बंकिम ने कहा था कि "वन्दे मातरम्" गीत का वास्तविक महत्व समय के साथ ही पता चलेगा, उनका यह कथन समय के साथ बखूबी सिद्ध होता रहा।

07 नवंबर 2025 वह शुभ दिन है जब भारत ने अपने राष्ट्रीय गीत "वन्दे मातरम्" की 150वीं वर्षगांठ मनाई (पीआईबी, 2025)। ऐसे में आवश्यक है कि हम अपने राष्ट्रीय गीत की महत्ता तथा उसकी गरिमा को समझते हुए पुनः एक बार उसकी ऐतिहासिकता तथा उसके प्रभाव को जानने का प्रयास करें।

स्थान केवल भौगोलिक स्थिति या मानचित्र पर अंकित किसी बिंदु का नाम नहीं है। स्थान इससे आगे बढ़कर विशिष्ट सांस्कृतिक, प्राकृतिक तथा सामाजिक विशेषताओं का एक समूह है जिससे एक स्थान को अर्थ और पहचान प्राप्त होती है। स्थान का यही ज्ञान एक स्थान को दूसरे स्थान से भिन्न बनाता है। इस भावनात्मक जुड़ाव के कारण ही हम अपने भौतिक परिवेश को मूल्यवान मानते हैं तथा उसकी सुरक्षा और संरक्षण के लिए प्रेरित भी होते हैं (मैकमोहन, 2022)।

किसी स्थान के साथ संबंध रखना व्यक्ति तथा स्थान दोनों को परस्पर पहचान देता है। किसी समय विशेष में एक निश्चित भूभाग पर घट रही घटनाएं उस क्षेत्र में विचारों को जन्म देती हैं। जैसे कि जी. डब्ल्यू. एफ. हीगल ने अपनी कृति 'एलिमेंट्स ऑफ द फिलोसोफी ऑफ राइट' में लिखा है "दर्शन अपने ही समय को विचारों में ग्रहण करता है"। इसका आशय यह है कि कोई भी चिंतक अपने युग की ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों से पूर्णतः पृथक होकर अपने विचार नहीं दे सकता है, उसके विचार अनिवार्य रूप से उसके समय की परिस्थितियों से ही प्रभावित होते हैं (हीगल, 1980)।

किसी भी सभ्यता को एकजुट करने के लिए विचारों के अतिरिक्त कुछ ठोस आधारों की आवश्यकता रहती है जिसमें प्रतीक, साझा अनुभव महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जिनके द्वारा एक सभ्यता को न केवल एक साथ लाया जा सकता है बल्कि उसे पुनः अपने गौरवपूर्ण इतिहास को स्मरण करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में लेखक अपनी रचनाओं के जरिए समाज को समाज की ही छवि दिखाते हैं। अभिव्यक्ति के यह तरीके कई रूपों में सामने आते हैं यथा चित्र, गीत, कविता, उपन्यास आदि।

विचारों की ऐसी ही एक अभिव्यक्ति 1875 में "वन्दे मातरम्" शब्दों के रूप में हुई। इसकी रचना बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने की, जिसे 1882 में प्रकाशित उनके उपन्यास 'आनंदमठ' में स्थान दिया गया। आरंभ में यह कविता मातृभूमि के प्रति एक निजी श्रद्धांजलि थी किंतु समय के साथ यह एक व्यापक सार्वजनिक आह्वान और राष्ट्रीय चेतना का उद्घोष बन गई। यह परिवर्तन इस बात का प्रतीक बना कि किस प्रकार मातृभूमि एक

माता के रूप में प्रतिष्ठित हुई और सामूहिक राष्ट्रीय अस्मिता का आधार बनी।

बंकिमचंद्र द्वारा "वन्दे मातरम्" लिखे जाने तथा उसके पीछे की पृष्ठभूमि तैयार करने में बंगाल का बहुत प्रभाव रहा। वरिष्ठ इतिहासकार सी. मजूमदार ने इसका अत्यंत निष्पक्ष विवरण प्रस्तुत किया है। उन्होंने लिखा है: बांग्ला की किसी अन्य पुस्तक और वास्तव में किसी भी भाषा में लिखी गई किसी भी पुस्तक ने बंगाल के युवाओं को इतनी गहराई से प्रभावित नहीं किया, सिवाय संभवतः शरतचंद्र के उपन्यास 'पथेर दाबी' के, जो लगभग आधी शताब्दी बाद लिखा गया था'' (नूरानी, 1973)।

मूल गीत और 'आनंदमठ' उपन्यास में भारतमाता का वर्णन न होकर बंगमाता का वर्णन किया गया था अर्थात् आरंभिक समय में यह गीत बंगाल तक ही सीमित था। श्री अरविन्द घोष ने तो इसे बंगाल का राष्ट्र गान कह कर सम्बोधित किया (दास, 2000)। "वन्दे मातरम्" गीत का तृतीय अंतरा 'सप्त कोटि कण्ठ कल–कल निनाद कराले' से आरंभ होता था जो कि उस समय की बंगाल की जनसंख्या थी अर्थात् सात करोड़। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान जब यह गीत राष्ट्रीय गीत के तौर पर माना जाने लगा और बंगमाता की जगह भारतमाता शब्द का प्रयोग होने लगा तब यह गीत बंगाल से बढ़ता हुआ पूरे भारत तक विस्तारित हो कर समावेशीकरण का मूल मंत्र बन गया और सप्त कोटि को त्रिंशत्कोटिः अर्थात 30 करोड़ जो उस दौरान भारत की जनसंख्या थी से बदल दिया गया। महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा "वन्दे मातरम्" का जो पहला हिंदी अनुवाद किया, वह प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका सरस्वती के जनवरी 1906 के अंक में प्रकाशित हुआ, उसमें तीस कोटि लोगों का ही जिक्र था।

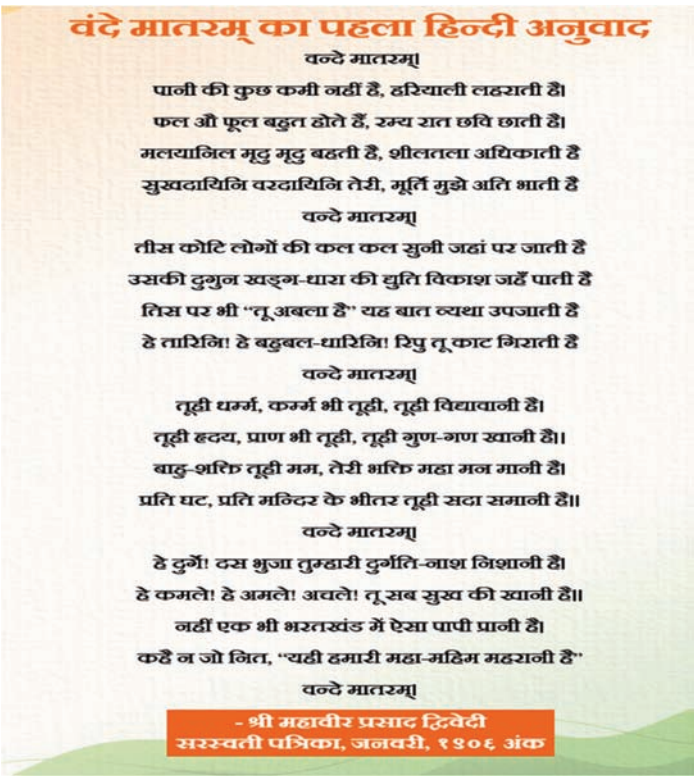
वंदे मातरम् का पहला हिन्दी अनुवाद

वन्दे मातरम्।
पानी की कुछ कमी नहीं है, हरियाली लहराती है।
फल औ फूल बहुत होते हैं, रम्य रात छवि छाती है।
मलयानिल मृदु मृदु बहती है, शीलतला अधिकाती है
सुखदायिनि वरदायिनि तेरी, मूर्ति मुझे अति भाती है
वन्दे मातरम्।
तीस कोटि लोगों की कल कल सुनी जहां पर जाती है
उसकी दुगुन खड्ग-धारा की द्युति विकाश जहँ पाती है
तिस पर भी "तू अबला है" यह बात व्यथा उपजाती है
हे तारिनि! हे बहुबल-धारिनि! रिपु तू काट गिराती है
वन्दे मातरम्।
तूही धर्म्म, कर्म्म भी तूही, तूही विद्यावानी है।
तूही हृदय, प्राण भी तूही, तूही गुण-गण खानी है।।
बाहु-शक्ति तूही मम, तेरी भक्ति महा मन मानी है।
प्रति घट, प्रति मन्दिर के भीतर तूही सदा समानी है।।
वन्दे मातरम्।
हे दुर्गे! दस भुजा तुम्हारी दुर्गति-नाश निशानी है।
हे कमले! हे अमले! अचले! तू सब सुख की खानी है।।
नहीं एक भी भरतखंड में ऐसा पापी प्रानी है।
कहै न जो नित, "यही हमारी महा-महिम महरानी है"
वन्दे मातरम्।

- श्री महावीर प्रसाद द्विवेदी
सरस्वती पत्रिका, जनवरी, १९०६ अंक

स्रोतः "वन्दे मातरम्" 150 (गीत/गीत–पाठ डाउनलोड), संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार।

अंत में जब इस गीत को राष्ट्रीय गीत की संज्ञा दी गई तब तृतीय अंतरे की शुरुआत 'कोटि–कोटि' शब्दों से होने लगी, जो आज तक अपरिवर्तित है। यह 'कोटि–कोटि कण्ठ कल–कल निनाद कराले' भारतीय जनसंख्या की वृद्धि के साथ हमेशा के लिए प्रासंगिक बना रहेगा। "वन्दे मातरम्" गीत का तृतीय अंतरा इस प्रकार है –

कोटि-कोटि कण्ठ कल-कल निनाद कराले,
कोटि-कोटि भुजैर्धृत खरकरवाले,
के बॉले माँ तुमि अबले,
बहुबलधारिणीं नमामि तारिणीम्,
रिपुदलवारिणीं मातरम्। वन्दे मातरम्।। 3।।

स्रोतः "वन्दे मातरम्" 150 (गीत/गीत–पाठ डाउनलोड), संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार।

लालगोला में स्थित काली मंदिर में जब बंकिमचंद्र ने बेड़ियों में जकड़ी काली माता की मूर्ति देखी तो उन्होंने इस चित्रण को भारत से संबंधित करके देखा, संभवतः यही वह विचार था जिसने भारत को माता की छवि (मातृभूमि) प्रदान की और जंजीरों को विदेशी अत्याचार के रूप में देखा।

"वन्दे मातरम्" की रचना सात नवंबर 1875 को हुई थी। हालांकि तारीख से इतर इसका महत्व तिथि के लिए अधिक है क्योंकि जिस दिन "वन्दे मातरम्" लिखा गया था वह अक्षय नवमी का दिन था। पश्चिम बंगाल में इस दिन जगद्धात्री पूजा की जाती है, जगद्धात्री को जगतजननी, पालनहार और रक्षक के रूप में देखा जाता है (पीआईबी, 2025)।

"वन्दे मातरम्" में निहित भारत माता का चित्रण हमें पुनः बंगाल की संस्कृति की ओर लेकर जाता है। हालांकि शशि भूषण दास गुप्त का कहना है कि अधिकांश प्राचीन समाज में माता पूजा व्यापक रूप से प्रचलन में थी। वे लिखते हैंः

''प्राचीन काल में सेमिटिक, हेलेनिक (यूनानी), ट्यूटोनिक और नॉर्डिक सहित अनेक जातियों में किसी न किसी रूप में मातृदेवी में विश्वास विद्यमान था। किंतु इस दृष्टि से भारत की विशेषता यह है कि यहाँ इस मातृ–उपासना की परंपरा अत्यंत प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक निरंतर चली आती रही है। साथ ही, 'माता' की इस अवधारणा के इर्द–गिर्द विकसित और गहन होती गई धार्मिक चेतना ने युगों–युगों तक पूरे राष्ट्र के विचारों और मानसिकता को प्रभावित किया।''

परंतु बंगाल में यह संस्कृति अत्यंत प्राचीन है इसके प्रमाण 16वीं शताब्दी तक पीछे जाते हैं जैसा कि उल्लेखनीय है बंगाल के प्रसिद्ध 12 प्रमुख सामंत (बारो भुईयां) में से अधिकांश शाक्त उपासक थे। (बागची, 1990) बंगाल के कृषक आज भी अंबुबाची पर्व का अनुष्ठान करते हैं, जब यह माना जाता है की धरती माता रजस्वला (मासिक धर्म की अवस्था में है। यह कथा प्रकृति, कृषि और नारी शक्ति के गहरे अंतर्संबंध को दर्शाती है। इन दिनों बंगाल

के अनेक किसान समुदायों में हल चलाना वर्जित होता है। इस प्रकार बंगाल की संस्कृति केवल इतिहास तक सीमित नहीं है बल्कि यह वर्तमान में भी निरंतर अपनी संस्कृति को जीवित बनाए हुए है।

1905 में अवनींद्रनाथ टैगोर ने अपनी प्रसिद्ध चित्र कृति 'भारत माता' प्रस्तुत की। गौश रंगों से निर्मित की गई यह चित्रकला 'भारत माता' अथवा 'मदर इंडिया' की राजनीतिक अवधारणा का सबसे प्रारंभिक और प्रभावशाली दृश्य रूप है। जिसमें एक स्त्री को असाधारण विशेषताओं के साथ दर्शाया गया है, जैसे; सिर के चारों ओर बना दोहरा प्रभामंडल, पैरों तक फैली दिव्य आभा, चार भुजाएं (जिनमें अन्न, वस्त्र, ज्ञान, आस्था धारण किया हुआ है जो भविष्य में समृद्ध राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है) तथा चरणों के समीप कमल के पुष्प। इन प्रतीकों ने जहां एक ओर इस स्त्री को असाधारण स्त्री दर्शाया, वहीं दूसरी ओर इसके प्रति पवित्रता तथा वंदन का भाव विकसित किया। अवनींद्रनाथ टैगोर ने बंगाल के स्वदेशी आंदोलन के उत्कर्ष काल में इस चित्र की रचना की। वह जानते थे कि यह चित्र औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध जनता को प्रेरित करने और एकजुट होने का प्रभावी माध्यम बनेगा।

स्रोतः अवनीन्द्रनाथ टैगोर, भारत माता, 1905, गौश (Gouache) चित्रकला, आकारः 26.6 × 15.2 सेमी, विक्टोरिया मेमोरियल हॉल, कोलकाता

आरंभ में यह चित्र भी बंगाल तक ही सीमित था, अवनींद्रनाथ टैगोर ने इसकी कल्पना बंग माता के रूप में ही की थी क्योंकि यह आकृति एक सामान्य बंगाली महिला के आधार पर बनाई गई थी परंतु शीघ्र ही यह चित्र भारत माता के रूप में प्रसिद्ध हो गया और भारतीय राष्ट्र का व्यापक प्रतीक बन गया। इस चित्र ने बंकिम के "वन्दे मातरम्" शब्दों को साकार रूप दिया और भारतीय सभ्यता की प्राचीनता, निरंतरता और साझी विरासत को एक नया राष्ट्रीय प्रतीक भी प्रदान किया (कुमार, 2024)। "वन्दे मातरम्" की यह साकार होती छवि समयानुसार और आगे बढ़ते हुए जनमानस में प्रकाशित होने लगी।

"वन्दे मातरम्" का प्रसार

सन् 1896 में गुरुदेव रविंद्र नाथ टैगोर ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कोलकाता अधिवेशन में "वन्दे मातरम्" का गायन किया। यह वह प्रथम अवसर था जब "वन्दे मातरम्" का गायन बंगाल से परे जाते हुए पूरे देश को एक चेतना में जोड़ने वाली सशक्त कड़ी बन गया।

सर्वप्रथम सात अगस्त 1905 को "वन्दे मातरम्" का राजनीतिक तौर पर हजारों विद्यार्थियों द्वारा प्रयोग किया गया। जहां सभी समुदायों को साथ लेकर विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया गया और स्वदेशी को आत्मसात किया गया। यह घटना बंगाल विभाजन के खिलाफ उठी जिसने पूरे देश को आंदोलित कर दिया। ठीक इसी प्रकार 20 मई 1906 को, बारिसाल में जो आज बांग्लादेश में है, अभूतपूर्व "वन्दे मातरम्" जुलूस निकाला गया जिसमें 10,000 हिंदू व मुस्लिम प्रतिभागी शामिल थे। इन समूहों में सिर्फ युवा अथवा शिक्षित व्यक्ति ही शामिल नहीं थे। आम जनता जैसे कि 1908 में, तमिलनाडु स्थित कोरल मिल्स के हजारों मजदूरों ने रात के समय सरकार की दमनकारी नीतियों के खिलाफ "वन्दे मातरम्" का नारा लगाकर हड़ताल को रूप दिया। इस प्रकार "वन्दे मातरम्" सिर्फ समाज के एक निश्चित वर्ग तक सीमित न हो कर हर तबके को प्रभावित करने लगा (कुमार, 2025)।

"वन्दे मातरम्" गीत के शब्दों का प्रभाव केवल भारतीय भूमि तक सीमित न रहकर विदेश में भी भारतीय चेतना का प्रतिनिधित्व कर रहा था। 1960 में मैडम भीकाजी द्वारा बर्लिन में भारतीय तिरंगा लहराया गया जिस पर "वन्दे मातरम्" शब्द अंकित थे। ठीक इसी प्रकार 17 अगस्त 1909 को जब मदन लाल ढींगरा को फांसी के फंदे पर चढ़ाया गया तब उनका शरीर इंग्लैंड की भूमि पर था परंतु उनके अंतिम शब्द "वन्दे मातरम्" ही थे। "वन्दे मातरम्" के शब्दों ने मंत्र का रूप ले लिया जिसका प्रयोग करके न केवल आम जनता के भीतर उत्साह जागृत हुआ बल्कि नेता वर्ग भी पहले से कहीं अधिक सशक्त और साहसी हो उठा इन शब्दों ने लगातार उनकी हिम्मत तथा हौसले को बनाए रखा।

"वन्दे मातरम्" को राष्ट्रवादी नेताओं ने अपने शब्दों के द्वारा खूब सराहा। इन नेताओं के वक्तव्यों के द्वारा यह गीत जन जन के और निकट आ गया। एक तरफ गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने "वन्दे मातरम्" को संगीतबद्ध कर उसे सौंदर्य तथा संवेदना का माध्यम बनाया। महात्मा गांधी ने "वन्दे मातरम्" को "राष्ट्र की सर्वाधिक शुद्ध राष्ट्रीय भावना का मूर्त रूप" कहकर संबोधित किया। 'हरिजन' नामक समाचार पत्र में गांधी ने "वन्दे मातरम्" का स्मरण करते हुए लिखा ''यह साम्राज्यवाद–विरोधी उद्घोष था। जब मैं बालक था, तब मैं न तो 'आनन्दमठ' के बारे

में जानता था और न ही उसके अमर रचयिता बंकिम के बारे में। फिर भी 'वन्दे मातरम्' ने मुझे गहराई से प्रभावित किया था, और जब मैंने इसे पहली बार गाते हुए सुना, तो मैं मंत्रमुग्ध हो गया। मैंने इसके साथ राष्ट्र की सर्वाधिक शुद्ध भावना का संबंध स्थापित किया। यह करोड़ों लोगों की देशभक्ति को उसकी गहराइयों तक उद्वेलित कर देता है।''

"वन्दे मातरम्" अब केवल नारा या कुछ शब्द बनकर नहीं रह गया। इसका विस्तार कई रूपों में प्रकट हुआ। 1906 में बिपिन चंद्र पाल ने "वन्दे मातरम्" नामक एक दैनिक समाचार पत्र की स्थापना की। इस पत्र के संपादकीय में लिखा था "प्रत्येक गाँव और प्रत्येक नगर में आनन्दमठ की स्थापना होनी चाहिए। तब माँ का नाम करोड़ों कंठों से उच्चारित होगा और चारों दिशाएँ 'वन्दे मातरम्' के उद्घोष से गूँज उठेंगी।" इसी नाम से लाला लाजपत राय ने लाहौर में एक उर्दू साप्ताहिक का प्रकाशन भी आरंभ किया।

एकीकृत भारतीय मंत्र का रूप ले चुके "वन्दे मातरम्" के प्रभाव ने ब्रिटिश व्यवस्था को किस प्रकार प्रभावित किया। इसके उदाहरण हमें कई घटनाओं से प्राप्त होते हैं। "वन्दे मातरम्" के शब्दों का अधिकतर प्रभाव युवा वर्ग पर पड़ा और इसीलिए ब्रिटिश प्रशासन द्वारा ज्यादातर प्रतिबंध शैक्षिक संस्थानों पर ही लगाए गए, ब्रिटिश व्यवस्था ने इन संस्थाओं की मान्यता रद्द करने की चुनौती दी, और जो विद्यार्थी राजनीतिक तौर पर इन शब्दों का प्रयोग करेंगे उन्हें सरकारी सेवाओं से वंचित रखने का भी प्रावधान बनाया गया।

"वन्दे मातरम्" के शब्दों का महत्व बताते हुए श्री अरबिंदो का कहना था कि "वन्दे मातरम्" में आध्यात्मिक शक्ति निहित है जो लोगों की सामूहिक चेतना को जागृत करने में सक्षम है। उनका मानना था कि "वन्दे मातरम्" का गायन केवल राजनीतिक क्रिया नहीं है बल्कि आध्यात्मिक क्रिया है जो लोगों को गहराई से जोड़ती है जिसके परिणामस्वरुप साझी पहचान निर्मित होती है।

"वन्दे मातरम्" में उल्लेखनीय मातृत्व के रूपकों के माध्यम से कोमलता और शक्ति दोनों का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत किया गया है। जिस प्रकार माता अपने बच्चों का स्नेह और ममता से पालन पोषण करती है, वहीं आवश्यकता पड़ने पर शक्ति का रूप धरकर उनकी रक्षा भी करती है। "वन्दे मातरम्" में वर्णित भारत माता का उल्लेख ठीक इसी प्रकार भारतीय समृद्धि तथा खुशहाली जैसे मूल्यों का प्रतीक है और भारत के सशक्तीकरण का भी द्योतक है। इस भाव ने ही इस गीत को प्रत्येक भारतीय के हृदय की गहराई तक पहुंचाया और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को जागृत किया, क्योंकि बंगाल में मातृपूजा विशेष रूप से उल्लेखनीय है इसलिए लालगोला में स्थित मंदिर में काली माता को देखकर बंकिम का भारत को माता के रूप में चित्रित करना स्वाभाविक है।

वन्दे मातरम् गीत अर्थर्ववेद वैदिक वाक्य–"माता भूमिः पुत्रों अहं पृथिव्याः। (अर्थात् पृथ्वी मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ।)" की अवधारणा को एक नवीन अभिव्यक्ति भी प्रदान करता है।

इस प्रकार यह केवल अतीत की स्मृतियों को ही नहीं जगाता बल्कि भारत की पारंपरिक जड़ों को पुर्नजागृत करते हुए एक गहरे और जीवंत संबंध का आह्वान भी करता है। इसीलिए इस गीत की ऊर्जा प्रत्येक

जनमानस तक पहुंची और संघर्ष के समय भारत को एक साझा उद्देश्य तथा पहचान दे पाई, जिसकी अभिव्यक्ति कई माध्यमों में होती रही। "वन्दे मातरम्" शब्दों ने कविता, नारे, समर्थन, अभिवादन, विद्रोह आदि सभी के रूप में स्वयं को रूपांतरित किया। देश में घट रही घटनाएं, अंतिम सांस तक "वन्दे मातरम्" का उच्चारण, समाचार पत्र, पत्रिकाएं, किताबों के रूप में यह गीत आम जनता तक पहुंचा और गीत की कई माध्यमों में हुई रिकॉर्डिंग ने इसे समय व स्थान से परे बना दिया, जिसके परिणाम स्वरूप "वन्दे मातरम्" भारत का राष्ट्रीय गीत बन गया।

संदर्भ सूची :—

1. कुमार, अपर्णा. (2024). अवनीन्द्रनाथ टैगोर की 'भारत माता': बंगाल स्कूल की चित्रकला और भारत की अवधारणा. स्मार्थिस्ट्री.

2. कुमार, के. विजय. (2025). The Legacy of Vande Mataram on Pre & Independent Society. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च इन सोशल साइंसेज एंड ह्यूमैनिटीज (IJRSSH), 15(2), 146—152.

3. दास, ए. (2000). एबी ऑफ डिलाइट (बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के आनन्दमठ का अंग्रेजी अनुवाद). बन्धना दास

4. बागची, जसोधरा. (1990). Representing Nationalism- Ideology of Motherhood in Colonial Bengal. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 25(42/43), 65—71

5. नूरानी, ए. जी. (1973). Vande Mataram: A Historical Lesson. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 8(23), 1039, 1041—1043.

6. पत्र सूचना कार्यालय. (6 नवम्बर, 2025). 150 Years of Vande Mataram- A Melody That Became a Movement. भारत सरकार.

7. मैकमोहन, एड. (5 जनवरी, 2022). The Importance of Place. मेन स्ट्रीट अमेरिका.

8. स्टाफ रिपोर्टर. (14 जुलाई, 2017). Vande Mataram was in Sanskrit, AG clarifies. द हिन्दू.

9. हेगेल, जी. डब्ल्यू. एफ. (1991). एलिमेंट्स ऑफ द फिलॉसफी ऑफ राइट (A. W. Wood, संपादक; H-B- Nisbet, अनुवादक). Cambridge University Press. (मूल कृति 1820 में प्रकाशित)

वन्दे मातरम् : इतिहास से वर्तमान तक अनवरत यात्रा

–विपिन कुमार
मंडल प्रबंधक केनरा बैंक,
केनरा बैंक प्रबंधन संस्थान, मणिपाल

"एक दिन अचानक बंगाल के लोगों ने सच की तलाश में चारों तरफ देखा, और उसी पल किसी ने 'वन्दे मातरम्' गाया। बस इतना ही काफी था, एक ही दिन में पूरा देश देशभक्ति के रास्ते पर चल पड़ा।"

– श्री अरविंद

'वन्दे मातरम्' बस कुछ शब्द नहीं हैं इसमें करोड़ों भारतीयों का अपनी मातृभूमि के लिए प्यार और आदर छुपा है। यह वो गीत है जिसने गुलाम भारत के लोगों को अपनी धरती को एक नई नजर से देखना सिखाया, सिर्फ जमीन का टुकड़ा नहीं, बल्कि माँ के रूप में। उन्नीसवीं सदी के बंगाल में लिखा गया यह गीत आगे चलकर आजादी की लड़ाई की जान बन गया, और आज आजाद भारत में इसे राष्ट्रीय गीत का दर्जा हासिल है। एक साहित्यिक रचना से राष्ट्र की पहचान बनने तक यह सफर खुद में भारत के इतिहास का एक जरूरी हिस्सा है।

उन्नीसवीं सदी का बंगाल

उन्नीसवीं सदी का बंगाल एक अजीब दौर से गुजर रहा था। एक तरफ अंग्रेजों का शासन था, उनकी नीतियों ने किसानों और आम लोगों की जिंदगी मुश्किल कर दी थी। दूसरी तरफ बंगाल में नई जागृति (बंगाल रेनेसां) का दौर भी चल रहा था। राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर जैसे लोगों ने समाज में सुधार की अलख जगाई थी। अंग्रेजी शिक्षा फैलने से लोगों में नए विचार और अपनी परंपरा दोनों को लेकर एक नई सोच पनप रही थी। इसी दौर में लोगों को अठारहवीं सदी का सन्यासी विद्रोह और बंगाल का भयानक अकाल (1770) याद था, जब हजारों संन्यासी भूख और अंग्रेजों के टैक्स के खिलाफ उठ खड़े हुए थे। यही सब घटनाएँ आगे चलकर साहित्य में झलकने लगीं और यहीं से 'वन्दे मातरम्' जैसे गीत की जमीन तैयार हुई।

'वन्दे मातरम्' : रचना

'वन्दे मातरम्' लिखने वाले बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का जन्म 1838 में बंगाल के नैहाटी गाँव में हुआ था। उनके पिता खुद अंग्रेजी शासन में अफसर थे। बंकिमचंद्र ने हुगली मोहसिन कॉलेज और प्रेसिडेंसी कॉलेज, कलकत्ता से पढ़ाई की और 1859 में ग्रेजुएशन पूरा किया, वे कलकत्ता यूनिवर्सिटी के पहले दो ग्रेजुएट्स में से एक थे। 1869 में उन्होंने कानून की पढ़ाई भी पूरी की और फिर अंग्रेज सरकार में डिप्टी मजिस्ट्रेट बन गए। नौकरी के साथ–साथ वे बांग्ला साहित्य को नई दिशा भी दे रहे थे।

उनके पहले उपन्यास 'दुर्गेशनंदिनी' (1865) को बांग्ला का पहला असली उपन्यास माना जाता है। 1872 में उन्होंने 'बंगदर्शन' नाम की पत्रिका शुरू की, जिसने बांग्ला लेखन को नई ऊंचाई दी। उनके काम को देखते

हुए लोग उन्हें 'साहित्य सम्राट' कहने लगे। इसके अलावा उन्होंने 'कपालकुंडला', 'विषवृक्ष', 'कृष्णकांतेर विल', 'देवी चौधुरानी' और 'सीताराम' जैसे कई मशहूर उपन्यास भी लिखे, जिनमें समाज, इतिहास और महिलाओं के हक जैसे विषय उठाए गए। यही वजह है कि बंकिमचंद्र को उस दौर के सबसे असरदार भारतीय लेखकों में गिना जाता है।

माना जाता है कि बंकिमचंद्र ने वन्दे मातरम् गीत 1875 के आसपास लिखा था, जब वे अभी सरकारी नौकरी में ही थे। बाद में उन्होंने इसे अपने मशहूर उपन्यास 'आनंदमठ' (1882) में शामिल किया, जो बांग्ला और भारतीय साहित्य की महान रचनाओं में गिना जाता है। इस उपन्यास की कहानी अठारहवीं सदी के सन्यासी विद्रोह और उसी वक्त के भयानक अकाल पर आधारित है। उपन्यास में बागी संन्यासी अपनी मातृभूमि को दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती का मिला–जुला रूप मानकर यही गीत गाते हैं, मातृभूमि को देवी की तरह देखने की यह सोच गीत को एक अलग ही ताकत और भावना देती है। गीत की भाषा संस्कृत मिली हुई बांग्ला में है, जिससे इसमें गंभीरता भी है और एक खास लय भी।

'आनंदमठ' की कहानी अठारहवीं सदी के बंगाल में शुरू होती है, जब भयानक अकाल ने लोगों की जिंदगी तबाह कर दी थी और अंग्रेजों की टैक्स नीतियों ने आम लोगों का जीना मुश्किल बना दिया था। ऐसे में एक गुप्त संन्यासी समूह बनता है, जिसके लोग हर सुख, सुविधा छोड़कर मातृभूमि की सेवा में लग जाते हैं। कहानी का मुख्य किरदार महेंद्र इस लड़ाई से जुड़ जाता है। कहानी में संन्यासी अपने आश्रम 'आनंदमठ' में मातृभूमि की मूर्ति के सामने यही गीत गाकर कसम खाते हैं कि वे अपनी धरती को गुलामी से आजाद कराएँगे। भले ही कहानी का आधार सन्यासी विद्रोह है, लेकिन इसकी असली ताकत मातृभूमि के लिए समर्पण की भावना में है, जो आगे चलकर धर्म और जाति से ऊपर उठकर पूरे देश की साझा भावना बन गई।

'वन्दे मातरम्' की भाषा इसे बाकी देशभक्ति गीतों से अलग बनाती है। शुरुआती लाइनें 'सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्, शस्यश्यामलाम् मातरम्' में मातृभूमि को पानी, फल, ठंडी हवा और हरी–भरी फसलों से भरी धरती बताया गया है, जिसमें कोई धार्मिक बात नहीं, बस प्रकृति का सुंदर वर्णन है। आगे के हिस्सों में बात मातृभूमि की ताकत और स्नेह की तरफ मुड़ती है, जहाँ करोड़ों हाथों और आवाजों की कल्पना से एक बड़े राष्ट्र की सामूहिक भावना दिखाई गई है।

गीत की धुन सबसे पहले जदुनाथ भट्टाचार्य ने बनाई थी, जो बिष्णुपुर घराने के संगीतकार थे और बंकिमचंद्र व रवींद्रनाथ ठाकुर दोनों के संगीत गुरु भी रहे। बाद में रवींद्रनाथ ठाकुर ने जो धुन गाई वही सबसे ज्यादा मशहूर हुई। आगे के श्लोकों में देवी दुर्गा के दस हाथों में हथियार लिए रूप की कल्पना से मातृभूमि की रक्षा की ताकत दिखाई गई है, वहीं लक्ष्मी और सरस्वती के जरिए समृद्धि और ज्ञान की कामना की गई है। यानी पूरा गीत धरती की तारीफ से शुरू होकर उसकी ताकत तक की एक खूबसूरत यात्रा तय करता है।

वन्दे मातरम् गीत का संस्कृत–बांग्ला स्वरूप

एक दिलचस्प बात यह भी है कि गीत मूल रूप से बांग्ला में लिखा गया, लेकिन इसमें संस्कृत के शब्दों की भरमार है इसी वजह से यह लगभग हर भारतीय भाषा बोलने वाले को आसानी से समझ में आ जाता है, चाहे वह बंगाल का हो, गुजरात का हो या तमिलनाडु का। यही एक वजह है कि यह गीत भाषाई सीमाओं को पार करके पूरे देश की साझी विरासत बन पाया। बंकिमचंद्र ने खुद इसे एक साधारण देशभक्ति गीत की तरह नहीं, बल्कि मातृभूमि को समर्पित एक स्तुति की तरह लिखा था यही वजह है कि इसमें भजन जैसी गहराई और भावना दोनों मिलती है।

शुरुआत में यह गीत ज्यादातर पढ़े–लिखे और साहित्यिक लोगों तक ही सीमित था। एक मशहूर किस्सा है कि जब किसी ने बंकिमचंद्र को इस गीत को इस्तेमाल करने का सुझाव दिया, तो उन्होंने कहा कि इसकी असली अहमियत आगे चलकर ही समझ आएगी शायद उनके जाने के बाद। यह बात जल्दी ही सच साबित हुई, जब यह गीत बंगाल की सीमा पार करके धीरे–धीरे पूरे देश की आवाज बन गया। 'आनंदमठ' छपने के साथ ही बंगाल के पाठकों में इस उपन्यास और इसमें छपे गीत, दोनों को लेकर उत्सुकता और गर्व की भावना जाग गई थी। धीरे–धीरे बंगाल के स्कूल–कॉलेजों और साहित्यिक सभाओं में यह गीत पढ़ा और गाया जाने लगा, जिससे इसकी लोकप्रियता की नींव मजबूत होती गई।

1896 में कलकत्ता के बीडन स्क्वायर में हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में रवींद्रनाथ ठाकुर ने पहली बार यह गीत सबके सामने गाया, जिससे यह राजनीति के मंच पर पहुँचा। इसके करीब दस साल बाद, 1905 में जब बंगाल का बंटवारा हुआ, तो इसके विरोध में चले स्वदेशी आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' सबसे बड़ा नारा बन गया। सड़कों, जुलूसों और स्कूलों में यह गीत गूँजने लगा। अंग्रेज सरकार को इसकी बढ़ती लोकप्रियता से डर लगने लगा, तो उन्होंने सार्वजनिक जगहों पर इसे गाने पर रोक लगा दी और कई देशभक्तों, खासकर छात्रों को गिरफ्तार भी किया। लेकिन इस दबाव से गीत और भी मशहूर हो गया।

श्री अरविंद और बिपिनचंद्र पाल ने 'वन्दे मातरम्' नाम से एक अखबार भी निकाला, जिसने इस गीत की भावना को पूरे देश तक पहुँचाया। इस दौर में 'वन्दे मातरम्' सिर्फ गीत नहीं रह गया था, यह विरोध की भाषा बन गया था। स्कूलों की प्रार्थना सभाओं में बच्चे इसे गाने पर अड़े रहते थे, भले ही इसके लिए उन्हें सजा ही क्यों न मिले। कई क्रांतिकारी तो फाँसी के तख्ते पर चढ़ते वक्त भी यही गीत गाते रहे। इस तरह 'वन्दे मातरम्' ने बंगाल के स्वदेशी आंदोलन को एक मजबूत भावनात्मक सहारा दिया, जिसका असर आगे चलकर पूरे देश की आजादी की लड़ाई पर पड़ा।

वन्दे मातरम् : भारत की साझी विरासत

आगे के सालों में यह गीत बंगाल की सीमा से बाहर निकलकर पूरे भारत की साझी विरासत बन गया। कई भारतीय भाषाओं में इसका अनुवाद हुआ, जिससे यह देश के हर कोने में उतनी ही शिद्दत से गाया जाने लगा। नेताजी सुभाषचंद्र बोस की आजाद हिंद फौज ने इसे 'जय हिंद' के साथ अपना नारा बनाया, और आजादी की लड़ाई के आखिरी दौर में यह गीत क्रांतिकारियों, कांग्रेस के कार्यकर्ताओं और आम जनता सबको एक साथ

जोड़ने वाला मंत्र बन गया था। आजादी के बाद भी इसका असर कम नहीं हुआ।

1997 में जब देश ने आजादी के पचास साल पूरे किए, तो संगीतकार ए.आर. रहमान के एल्बम 'वन्दे मातरम्' और उसके गाने 'माँ तुझे सलाम' ने खूब धूम मचाई, जिसने नई पीढ़ी में भी इस गीत के लिए प्यार जगाया। इस तरह यह गीत अपने पुराने साहित्यिक रूप से आगे बढ़कर भारत की साझा याद का हमेशा के लिए हिस्सा बन गया। इसके अलावा, कई भाषाओं के कवियों ने इस गीत से प्रेरणा लेकर अपनी भाषा में भी देशभक्ति के गीत लिखे। आकाशवाणी और दूरदर्शन जैसे माध्यमों ने भी इसे राष्ट्रीय मौकों पर बजाकर इसकी पहचान बनाए रखी। स्कूल की प्रार्थना से लेकर सेना की परेड तक यह गीत आज भी भारत की सार्वजनिक जिंदगी का हिस्सा है।

बंगाल से निकलकर यह गीत जल्द ही क्रांतिकारी संगठनों की पहचान बन गया। खुदीराम बोस से लेकर कई गुमनाम क्रांतिकारियों तक, अंग्रेजों की जेलों में बंद देशभक्त इसी गीत से हिम्मत पाते थे। अखबारों और पर्चों में इसे छापना अंग्रेज सरकार की नजर में अपराध था, फिर भी यह गुप्त रूप से एक हाथ से दूसरे हाथ तक पहुँचता रहा। यह गीत सिर्फ बड़े नेताओं तक सीमित नहीं रहा, गाँव–गाँव के आम लोग भी इसे गुनगुनाने लगे थे, और यही वजह है कि यह सही मायनों में जन–आंदोलन का गीत बन पाया।

आजादी के बाद, 24 जनवरी 1950 को संविधान सभा के आखिरी सत्र में डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने ऐलान किया कि 'जन गण मन' भारत का राष्ट्रगान होगा, जबकि 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रगान जितना ही सम्मान देते हुए इसे राष्ट्रीय गीत का खास दर्जा दिया गया, यह आजादी की लड़ाई में इसकी भूमिका के लिए देश की तरफ से एक धन्यवाद जैसा था। तभी से यह गीत हर भारतीय की देशभक्ति की भावना का प्रतीक बना हुआ है और बड़े राष्ट्रीय मौकों पर इसे बड़े आदर से गाया जाता है।

आज स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, हिंदी दिवस और बाकी राष्ट्रीय मौकों पर स्कूलों, दफ्तरों और सार्वजनिक कार्यक्रमों में यह गीत पूरे आदर से गाया जाता है। 'वन्दे मातरम्' सिर्फ पुरानी बात याद दिलाने वाला गीत नहीं है, बल्कि यह एकता, अखंडता और गर्व की लगातार याद दिलाने वाला गीत है। यह भी सच है कि समय–समय पर इस गीत के इतिहास और इसके सबके लिए एक जैसे मायने को लेकर बातचीत होती रहती है, जो किसी भी जिंदा राष्ट्रीय प्रतीक की खासियत है। इन बातचीत से यही साफ होता है कि गीत की असली भावना मातृभूमि के लिए बिना स्वार्थ के प्यार सबके लिए एक जैसी है। यह भावना आज भी उतनी ही सही है जितनी डेढ़ सौ साल पहले थी और आगे आने वाली पीढ़ियों को भी देश की एकता का यही संदेश देती रहेगी।

आज के दौर में, जब भारतीय समाज तेजी से बदल रहा है, 'वन्दे मातरम्' जैसे प्रतीक युवा पीढ़ी को अपनी जड़ों और इतिहास से जोड़े रखने का काम करते हैं। स्कूल–कॉलेजों में इसका सही इतिहास और मतलब पढ़ाना जरूरी है, ताकि नई पीढ़ी इसे सिर्फ एक रस्म की तरह न देखे, बल्कि इसके पीछे छिपी कुर्बानी, संघर्ष और देश बनाने की कहानी को भी समझे। यही उन तमाम जाने–अनजाने देशभक्तों को असली श्रद्धांजलि होगी, जिन्होंने इस गीत को अपनी जान से भी ज्यादा प्यारा माना।

बंकिमचंद्र की कलम से निकला यह गीत सिर्फ एक साहित्यिक रचना नहीं, बल्कि एक सोए हुए देश को जगाने वाला मंत्र साबित हुआ। सन्यासी विद्रोह के इतिहास से निकलकर, बंगाल की साहित्यिक सभाओं से होते हुए, यह आजादी की लड़ाई का नारा बना, और आज आजाद भारत की संस्कृति और संविधान, दोनों का अहम हिस्सा है। बंकिमचंद्र, रवींद्रनाथ ठाकुर, श्री अरविंद और न जाने कितने अनजान देशभक्तों की बदौलत यह गीत एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचता रहा है। यह गीत हमें हमेशा याद दिलाता है कि मातृभूमि के लिए प्यार किसी सीमा, भाषा, धर्म या समय का मोहताज नहीं होता, यह एक ऐसी भावना है जो हर भारतीय के दिल में एक जैसी गूँजती है।

"यह सिर्फ एक राष्ट्रीय गीत नहीं है, बल्कि एक पवित्र मंत्र है, आनंदमठ के लेखक, एक ऋषि जैसी सोच रखने वाले इंसान की तरफ से हमें मिला हुआ।"

– श्री अरविंद

भाषा और साहित्य किसी भी देश की सबसे बड़ी ताकत होते हैं। बंकिमचंद्र ने अपनी कलम से जिस भावना को शब्द दिए, वह आज भी उतनी ही जिंदा है, जितनी उस दिन थी जब उन्होंने इसे पहली बार लिखा था। अंत में इतना कहना काफी होगा कि 'वन्दे मातरम्' सिर्फ किताबों या स्कूल की किताबों में पढ़ने की चीज नहीं है, यह हर उस भारतीय की धड़कन है जो अपनी मिट्टी से प्यार करता है। चाहे कोई किसी भी राज्य, भाषा या धर्म का हो, यह गीत सुनते ही एक जैसा जज्बा सबके अंदर जाग उठता है। यही इसकी सबसे बड़ी खासियत है और यही वजह है कि डेढ़ सौ साल बाद भी यह उतना ही ताजा और असरदार लगता है, जितना बंकिमचंद्र के जमाने में लगता था।

वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय पुनर्जागरण से 'विकसित भारत @2047' की ओर

–डॉ. दीपक कुमार
एफ.आर.एम., एफ.आर.आर., एस.सी.आर.
मुख्य प्रबंधक (अनुसंधान), यूनियन बैंक ऑफ इंडिया,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

राष्ट्र केवल भौगोलिक सीमाओं अथवा शासन व्यवस्था का नाम नहीं, बल्कि उसकी सांस्कृतिक स्मृतियों, साझा मूल्यों, ऐतिहासिक अनुभवों और नागरिकों की सामूहिक चेतना का जीवंत स्वरूप होता है। भारत जैसे बहुभाषी, बहुधार्मिक एवं बहुसांस्कृतिक राष्ट्र में राष्ट्रीय एकता का आधार ऐसे प्रतीक हैं जो विविधताओं को एक सूत्र में पिरोते हैं। 'वन्दे मातरम्' ऐसा ही एक अमर राष्ट्रीय प्रतीक है।

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 'वन्दे मातरम्' के माध्यम से भारतभूमि को केवल राजनीतिक इकाई नहीं, बल्कि मातृशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया। यह भारतीय परंपरा के 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' के शाश्वत दर्शन का आधुनिक साहित्यिक रूप है। स्वतंत्रता संग्राम में यह गीत राष्ट्रीय चेतना, त्याग और स्वाधीनता का प्रेरक मंत्र बना। आज, जब भारत 'अमृतकाल' में 'विकसित भारत @2047' के लक्ष्य की ओर अग्रसर है, तब 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता ऐतिहासिक स्मृति से आगे बढ़कर उत्तरदायी नागरिकता, सांस्कृतिक आत्मविश्वास, संवैधानिक कर्तव्य, पर्यावरण संरक्षण, आत्मनिर्भरता और समावेशी राष्ट्रनिर्माण की प्रेरणा के रूप में उभरती है।

वन्दे मातरम् का दार्शनिक आधारः राष्ट्रभक्ति से राष्ट्रधर्म तक

भारतीय संस्कृति में राष्ट्र की अवधारणा केवल राजनीतिक सीमाओं या राज्यसत्ता तक सीमित नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और नैतिक चेतना पर आधारित रही है। वैदिक साहित्य, उपनिषद तथा महाभारत में मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, लोककल्याण और सामूहिक उत्तरदायित्व को राष्ट्रजीवन का आधार माना गया है। इसी परंपरा में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 'वन्दे मातरम्' के माध्यम से भारतभूमि को प्रकृति, संस्कृति और शक्ति के समन्वित स्वरूप के रूप में चित्रित किया।

गीत की पंक्ति ''सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्, शस्यश्यामलाम् मातरम्'' केवल काव्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि जल–संरक्षण, कृषि समृद्धि, पर्यावरणीय संतुलन तथा उत्पादक अर्थव्यवस्था जैसे राष्ट्रीय आदर्शों का प्रतीक है। इस दृष्टि से 'वन्दे मातरम्' भावनात्मक राष्ट्रभक्ति से आगे बढ़कर नागरिक उत्तरदायित्व और सतत विकास का सांस्कृतिक घोष बन जाता है। आज, जब भारत 'विकसित भारत @2047' के लक्ष्य की ओर अग्रसर है, तब 'वन्दे मातरम्' का संदेश राष्ट्रप्रेम को कर्तव्य, आत्मनिर्भरता, पर्यावरण संरक्षण और जनभागीदारी से जोड़ते हुए 'राष्ट्रभक्ति' को 'राष्ट्रधर्म' में रूपांतरित करता है।

वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय पुनर्जागरण का मंत्र

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारत राजनीतिक दासता, आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक हीनभावना के दौर से गुजर रहा था। 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद अंग्रेजी शासन ने अपने नियंत्रण को और सुदृढ़ किया, जिससे भारतीय समाज में राष्ट्रीय आत्मविश्वास का ह्रास हुआ। ऐसे समय में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने अनुभव किया कि राजनीतिक स्वतंत्रता से पहले सांस्कृतिक जागरण आवश्यक है।

इसी उद्देश्य से उन्होंने 1870 के दशक में 'वन्दे मातरम्' की रचना की, जिसे 1882 में प्रकाशित आनन्दमठ में स्थान मिला। यह गीत शीघ्र ही साहित्य की सीमाओं से निकलकर राष्ट्रीय चेतना का उद्घोष बन गया। श्री अरविन्द ने इसे भारतीय राष्ट्रवाद का ''मंत्र'' कहा, क्योंकि इसने करोड़ों भारतीयों में मातृभूमि के प्रति समर्पण, स्वाभिमान और स्वतंत्रता का भाव जागृत किया। इस प्रकार 'वन्दे मातरम्' केवल एक साहित्यिक रचना नहीं रहा, बल्कि भारतीय राष्ट्रीय पुनर्जागरण का वैचारिक आधार और स्वतंत्रता आंदोलन की प्रेरक शक्ति बन गया।

स्वतंत्रता आंदोलन में वन्दे मातरम्

सन् 1896 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने पहली बार 'वन्दे मातरम्' का सार्वजनिक गायन किया। इसके बाद यह गीत कांग्रेस अधिवेशनों, छात्र आंदोलनों, जनसभाओं और स्वतंत्रता संग्राम के प्रत्येक महत्वपूर्ण चरण का अभिन्न अंग बन गया। 1905 में लॉर्ड कर्जन द्वारा बंगाल विभाजन की घोषणा के विरुद्ध चले स्वदेशी आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' राष्ट्रीय प्रतिरोध का प्रतीक बन गया। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार, स्वदेशी उद्योगों के समर्थन और राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन के दौरान यह गीत जन–जन के मुख से गूंजने लगा।

ब्रिटिश सरकार ने इसकी लोकप्रियता को अपने शासन के लिए चुनौती माना। अनेक स्थानों पर इसके सार्वजनिक गायन पर प्रतिबंध लगाए गए, जुलूसों को रोका गया और अनेक युवाओं को केवल 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष करने के कारण कारावास का सामना करना पड़ा। इतिहासकारों का मत है कि जिस प्रकार फ्रांस की क्रांति में ला मार्सेज (La Marseillaise) ने जनता को प्रेरित किया, उसी प्रकार भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' ने राष्ट्रीय चेतना को स्वर प्रदान किया।

वन्दे मातरम् और संविधान

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्र के समक्ष ऐसे राष्ट्रीय प्रतीकों के निर्धारण का प्रश्न था, जो स्वतंत्रता संग्राम की विरासत और लोकतांत्रिक भारत की विविधता दोनों का सम्मान कर सकें। इसी संदर्भ में 24 जनवरी 1950 को संविधान सभा के अंतिम अधिवेशन में तत्कालीन अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने घोषणा की कि 'जन गण मन' भारत का राष्ट्रगान होगा तथा 'वन्दे मातरम्', जिसने स्वतंत्रता संग्राम में ऐतिहासिक भूमिका निभाई है, उसे राष्ट्रगान के समान सम्मान प्राप्त होगा। यह निर्णय भारतीय लोकतंत्र की समन्वयकारी दृष्टि का परिचायक था। संविधान सभा ने एक ओर 'जन गण मन' को संवैधानिक राष्ट्रगान के रूप में स्वीकार किया, वहीं दूसरी ओर 'वन्दे मातरम्' के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक योगदान को समान आदर प्रदान किया। इससे स्पष्ट होता है कि 'वन्दे मातरम्' किसी विवाद का विषय नहीं, बल्कि भारतीय राष्ट्रीय चेतना, स्वतंत्रता संघर्ष की विरासत और संवैधानिक मूल्यों का सम्मानित प्रतीक है।

भारतीय संविधान नागरिकों को केवल मौलिक अधिकार ही नहीं, बल्कि अनुच्छेद 51(क) के अंतर्गत मौलिक कर्तव्यों का भी बोध कराता है। संविधान, राष्ट्रध्वज एवं राष्ट्रगान का सम्मान, भारत की एकता एवं अखण्डता की रक्षा, सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण, पर्यावरण की सुरक्षा तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास प्रत्येक नागरिक का दायित्व है। 'वन्दे मातरम्' की मूल भावना इन्हीं कर्तव्यों का सांस्कृतिक और भावनात्मक स्वरूप प्रस्तुत करती है। यह गीत मातृभूमि के प्रति केवल श्रद्धा व्यक्त करने तक सीमित नहीं, बल्कि उसके सम्मान, समृद्धि और संरक्षण के लिए सक्रिय नागरिक उत्तरदायित्व का संदेश देता है।

विकसित भारत @2047: 'वन्दे मातरम्' की समकालीन पुनर्व्याख्या

स्वतंत्रता संग्राम के समय 'वन्दे मातरम्' विदेशी शासन से मुक्ति और राष्ट्रीय स्वाभिमान का प्रतीक था। आज, स्वतंत्र भारत में इसकी प्रासंगिकता राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी नागरिकता के रूप में अभिव्यक्त होती है। आधुनिक संदर्भ में राष्ट्रभक्ति का अर्थ केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि ईमानदारी, संविधान के प्रति सम्मान, सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा, पर्यावरण संरक्षण, डिजिटल उत्तरदायित्व तथा सामाजिक समरसता के प्रति प्रतिबद्धता है। 'वन्दे मातरम्' प्रत्येक नागरिक को अपने–अपने कार्यक्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान देकर राष्ट्र की उन्नति में सहभागी बनने की प्रेरणा देता है।

स्वतंत्रता के शताब्दी वर्ष 2047 तक भारत को विकसित राष्ट्र बनाने का राष्ट्रीय संकल्प केवल आर्थिक वृद्धि का लक्ष्य नहीं है। 'विकसित भारत @2047' का अर्थ एक ऐसे भारत का निर्माण है जो आर्थिक रूप से समृद्ध, तकनीकी रूप से आत्मनिर्भर, सामाजिक रूप से समावेशी, पर्यावरणीय दृष्टि से टिकाऊ, सांस्कृतिक रूप से आत्मविश्वासी और वैश्विक स्तर पर उत्तरदायी नेतृत्व प्रदान करने में सक्षम हो।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 'अमृतकाल' को भारत के लिए ''कर्तव्य काल'' की संज्ञा दी है। यह अभिव्यक्ति अत्यंत सार्थक है, क्योंकि विकसित राष्ट्र केवल सरकारों के प्रयासों से नहीं बनते, वे नागरिकों के अनुशासन, परिश्रम, नवाचार और सामूहिक संकल्प से निर्मित होते हैं। यहीं 'वन्दे मातरम्' पुनः प्रासंगिक हो उठता है।

स्वतंत्रता संग्राम में इसने भारतीयों को राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए प्रेरित किया था; आज यही भावना प्रत्येक नागरिक को विकसित भारत के निर्माण हेतु अपने–अपने क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान देने की प्रेरणा देती है। यदि कोई वैज्ञानिक नई तकनीक विकसित करता है, कोई किसान आधुनिक कृषि अपनाता है, कोई शिक्षक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करता है, कोई चिकित्सक सेवा–भाव से कार्य करता है, कोई सैनिक सीमाओं की रक्षा करता है, कोई बैंककर्मी ईमानदारी से वित्तीय समावेशन को गति देता है तो ये सभी आधुनिक अर्थों में 'वन्दे मातरम्' की भावना को ही जीवन्त करते हैं।

वन्दे मातरम् और आत्मनिर्भर भारत

इतिहास साक्षी है कि राजनीतिक स्वतंत्रता तभी स्थायी बनती है जब उसके साथ आर्थिक स्वावलंबन भी जुड़ा हो। यही कारण था कि 1905 के स्वदेशी आंदोलन में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के साथ–साथ स्वदेशी उद्योगों के विकास पर बल दिया गया। आज यही विचार 'आत्मनिर्भर भारत' के रूप में नए स्वरूप में हमारे सामने उपस्थित है। आत्मनिर्भर भारत का उद्देश्य आत्मकेंद्रित अर्थव्यवस्था का निर्माण नहीं, बल्कि भारत को वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं में एक सशक्त, प्रतिस्पर्धी और नवाचार–प्रधान अर्थव्यवस्था के रूप में स्थापित करना है। रक्षा उत्पादन, सेमीकंडक्टर, हरित ऊर्जा, जैव प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष अनुसंधान, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और विनिर्माण जैसे क्षेत्रों में भारत की प्रगति इस दिशा का स्पष्ट संकेत देती है। यहाँ 'वन्दे मातरम्' केवल भावनात्मक उद्घोष नहीं रह जाता; यह स्वदेशी नवाचार, गुणवत्ता, उद्यमिता और आत्मविश्वास का नैतिक आधार बन जाता है।

आधुनिक भारत में राष्ट्रनिर्माण का एक महत्वपूर्ण आधार वित्तीय समावेशन है। जब समाज का अंतिम व्यक्ति औपचारिक बैंकिंग व्यवस्था से जुड़ता है, तब आर्थिक सशक्तीकरण के साथ समावेशी विकास को भी गति मिलती है। प्रधानमंत्री जनधन योजना, डिजिटल भुगतान, मुद्रा योजना तथा प्रत्यक्ष लाभ अंतरण जैसी पहलों ने करोड़ों

नागरिकों को औपचारिक वित्तीय तंत्र से जोड़कर पारदर्शिता और आर्थिक अवसरों का विस्तार किया है। आज बैंक केवल वित्तीय संस्थाएँ नहीं, बल्कि राष्ट्रनिर्माण के सक्रिय भागीदार हैं। किसान, महिला उद्यमी, सूक्ष्म एवं लघु उद्योग, स्टार्टअप तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था तक वित्त की पहुँच सुनिश्चित करना राष्ट्रीय उत्पादकता और आत्मनिर्भरता को सुदृढ़ बनाता है। इस दृष्टि से वित्तीय समावेशन केवल आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि मातृभूमि की समृद्धि और समावेशी विकास के प्रति 'वन्दे मातरम्' की भावना का व्यावहारिक स्वरूप है।

डिजिटल इंडियाः 'वन्दे मातरम्' का तकनीकी युग में नवीन स्वरूप

इक्कीसवीं शताब्दी में भारत विश्व की अग्रणी डिजिटल अर्थव्यवस्थाओं में उभर रहा है। आधार, यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस, डिजिलॉकर तथा प्रत्यक्ष लाभ अंतरण जैसी डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचनाओं ने शासन को अधिक पारदर्शी, समावेशी और नागरिक–केंद्रित बनाया है। इससे बैंकिंग, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सरकारी सेवाओं तक आम नागरिक की पहुँच सरल और प्रभावी हुई है। डिजिटल परिवर्तन केवल तकनीकी उपलब्धि नहीं, बल्कि उत्तरदायी नागरिक सहभागिता का माध्यम भी है। डिजिटल मंचों का उपयोग सत्य, नवाचार, पारदर्शिता और राष्ट्रहित के लिए करना आधुनिक अर्थों में मातृभूमि की सेवा है। इस दृष्टि से 'डिजिटल इंडिया' प्रत्येक नागरिक को राष्ट्र की विकास यात्रा का सक्रिय सहभागी बनाते हुए 'वन्दे मातरम्' की उस भावना को साकार करता है, जिसमें राष्ट्र की उन्नति सामूहिक प्रयास और उत्तरदायी नागरिकता पर आधारित होती है।

पर्यावरणीय चेतनाः 'सुजलाम् सुफलाम्' की समकालीन व्याख्या

वन्दे मातरम्' की प्रारम्भिक पंक्तियाँ भारतीय प्रकृति के अप्रतिम सौन्दर्य और समृद्धि का चित्र प्रस्तुत करती हैं:

"सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्, शस्यश्यामलाम् मातरम्।"

इन शब्दों में केवल काव्यात्मक सौन्दर्य नहीं, बल्कि प्रकृति के प्रति भारतीय दृष्टिकोण का गहन दर्शन निहित है। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने मातृभूमि का वर्णन किसी राजनैतिक सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि जल, वन, वायु, कृषि और जैव विविधता से परिपूर्ण जीवंत प्रकृति के रूप में किया। आज जब विश्व जलवायु परिवर्तन, जल संकट, जैव विविधता के क्षरण और प्रदूषण जैसी चुनौतियों का सामना कर रहा है, तब 'वन्दे मातरम्' का यह प्रकृति–केंद्रित संदेश अत्यंत प्रासंगिक हो उठता है।

भारत सरकार द्वारा प्रारंभ किया गया 'मिशन लाइफ' इसी भावना को आधुनिक संदर्भ में अभिव्यक्त करता है। जल संरक्षण, ऊर्जा की बचत, एकल–उपयोग प्लास्टिक से परहेज, वृक्षारोपण, स्वच्छता तथा सतत उपभोग जैसे छोटे–छोटे नागरिक प्रयास राष्ट्रीय पर्यावरणीय सुरक्षा के बड़े आधार बनते हैं।

वास्तव में, यदि हम अपनी नदियों को प्रदूषित होने से बचाते हैं, जल का संरक्षण करते हैं, जैव विविधता का सम्मान करते हैं और प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करते हैं, तो हम केवल पर्यावरण की रक्षा नहीं कर रहे होते, बल्कि 'सुजलाम् सुफलाम्' भारत की कल्पना को साकार कर रहे होते हैं। यही 'वन्दे मातरम्' की समकालीन पर्यावरणीय व्याख्या है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और युवा शक्तिः भविष्य के भारत का आधार

भारत आज विश्व का सर्वाधिक युवा राष्ट्र बनने की दिशा में अग्रसर है। यह जनसांख्यिकीय शक्ति तभी राष्ट्रीय

संपदा में परिवर्तित हो सकती है, जब उसे गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, कौशल, नवाचार और नैतिक मूल्यों से सशक्त बनाया जाए। इसी उद्देश्य से राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन का माध्यम न मानकर, चरित्र निर्माण, संवैधानिक मूल्यों, भारतीय ज्ञान परंपरा, अनुसंधान, नवाचार और वैश्विक प्रतिस्पर्धा से जोड़ती है।

वन्दे मातरम्' की भावना भी यही संदेश देती है कि राष्ट्र की सेवा केवल युद्धभूमि में नहीं, बल्कि विद्यालय, विश्वविद्यालय, प्रयोगशाला, उद्योग, कृषि, चिकित्सा, न्यायपालिका, बैंकिंग, विज्ञान, खेल तथा कला के प्रत्येक क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करके भी की जा सकती है।

स्वामी विवेकानन्द का प्रसिद्ध आह्वानः ''उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्ति तक मत रुको।'' आज के युवाओं के लिए उतना ही प्रासंगिक है जितना स्वतंत्रता आंदोलन के समय था। आज का युवा जब स्टार्टअप स्थापित करता है, नई तकनीक विकसित करता है, अंतरराष्ट्रीय खेल प्रतियोगिताओं में भारत का गौरव बढ़ाता है, या सामाजिक नवाचार के माध्यम से समाज की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है, तब वह राष्ट्रनिर्माण की उसी परंपरा को आगे बढ़ा रहा होता है जिसकी प्रेरणा 'वन्दे मातरम्' से प्राप्त होती है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्यः राष्ट्रीय गीत और राष्ट्रनिर्माण

विश्व इतिहास का अध्ययन स्पष्ट करता है कि प्रत्येक महान राष्ट्र ने अपने राष्ट्रीय जीवन में ऐसे प्रतीकों का निर्माण किया है जो नागरिकों में राष्ट्रीय एकता और सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास करते हैं। फ्रांस का राष्ट्रीय गीत 'ला मार्सेयेज', संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रीय गीत 'द स्टार–स्पैंगल्ड बैनर', जापान का राष्ट्रीय गीत 'किमिगायो' तथा दक्षिण अफ्रीका का बहुभाषी राष्ट्रीय गीत अपने–अपने देशों की ऐतिहासिक चेतना, राष्ट्रीय गौरव और सांस्कृतिक मूल्यों के सशक्त प्रतीक हैं।

भारत में 'वन्दे मातरम्' की भूमिका भी इसी परंपरा में अत्यंत विशिष्ट है। किंतु इसकी विशिष्टता इस तथ्य में निहित है कि यह केवल राष्ट्र–राज्य का गीत नहीं, बल्कि मातृभूमि, प्रकृति, संस्कृति और आध्यात्मिक चेतना का समन्वित स्तुतिगान है। यही कारण है कि इसकी प्रासंगिकता राजनीतिक परिस्थितियों से परे जाकर भारतीय सभ्यता की निरंतरता का प्रतीक बन जाती है।

वैश्वीकरण के इस युग में जब सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय आत्मविश्वास नई चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, तब 'वन्दे मातरम्' भारतीय समाज को यह स्मरण कराता है कि आधुनिकता और परंपरा परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक–दूसरे के पूरक हो सकते हैं।

समावेशी राष्ट्रवादः 'वन्दे मातरम्' का वास्तविक संदेश

भारतीय राष्ट्रवाद का आधार किसी जाति, भाषा, धर्म अथवा क्षेत्र की श्रेष्ठता नहीं, बल्कि 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जैसे सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित रहा है। 'वन्दे मातरम्' इसी समावेशी राष्ट्रवाद का प्रतिनिधित्व करता है। यह किसी विशेष समुदाय के विरुद्ध नहीं, बल्कि मातृभूमि के प्रति प्रेम, सम्मान और कर्तव्य का गीत है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि 'वन्दे मातरम्' को केवल औपचारिक गायन तक सीमित न रखा जाए, बल्कि उसके मूल संदेश, राष्ट्रीय एकता, सामाजिक सद्भाव, संवैधानिक मर्यादा, पर्यावरण संरक्षण, आर्थिक

आत्मनिर्भरता और नागरिक उत्तरदायित्व को व्यवहार में उतारा जाए।

जब कोई नागरिक ईमानदारी से अपने दायित्वों का पालन करता है, संविधान का सम्मान करता है, विविधता में एकता की भावना को मजबूत करता है और राष्ट्रहित को व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर रखता है, तभी वह 'वन्दे मातरम्' के वास्तविक अर्थ को जीवन में उतारता है।

स्वतंत्रता के मंत्र से विकसित भारत का मार्गदर्शक

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 'वन्दे मातरम्' केवल भारत के स्वतंत्रता संग्राम का एक गौरवपूर्ण अध्याय नहीं, बल्कि राष्ट्रनिर्माण का एक कालातीत दर्शन है। इसने उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में भारतीय समाज को राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए प्रेरित किया; इक्कीसवीं शताब्दी में यही भावना विकसित भारत, आत्मनिर्भर भारत, डिजिटल इंडिया, पर्यावरणीय उत्तरदायित्व, सामाजिक समरसता और नागरिक कर्तव्यबोध के रूप में नए आयाम ग्रहण कर रही है।

आज आवश्यकता इस बात की नहीं है कि हम केवल 'वन्दे मातरम्' का उच्चारण करें, बल्कि उसके संदेश को अपने व्यक्तिगत, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन का मार्गदर्शक बनाएँ। यदि प्रत्येक नागरिक अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक पालन करे, उत्कृष्टता को जीवन का लक्ष्य बनाए, संविधान के आदर्शों का सम्मान करे, प्रकृति का संरक्षण करे, नवाचार को अपनाए और राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखे, तो विकसित भारत @2047 का संकल्प केवल सरकारी कार्यक्रम न रहकर एक जनांदोलन बन जाएगा।

महर्षि अरविन्द ने 'वन्दे मातरम्' को भारतीय राष्ट्रवाद का मंत्र कहा था। आज उसी मंत्र की नई व्याख्या यह है कि राष्ट्रप्रेम केवल भावना नहीं, बल्कि उत्तरदायी कर्म है; केवल स्मृति नहीं, बल्कि सतत संकल्प है; केवल उद्घोष नहीं, बल्कि राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के प्रति आजीवन प्रतिबद्धता है।

यदि स्वतंत्रता संग्राम में 'वन्दे मातरम्' ने भारतीयों को गुलामी की बेड़ियाँ तोड़ने का साहस दिया था, तो अमृतकाल में वही भावना भारत को विकसित, आत्मनिर्भर, समावेशी, नवोन्मेषी और विश्वकल्याण के लिए समर्पित राष्ट्र बनाने की प्रेरणा प्रदान कर सकती है। यही इस अमर गीत की शाश्वत प्रासंगिकता है।

संदर्भ

1. भारतीय संविधान, विशेषतः अनुच्छेद 51(क) (मौलिक कर्तव्य)
2. संविधान सभा वाद–विवाद, 24 जनवरी 1950 (राष्ट्रगान एवं 'वन्दे मातरम्' संबंधी घोषणा)
3. श्री बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का उपन्यास 'आनन्दमठ'।
4. श्री अरविन्द के वन्दे मातरम् एवं भारतीय राष्ट्रवाद पर लेख एवं भाषण।
5. रवीन्द्रनाथ ठाकुर के राष्ट्रीय चेतना एवं भारतीय राष्ट्रवाद संबंधी भाषण और लेख
6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार
7. 'विकसित भारत @2047': दृष्टि दस्तावेज, भारत सरकार
8. 'मिशन लाइफ': जीवनशैली आधारित पर्यावरण संरक्षण संबंधी दस्तावेज। पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार।

आधुनिक भारत में वन्दे मातरम् : समकालीन संदर्भ

–रमेश कुमार पाण्डेय
निरीक्षक (हिंदी अनुवादक)
के.रि.पु.बल, दलगांव, असम

भारतीय राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में जिन साहित्यिक कृतियों ने ऐतिहासिक भूमिका निभाई है, उनमें 'वन्दे मातरम्' का स्थान सर्वोपरि है। यह गीत केवल राष्ट्रभक्ति की भावात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक दर्शन, स्वतंत्रता–संग्राम की वैचारिक ऊर्जा तथा राष्ट्रीय आत्मसम्मान का सशक्त उद्घोष है। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में उस समय सामने आया, जब भारतीय समाज राजनीतिक पराधीनता के साथ–साथ मानसिक दासता से भी जूझ रहा था। ऐसे समय में 'वन्दे मातरम्' ने भारतीय जनमानस में आत्मविश्वास, स्वाभिमान और स्वतंत्रता की आकांक्षा का संचार किया।

स्वतंत्र भारत में इसकी भूमिका केवल ऐतिहासिक स्मृति तक सीमित नहीं है। वर्तमान समय में जब वैश्वीकरण, डिजिटलीकरण, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सांस्कृतिक परिवर्तन और सामाजिक विविधताओं के बीच राष्ट्रीय पहचान के नए प्रश्न उभर रहे हैं, तब 'वन्दे मातरम्' भारतीयता के उन मूलभूत मूल्यों का स्मरण कराता है जो राष्ट्र को भावनात्मक, सांस्कृतिक और नैतिक स्तर पर एकसूत्र में बाँधते हैं। यह गीत नागरिक उत्तरदायित्व, लोकतांत्रिक मूल्यों, सांस्कृतिक समन्वय तथा राष्ट्रीय एकता की भावना को सुदृढ़ करने में आज भी प्रासंगिक है।

''जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।''

भारतीय संस्कृति में मातृभूमि को केवल भूमि का टुकड़ा नहीं, बल्कि जीवनदायिनी शक्ति के रूप में देखा गया है। यही कारण है कि भारतीय साहित्य, दर्शन और राष्ट्रीय आंदोलन में मातृभूमि के प्रति श्रद्धा सर्वोच्च मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित रही है। 'वन्दे मातरम्' इसी सांस्कृतिक चेतना का सर्वाधिक प्रभावशाली साहित्यिक रूप है।

उन्नीसवीं शताब्दी का भारत राजनीतिक दासता, आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक हीनभावना से ग्रस्त था। औपनिवेशिक शासन केवल प्रशासनिक नियंत्रण तक सीमित नहीं था; उसका उद्देश्य भारतीय समाज की आत्मा को भी दुर्बल बनाना था। ऐसे समय में साहित्य ने राष्ट्रीय पुनर्जागरण का दायित्व निभाया। इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 'वन्दे मातरम्' की रचना की, जिसने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को वैचारिक दिशा प्रदान की।

'वन्दे मातरम्' का महत्व केवल इसलिए नहीं है कि यह राष्ट्रीय गीत है, बल्कि इसलिए भी कि इसने भारतीय समाज को यह विश्वास दिलाया कि राष्ट्र केवल राजनीतिक संस्था नहीं, बल्कि साझा संस्कृति, इतिहास, प्रकृति, स्मृतियों और मूल्यों का जीवंत समुदाय है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान असंख्य क्रांतिकारियों, विद्यार्थियों, महिलाओं और सामान्य नागरिकों ने इसे प्रेरणा–स्रोत के रूप में अपनाया।

आज स्वतंत्रता प्राप्ति के लगभग आठ दशक बाद भारत नई चुनौतियों और नई संभावनाओं के दौर से गुजर रहा है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल संचार, वैश्विक अर्थव्यवस्था और तीव्र सामाजिक

परिवर्तन ने विकास के नए आयाम खोले हैं। दूसरी ओर सामाजिक ध्रुवीकरण, सांस्कृतिक असंतुलन, पर्यावरणीय संकट, साइबर अपराध और सूचना–भ्रम जैसी चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। ऐसे समय में यह प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है कि क्या 'वन्दे मातरम्' केवल ऐतिहासिक धरोहर है, अथवा वह आज भी राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभा सकता है?

वन्दे मातरम् : भारतीय राष्ट्रीय चेतना का सांस्कृतिक उद्घोष

राष्ट्र केवल राजनीतिक सीमाओं का नाम नहीं होता। राष्ट्र का वास्तविक स्वरूप उसकी संस्कृति, भाषा, परंपरा, इतिहास, स्मृतियों और साझा आकांक्षाओं से निर्मित होता है। इसी कारण विश्व के प्रत्येक स्वतंत्र राष्ट्र के पास ऐसे सांस्कृतिक प्रतीक होते हैं जो नागरिकों को भावनात्मक रूप से जोड़ते हैं। 'वन्दे मातरम्' भारत का ऐसा ही सांस्कृतिक प्रतीक है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह किसी व्यक्ति, शासन या सत्ता की स्तुति नहीं करता, बल्कि मातृभूमि के प्रति श्रद्धा प्रकट करता है। इसीलिए यह गीत समय के साथ पुराना नहीं हुआ; बल्कि प्रत्येक पीढ़ी में नए अर्थों के साथ पुनर्जीवित होता रहा।

बंकिमचंद्र ने भारतभूमि को ''सुजलाम्, सुफलाम्, मलयजशीतलाम्'' कहकर केवल प्राकृतिक सौंदर्य का चित्रण नहीं किया, बल्कि यह बताया कि राष्ट्र का वास्तविक वैभव उसकी प्रकृति, संस्कृति और जनता में निहित होता है। यह दृष्टि आज के पर्यावरणीय विमर्श में भी अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होती है। जब विश्व जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और पारिस्थितिक संकट से जूझ रहा है, तब मातृभूमि को पूज्य मानने की भारतीय भावना पर्यावरण संरक्षण का नैतिक आधार भी प्रस्तुत करती है। इस प्रकार 'वन्दे मातरम्' केवल राष्ट्रभक्ति का गीत नहीं, बल्कि भारतीय सभ्यता के सांस्कृतिक दर्शन का सजीव दस्तावेज है।

आधुनिक भारत की बदलती परिस्थितियाँ और वन्दे मातरम्

इक्कीसवीं शताब्दी का भारत तीव्र सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। वैश्वीकरण ने जहाँ भारत को विश्व अर्थव्यवस्था और ज्ञान–व्यवस्था से जोड़ा है, वहीं सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय मूल्यों के समक्ष नई चुनौतियाँ भी प्रस्तुत की हैं।

डिजिटल युग में सूचनाओं की गति अत्यंत तीव्र हो गई है, किंतु इस तीव्रता के साथ सूचना–भ्रम (misinformation), वैचारिक ध्रुवीकरण और सांस्कृतिक सतहीकरण की समस्याएं भी बढ़ी हैं। ऐसे परिवेश में 'वन्दे मातरम्' एक सांस्कृतिक स्मृति के रूप में राष्ट्र को उसकी जड़ों से जोड़ने का कार्य करता है। यह स्मरण कराता है कि तकनीकी प्रगति तभी सार्थक है जब वह सांस्कृतिक चेतना और नैतिक मूल्यों के साथ संतुलित हो।

राष्ट्रीय एकता का पुनर्परिभाषण : 'वन्दे मातरम्' के आलोक में

आधुनिक भारत की सबसे बड़ी शक्ति उसकी विविधता है। भाषा, धर्म, क्षेत्र, परंपरा और जीवनशैली की विविधता भारत को अद्वितीय बनाती है। किंतु यही विविधता यदि असंतुलित हो जाए तो सामाजिक विभाजन का कारण भी बन सकती है।

'वन्दे मातरम्' इस विविधता को एक साझा भावभूमि प्रदान करता है। यह गीत किसी क्षेत्रीय पहचान को नकारता नहीं, बल्कि उन्हें मातृभूमि के व्यापक भाव में समाहित करता है। राष्ट्रीय एकता का अर्थ एकरूपता

नहीं, बल्कि विविधताओं के बीच समन्वय है—और यही विचार 'वन्दे मातरम्' की मूल भावना में निहित है।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान विभिन्न भाषाओं, संस्कृतियों और क्षेत्रों के लोग एक ही भाव से प्रेरित हुए थे। यह तथ्य इस बात का प्रमाण है कि सांस्कृतिक प्रतीक जब साझा होते हैं, तो वे राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करते हैं।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और भारतीयता की अवधारणा

भारतीय राष्ट्रवाद पश्चिमी राष्ट्रवाद की तुलना में अधिक सांस्कृतिक और भावनात्मक आधार पर विकसित हुआ। भारत में राष्ट्र का आधार केवल राजनीतिक सत्ता नहीं, बल्कि सांस्कृतिक निरंतरता रही है।

'वन्दे मातरम्' इसी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का प्रतिनिधि प्रतीक है। इसमें मातृभूमि को माता के रूप में स्वीकार किया गया है, जो भारतीय दर्शन में 'शक्ति', 'प्रकृति' और 'जीवनदायिनी ऊर्जा' का प्रतीक है। यह दृष्टि भारतीयता की उस गहरी परंपरा से जुड़ी है जिसमें पृथ्वी को ''माता'' माना गया हैः—

''माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः''

यह भाव आधुनिक पर्यावरणीय नैतिकता के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह मनुष्य और प्रकृति के बीच संबंध को शोषण के बजाय संरक्षण और सम्मान के रूप में प्रस्तुत करता है।

संवैधानिक मूल्यों और लोकतांत्रिक चेतना के संदर्भ में 'वन्दे मातरम्'

भारतीय संविधान न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित है। यद्यपि 'वन्दे मातरम्' संविधान से पूर्व रचित है, फिर भी इसकी भावना संविधान की मूल आत्मा के अनुरूप है। संविधान का अनुच्छेद 51(क) नागरिकों को राष्ट्र के प्रति कर्तव्यों के पालन हेतु प्रेरित करता है।

इनमें राष्ट्रीय प्रतीकों का सम्मान, सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण और देश की एकता बनाए रखना प्रमुख हैं। 'वन्दे मातरम्' इन मूल्यों को भावनात्मक आधार प्रदान करता है। यह गीत नागरिकों को यह स्मरण कराता है कि अधिकारों के साथ—साथ कर्तव्य भी लोकतंत्र की मजबूती के लिए आवश्यक हैं। अतः इसे केवल भावनात्मक गीत नहीं, बल्कि नागरिक चेतना के संवर्धन का माध्यम भी माना जा सकता है।

मौलिक विश्लेषण

यदि 'वन्दे मातरम्' को केवल ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए, तो उसका महत्व स्वतंत्रता आंदोलन तक सीमित प्रतीत हो सकता है। किंतु यदि इसे सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में समझा जाए, तो इसकी प्रासंगिकता समय के साथ और अधिक बढ़ती दिखाई देती है। आज का भारत ''राष्ट्र निर्माण'' की प्रक्रिया में केवल भौतिक विकास पर निर्भर नहीं रह सकता। सामाजिक समरसता, नैतिक मूल्य, सांस्कृतिक पहचान और नागरिक उत्तरदायित्व भी उतने ही आवश्यक हैं। इस संदर्भ में 'वन्दे मातरम्' एक वैचारिक सेतु का कार्य करता है जो अतीत की प्रेरणा को वर्तमान की आवश्यकताओं और भविष्य की आकांक्षाओं से जोड़ता है।

युवा पीढ़ी और 'वन्दे मातरम्' : राष्ट्रनिर्माण की ऊर्जा

भारत आज विश्व के सबसे युवा देशों में से एक है। यह जनसांख्यिकीय लाभ तभी सार्थक हो सकता है जब

युवा पीढ़ी केवल रोजगार–उन्मुख न होकर राष्ट्र–उन्मुख नागरिक चेतना से भी युक्त हो। 'वन्दे मातरम्' युवाओं को केवल भावनात्मक देशभक्ति नहीं सिखाता, बल्कि कर्तव्य, अनुशासन और सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना भी विकसित करता है। स्वतंत्रता आंदोलन में जिस प्रकार छात्रों और युवाओं ने इस गीत को प्रेरणा बनाकर संघर्ष किया, उसी प्रकार आज यह उन्हें सामाजिक सुधार, नवाचार, स्टार्टअप संस्कृति और राष्ट्र निर्माण की दिशा में प्रेरित कर सकता है। यदि युवा वर्ग तकनीकी रूप से सक्षम होने के साथ–साथ सांस्कृतिक रूप से भी जड़ों से जुड़ा रहे, तो भारत की विकास यात्रा अधिक संतुलित और स्थायी बन सकती है।

डिजिटल युग में 'वन्दे मातरम्' : पहचान और चेतना का पुनर्निर्माण

डिजिटल युग ने अभिव्यक्ति को सरल और वैश्विक बना दिया है। आज 'वन्दे मातरम्' केवल सभाओं या राष्ट्रीय कार्यक्रमों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह सोशल मीडिया, डिजिटल अभियान, ऑनलाइन सांस्कृतिक कार्यक्रमों और वैश्विक मंचों पर भी दिखाई देता है। किन्तु इसी डिजिटल युग में सूचना विकृति (information distortion) और ऐतिहासिक तथ्यों की गलत व्याख्या की समस्या भी बढ़ी है। इसलिए 'वन्दे मातरम्' को सही ऐतिहासिक संदर्भ में समझना और प्रस्तुत करना अत्यंत आवश्यक है। यह गीत डिजिटल भारत में एक सांस्कृतिक पहचान–चिह्न (cultural identity marker) के रूप में कार्य कर सकता है, जो भारत की सभ्यता को वैश्विक स्तर पर विशिष्ट बनाता है।

वैश्वीकरण और भारतीय सांस्कृतिक आत्मविश्वास

वैश्वीकरण ने आर्थिक और सांस्कृतिक सीमाओं को काफी हद तक कम किया है। भारतीय युवा आज विश्व के विभिन्न देशों में कार्यरत हैं। ऐसी स्थिति में प्रश्न उठता है कि राष्ट्रीय पहचान कैसे सुरक्षित रहे? 'वन्दे मातरम्' इस प्रश्न का उत्तर सांस्कृतिक स्तर पर देता है। यह बताता है कि वैश्विक नागरिक बनने के लिए अपनी जड़ों से कटना आवश्यक नहीं है। बल्कि स्थानीय संस्कृति में स्थिरता ही वैश्विक योगदान को अधिक प्रभावशाली बनाती है। भारत की सांस्कृतिक शक्ति उसकी विविधता में है, और 'वन्दे मातरम्' उस विविधता को एक भावात्मक एकता में बदलने की क्षमता रखता है।

शिक्षा व्यवस्था और 'वन्दे मातरम्' : मूल्य आधारित नागरिक निर्माण

शिक्षा केवल ज्ञान अर्जन की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह चरित्र निर्माण और नागरिक निर्माण की प्रक्रिया भी है। यदि शिक्षा प्रणाली में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन, सांस्कृतिक इतिहास और राष्ट्रीय प्रतीकों को उचित स्थान दिया जाए, तो विद्यार्थियों में नैतिकता, जिम्मेदारी और राष्ट्रीय चेतना का विकास होगा। 'वन्दे मातरम्' को शिक्षा के संदर्भ में केवल गीत के रूप में नहीं, बल्कि एक मूल्य–आधारित शैक्षणिक प्रतीक के रूप में देखा जाना चाहिए, जो विद्यार्थियों को यह समझाए कि राष्ट्र केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि एक जीवित सांस्कृतिक चेतना है।

राष्ट्रीय सुरक्षा और नागरिक उत्तरदायित्व

राष्ट्रीय सुरक्षा केवल सैन्य शक्ति तक सीमित नहीं है। यह सामाजिक एकता, आर्थिक स्थिरता, पर्यावरणीय संतुलन और साइबर सुरक्षा से भी जुड़ी हुई है। 'वन्दे मातरम्' नागरिकों में यह भावना विकसित करता है कि राष्ट्र की सुरक्षा केवल सरकार या सेना की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। जब नागरिक

ईमानदार, जागरूक और उत्तरदायी बनते हैं, तभी राष्ट्र आंतरिक रूप से मजबूत होता है। इस प्रकार यह गीत नैतिक सुरक्षा (moral security) की भावना को भी मजबूत करता है।

पर्यावरणीय चेतना और मातृभूमि का भाव

'वन्दे मातरम्' में मातृभूमि को ''सुजलाम्, सुफलाम्'' कहा गया है। यह केवल काव्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि पर्यावरणीय संतुलन और प्रकृति के सम्मान का दर्शन है। आज जब जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और प्राकृतिक संसाधनों का अति–दोहन वैश्विक संकट बन चुका है, तब यह दृष्टि अत्यंत प्रासंगिक हो जाती है। यह गीत हमें यह याद दिलाता है कि प्रकृति केवल उपयोग की वस्तु नहीं, बल्कि पूज्य और संरक्षित धरोहर है।

समकालीन चुनौतियाँ और 'वन्दे मातरम्' की भूमिका

आधुनिक भारत अनेक जटिल चुनौतियों का सामना कर रहा है, जैसे – सामाजिक असमानता, सांप्रदायिक तनाव, फेक न्यूज और डिजिटल भ्रम, नैतिक मूल्यों का ह्रास, वैचारिक ध्रुवीकरण। इन समस्याओं का समाधान केवल नीतिगत नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और नैतिक चेतना से भी जुड़ा हुआ है। 'वन्दे मातरम्' इस संदर्भ में एक सांस्कृतिक एकीकरण शक्ति के रूप में कार्य करता है, जो समाज को साझा मूल्यों की ओर प्रेरित करता है।

'वन्दे मातरम्' केवल स्वतंत्रता संग्राम का गीत नहीं, बल्कि भारतीय सभ्यता की सांस्कृतिक आत्मा का प्रतीक है। इसकी प्रासंगिकता समय के साथ समाप्त नहीं हुई, बल्कि आधुनिक संदर्भों में और अधिक विस्तृत और गहरी हुई है। यह आधुनिक भारत की प्रगति तभी संतुलित और स्थायी होगी जब वह अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ा रहेगा। इस दृष्टि से 'वन्दे मातरम्' आज भी उतना ही जीवंत, प्रेरक और प्रासंगिक है जितना स्वतंत्रता आंदोलन के समय था।

संदर्भ सूचीः

1. बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय – आनंदमठ
2. रामचंद्र शुक्ल – हिंदी साहित्य का इतिहास
3. बिपिन चंद्र – India's Struggle for Independence
4. सुमित सरकार – Modern India
5. आर. सी. मजूमदार – History of Freedom Movement in India
6. भारतीय संविधान – अनुच्छेद 51। (Fundamental Duties)
7. NCERT – आधुनिक भारत इतिहास पाठ्यपुस्तकें
8. Ministry of Culture, Government of India - National Symbols Publications
9. Bipan Chandra et al. India After Independence
10. Subaltern Studies & Nationalism Research Papers
11. Journal of Indian History and Culture & Research Articles
12. Contemporary Studies on Cultural Nationalism in India

युवा पीढ़ी और वन्दे मातरम् : वर्तमान परिप्रेक्ष्य में चुनौतियाँ एवं संभावनाएं

–डॉ. काजल पाण्डे
पुणे, महाराष्ट्र

'वन्दे मातरम्' भारतीय राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक अस्मिता तथा स्वतंत्रता–संग्राम की प्रेरणादायक विरासत का एक महत्त्वपूर्ण प्रतीक है। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत केवल साहित्यिक कृति नहीं, बल्कि भारतीय राष्ट्रवाद की वैचारिक और भावनात्मक अभिव्यक्ति भी है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक 'वन्दे मातरम्' ने भारतीय जनमानस को एकसूत्र में बाँधने का कार्य किया। वर्तमान समय में वैश्वीकरण, डिजिटलीकरण, सोशल मीडिया, उपभोक्तावाद तथा बदलते सामाजिक–राजनीतिक विमर्शों के कारण युवा पीढ़ी की राष्ट्रीय प्रतीकों के प्रति दृष्टि में परिवर्तन आया है।

राष्ट्रों का निर्माण केवल राजनीतिक संस्थाओं या संवैधानिक व्यवस्थाओं से नहीं होता, बल्कि सांस्कृतिक प्रतीकों, साहित्यिक परंपराओं, ऐतिहासिक स्मृतियों और सामूहिक भावनाओं से भी होता है। भारत जैसे बहुभाषिक, बहुधार्मिक और बहुसांस्कृतिक देश में राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने में अनेक सांस्कृतिक प्रतीकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 'वन्दे मातरम्' ऐसा ही एक प्रतीक है जिसने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को वैचारिक शक्ति और भावनात्मक ऊर्जा प्रदान की।[2]

'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं है, बल्कि भारतीय राष्ट्रवाद की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान यह गीत जन–जागरण, राष्ट्रीय स्वाभिमान और ब्रिटिश शासन के विरुद्ध प्रतिरोध का प्रतीक बन गया था।[3] अनेक स्वतंत्रता सेनानियों ने इसे प्रेरणा–स्रोत के रूप में अपनाया तथा राष्ट्रीय आंदोलनों में इसका व्यापक उपयोग किया गया।[7]

इक्कीसवीं सदी का भारत विश्व की सबसे युवा आबादी वाले देशों में से एक है। आज का युवा वर्ग इंटरनेट, सोशल मीडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, वैश्विक संस्कृति और डिजिटल तकनीकों से प्रभावित है। ऐसे परिवेश में राष्ट्रीय प्रतीकों की प्रासंगिकता को समझना आवश्यक हो जाता है।[3]

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब भारतीय समाज औपनिवेशिक शासन के दमन और सांस्कृतिक हीनता की भावना से जूझ रहा था, तब 'वन्दे मातरम्' ने भारतीयों में आत्मगौरव की भावना जगाई। यह गीत धीरे–धीरे साहित्यिक रचना से आगे बढ़कर राष्ट्रीय चेतना का प्रतीक बन गया।[3]

1896 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा पहली बार इसका सार्वजनिक गायन किया गया।[2] इसके पश्चात यह गीत स्वतंत्रता आंदोलन का प्रमुख नारा बन गया। विशेष रूप से 1905 के बंग–भंग आंदोलन के दौरान 'वन्दे मातरम्' जन–जागरण और ब्रिटिश विरोधी आंदोलनों का प्रमुख प्रतीक बनकर उभरा।[3]

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात संविधान सभा ने 24 जनवरी 1950 को 'जन गण मन' को राष्ट्रीय गान तथा 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रीय गीत का दर्जा प्रदान किया।[8] इस निर्णय ने इसके ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व को औपचारिक मान्यता प्रदान की।

स्वतंत्रता आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' की भूमिका

भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में 'वन्दे मातरम्' ने केवल एक गीत की भूमिका नहीं निभाई, बल्कि यह राष्ट्रीय आंदोलन की आत्मा बन गया। यह गीत स्वतंत्रता सेनानियों के लिए प्रेरणा, साहस और संघर्ष का स्रोत था।[7]

1905 के बंग–भंग आंदोलन में 'वन्दे मातरम्' राष्ट्रीय प्रतिरोध का मुख्य उद्घोष बना। विद्यार्थियों, युवाओं, महिलाओं और सामाजिक संगठनों ने इसे जन–आंदोलन का माध्यम बनाया।[3] अनेक ऐतिहासिक दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि ब्रिटिश प्रशासन इस गीत की लोकप्रियता से भयभीत था और कई स्थानों पर इसके सार्वजनिक गायन पर प्रतिबंध लगाने का प्रयास किया गया।[2] क्रांतिकारी संगठनों और स्वतंत्रता सेनानियों ने इसे राष्ट्रीय स्वाभिमान का प्रतीक माना। यह गीत ब्रिटिश दमन के विरुद्ध संघर्षरत भारतीयों के लिए मनोवैज्ञानिक शक्ति का स्रोत था।[7] अनेक युवा क्रांतिकारियों ने गिरफ्तारी और बलिदान के समय 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष किया। इस प्रकार 'वन्दे मातरम्' ने भारतीय राष्ट्रवाद को सांस्कृतिक, भावनात्मक और राजनीतिक आधार प्रदान किया तथा राष्ट्रीय आंदोलन को व्यापक जनसमर्थन दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[3]

युवा पीढ़ी की अवधारणा और समकालीन सामाजिक संदर्भ

युवा पीढ़ी किसी भी राष्ट्र की ऊर्जा, सृजनशीलता, नवाचार क्षमता और भविष्य की दिशा निर्धारित करती है। भारत वर्तमान में विश्व की सबसे बड़ी युवा आबादी वाले देशों में से एक है, जहाँ लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या 35 वर्ष से कम आयु की है। यह जनसांख्यिकीय स्थिति भारत को वैश्विक स्तर पर एक विशिष्ट पहचान प्रदान करती है। युवा वर्ग न केवल आर्थिक विकास और तकनीकी प्रगति का आधार है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक पुनर्जागरण और राष्ट्रीय निर्माण का भी प्रमुख वाहक है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि युवाओं का जुड़ाव केवल आधुनिक तकनीक और वैश्विक अवसरों तक सीमित न रहे, बल्कि वे अपनी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय विरासत से भी परिचित हों।[14]

समकालीन युवा सूचना–प्रौद्योगिकी, इंटरनेट, सोशल मीडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल शिक्षा और वैश्विक संचार नेटवर्क से गहराई से जुड़ा हुआ है। उसकी सोच, जीवन–शैली और सामाजिक संबंध पारंपरिक पीढ़ियों की तुलना में अधिक गतिशील, बहुआयामी और वैश्विक दृष्टिकोण से प्रभावित हैं।[14] आज का युवा विश्व की घटनाओं से तुरंत अवगत हो जाता है और डिजिटल माध्यमों के कारण उसकी पहचान केवल स्थानीय या राष्ट्रीय न रहकर वैश्विक भी बन रही है। यह स्थिति एक ओर उसे नए अवसर प्रदान करती है, वहीं दूसरी ओर अपनी सांस्कृतिक जड़ों से दूर होने की चुनौती भी उत्पन्न करती है। डिजिटल क्रांति ने युवाओं में वैश्विक नागरिकता की भावना को विकसित किया है, किंतु इसके साथ–साथ राष्ट्रीय और सांस्कृतिक पहचान के प्रश्न भी नए रूप में सामने आए हैं। ऐसे समय में 'वन्दे मातरम्' जैसे राष्ट्रीय प्रतीकों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि वे युवाओं को उनकी ऐतिहासिक स्मृतियों, सांस्कृतिक विरासत और राष्ट्रीय मूल्यों से जोड़ते हैं।[13] 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं, बल्कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की स्मृति, राष्ट्रीय स्वाभिमान

और सांस्कृतिक चेतना का प्रतीक है। यह युवाओं को यह समझने का अवसर प्रदान करता है कि भारत की स्वतंत्रता केवल राजनीतिक संघर्ष का परिणाम नहीं थी, बल्कि सांस्कृतिक और भावनात्मक एकता का भी प्रतिफल थी।[3]

वर्तमान समय में राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में युवाओं की भूमिका को लेकर राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक चर्चा हो रही है। वर्ष 2025–26 में 'वन्दे मातरम्' के 150 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में देशभर में विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। इस अवसर पर संसद के दोनों सदनों में 'वन्दे मातरम्' की 150वीं वर्षगांठ पर विशेष चर्चा आयोजित की गई, जिसमें इसके ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय महत्त्व पर विस्तार से विचार–विमर्श हुआ। इस चर्चा में यह विशेष रूप से रेखांकित किया गया कि नई पीढ़ी को 'वन्दे मातरम्' के इतिहास, स्वतंत्रता संग्राम में उसकी भूमिका तथा राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में उसके योगदान से परिचित कराना आवश्यक है। संसद में यह विचार भी व्यक्त किया गया कि 'वन्दे मातरम्' केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

दिसंबर 2025 में संसद में आयोजित विशेष चर्चा के दौरान 'वन्दे मातरम्' को भारत की स्वतंत्रता यात्रा का एक जीवंत प्रतीक बताया गया तथा यह कहा गया कि यह गीत औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध भारतीयों की सामूहिक चेतना का आधार बना था। चर्चा में इस बात पर भी बल दिया गया कि नई पीढ़ी को केवल गीत के शब्दों से नहीं, बल्कि उसके पीछे निहित त्याग, बलिदान और राष्ट्रीय एकता के संदेश से भी परिचित कराया जाना चाहिए। कई सांसदों ने इसे युवाओं के लिए राष्ट्रनिर्माण का प्रेरक मंत्र बताया।

राष्ट्रीय युवा दिवस, स्वामी विवेकानंद जयंती तथा 'वन्दे मातरम्' की 150वीं वर्षगांठ के अवसर पर विभिन्न राज्यों में आयोजित सामूहिक गायन कार्यक्रमों, सांस्कृतिक प्रतियोगिताओं, व्याख्यानमालाओं और युवा सम्मेलनों ने भी युवाओं में राष्ट्रीय चेतना के प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। वर्ष 2025–26 के दौरान केंद्र और विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा वर्षभर चलने वाले स्मरणोत्सव कार्यक्रमों की शुरुआत की गई, जिनका उद्देश्य युवाओं को स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास और राष्ट्रीय मूल्यों से जोड़ना था।

समकालीन संदर्भ में यह भी देखा जा रहा है कि युवा वर्ग राष्ट्रीय प्रतीकों को केवल औपचारिकता के रूप में नहीं, बल्कि अपनी पहचान और सामाजिक उत्तरदायित्व के संदर्भ में समझने लगा है। खेल प्रतियोगिताओं, राष्ट्रीय पर्वों, सांस्कृतिक उत्सवों और डिजिटल अभियानों में 'वन्दे मातरम्' का प्रयोग युवाओं के बीच राष्ट्रभक्ति और सामूहिकता की भावना को सुदृढ़ करता है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों पर इसके नए संगीतबद्ध संस्करण, वाद्य प्रस्तुतियाँ, समूह गायन और रचनात्मक वीडियो भी युवाओं को आकर्षित कर रहे हैं।[5]

आज आवश्यकता इस बात की है कि युवा पीढ़ी को 'वन्दे मातरम्' के केवल भावनात्मक पक्ष से ही नहीं, बल्कि उसके ऐतिहासिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक आयामों से भी परिचित कराया जाए। यदि विद्यालयों, विश्वविद्यालयों और युवा संगठनों के माध्यम से इसके व्यापक अध्ययन और संवाद को प्रोत्साहित किया जाए, तो यह राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक आत्मविश्वास और लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व की भावना को सुदृढ़ करने में प्रभावी भूमिका निभा सकता है। इस दृष्टि से 'वन्दे मातरम्' युवा पीढ़ी और भारतीय राष्ट्र–निर्माण के बीच एक महत्त्वपूर्ण सेतु के रूप में उभरता है, जो अतीत की गौरवपूर्ण विरासत को वर्तमान की ऊर्जा और भविष्य की संभावनाओं से जोड़ता है।[15]

युवा पीढ़ी और राष्ट्रीय पहचान

राष्ट्रीय पहचान किसी व्यक्ति के अपने राष्ट्र के प्रति भावनात्मक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और राजनीतिक संबंध को व्यक्त करती है।[13] यह केवल नागरिकता अथवा भौगोलिक सीमाओं तक सीमित अवधारणा नहीं है, बल्कि साझा इतिहास, सांस्कृतिक स्मृतियों, राष्ट्रीय प्रतीकों, परंपराओं और सामूहिक अनुभवों से निर्मित होती है। किसी भी राष्ट्र के लिए उसकी युवा पीढ़ी राष्ट्रीय पहचान की सबसे महत्वपूर्ण संवाहक होती है, क्योंकि वही भविष्य में राष्ट्र की सांस्कृतिक विरासत, लोकतांत्रिक मूल्यों और राष्ट्रीय आदर्शों को आगे बढ़ाती है।[14]

वर्तमान वैश्वीकरण और डिजिटलीकरण के युग में राष्ट्रीय पहचान की अवधारणा पहले की तुलना में अधिक जटिल और बहुआयामी हो गई है। आज का युवा एक ओर वैश्विक संस्कृति, अंतरराष्ट्रीय शिक्षा, डिजिटल संचार और वैश्विक रोजगार अवसरों से जुड़ा हुआ है, वहीं दूसरी ओर वह अपनी स्थानीय संस्कृति, भाषा, परंपराओं और राष्ट्रीय विरासत को भी बनाए रखना चाहता है। इस प्रकार आधुनिक युवा की पहचान बहुस्तरीय बन गई है, जिसमें स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और वैश्विक सभी स्तर सम्मिलित हैं।[14]

ऐसी परिस्थितियों में 'वन्दे मातरम्' भारतीय राष्ट्रीय पहचान के एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में उभरता है। यह गीत युवाओं को मातृभूमि के प्रति सम्मान, राष्ट्रीय गौरव, सांस्कृतिक विरासत के प्रति आत्मीयता तथा राष्ट्रीय एकता की भावना से जोड़ता है।[5] 'वन्दे मातरम्' का मूल संदेश केवल देशभक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भारत की प्रकृति, संस्कृति, सभ्यता और आध्यात्मिक चेतना के प्रति सम्मान का भी प्रतीक है।[2] यही कारण है कि स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान यह गीत राष्ट्रीय चेतना का आधार बना और आज भी राष्ट्रीय पहचान के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।[3]

समकालीन भारत में राष्ट्रीय पहचान को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से 'वन्दे मातरम्' की 150वीं वर्षगांठ के अवसर पर देशभर में अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए। भारत सरकार ने 7 नवंबर 2025 से 7 नवंबर 2026 तक 'वन्दे मातरम्' के 150 वर्ष पूर्ण होने पर वर्षभर चलने वाले राष्ट्रीय स्मरणोत्सव का शुभारंभ किया। इस अवसर पर देशभर में सामूहिक गायन, सांस्कृतिक कार्यक्रम, शैक्षणिक गतिविधियाँ और युवा सहभागिता कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं, जिनका उद्देश्य नई पीढ़ी को राष्ट्रीय गीत की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विरासत से जोड़ना था।

युवा पीढ़ी और राष्ट्रीय पहचान के संबंध को और अधिक सुदृढ़ करने के लिए वर्ष 2025 में संसद के दोनों सदनों में 'वन्दे मातरम्' की 150वीं वर्षगांठ पर विशेष चर्चा आयोजित की गई। इस चर्चा में यह विचार व्यक्त किया गया कि नई पीढ़ी को 'वन्दे मातरम्' के ऐतिहासिक महत्व, स्वतंत्रता संग्राम में उसकी भूमिका और राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में उसके योगदान से अवगत कराना आवश्यक है। संसद में यह भी कहा गया कि राष्ट्र निर्माण के इस महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक प्रतीक को केवल अतीत की स्मृति के रूप में नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्रेरणा–स्रोत के रूप में देखा जाना चाहिए।

राष्ट्रीय पहचान के निर्माण में युवा सहभागिता की दृष्टि से वर्ष 2026 का राष्ट्रीय युवा दिवस विशेष उल्लेखनीय रहा। ओडिशा में स्वामी विवेकानंद जयंती एवं राष्ट्रीय युवा दिवस के अवसर पर लगभग 29 लाख से अधिक

विद्यार्थियों ने विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में सामूहिक रूप से 'वन्दे मातरम्' का गायन किया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य युवाओं में राष्ट्रभक्ति, सांस्कृतिक चेतना और राष्ट्रीय उत्तरदायित्व की भावना को सुदृढ़ करना था। इस प्रकार के आयोजन यह संकेत देते हैं कि 'वन्दे मातरम्' आज भी युवा पीढ़ी को राष्ट्रीय पहचान से जोड़ने का प्रभावी माध्यम बना हुआ है।

वर्ष 2026 के गणतंत्र दिवस समारोह में भी 'वन्दे मातरम्' की 150वीं वर्षगांठ को मुख्य विषय बनाया गया। कर्तव्य पथ पर आयोजित परेड में 'स्वतंत्रता का मंत्र – 'वन्दे मातरम्' थीम के अंतर्गत सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ, चित्र प्रदर्शनी और विभिन्न राज्यों की झाँकियाँ प्रदर्शित की गईं। लगभग 2500 कलाकारों ने सामूहिक सांस्कृतिक प्रस्तुति के माध्यम से यह संदेश दिया कि 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं, बल्कि भारत की आत्मा की प्रतिध्वनि है, जो विविधताओं के बीच एकता का सूत्र प्रदान करती है। यह आयोजन विशेष रूप से युवाओं के लिए राष्ट्रीय पहचान और सांस्कृतिक विरासत के महत्व को रेखांकित करता है।

आज के युवाओं के लिए राष्ट्रीय पहचान केवल राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगान अथवा राष्ट्रीय गीत तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक उत्तरदायित्व, लोकतांत्रिक मूल्यों, पर्यावरणीय चेतना, आत्मनिर्भरता और राष्ट्रीय विकास में सक्रिय भागीदारी से भी जुड़ी हुई है। 'वन्दे मातरम्' का संदेश इन सभी आयामों को जोड़ता है क्योंकि यह मातृभूमि के प्रति प्रेम, सम्मान और समर्पण की भावना को प्रोत्साहित करता है।[15] जब युवा इस गीत के ऐतिहासिक संदर्भ, स्वतंत्रता संग्राम में इसकी भूमिका और इसके सांस्कृतिक अर्थों को समझते हैं, तब उनमें राष्ट्रीय पहचान का भाव अधिक गहराई से विकसित होता है।

इसके अतिरिक्त डिजिटल मीडिया ने भी 'वन्दे मातरम्' को युवाओं तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म, यूट्यूब, संगीत मंचों तथा ऑनलाइन अभियानों के माध्यम से इसके आधुनिक संस्करण और रचनात्मक प्रस्तुतियाँ व्यापक रूप से लोकप्रिय हुई हैं।[5] इससे यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय पहचान अब केवल पारंपरिक माध्यमों से नहीं, बल्कि डिजिटल संस्कृति के माध्यम से भी निर्मित हो रही है।

अतः कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में 'वन्दे मातरम्' भारतीय युवा पीढ़ी के लिए राष्ट्रीय पहचान का एक सशक्त सांस्कृतिक माध्यम है। यह उन्हें अपनी ऐतिहासिक विरासत, स्वतंत्रता आंदोलन की स्मृतियों और भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से जोड़ता है। वैश्विक युग में जहाँ पहचान के अनेक स्रोत उपलब्ध हैं, वहाँ 'वन्दे मातरम्' युवाओं को यह स्मरण कराता है कि आधुनिकता और वैश्विकता के साथ–साथ अपनी राष्ट्रीय और सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ाव भी उतना ही आवश्यक है।[13]

डिजिटल युग में 'वन्दे मातरम्' की पुनर्व्याख्या

डिजिटल युग ने राष्ट्रीय प्रतीकों की प्रस्तुति और ग्रहणशीलता दोनों को बदल दिया है। 'वन्दे मातरम्' भी इस परिवर्तन से अछूता नहीं रहा। यूट्यूब, इंस्टाग्राम, फेसबुक और अन्य डिजिटल मंचों पर 'वन्दे मातरम्' के अनेक आधुनिक संस्करण उपलब्ध हैं।[5] इन संस्करणों में पारंपरिक संगीत के साथ आधुनिक वाद्ययंत्रों, दृश्य प्रभावों और समकालीन प्रस्तुति शैली का उपयोग किया गया है। 1998 में ए.आर. रहमान द्वारा प्रस्तुत 'वन्दे मातरम्' एल्बम ने इस गीत को नई पीढ़ी तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[4] इस प्रस्तुति ने राष्ट्रीय भावना को आधुनिक संगीत के साथ जोड़कर युवाओं के बीच इसकी लोकप्रियता बढ़ाई। डिजिटल माध्यमों ने 'वन्दे मातरम्'

को केवल राष्ट्रीय समारोहों तक सीमित नहीं रखा, बल्कि इसे युवाओं के दैनिक डिजिटल अनुभव का हिस्सा बना दिया है। परिणामस्वरूप इसकी पहुँच और प्रभाव दोनों में वृद्धि हुई है।[5]

युवा पीढ़ी में 'वन्दे मातरम्' की स्वीकार्यता

वर्तमान समय में युवा वर्ग में 'वन्दे मातरम्' के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण व्यापक रूप से देखा जा सकता है।[10] राष्ट्रीय पर्वों, खेल प्रतियोगिताओं, सांस्कृतिक कार्यक्रमों तथा सामाजिक अभियानों में युवाओं की सक्रिय भागीदारी इसका प्रमाण है।[12]

युवाओं द्वारा 'वन्दे मातरम्' को स्वीकार करने के प्रमुख कारण हैं—राष्ट्रीय गौरव और स्वाभिमान की भावना, स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरक विरासत, सांस्कृतिक पहचान का बोध, डिजिटल माध्यमों द्वारा बढ़ती पहुँच और शैक्षणिक संस्थानों में राष्ट्रीय मूल्यों का प्रसार आदि।

दिसंबर 2025 में राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' के 150 वर्षीय स्मरणोत्सव के उद्घाटन अवसर पर प्रधानमंत्री द्वारा दिए गए वक्तव्य ने भी युवाओं के बीच इस विषय को पुनः चर्चा के केंद्र में ला दिया।[10] इससे यह स्पष्ट होता है कि 'वन्दे मातरम्' केवल ऐतिहासिक स्मृति नहीं, बल्कि समकालीन राष्ट्रीय विमर्श का भी महत्वपूर्ण हिस्सा है।

'वन्दे मातरम्' और राष्ट्रवाद का समकालीन विमर्श

समकालीन भारत में राष्ट्रवाद की अवधारणा अनेक आयामों में विकसित हुई है। कुछ विद्वान राष्ट्रवाद को सांस्कृतिक एकता का आधार मानते हैं, जबकि अन्य इसे राजनीतिक और वैचारिक दृष्टि से देखते हैं।[6] 'वन्दे मातरम्' इस विमर्श के केंद्र में रहा है। एक दृष्टिकोण के अनुसार यह गीत भारतीय राष्ट्रवाद की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति है तथा राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करता है।[3] दूसरी ओर कुछ विद्वान इसके धार्मिक प्रतीकों और ऐतिहासिक संदर्भों की आलोचनात्मक समीक्षा करते हैं।[6] इन विभिन्न दृष्टिकोणों के बावजूद यह तथ्य निर्विवाद है कि 'वन्दे मातरम्' भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की ऐतिहासिक विरासत का अभिन्न अंग है और राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।[2]

इक्कीसवीं सदी के भारत में 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता केवल एक राष्ट्रीय गीत के रूप में नहीं, बल्कि राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक अस्मिता, लोकतांत्रिक मूल्यों और युवा सहभागिता के प्रतीक के रूप में निरंतर बनी हुई है। यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज, राजनीति, अर्थव्यवस्था और तकनीक में व्यापक परिवर्तन हुए हैं, फिर भी 'वन्दे मातरम्' भारतीय जनमानस में राष्ट्रभक्ति, आत्मगौरव और सांस्कृतिक एकता का प्रेरणास्रोत बना हुआ है।[2]

वर्ष 2025–26 विशेष रूप से 'वन्दे मातरम्' के लिए ऐतिहासिक महत्व का रहा क्योंकि इस राष्ट्रीय गीत के 150 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर भारत सरकार द्वारा वर्षभर चलने वाले राष्ट्रीय स्मरणोत्सव का आयोजन किया गया। 7 नवंबर 2025 को नई दिल्ली के इंदिरा गांधी इंडोर स्टेडियम में आयोजित उद्घाटन समारोह में प्रधानमंत्री ने 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्र निर्माण का महामंत्र बताते हुए कहा कि नई पीढ़ी को इसके इतिहास, स्वतंत्रता संग्राम में इसकी भूमिका और राष्ट्रीय चेतना में इसके योगदान से परिचित कराना समय की

आवश्यकता है। उन्होंने यह भी कहा कि "वन्दे मातरम् केवल एक गीत नहीं, बल्कि भारत की आत्मा की अभिव्यक्ति है, जिसने गुलामी के दौर में करोड़ों भारतीयों को एकजुट किया"।[10]

इस अवसर पर प्रधानमंत्री ने 1937 में 'वन्दे मातरम्' के कुछ अंशों को अलग किए जाने के ऐतिहासिक संदर्भ का उल्लेख करते हुए कहा कि राष्ट्रनिर्माण की प्रक्रिया में विभाजनकारी प्रवृत्तियों से सावधान रहना आवश्यक है। उनके अनुसार आज की युवा पीढ़ी को यह जानना चाहिए कि किस प्रकार 'वन्दे मातरम्' ने स्वतंत्रता आंदोलन को वैचारिक शक्ति प्रदान की और राष्ट्रीय एकता को मजबूत किया। यह वक्तव्य राष्ट्रीय मीडिया और सामाजिक मंचों पर व्यापक चर्चा का विषय बना तथा युवाओं के बीच 'वन्दे मातरम्' के इतिहास को लेकर नई जिज्ञासा उत्पन्न हुई।[11]

समकालीन परिप्रेक्ष्य में 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता इसलिए भी बढ़ी है क्योंकि वर्तमान युवा वर्ग डिजिटल युग में विकसित हो रहा है। सोशल मीडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, वैश्विक संचार नेटवर्क और डिजिटल मनोरंजन के बढ़ते प्रभाव के बीच राष्ट्रीय पहचान और सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ाव का प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण हो गया है।[14] ऐसे समय में 'वन्दे मातरम्' युवाओं को भारतीय इतिहास, स्वतंत्रता आंदोलन और सांस्कृतिक विरासत से जोड़ने का प्रभावी माध्यम बन रहा है।[13]

राष्ट्रीय युवा दिवस (12 जनवरी 2026) के अवसर पर ओडिशा सरकार द्वारा राज्य के सभी विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में 'वन्दे मातरम्' के सामूहिक गायन का आयोजन किया गया। लगभग 29 लाख विद्यार्थियों ने इस कार्यक्रम में भाग लिया। इसके साथ ही 'आत्मनिर्भर भारत स्वदेशी संकल्प' का सामूहिक पाठ भी कराया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य युवाओं में राष्ट्रभक्ति, आत्मनिर्भरता, सांस्कृतिक चेतना और राष्ट्रीय उत्तरदायित्व की भावना को विकसित करना था।[12] यह आयोजन इस बात का प्रमाण है कि 'वन्दे मातरम्' आज भी युवाओं को राष्ट्र के साथ भावनात्मक रूप से जोड़ने की क्षमता रखता है।

वर्ष 2026 के गणतंत्र दिवस समारोह में भी 'वन्दे मातरम्' की 150वीं वर्षगांठ को विशेष रूप से स्मरण किया गया। कर्तव्य पथ पर आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों में 'वन्दे मातरम्' को भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष, राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक विविधता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया। विभिन्न राज्यों की झाँकियों तथा सांस्कृतिक प्रस्तुतियों में इसकी भावना को अभिव्यक्त किया गया, जिससे युवा पीढ़ी को भारत की साझा विरासत और राष्ट्रीय एकता के महत्व का संदेश मिला।[11]

'वन्दे मातरम्' भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का एक जीवंत प्रतीक है। यह युवाओं को उस ऐतिहासिक संघर्ष की याद दिलाता है जिसमें लाखों भारतीयों ने स्वतंत्रता के लिए त्याग और बलिदान दिया था।[7] जब युवा इस गीत के इतिहास को समझते हैं, तो उनमें स्वतंत्रता के मूल्य और राष्ट्रीय कर्तव्यों के प्रति जागरूकता बढ़ती है। भारत विविध भाषाओं, धर्मों, संस्कृतियों और परंपराओं वाला देश है। 'वन्दे मातरम्' इन विविधताओं को एक सूत्र में बाँधने का कार्य करता है। यह गीत मातृभूमि के प्रति साझा सम्मान और प्रेम की भावना को व्यक्त करता है, जो राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाती है।[2]

वैश्वीकरण के दौर में युवा वर्ग अनेक विदेशी सांस्कृतिक प्रभावों से प्रभावित हो रहा है। ऐसे समय में 'वन्दे मातरम्' भारतीय सांस्कृतिक विरासत और सभ्यतागत मूल्यों से जुड़ाव का माध्यम बनता है। यह युवाओं को

भारत की ऐतिहासिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक परंपराओं का बोध कराता है।[5] 'वन्दे मातरम्' केवल भावनात्मक राष्ट्रवाद का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व, सेवा और समर्पण की भावना भी विकसित करता है। यह युवाओं को लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक सहभागिता और राष्ट्र निर्माण में सक्रिय योगदान के लिए प्रेरित करता है।[15]

यूट्यूब, इंस्टाग्राम, फेसबुक, स्पॉटिफाई और अन्य डिजिटल मंचों पर 'वन्दे मातरम्' के अनेक आधुनिक संस्करण उपलब्ध हैं। शास्त्रीय संगीत, रॉक, फ्यूजन, ऑर्केस्ट्रा, पियानो, गिटार तथा विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रस्तुत इसके संस्करण युवाओं के बीच अत्यंत लोकप्रिय हो रहे हैं।[5]

इससे यह स्पष्ट होता है कि 'वन्दे मातरम्' समय के साथ स्वयं को नए माध्यमों और नई पीढ़ियों के अनुरूप अभिव्यक्त करने में सक्षम रहा है। 'वन्दे मातरम्' आज भी राष्ट्रीय पर्वों, युवा सम्मेलनों, एनसीसी, एनएसएस, विश्वविद्यालय समारोहों और विभिन्न सांस्कृतिक आयोजनों का अभिन्न अंग बना हुआ है। इससे युवाओं में सामूहिकता, अनुशासन और राष्ट्रप्रेम की भावना विकसित होती है।[12]

वर्तमान समय में भारत 'विकसित भारत 2047' तथा 'आत्मनिर्भर भारत' जैसे राष्ट्रीय लक्ष्यों की दिशा में अग्रसर है। इन अभियानों की सफलता के लिए युवा शक्ति की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। 'वन्दे मातरम्' युवाओं में राष्ट्र के प्रति समर्पण और योगदान की भावना उत्पन्न करता है, जो इन राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक हो सकती है।[15]

'वन्दे मातरम्' भारतीय राष्ट्रीय जीवन का एक अमूल्य सांस्कृतिक प्रतीक है। यह केवल एक गीत नहीं, बल्कि स्वतंत्रता, स्वाभिमान, त्याग और राष्ट्रीय चेतना का ऐतिहासिक दस्तावेज है।[7] वर्तमान युवा पीढ़ी के लिए यह राष्ट्रीय पहचान, सांस्कृतिक गौरव और लोकतांत्रिक मूल्यों का प्रेरणास्रोत है।[13]

यद्यपि इसके समक्ष ऐतिहासिक अज्ञानता, राजनीतिक ध्रुवीकरण और डिजिटल दुष्प्रचार जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं, फिर भी इसकी मूल भावना भारतीय मातृभूमि के प्रति सम्मान, प्रेम और समर्पण की है। आवश्यकता इस बात की है कि युवा वर्ग को इसके ऐतिहासिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक आयामों से परिचित कराया जाए ताकि वे इसे भारतीय राष्ट्रीय चेतना की व्यापक परंपरा के रूप में समझ सकें।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'वन्दे मातरम्' आज भी भारतीय युवाओं के लिए प्रेरणा, पहचान, सांस्कृतिक गौरव और राष्ट्रीय एकता का एक सशक्त प्रतीक है।

संदर्भ सूची

1, चटर्जी, बंकिमचंद्र, आनंदमठ, कोलकाताः विभिन्न संस्करण, 1882

2, लिपनर, जूलियस जे. "आइकन एंड मदरः एन इन्क्वायरी इंटू इंडियाज नेशनल सॉन्ग" जर्नल ऑफ हिन्दू स्टडीज, खंड 1, अंक 1–2, 2008, पृ. 26–48

3, सेन, सुद्दाशील,"बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय 'वन्दे मातरम्' एंड द पैट्रियॉटिक सॉन्ग ट्रेडिशन इन इंडिया" साउथ एशियन हिस्ट्री एंड कल्चर, खंड 14, अंक 4, 2023, पृ. 547–564

4, भट्टाचार्य, शरदिन्दु, "टीचिंग 'पॉपुलर' नेशनलिज्म इन इंग्लिश" इंग्लिशः जर्नल ऑफ द इंग्लिश एसोसिएशन, खंड 71, अंक 273, 2022, पृ. 161–171

5, खासनोबिस, बरनाश्री, "सॉन्स ऑफ नेशन–बिल्डिंगः ए डिलिबरेशन ऑन सेलेक्टेड नेशनलिस्ट सॉन्स टेलीकास्ट बाय दूरदर्शन।" नेशनल आइडेंटिटीज, खंड 26, अंक 4, 2024

6, हाशमी, सानिया, "द सेक्युलर क्लेंसिंग दैट वाजन्टः वन्दे मातरम् एंड द एक्सपर्जेटेड स्टोरी ऑफ इंडियन नेशनलिज्म", जर्नल ऑफ पोस्टकोलोनियल राइटिंग, खंड 60, अंक 5, 2024

7, एलियास, आंद्रे जे. पी. "वन्दे मातरम्: कन्स्ट्रक्शन्स ऑफ जेंडर एंड म्यूजिक इन इंडियन नेशनलिज्म" एशियन म्यूजिक, खंड 48, अंक 2, 2017

8, भारत सरकार, संविधान सभा वाद–विवाद, 24 जनवरी 1950

9, नवभारत टाइम्स, "150 साल बाद भी वन्दे मातरम् पर बहस क्यों प्रासंगिक है", 2025

10, इंडिया टाइम्स हिंदी, "'वन्दे मातरम्' के 150 वर्षः स्मरणोत्सव का शुभारंभ", 2025

11, इंडिया टाइम्स हिंदी, "वन्दे मातरम् के 150 वर्षः उत्तर प्रदेश विधानसभा में ऐतिहासिक चर्चा", 2025

12, नवभारत टाइम्स, "स्कूलों में गूंजा वन्दे मातरम्", 2025

13, एंडरसन, बेनेडिक्ट, इमैजिन्ड कम्युनिटीजः रिफ्लेक्शन्स ऑन द ओरिजिन एंड स्प्रेड ऑफ नेशनलिज्म, लंदनः वर्सो प्रकाशन, 1983

14, स्मिथ, एंथनी डी. नेशनल आइडेंटिटी, रेनोः यूनिवर्सिटी ऑफ नेवाडा प्रेस, 1991

15, कुमार, रविन्दर, द मेकिंग ऑफ ए नेशनः इंडिया एंड नेशनलिज्म, नई दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, विभिन्न संस्करण

वन्दे मातरम् : युवा पीढ़ी में राष्ट्रीय भाव का संचार

–डॉ. शैलजा
प्रभारी, हिंदी विभाग
श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

'वन्दे मातरम्' गीत भारत के स्वतंत्रता संग्राम की मूल आत्मा है। यह गीत मातृभूमि की वंदना करने वाले एक पावन स्तोत्र के रूप में जाना और सम्मानित किया जाता है। इस गीत का दार्शनिक आधार देशभक्ति, प्रेम और मातृभूमि भारत के प्रति श्रद्धा पर टिका हुआ है। स्वतंत्रता–पूर्व काल में क्रांतिकारियों ने इस गीत को देशभक्ति के मंत्र के रूप में अपनाया था, क्योंकि उनका विश्वास था कि यह गीत उन्हें ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध प्रेरित और एकजुट करता है।

वर्ष 2025 में इस गीत के 150 वर्ष पूरे हुए। पिछले 150 वर्षों से यह गीत भारत की भावनात्मक और राजनीतिक चेतना के केंद्र में बना हुआ है। फरवरी 2026 में गृह मंत्रालय ने इस गीत का 'आधिकारिक स्वरूप' निर्धारित करते हुए एक आदेश जारी किया, जिसमें बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की मूल रचना की सभी छह पदावलियों को समाहित किया गया है, और यह निर्देश दिया गया कि इसे सभी सरकारी कार्यक्रमों और अन्य अवसरों पर गाया जाए। गृह मंत्रालय ने यह भी आदेश दिया कि विद्यालयों की प्रार्थना–सभाओं में इस गीत को अनिवार्य रूप से शामिल किया जाए। इस गीत को अपनाने से राष्ट्रीय चेतना और देशभक्ति जागृत होगी, और यह विद्यार्थियों में भारत के स्वतंत्रता संग्राम, राष्ट्रीय विरासत तथा उस संघर्ष की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की समझ को भी सुदृढ़ करेगा।

वन्दे मातरम्: साहित्य से राष्ट्रीय नागरिक धरोहर तक

'वन्दे मातरम्' गीत की रचना पश्चिम बंगाल के महानतम उपन्यासकारों और लेखकों में से एक, बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने की थी। यह गीत उनके बांग्ला उपन्यास 'आनंदमठ' का अभिन्न अंग है। इस गीत की रचना ब्रिटिश शासन की पृष्ठभूमि में हुई थी। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने अपने संपूर्ण लेखन में देशवासियों के भीतर राष्ट्रीय भावना जगाने का प्रयास किया। 'वन्दे मातरम्' गीत स्वदेशी आंदोलन के मंत्र के रूप में कार्य करता था। उनकी राष्ट्रवाद की परिकल्पना देश–प्रेम और सर्वजन के कल्याण के आदर्श पर आधारित थी। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में बंकिमचंद्र के लेखन से प्रेरित होकर बंगाल के शिक्षित मध्यम वर्ग में उग्र राष्ट्रवाद का प्रसार होने लगा। उनके 'वन्दे मातरम्' गीत ने युवा मन–मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डाला। यह गीत लाखों भारतीयों को ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संगठित करने में सक्षम था।

यह गीत एक साधारण गीत नहीं है, बल्कि यह संपूर्ण भारत की सामूहिक चेतना का प्रतीक है और स्वतंत्रता संग्राम के दौरान स्वतंत्रता सेनानियों का जयघोष रहा। राष्ट्रीय गीत के रूप में 'वन्दे मातरम्' एकता और देशभक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। पूरे गीत में भारत को मातृभूमि के रूप में संबोधित किया गया है और बंकिमचंद्र भारत माता की आराधना को एक पूजनीय भाव के रूप में प्रस्तुत करते हैं। वे मातृभूमि की विशेषताओं का वर्णन करते हुए उसकी स्तुति करते हैं। उनके अनुसार मातृभूमि सुख (सुखदां) प्रदान करने वाली और शक्ति व दैवीय वरदान (वरदां) की स्रोत है। इसी भाव से प्रेरित होकर वे कहते हैं–मैं तुझे प्रणाम करता हूँ, हे माँ भारती।

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का यह गीत देशवासियों को औपनिवेशिक दमन के विरुद्ध खड़ा होने और राष्ट्रीय गौरव

तथा पहचान को पुनर्जीवित करने की प्रेरणा देने का माध्यम बना। यह गीत जनता का आह्वान करता है कि वे अपने देश का सम्मान करें और उसकी वंदना करें। यह गीत हमारी भारत माता के प्रति एक श्रद्धांजलि है।

आरंभ में 'वन्दे मातरम्' स्वतंत्रता–पूर्व काल में एक लोकप्रिय गीत बना, जिसने ब्रिटिश–विरोधी आंदोलनकारियों के बीच एकता स्थापित की। वन्दे मातरम् आंदोलन, जो ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरोध का प्रतीक था, भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई में अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। यह ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध प्रतिरोध के प्रतीक के रूप में कार्य करता था।

1876 में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत राष्ट्रवादी जयघोष बन गया और भारतीय पहचान व संस्कृति के विकास में अनिवार्य सिद्ध हुआ। समय के साथ यह एक विरोध–गीत के रूप में परिवर्तित हो गया। 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रवादी विचारधारा में एक मील का पत्थर माना जाता है, जो मातृभूमि के प्रति समर्पण और आध्यात्मिक आदर्शवाद के संगम का प्रतीक है। इस गीत का विशेष महत्व तब और बढ़ गया जब रवींद्रनाथ टैगोर ने इसे स्वरबद्ध किया, और 1896 में कलकत्ता में आयोजित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में इसे स्वयं गाया भी। यहीं से इस गीत का राष्ट्रीय आंदोलनों के साथ जुड़ाव आरंभ हुआ। कालांतर में यह गीत भारत की नागरिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक चेतना में गहराई से रच–बस गया।

'बंकिम–जीवनी' के लेखक सतीशचंद्र चट्टोपाध्याय ने 1913 के इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका के संस्करण से एक अंश उद्धृत किया है, जो उस क्षण का वर्णन करता है जब बंकिमचंद्र का गीत 'वन्दे मातरम्' बंगाली राष्ट्रीय जीवन का हिस्सा बना। उस उद्धरण के अनुसार बंकिमचंद्र के जीवनकाल में इस गीत के संभावित प्रभाव को पहचाना तो गया था, परंतु इसे उस समय किसी राजनीतिक दल के युद्ध–घोष के रूप में प्रयोग नहीं किया गया था–न तो इल्बर्ट बिल आंदोलन के दौरान, और न ही 1883 में सुरेंद्रनाथ बनर्जी के मुकदमे के समय अदालत के इर्द–गिर्द जुटे विद्यार्थियों द्वारा। बंगाल–विभाजन के पश्चात हुए आंदोलन में ही इस गीत को एक विशेष ख्याति प्राप्त हुई (घोष, 1977:2)।

स्वतंत्रता–पूर्व, अक्टूबर 1905 में उत्तर कलकत्ता में 'वन्दे मातरम् संप्रदाय' की स्थापना की गई थी, जिसका उद्देश्य मातृभूमि की अवधारणा को एक आध्यात्मिक प्रतिबद्धता और मिशन के रूप में आगे बढ़ाना था। इसके सदस्य प्रत्येक रविवार को 'वन्दे मातरम्' गाते हुए प्रभात–फेरियाँ निकालते थे और अपनी मातृभूमि की सहायता के लिए चंदा एकत्र करते थे।

स्वतंत्रता–पूर्व काल में स्वदेशी नेताओं के बीच यह गीत अत्यंत लोकप्रिय हुआ और औपनिवेशिक शासन के विरोध का प्रतीक बन गया। यह गीत समय के साथ अधिक व्यापक स्वरूप ग्रहण करता चला गया। इससे जुड़ी गहरी भावनाओं के कारण, बंगाल–विभाजन के पश्चात हुए ब्रिटिश–विरोधी साम्राज्यवाद–विरोधी मुक्ति आंदोलन में यह गीत और 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष गहन तथा व्यापक राजनीतिक महत्व प्राप्त कर गए। श्री अरविंद घोष द्वारा 1909 में किया गया 'वन्दे मातरम्' का अंग्रेजी अनुवाद 'Mother, I bow to thee' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। 1937 में राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस गीत के प्रथम नौ पदों को एक देशभक्ति–गीत के रूप में स्वीकृति प्रदान की (भादुड़ी, 2026: 4)।

स्वतंत्रता के पश्चात 1950 में संविधान सभा द्वारा इस गीत को भारत के राष्ट्रीय गीत के रूप में अपनाया गया। इस गीत में राष्ट्रवाद और देश–प्रेम की भावना को सुदृढ़ करने की प्रबल क्षमता थी। 'वन्दे मातरम्' भारतीय

जीवन–पद्धति का प्रतिबिंब है, जिसमें समर्पण, अनुशासन और देश की निःस्वार्थ सेवा राजनीति से परे देशभक्ति के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत होते हैं। यह गीत हमें यह स्मरण कराता है कि देश केवल एक भौगोलिक क्षेत्र नहीं, बल्कि एक जीवंत और वात्सल्यपूर्ण माँ है। आज की युवा पीढ़ी को अपनी सांस्कृतिक जड़ों और पृष्ठभूमि से परिचित होना आवश्यक है। इस दृष्टि से विद्यालयों में 'वन्दे मातरम्' गीत को शामिल करना विद्यार्थियों में देशभक्ति और राष्ट्रवाद की भावना विकसित करने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' के 150वें वर्ष के अवसर पर केंद्रीय गृहमंत्री श्री अमित शाह ने राज्यसभा में एक विशेष चर्चा का सूत्रपात करते हुए कहा कि 'वन्दे मातरम्' गीत स्वतंत्रता की उद्घोषणा, स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा और भारत माता को दासता की जंजीरों से मुक्त कराने वाली शक्ति बना। उन्होंने कहा कि यही गीत है, जो भारत के शहीदों को अपने बलिदान के अंतिम क्षणों में भी पुनर्जन्म लेकर भारत माता के लिए पुनः अपना जीवन अर्पित करने की प्रेरणा देता है। उन्होंने बताया कि अनेक महान विचारकों और मनीषियों ने सदियों से हमारे प्राचीन राष्ट्र को उसकी शाश्वत संस्कृति के पथ पर आगे बढ़ाने के लिए 'वन्दे मातरम्' से प्रेरणा ली। श्री शाह ने आगे कहा कि संसद के दोनों सदनों में 'वन्दे मातरम्' पर हो रही यह चर्चा, गुणगान और उत्सव हमारे बच्चों, किशोरों, युवाओं और आने वाली अनेक पीढ़ियों को इसके गहन महत्व को समझने में सहायता करेगा और यह राष्ट्र के पुनर्निर्माण की नींव रखेगा।

श्री अमित शाह ने यह भी कहा कि मातृभूमि ही हमें हमारी पहचान और भाषा प्रदान करती है, यह एक सभ्य जीवन–पद्धति का आधार है और हमें अपने जीवन को उन्नत करने का अवसर देती है। उन्होंने कहा कि मातृभूमि से बढ़कर कुछ भी नहीं हो सकता, और इसी शाश्वत भाव को बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने पुनर्जीवित किया। दासता के उस अंधकारमय काल में 'वन्दे मातरम्' एक बिजली की चमक के समान कार्य करते हुए लोगों के हृदय में स्वराज प्राप्ति की भावना जगाकर उन्हें दासत्व की मानसिकता से मुक्त करने में सहायक बना। श्री शाह ने कहा कि स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हमारे सभी स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान के अंतिम शब्द 'वन्दे मातरम्' ही थे।

केंद्रीय गृह मंत्री श्री अमित शाह ने आगे कहा कि 'वन्दे मातरम्' कभी अप्रासंगिक नहीं होगा। जिस आवश्यकता के कारण इसकी रचना हुई थी, वह आज भी उतनी ही प्रबल है। उन्होंने कहा कि जिस प्रकार उस समय 'वन्दे मातरम्' देश को स्वतंत्र कराने की प्रेरक शक्ति बना था, उसी प्रकार इस अमृतकाल में 'वन्दे मातरम्, भारत को विकसित और महान बनाने का जयघोष बनेगा।

केंद्रीय गृह मंत्री के शब्दों में, यह सदन के प्रत्येक सदस्य की साझा जिम्मेदारी है कि वे प्रत्येक बालक के हृदय में 'वन्दे मातरम्' की भावना को पुनः जागृत करें, प्रत्येक किशोर के मन में 'वन्दे मातरम्' के उद्घोष को दृढ़तापूर्वक स्थापित करें, और प्रत्येक युवा को 'वन्दे मातरम्' के वास्तविक अर्थ से प्रकाशित पथ पर अपना जीवन समर्पित करने के लिए प्रेरित करें। उन्होंने कहा कि 'वन्दे मातरम्' का यह जयघोष उस भारत के निर्माण की प्रेरक शक्ति बनना चाहिए, जिसका स्वप्न हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने देखा था।

'वन्दे मातरम्' की रचना आरंभ में स्वतंत्र रूप से हुई थी और बाद में इसे बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के उपन्यास 'आनंदमठ' में सम्मिलित किया गया। अपनी रचनाओं के माध्यम से उन्होंने देशभक्ति की भावना का संचार करने का प्रयास किया, जो बिना किसी प्रत्यक्ष राजनीतिक स्वर के राष्ट्रीय गौरव की एक उभरती हुई भावना को

दर्शाती है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन की पृष्ठभूमि में उनका लेखन उस युग की सामाजिक–राजनीतिक वास्तविकताओं को उजागर करता है।

शिवेश प्रताप अपने लेख में दर्शाते हैं कि 'वन्दे मातरम्' केवल एक देशभक्ति–गीत से कहीं बढ़कर है। पिछले 150 वर्षों से यह गीत भारतीयों को क्षेत्र, भाषा या धर्म की सीमाओं से परे राष्ट्र के साथ भावनात्मक रूप से जोड़ने में सहायक रहा है। 'वन्दे मातरम्' वर्तमान पीढ़ी के लिए शक्ति के एक स्तंभ के रूप में कार्य कर सकता है। इस गीत को कार्यक्रमों और प्रार्थनाओं में सम्मिलित करके हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि इसकी विरासत भावी पीढ़ियों के हृदय में पूर्ण रूप से सम्मानित और आत्मसात हो।

भारत सरकार के युवा कार्यक्रम और खेल मंत्रालय के अंतर्गत युवा कार्यक्रम विभाग, 'माय भारत' डिजिटल पहल के माध्यम से देशभर में 'वन्दे मातरम्' शिविरों का आयोजन करेगा। इस दिशा में पहला शिविर पश्चिम बंगाल के कोलकाता में 24 से 30 जून 2026 तक आयोजित किया गया, जो बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की जयंती के साथ मेल खाता है। यह एक प्रमुख युवा–सक्रियता पहल है, जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय एकता, संवैधानिक मूल्यों और युवाशक्ति को सुदृढ़ करना है। इस प्रकार की पहलें युवा पीढ़ी के नेतृत्व में राष्ट्रवादी भावनाओं का निर्माण कर सकती हैं। आज के युग में भी यह गीत युवा पीढ़ी, विशेष रूप से विद्यार्थियों में, देशभक्ति की भावना और एकता की भावना का संचार करता है। आज भी यह गीत पीढ़ी–दर–पीढ़ी भारतीयों के मन में गर्व, श्रद्धा और एकता का संचार करता रहता है। जब युवा विद्यार्थियों के स्वर 'वन्दे मातरम्' के साथ गूँजते हैं, तो यह हमारे राष्ट्र की सेवा और रक्षा की एक प्रतिज्ञा बन जाती है।

संदर्भ सूचीः

1. बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय। आनंदमठ। कोलकाताः बंगीय साहित्य परिषद।
2. भादुड़ी, टी. (2026)। बंकिम चंद्रेर 'वन्दे मातरम्': अनुप्रेरणा ओ अभिप्राय। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च। खंड 6, अंक 1, पृ. 1–14।
3. घोष, एन. (1977)। नॉट वन्दे मातरम्, नमस्तुते। नंदी, एम. (संपा.)। बिवाब। प्रकाशकः सेनगुप्ता, समरेंद्रय कोलकाता।
4. प्रेस सूचना ब्यूरो, भारत सरकार, https://www.pib.gov.in/PressReleasePage-aspx\PRID(2277018, तिथि 04.06.2026
5. प्रेस सूचना ब्यूरो, भारत सरकार, https://www.pib.gov.in/PressReleasePage-aspx\PRID(2201051-reg(3-lang)1, तिथि 03.06.2026
6. प्रताप, एस. (2026)। रिक्लेमिंग वन्दे मातरम्: यूथ, यूनिटी एंड नेशनल कोहेजन। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन, https://spmrf-orgèreclaiming-vande-mataram-youth-unity-and-national-cohesion/ समाचार रिपोर्ट्स
7. टाइम्स ऑफ इंडिया, http://timesofindia.indiatimes.comèarticleshowè128187027-cms\utm_source(contentofinterest-utm_medium(text-utm_campaign(cppst, तिथि 02.07.2026
8. एनडीटीवी, https://www-ndtv-comèindia-newsèwhen-rabindranath-tagore-sang-vande-mataram-at-1896-calcutta-congress-session-9591077, तिथि 10.06.2026

वन्दे मातरम् : युवा शक्ति और राष्ट्र निर्माण का संकल्प

–शशि कांत पांडेय
वरिष्ठ प्रबंधक,राजभाषा
केनरा बैंक, केनरा बैंक प्रबंधन संस्थान,
मणिपाल, कर्नाटक

आज जब भारत 21वीं सदी में दुनिया के सबसे युवा जनसांख्यिकीय लाभांश वाले देश के रूप में स्थापित हो रहा है, तब 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता और इसका गूढ़ संदेश युवाओं के लिए पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह देखना न केवल प्रासंगिक है बल्कि अनिवार्य भी है कि आज की आधुनिक, तकनीकी रूप से सक्षम, कृत्रिम बुद्धिमत्ता के दौर में जीने वाली और वैश्विक फलक पर अपनी पहचान बनाने वाली युवा पीढ़ी इस ऐतिहासिक महामंत्र को किस रूप में ग्रहण करती है। क्या यह गीत उनके लिए केवल एक औपचारिक राष्ट्रीय गान या विशिष्ट अवसरों पर गाया जाने वाला कोरस मात्र है, या यह उनके जीवन में राष्ट्र–निर्माण की वास्तविक, व्यावहारिक और धरातलीय प्रेरणा बन सकता है?

''राष्ट्रवाद कोई भौगोलिक सीमा नहीं, बल्कि एक जीवंत आत्मिक अहसास है।
वन्दे मातरम्' उसी अहसास को जगाने वाली शाश्वत ध्वनि है।''

ऐतिहासिक संदर्भः एक गीत जो क्रांति का पर्याय बन गया

'वन्दे मातरम्' के ऐतिहासिक सफर को समझे बिना वर्तमान युवा पीढ़ी के साथ इसके जुड़ाव को नहीं समझा जा सकता। इस गीत की रचना बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 1870 के दशक में की थी और बाद में इसे उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'आनंदमठ' (1882) में शामिल किया गया। यह वह दौर था जब भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता अपने क्रूरतम रूप में थी और भारतीयों के भीतर अपनी संस्कृति और पहचान को लेकर एक गहरा निराशा भाव था। महर्षि अरविंदो का ऐतिहासिक कथनः ''वन्दे मातरम् केवल एक गीत नहीं था, बल्कि यह एक दिव्य मंत्र था जो भारत को एक जीवंत राष्ट्र के रूप में गढ़ने और गुलामी की मानसिक बेड़ियों को तोड़ने के लिए अवतरित हुआ था।''

1905 का बंग–भंग और राष्ट्रवाद का उदय

इस गीत को वास्तविक जन–आंदोलन का रूप मिला 1905 के बंगाल विभाजन (बंग–भंग) के दौरान। लॉर्ड कर्जन ने जब कूटनीतिक रूप से बंगाल को बांटने का प्रयास किया, तब इसके विरोध में पूरा देश सड़कों पर उतर आया। कलकत्ता (अब कोलकाता) की सड़कों पर हजारों युवाओं, छात्रों और नागरिकों ने हाथों में तिरंगा लेकर 'वन्दे मातरम्' का उद्‌घोष किया। यह नारा रातों–रात ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ प्रतिरोध का सबसे बड़ा प्रतीक बन गया। स्थिति यह हो गई कि ब्रिटिश सरकार ने सार्वजनिक रूप से 'वन्दे मातरम्' कहने पर प्रतिबंध लगा दिया। जो भी युवा इस नारे को लगाता, उसे बेंत की सजा दी जाती या जेल में डाल दिया जाता। लेकिन इस दमन ने युवाओं के भीतर की आग को और भड़का दिया।

क्रांतिकारियों का संबल और अंतिम शब्द

स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास में ऐसे अनगिनत उदाहरण हैं जहाँ यह गीत क्रांतिकारियों के लिए अंतिम संबल

बना। 19 वर्षीय खुदीराम बोस जब फांसी के फंदे पर झूल रहे थे, तब उनके होठों पर 'वन्दे मातरम्' का अटूट उद्घोष था। मदनलाल ढींगरा, करतार सिंह सराभा और भगत सिंह जैसे महान नायकों ने इस मंत्र को अपनी वैचारिक चेतना में शामिल किया। वर्ष 1907 में मैडम भीखाजी कामा ने जब जर्मनी के स्टटगार्ट में पहली बार अंतरराष्ट्रीय धरती पर भारतीय स्वतंत्रता के ध्वज को फहराया, तो उस ध्वज के मध्य में देवनागरी लिपि में 'वन्दे मातरम्' अंकित था। यह इस बात का ऐतिहासिक प्रमाण है कि यह गीत केवल क्षेत्रीय नहीं, बल्कि भारत की वैश्विक राष्ट्रीय अस्मिता का पहला उद्घोष था।

सांस्कृतिक और दार्शनिक आधारः भूमि का मानवीकरण

वन्दे मातरम्' की दार्शनिक गहराई इस बात में निहित है कि यह अपनी भौगोलिक भूमि को केवल मिट्टी, पत्थरों, नदियों और पहाड़ों का एक निर्जीव ढांचा नहीं मानता, बल्कि उसे एक सजीव, ममतामयी और शक्तिशालिनी माता के रूप में पूजता है। यह दार्शनिक दृष्टिकोण आज की युवा पीढ़ी को यह सिखाता है कि जिस देश में वे रहते हैं, उसकी रक्षा करना उनका प्राकृतिक और नैतिक दायित्व है। बंकिमचंद्र जी ने देश को दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती के रूप में देखा,जो क्रमशः शक्ति, समृद्धि और ज्ञान की प्रतीक हैं। एक युवा के लिए यह तीन तत्त्व–ज्ञान, समृद्धि और शक्ति, जीवन के सबसे बड़े स्तंभ हैं।

राजभाषा, भाषाई समरसता और 'वन्दे मातरम्'

इस महामंत्र का एक और अनूठा और महत्वपूर्ण पहलू इसका भाषाई ढांचा है। बंकिमचंद्र जी ने इस गीत की रचना संस्कृत और बांग्ला भाषा के अत्यंत सुंदर और सहज मिश्रण से की थी। भाषाई सेतु के रूप में; स्वाधीनता आंदोलन के दौरान जब देश के विभिन्न प्रांतों की भाषाएँ अलग–अलग थीं, तब 'वन्दे मातरम्' एक ऐसा सर्व स्वीकृत शब्द बना जिसने भाषाई दीवारों को पूरी तरह ढहा दिया।

तमिल भाषी सुब्रमण्यम भारती ने इसका तमिल में अनुवाद किया, तो उत्तर भारत में हिंदी भाषियों ने इसे अपने कंठ का हार बनाया। आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, जब युवा पीढ़ी वैश्विक संस्कृतियों के संपर्क में है, तब 'वन्दे मातरम्' उन्हें याद दिलाता है कि भारत की भाषाई विविधता हमारी कमजोरी नहीं बल्कि हमारी सबसे बड़ी ताकत है। अपनी राजभाषा हिंदी, अपनी मातृभाषाओं और प्रांतीय बोलियों का सम्मान करना तथा उनके माध्यम से राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करना ही सच्चे अर्थों में 'वन्दे मातरम्' की मूल भावना का आदर करना है। यह गीत युवाओं को सिखाता है कि विभिन्न भाषाएँ बोलते हुए भी वैचारिक रूप से हम सब एक हैं।

आधुनिक संदर्भः डिजिटल युग और वैचारिक चुनौतियाँ

21वीं सदी का भारत एक अत्यंत अनूठे दौर से गुजर रहा है। आज का युवा एक ऐसे समाज में जी रहा है जो अत्यधिक तकनीक–संचालित है। आज का युवा वैश्विक मंचों से जुड़ रहा है, विदेशी प्रवृत्तियों को देख रहा है और दुनिया भर के रुझानों से प्रभावित होता है। इस प्रक्रिया में कई बार वह अपनी जड़ों से कटने लगता है। 'वन्दे मातरम्' इस आधुनिक परिप्रेक्ष्य में एक 'सांस्कृतिक लंगर' का कार्य करता है।

यह युवाओं को यह समझाता है कि आप वैश्विक नागरिक अवश्य बनें, लेकिन अपनी स्थानीय और राष्ट्रीय पहचान की कीमत पर नहीं। जब तक आपकी जड़ें अपनी मिट्टी में गहरी नहीं होंगी, तब तक आप वैश्विक स्तर पर वास्तविक सम्मान नहीं पा सकते।

इंटरनेट के दौर में राष्ट्रवाद की परिभाषा को कई बार सतही बना दिया गया है। सोशल मीडिया पर किसी पोस्ट को लाइक करना या हैशटैग चलाना ही देशभक्ति मान लिया जाता है। इसके विपरीत, कुछ वैचारिक विमर्श ऐसे भी हैं जो राष्ट्रवाद को एक नकारात्मक अवधारणा के रूप में प्रस्तुत करते हैं। ऐसे भटकाव के दौर में 'वन्दे मातरम्' युवाओं को एक संतुलित और सकारात्मक राष्ट्रवाद की दिशा दिखाता है—एक ऐसा राष्ट्रवाद जो किसी अन्य देश या संस्कृति से नफरत करना नहीं सिखाता, बल्कि अपनी मातृभूमि के प्रति अगाध प्रेम और समर्पण की प्रेरणा देता है।

वर्तमान संदर्भ : व्यावहारिक देशभक्ति

आज भारत के सामने कोई विदेशी औपनिवेशिक शासक नहीं है जिसे देश से बाहर निकालना हो। इसलिए, आज के युवाओं के लिए 'वन्दे मातरम्' का व्यावहारिक अर्थ पूरी तरह बदल चुका है। वर्तमान संदर्भ में देशभक्ति सीमाओं पर लड़ने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि समाज के भीतर रहकर देश को मजबूत बनाने में है।

आज के दौर में सबसे बड़ी देशभक्ति यह है कि हम अपने देश को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाएं। जब देश का कोई युवा उद्यमी बनता है, स्टार्ट—अप शुरू करता है, और स्थानीय कारीगरों, बुनकरों या किसानों के उत्पादों को वैश्विक मंच पर ले जाता है, तो वह वास्तव में ''सुफलाम्'' की भावना को साकार कर रहा होता है। आधुनिक युग का एक बड़ा सशक्तिकरण देश के अंतिम छोर पर बैठे व्यक्ति को मुख्यधारा से जोड़ना है।

आज जब भारत के युवा बैंकर्स, तकनीकी विशेषज्ञ और नवोन्मेषक दिन—रात काम करके सुदूर गांवों तक डिजिटल बैंकिंग, वित्तीय साक्षरता और यूपीआई जैसी सुविधाएँ पहुँचा रहे हैं, तो वे वास्तव में देश को आर्थिक रूप से सशक्त बना रहे हैं। समाज के सबसे गरीब तबके का जीवन आसान बनाना ही आधुनिक युग की वास्तविक राष्ट्र—वंदना है।

पर्यावरण चेतनाः आधुनिक 'वन्दे मातरम्'

जल संकट, वायु प्रदूषण और ग्लोबल वार्मिंग आज के भारत की सबसे बड़ी समकालीन चुनौतियाँ हैं। यदि हमारी नदियाँ प्रदूषित हो रही हैं और हमारे पहाड़ बंजर हो रहे हैं, तो हम ''सुजलाम् सुफलाम्'' कैसे कह सकते हैं? आज के युवाओं के लिए हर हफ्ते एक पेड़ लगाना, जल संरक्षण करना, और सिंगल—यूज प्लास्टिक का त्याग करना ही आधुनिक युग की वास्तविक वन्दे मातरम् की साधना है। ''आज बंजर होती धरती को हरा—भरा बनाना, नदियों को प्रदूषण मुक्त करना और स्वदेशी तकनीकों का निर्माण करना ही 'वन्दे मातरम्' की सच्ची पूजा है।''

युवा शक्ति और वन्दे मातरम् की भावना

वन्दे मातरम् की इस भावना को और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए हमें समाज में घटित हो रही कुछ बेहतरीन केस स्टडीज का विश्लेषण करना होगा, जहाँ युवाओं ने इस महामंत्र की मूल भावना को अपने कर्मों से सिद्ध किया है।

स्वदेशी ड्रोन तकनीक और आत्मनिर्भरता

उत्तर भारत के एक छोटे शहर के युवा इंजीनियरों के समूह ने किसी बहुराष्ट्रीय कंपनी की मोटी सैलरी वाली नौकरी चुनने के बजाय भारत में ही रहकर स्वदेशी तकनीक विकसित करने का फैसला किया। उन्होंने पूरी

तरह से भारत में निर्मित एंटी–ड्रोन तकनीक और एआई–संचालित रोबोटिक्स पर काम किया जो वर्तमान में भारतीय सुरक्षा बलों की मदद कर रहे हैं।

इन युवाओं का कहना है कि जब वे अपने कार्यालय में काम शुरू करते हैं, तो पृष्ठभूमि में 'वन्दे मातरम्' का संगीत उन्हें यह याद दिलाता है कि उनका ज्ञान और उनकी बौद्धिक क्षमता सबसे पहले उनकी मातृभूमि के काम आनी चाहिए। यह केस स्टडी दर्शाती है कि युवा किस प्रकार तकनीकी नवाचार को राष्ट्र–सेवा का माध्यम बना रहे हैं।

'ग्रीन ब्रिगेड' और पर्यावरण पुनरुत्थान

देश के विभिन्न महानगरों में कॉलेज जाने वाले युवाओं ने 'ग्रीन ब्रिगेड' के नाम से एक अनूठा संगठन बनाया है। ये युवा हर वीकेंड पर शहरों के कंक्रीट के जंगलों के बीच मियावाकी पद्धति से छोटे–छोटे शहरी जंगल विकसित कर रहे हैं और बंजर भूमियों को पुनः हरा–भरा बना रहे हैं। इन युवाओं का मानना है कि बंकिमचंद्र जी ने जिस ''शस्यश्यामलाम्'' (हरी–भरी) धरती की कल्पना की थी, उसे औद्योगिक प्रदूषण से बचाना ही उनकी सच्ची देशभक्ति है। यह केस स्टडी पर्यावरण संरक्षण के माध्यम से राष्ट्रीय गीत की प्रासंगिकता को जमीन पर उतारने का अनूठा उदाहरण है।

सुदूर क्षेत्रों में 'डिजिटल शिक्षा' का प्रसार

कुछ युवा लॉ और प्रबंधन के स्नातकों ने सुदूर ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में एक मुहिम शुरू की है, जहाँ वे गाँव की छोटी बच्चियों को डिजिटल साक्षरता, बुनियादी कानूनी अधिकारों की जानकारी और कोडिंग की शिक्षा दे रहे हैं। यह मुहिम ''सरस्वती'' (ज्ञान) के उस रूप की वंदना है जिसका जिक्र हमारी राष्ट्रीय चेतना में मिलता है। इन युवाओं ने यह साबित किया है कि ज्ञान का लोकतंत्रीकरण करना और समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति को सशक्त बनाना ही 21वीं सदी का वास्तविक राष्ट्र–निर्माण है।

कला, संगीत और रंगमंच में 'वन्दे मातरम्' का पुनर्जन्म

युवा पीढ़ी हमेशा से कलात्मक और रचनात्मक माध्यमों के प्रति आकर्षित रही है। 'वन्दे मातरम्' की सबसे बड़ी खूबी यह रही है कि समय के साथ इसके संगीतात्मक और कलात्मक स्वरूप में अद्भुत बदलाव आए हैं, जिसने इसे हर पीढ़ी का पसंदीदा बनाया है।

कालखंड / माध्यम	**अभिव्यक्ति का स्वरूप**	**युवाओं पर प्रभाव**
पारंपरिक (1896)	रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में शास्त्रीय शैली में गायन	राष्ट्रीय आंदोलन को वैचारिक और संगीतात्मक दिशा मिली
आधुनिक फ्यूजन (1997)	ए.आर. रहमान का एल्बम, वन्दे मातरम्' (माँ तुझे सलाम)	देश के इतिहास में युवाओं के भीतर देशभक्ति का सबसे बड़ा सांस्कृतिक पुनरुत्थान हुआ
डिजिटल	यूट्यूब, इंस्टाग्राम रील्स, फ्लैश मॉब	वैश्विक स्तर पर भारतीय प्रवासियों के युवाओं

युग (वर्तमान) और रॉक फ्यूजन बैंड्स में अपनी पहचान के प्रति गौरव बढ़ा

आज के युवा संगीतकार इस गीत की मूल आत्मा (शास्त्रीय शुद्धता) को बनाए रखते हुए इसमें आधुनिक वाद्ययंत्रों का समावेशन करके इसे समकालीन बना रहे हैं। कॉलेजों के सांस्कृतिक उत्सवों में जब 'वन्दे मातरम्' का फ्यूजन वर्जन बजता है, तो हजारों युवाओं की ऊर्जा और उनका उत्साह देखने लायक होता है। यह इस बात को खारिज करता है कि युवा राष्ट्रीय प्रतीकों से दूर हो रहे हैं; बल्कि यह दिखाता है कि वे अपनी शैली में इन प्रतीकों को अपना रहे हैं।

'विकसित भारत @ 2047' और युवाओं का रोडमैप

भारत को एक 'विकसित राष्ट्र' और 'आत्मनिर्भर भारत' बनाने का जो सपना देखा गया है, उसे पूरा करने की पूरी जिम्मेदारी आज के युवाओं के कंधों पर है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 'वन्दे मातरम्' युवाओं के लिए एक वैचारिक रोडमैप प्रदान करता है:

1. मानसिक गुलामी से मुक्तिः युवा पीढ़ी को अपनी भाषा, अपनी वेशभूषा और अपने सांस्कृतिक मूल्यों पर गर्व होना चाहिए। विदेशी विचारों का अंधानुकरण करने के बजाय, हमें अपनी स्वदेशी ज्ञान परंपरा को पुनर्जीवित करना होगा।
2. अनुसंधान और बौद्धिक संपदाः आज के युवाओं को केवल 'उपभोक्ता' नहीं बल्कि 'सर्जक' बनना होगा। पेटेंट फाइल करने और वैश्विक समस्याओं के समाधान भारतीय परिप्रेक्ष्य से निकालने की आवश्यकता है।
3. सामाजिक न्याय और समावेशनः एक मजबूत और विकसित भारत तब तक नहीं बन सकता जब तक समाज में किसी भी प्रकार का भेदभाव मौजूद रहेगा। युवाओं को एक ऐसे समरस समाज का नेतृत्व करना होगा जहाँ हर नागरिक को समान अवसर और सम्मान मिले।

संपूर्ण विश्लेषण के उपरांत हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि 'वन्दे मातरम्' अतीत की कोई जड़ या मृत धरोहर नहीं है, बल्कि यह एक निरंतर प्रवाहित होने वाली वैचारिक ऊर्जा है। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा बोया गया यह बीज आज एक विशाल वटवृक्ष बन चुका है, जिसकी छांव में आधुनिक भारत की युवा पीढ़ी अपनी आकांक्षाओं के नए आसमान तलाश रही है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, युवाओं के लिए इस महामंत्र के मायने सिर्फ नारेबाजी या किताबी ज्ञान तक सीमित नहीं हैं, बल्कि यह उनके दैनिक जीवन के कर्मों, उनके स्टार्ट–अप्स, उनके पर्यावरण के प्रति सरोकारों और समाज के प्रति उनकी जिम्मेदारियों में झलकता है। जब तक इस देश का युवा अपनी मातृभूमि को 'माता' के रूप में सम्मान देता रहेगा, तब तक 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता अक्षुण्ण रहेगी। यह गीत कल भी युवाओं का संबल था, आज भी उनका मार्गदर्शक है, और आने वाले स्वर्णिम भविष्य में भी आत्मनिर्भर और विकसित भारत की चेतना का सबसे सुरीला और शक्तिशाली उद्घोष बना रहेगा।

वन्दे मातरम् : देश प्रेम के शाश्वत स्वर से गूंजती युवा चेतना

–बिक्रम सिंह
उप प्रबंधक (राजभाषा)
मेकॉन लिमिटेड, रांची, झारखंड

'वन्दे मातरम्' जिसका शाब्दिक अर्थ है ''हे माँ, मैं तुम्हें नमन करता हूँ'', यह सिर्फ देशभक्ति का एक नारा नहीं है, बल्कि त्याग, आजादी, सांस्कृतिक पहचान और राष्ट्रीय एकता का प्रतीक रहा है। 19वीं सदी के आखिर में श्री बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचे गए इस गीत ने भारत की आजादी की लड़ाई के दौरान काफी अहमियत हासिल की। पीढ़ियों से भारतीयों के लिए इन दो शब्दों ने मातृभूमि के प्रति प्रेम और औपनिवेशिक शासन के खिलाफ संघर्ष की भावना को दर्शाया है। इसने एक सदी से भी ज्यादा समय से भारत के राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन को आकार दिया है। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान, 'वन्दे मातरम्' ने अनगिनत स्वतंत्रता सेनानियों को देश की आजादी के लिए अपना जीवन समर्पित करने और बलिदान करने के लिए प्रेरित किया।

इक्कीसवीं सदी का भारत उस भारत से बहुत अलग है जिसने आजादी की लड़ाई को जन्म दिया था। आज के युवा वैश्वीकरण, तकनीकी उन्नति, सोशल मीडिया, आर्थिक उम्मीदों और सांस्कृतिक विविधता के दौर में बड़े हुए हैं। देशभक्ति के बारे में उनकी समझ सिर्फ इतिहास की किताबों से ही नहीं, बल्कि डिजिटल प्लेटफॉर्म, अंतरराष्ट्रीय संबंधों और आज के सामाजिक हालात से भी बनी है। नतीजतन, युवा पीढ़ी के बीच 'वन्दे मातरम्' को देखने का नजरिया बदला है। आज, तेजी से हो रहे सामाजिक बदलाव, वैश्वीकरण और अनेकता के दौर में युवा पीढ़ी 'वन्दे मातरम्' को सम्मान, जिज्ञासा, मिली–जुली भावनाओं और आलोचनात्मक नजरिए से देखती है। जहाँ बहुत से लोग इसे आज भी एक पवित्र राष्ट्रीय गीत मानते हैं, वहीं कुछ लोग इसे संवैधानिक मूल्यों, समावेशिता और अभिव्यक्ति की आजादी के नजरिए से देखते हैं। बदलता हुआ यह नजरिया 'वन्दे मातरम्' के महत्व को कम नहीं करता; बल्कि यह भारतीय समाज के बदलते स्वरूप को दिखाता है। देशभक्ति, पहचान और लोकतंत्र के बीच के गतिशील रिश्ते को समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि युवा भारतीय इस ऐतिहासिक रचना से किस तरह जुड़ते हैं।

वन्दे मातरम् की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

वन्दे मातरम् की रचना बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 1870 के दशक में की थी और बाद में इसे उनके मशहूर उपन्यास 'आनंदमठ' में शामिल किया गया, जो 1882 में प्रकाशित हुआ था। मुख्य रूप से संस्कृत–मिश्रित बंगाली में लिखे गए इस गीत में भारत को एक ऐसी दिव्य माँ के रूप में दिखाया गया है जो उपजाऊ खेतों, बहती नदियों, ठंडी हवाओं और भरपूर प्राकृतिक सुंदरता से संपन्न है।

वन्दे मातरम् गीत में देश को समृद्ध, सुंदर और पालन–पोषण करने वाला बताया गया है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के खिलाफ संघर्ष के दौरान, यह गीत साहित्य के दायरे से बाहर निकलकर स्वतंत्रता आंदोलन का

भावनात्मक गीत बन गया। इसने भाषाई, क्षेत्रीय और सामाजिक सीमाओं से परे लोगों को एकजुट किया। क्रांतिकारी इसकी धुन पर आगे बढ़ते थे, छात्र विरोध प्रदर्शनों के दौरान इसे गाते थे और अनगिनत देशभक्तों ने इन अमर शब्दों का उच्चारण करते हुए जेल की सजा स्वीकार की।

भारत के विविध समाज का सम्मान करते हुए और इसके ऐतिहासिक महत्व को समझते हुए, संविधान सभा ने 24 जनवरी 1950 को 'जन गण मन' को राष्ट्रगान के साथ–साथ 'वन्दे मातरम्' के शुरुआती दो पदों को भारत के राष्ट्रीय गीत के रूप में अपनाया। इस संतुलित नजरिए ने आजादी की लड़ाई में गीत के बड़े योगदान और देश की विविध धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं, दोनों को ही मान्यता दी।

प्रतीक और भावनात्मक महत्व

मूल रूप से, 'वन्दे मातरम्' उस धरती के प्रति आभार व्यक्त करने का एक तरीका है जो अपने लोगों का पालन–पोषण करती है। मातृभूमि को केवल एक भौगोलिक क्षेत्र के रूप में नहीं, बल्कि जीवन, समृद्धि, संस्कृति और सभ्यता के जीवंत स्रोत के रूप में बताया गया है। भारतीयों के लिए यह गीत अपने देश के प्रति प्रेम, भारत की प्राकृतिक संपदा का सम्मान, विविधता में एकता, राष्ट्र के कल्याण के लिए त्याग, सांस्कृतिक विरासत और ऐतिहासिक निरंतरता का प्रतीक है। समय के साथ बदलने वाले राजनीतिक नारों के विपरीत, 'वन्दे मातरम्' आज भी कायम है क्योंकि इसकी भावनात्मक अपील एक बच्चे और माँ के बीच के सार्वभौमिक रिश्ते में निहित है। यह प्रतीक लाखों लोगों को प्रेरित करता रहता है, खासकर राष्ट्रीय उत्सवों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों, शिक्षण संस्थानों और देशभक्तिपूर्ण आयोजनों के दौरान।

भारत की युवा पीढ़ी का बदलता स्वरूप

आज के युवा डिजिटल रूप से साक्षर और दुनिया के बारे में जागरूक हैं, साथ ही महत्वाकांक्षी भी हैं और उन्हें अलग–अलग तरह के पहलू जानने को मिल रहे हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म, ऑनलाइन शिक्षा, विदेश यात्रा और दुनिया भर में नौकरी के मौकों ने उनकी सोच का दायरा राष्ट्रीय सीमाओं से कहीं आगे बढ़ा दिया है। पिछली पीढ़ियों के विपरीत कई युवा भारतीय देशभक्ति को सिर्फ भावनात्मक प्रतीकों के जरिए नहीं, बल्कि सक्रिय नागरिकता के जरिए परिभाषित करते हैं। वे राष्ट्रीय गौरव को वैज्ञानिक नवोन्मेषिता, आर्थिक विकास, पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता, संवैधानिक अधिकार, अच्छा शासन, वैश्विक प्रतिस्पर्धा आदि चीजों से जोड़ते हैं। इस बदलाव का मतलब देशभक्ति में कमी आना नहीं है। बल्कि, देशभक्ति का दायरा और व्यापक हो गया है। युवा भारतीयों का मानना है कि देश की सेवा करने का मतलब है व्यावहारिक समस्याओं को हल करना, रोजगार पैदा करना, इनोवेशन को बढ़ावा देना और समाज में सकारात्मक योगदान देना।

स्कूलों में छात्र मुख्य रूप से पाठ्य पुस्तकों, स्वतंत्रता दिवस समारोहों, गणतंत्र दिवस कार्यक्रमों और सांस्कृतिक गतिविधियों, मुख्यधारा के मीडिया, पारिवारिक परंपराओं और सोशल मीडिया के जरिए इस गीत से परिचित होते हैं। वर्तमान में स्कूलों में बच्चे इतिहास का एक ऐसा रूप सीखते हैं जिसमें सब कुछ ठीक–ठाक दिखाया जाता है कि 'वन्दे मातरम्' आजादी का गीत और राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक था।

बहुत से युवा 'वन्दे मातरम्' को एक ऐसी भावनात्मक सांस्कृतिक चीज मानते हैं जो उन्हें अपने पुरखों की यादों से जोड़ती है। सामूहिक भावनाओं के पलों जैसे राष्ट्रीय त्योहार, कॉलेज के दीक्षांत समारोह या स्थानीय उत्सव में यह गीत अपनापन और निरंतरता का प्रतीक बन जाता है। यह सुनने वालों पर ऐसा असर डाल सकता है जो सिर्फ राजनीति नहीं कर सकती; इसकी लय और शब्द पुरानी यादें, गर्व और साझा विरासत का एहसास जगाते हैं। जिन लोगों ने यह गीत अपने माता–पिता से या स्कूल में सुना है, उनके लिए यह अक्सर परिवार की किसी अनमोल धरोहर जैसा होता है जो सुकून और अपनापन देता है। सोशल मीडिया ने युवा पीढ़ी के राष्ट्रीय प्रतीकों से जुड़ने के तरीके को पूरी तरह से बदल दिया है। इंस्टाग्राम, यूट्यूब, फेसबुक और X जैसे प्लेटफॉर्म देशभक्ति से जुड़े संदेशों को तेजी से फैलाने में मदद करते हैं। शास्त्रीय, समकालीन, वाद्य और कई भाषाओं वाले रूपों में 'वन्दे मातरम्' की रचनात्मक प्रस्तुतियों ने इस गीत को नए दर्शकों तक पहुँचाया है। डिजिटल क्रिएटर्स अक्सर इस गीत के साथ ऐसे विजुअल्स (दृश्य) जोड़ते हैं जो भारत की सांस्कृतिक विविधता, सैन्य उपलब्धियों, वैज्ञानिक प्रगति और प्राकृतिक सुंदरता को दिखाते हैं। ऐसी प्रस्तुतियाँ इस रचना को युवाओं के लिए ज्यादा सुलभ बनाती हैं।

राष्ट्रप्रेम का नया स्वरूप

मौजूदा समय में देशभक्ति का मतलब काफी बदल गया है। पहले की पीढ़ियाँ देशभक्ति को मुख्य रूप से राजनीतिक आजादी की लड़ाई से जोड़कर देखती थीं। आज के युवा देश को आगे बढ़ाने वाले कामों के जरिए देशभक्ति दिखाते हैं, उदाहरण के लिए नई और अनोखी तकनीकें विकसित करना, ग्रामीण समुदायों की सेवा करना, सस्टेनेबल डेवलपमेंट (दीर्घकालिक विकास) को बढ़ावा देना, स्थानीय उद्योगों का समर्थन करना, आपदाओं के समय स्वयंसेवा करना, खेल और पढ़ाई–लिखाई में बेहतरीन प्रदर्शन करना, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत का प्रतिनिधित्व करना, ईमानदारी से टैक्स चुकाना, सार्वजनिक संपत्ति का सम्मान करना, संवैधानिक मूल्यों को बनाए रखना आदि। इस नजरिए से देखें तो 'वन्दे मातरम्' आज भी प्रासंगिक है, क्योंकि यह देश के प्रति भावनात्मक जुड़ाव का प्रतीक है और साथ ही जिम्मेदार नागरिकता को भी बढ़ावा देता है। आज देशभक्ति को केवल कही गई बातों से ही नहीं, बल्कि किए गए कामों से भी आंका जाने लगा है।

विविधता और लोकतांत्रिक दृष्टिकोण

भारत की सबसे बड़ी ताकत उसकी असाधारण विविधता है। अलग–अलग समुदाय राष्ट्रीय प्रतीकों को अपने ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और धार्मिक अनुभवों के आधार पर समझते हैं। कुछ लोग सार्वजनिक कार्यक्रमों में पूरे जोश के साथ 'वन्दे मातरम्' गाते हैं, जबकि कुछ अन्य अपनी व्यक्तिगत मान्यताओं के कारण गाना न गाते हुए भी सम्मानपूर्वक राष्ट्र का आदर करते हैं। भारतीय संविधान अंतरात्मा की स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की गारंटी देता है। साथ ही, राष्ट्रीय आदर्शों के प्रति सम्मान को भी बढ़ावा देता है। एक परिपक्व लोकतंत्र राष्ट्रीय एकता को कमजोर किए बिना विभिन्न दृष्टिकोणों को जगह देता है। युवा पीढ़ी तेजी से यह समझ रही है कि देशभक्ति को जबरदस्ती थोपा नहीं जा सकता; यह समझ, आपसी सम्मान और साझा राष्ट्रीय आकांक्षाओं से पनपती है। संविधान का यह दृष्टिकोण नागरिकों को व्यक्तिगत स्वतंत्रता बनाए रखते हुए राष्ट्रीय प्रतीकों का सम्मान करने की अनुमति देता है।

शैक्षिक संस्थान और राष्ट्रीय जागरूकता

स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय युवाओं की सोच को आकार देने में अहम भूमिका निभाते हैं। शैक्षिक संस्थानों को 'वन्दे मातरम्' को सिर्फ याद करने वाले गीत के तौर पर नहीं, बल्कि भारत की आजादी की लड़ाई को दर्शाने वाले एक ऐतिहासिक दस्तावेज के तौर पर पेश करना चाहिए। इससे छात्रों को विभिन्न विषयों के बारे में जानकारी प्राप्त होगी; जैसे—बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का साहित्यिक योगदान; जन—आंदोलनों में इस गीत की भूमिका; इससे प्रेरित होने वाले स्वतंत्रता सेनानी; राष्ट्रीय गीत का संवैधानिक दर्जा; भारत की विविधतापूर्ण परंपराओं का सम्मान करने का महत्व आदि।

सांस्कृतिक पुनर्जागरण और कलात्मक अभिव्यक्ति

समकालीन भारत की एक खास बात 'वन्दे मातरम्' की लगातार होती कलात्मक पुनर्व्याख्या है। जाने—माने गायकों, ऑर्केस्ट्रा, मिलिट्री बैंड, स्कूल के गायन समूहों और स्वतंत्र संगीतकारों ने इस रचना को कई संगीत शैलियों में पेश किया है। शास्त्रीय, लोक, फ्यूजन, वाद्य—संगीत, सिम्फोनिक और विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में प्रस्तुतियों ने युवा दर्शकों को इसकी सुंदरता से परिचित कराया है। फिल्मों, टेलीविजन कार्यक्रमों और डिजिटल प्लेटफॉर्म ने इसके भावनात्मक प्रभाव को और मजबूत किया है। ये रचनात्मक रूपांतरण दिखाते हैं कि सांस्कृतिक विरासत तब जीवंत बनी रहती है जब हर पीढ़ी उससे जुड़ने के नए तरीके खोजती है। युवा पीढ़ी अक्सर ऐसी नवीन प्रस्तुतियों की सराहना करती है क्योंकि वे परंपरा और आधुनिकता के बीच सेतु का काम करती हैं।

वैश्विक दौर में राष्ट्रीय एकता

वैश्वीकरण ने शिक्षा, रोजगार, एंटरप्रेन्योरशिप और सांस्कृतिक आदान—प्रदान के मौके बढ़ाए हैं। लाखों युवा भारतीय विदेश में पढ़ते या काम करते हैं, फिर भी वे अपने देश से भावनात्मक रूप से जुड़े रहते हैं। विदेशों में रहने वाले भारतीय भी 'वन्दे मातरम्' के प्रति बेहद लगाव और आत्मीयता महसूस करते हैं। भारत से बाहर रहने पर अक्सर राष्ट्रीय प्रतीकों, भाषाओं, त्योहारों और परंपराओं के प्रति भावनात्मक लगाव और मजबूत होता है। इसी तरह, ओलंपिक, क्रिकेट वर्ल्ड कप और दूसरी वैश्विक प्रतियोगिताओं जैसे अंतरराष्ट्रीय खेल आयोजन अक्सर दुनिया भर के युवा भारतीयों में देशभक्ति की भावना को फिर से जगाते हैं। ऐसे पलों में, 'वन्दे मातरम्' भौगोलिक सीमाओं से परे एक साझा राष्ट्रीय पहचान की मजबूत याद दिलाता है। इस तरह, वैश्वीकरण ने देशभक्ति को कमजोर नहीं किया है; बल्कि कई मामलों में, इसने इसके भावनात्मक महत्व को और बढ़ाया है।

वर्तमान परिप्रक्ष्य में वन्दे मातरम्

आज के भारत में 'वन्दे मातरम्' और भी ज्यादा प्रासंगिक हो गया है। जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण संरक्षण, टिकाऊ विकास और जिम्मेदार नागरिकता हमें याद दिलाते हैं कि अपनी मातृभूमि से प्यार करने का मतलब उसके प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करना भी है। इस गीत में उपजाऊ खेतों, नदियों, जंगलों और ठंडी हवाओं का जो जीवंत चित्रण किया गया है, वह आज की पर्यावरणीय चिंताओं से गहराई से मेल खाता है। इसी तरह, भारत की एक ग्लोबल आर्थिक और तकनीकी लीडर बनने की आकांक्षाओं को ऐसे युवा नागरिकों की जरूरत

है जो राष्ट्रीय गौरव के साथ–साथ इनोवेशन, ईमानदारी और सामाजिक जिम्मेदारी को भी अपनाएं। 'वन्दे मातरम्' न केवल भावनात्मक जुड़ाव पैदा करता है, बल्कि एक मजबूत, समावेशी और समृद्ध राष्ट्र के निर्माण के प्रति कर्तव्य की भावना भी जगाता है।

वन्दे मातरम् भारत के सबसे खास राष्ट्रीय प्रतीकों में से एक बना हुआ है। जहाँ युवा पीढ़ी इसे लोकतंत्र, वैश्वीकरण, विविधता और संवैधानिक मूल्यों के नजरिए से देखती है, वहीं इसका मुख्य संदेश मातृभूमि के प्रति प्रेम की भावना को प्रेरित करता रहता है। आज का नजरिया न तो इसे आँख बंद करके स्वीकार करने का है और न ही पूरी तरह से नकारने का। बल्कि, यह ऐतिहासिक सम्मान और आज की हकीकत के बीच तालमेल बिठाने की एक सोच–समझकर की गई कोशिश है। युवा भारतीय अब यह बेहतर ढंग से समझ रहे हैं कि देशभक्ति ऐसी होनी चाहिए जिसमें सबको साथ लेकर चलने की भावना हो, जो जानकारी पर आधारित हो और रचनात्मक हो। राष्ट्रीय प्रतीकों के प्रति सम्मान के साथ–साथ व्यक्तिगत आजादी, सांस्कृतिक विविधता और लोकतांत्रिक सिद्धांतों का भी सम्मान होना चाहिए।

वन्दे मातरम् की असली भावना सिर्फ इसके बोल गाने में नहीं है, बल्कि उन आदर्शों को अपने जीवन में उतारने में है जिनका यह प्रतीक है – देश के प्रति प्रेम, अपनी जमीन के प्रति कृतज्ञता, लोगों के बीच एकता और देश की तरक्की के लिए समर्पण। ऐतिहासिक समझ को नई सोच के साथ, संवैधानिक मूल्यों को सांस्कृतिक गर्व के साथ और देशभक्ति को जन–सेवा के साथ जोड़कर, युवा पीढ़ी यह सुनिश्चित कर सकती है कि यह गीत न केवल आजादी की लड़ाई की एक प्यारी याद बना रहे, बल्कि भारत के भविष्य के लिए प्रेरणा का स्रोत भी बने।

वन्दे मातरम् : अतीत की विरासत, युवा भारत का स्वाभिमान

–अमित कुमार
वरिष्ठ प्रबंधक, राजभाषा
बैंक ऑफ बड़ौदा, अजमेर

'वन्दे मातरम्'–यह केवल दो शब्द नहीं हैं, बल्कि भारतीय इतिहास, संस्कृति और राष्ट्रीय चेतना का वह महामंत्र है जिसने कभी सोए हुए देश को जगाया था। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा वर्ष 1870 के दशक में रचित और उनके कालजयी उपन्यास 'आनंदमठ' (1882) में शामिल इस गीत ने स्वतंत्रता संग्राम में वह भूमिका निभाई, जो हजारों भाषण और सैकड़ों रणनीतियाँ मिलकर भी नहीं निभा पाई थीं।

समय का चक्र बदला, देश आजाद हुआ और हम 21वीं सदी के तीसरे दशक (वर्ष 2026) में जी रहे हैं। आज की युवा पीढ़ी, जो तकनीकी रूप से अत्यंत उन्नत, वैश्विक स्तर पर जुड़ी हुई और वैचारिक रूप से स्वतंत्र है, उसके लिए 'वन्दे मातरम्' के क्या मायने हैं? क्या यह गीत केवल राष्ट्रीय पर्वों पर बजने वाली एक रस्म बन कर रह गया है, या आज भी यह भारतीय युवाओं की धमनियों में देशभक्ति का संचार करता है? वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इस अंतर्संबंध को समझना बेहद दिलचस्प और आवश्यक है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि: जब एक गीत 'क्रांति' बन गया

वर्तमान पीढ़ी के दृष्टिकोण को समझने से पहले, इस गीत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझना जरूरी है। ब्रिटिश हुकूमत के दौर में जब भारतीयों की आवाज को दबाया जा रहा था, तब 'वन्दे मातरम्' (माँ, मैं आपको नमन करता हूँ) का नारा गुलामी की जंजीरों को तोड़ने का औजार बना। सन् 1896 के कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में रबींद्रनाथ टैगोर ने इसे पहली बार सुरों में पिरोकर गाया।

अरविंद घोष, लाला लाजपत राय, भगत सिंह और चंद्रशेखर आजाद जैसे क्रांतिकारियों के लिए यह नारा फाँसी के फंदे को चूमने की ताकत था। 1905 के 'बंग–भंग' (बंगाल विभाजन) आंदोलन के दौरान यह गीत ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ प्रतिरोध का सबसे बड़ा प्रतीक बनकर उभरा। इस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को आज के युवा इतिहास की किताबों में पढ़ते हैं। लेकिन आज का युवा अतीत के गौरव के साथ–साथ वर्तमान की व्यावहारिकताओं को भी देखता है।

आज की युवा पीढ़ी (Gen Z और Millennials) का नजरिया

आज के युवाओं को अक्सर 'ग्लोबल सिटिजन' या 'डिजिटल नेटिव्स' कहा जाता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में युवा पीढ़ी के लिए 'वन्दे मातरम्' इतिहास की किताबों में बंद कोई धूल धूसरित अध्याय नहीं है अपितु यह एक जीवंत ऊर्जा है। आज का युवा इस गीत की गरिमा को बनाए रखते हुए इसे आधुनिक भारत की प्रगति, रचनात्मकता और वैश्विक नेतृत्व की भावना से जोड़कर देखता है। उनके लिए 'वन्दे मातरम्' कहने का मतलब है–''अपने देश पर गर्व करना और इसे बेहतर बनाने के लिए काम करना।'' वे किसी भी विचार को बिना तर्क की कसौटी पर कसे स्वीकार नहीं करते। वन्दे मातरम् को लेकर आज के युवाओं का नजरिया बहुआयामी है।

वन्दे मातरम्' के प्रति आज की युवा पीढ़ी–जिसमें Millennials (1981–1996 के बीच जन्मे) और Gen Z (1997–2012 के बीच जन्मे) शामिल हैं–का नजरिया बेहद दिलचस्प, व्यावहारिक और बहुआयामी है। यह पीढ़ी पिछली पीढ़ियों की तरह केवल पारंपरिक या भावनात्मक रूप से ही राष्ट्रवाद से नहीं जुड़ती, बल्कि इसका दृष्टिकोण तार्किक, डिजिटल और वैश्विक है।

युवा पीढ़ी के लिए देशभक्ति केवल 15 अगस्त या 26 जनवरी तक सीमित नहीं है। वे अभिव्यक्ति के आधुनिक माध्यमों (Social Media) का उपयोग करते हैं, उदाहरण के लिए युवा पीढ़ी पारंपरिक वन्दे मातरम् के साथ–साथ ए.आर. रहमान के 'माँ तुझे सलाम' या आधुनिक रॉक, पॉप और शास्त्रीय जुगलबंदी वाले 'फ्यूजन वर्शन्स' को अधिक पसंद करती है। रील्स (Reels), शॉर्ट्स और पॉडकास्ट पर इस गीत की धुनें युवाओं की पहली पसंद होती हैं।

जब कोई भारतीय युवा विदेश में खेल, विज्ञान, सिनेमा या कॉर्पोरेट जगत में सफलता पाता है, तो बैकग्राउंड में 'वन्दे मातरम्' की धुन लगाकर अपनी 'भारतीयता' का जश्न मनाता है। उनके लिए यह गीत पिछड़ेपन का नहीं, बल्कि एक वैश्विक महाशक्ति के रूप में उभरते भारत का गौरव है।

पुरानी पीढ़ियों के लिए 'वन्दे मातरम्' एक नारा था जो स्वतंत्रता संग्राम या युद्ध के समय एकजुटता का प्रतीक बनता था। आज के युवाओं का दृष्टिकोण अधिक व्यावहारिक है। आज के युवाओं के लिए मातृभूमि की सेवा का अर्थ देश में रहकर नए नवाचार (Innovations) करना, नौकरियां पैदा करना और अर्थव्यवस्था को मजबूत करना है। वे देश को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाकर 'वन्दे मातरम्' के सपने को सच कर रहे हैं।

आज के युवाओं के लिए पर्यावरण और सामाजिक सरोकार महत्वपूर्ण हैं। वन्दे मातरम् का मूल अर्थ है–''माँ (प्रकृति/धरती), मैं तेरी वंदना करता हूँ जो जल, फलों और हरी–भरी फसलों से समृद्ध है।'' आज की जागरूक युवा पीढ़ी पर्यावरण संरक्षण, जल संरक्षण और सस्टेनेबिलिटी को ही वास्तविक 'वन्दे मातरम्' मानती है।

आज की पीढ़ी (विशेषकर Gen Z) सूचनाओं के महासागर में जी रही है। वे किसी भी विचार को आँख मूंदकर स्वीकार नहीं करते। अतीत में वन्दे मातरम् को लेकर जो राजनीतिक या धार्मिक विवाद रहे हैं, आज का प्रबुद्ध युवा उनसे दूरी बनाना पसंद करता है। वे इसे किसी संकीर्ण राजनीतिक एजेंडे के रूप में नहीं, बल्कि भारत की साझी संस्कृति के प्रतीक के रूप में देखते हैं। युवा मानते हैं कि राष्ट्र के प्रति सम्मान दिखाने का तरीका हर किसी का अलग हो सकता है। उनके लिए इस गीत की मूल भावना 'विविधता में एकता' की है, न कि किसी पर जबरन विचार थोपने की।

Millennials और Gen Z इतिहास की सबसे ज्यादा यात्रा करने वाली और वैश्विक स्तर पर जुड़ी पीढ़ियाँ हैं। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव के बावजूद, इस पीढ़ी में अपनी जड़ों की ओर लौटने की एक तीव्र ललक देखी जा रही है। विदेशों में पढ़ रहे या नौकरी कर रहे भारतीय युवा जब 'वन्दे मातरम्' सुनते हैं, तो यह उनके लिए केवल एक गीत नहीं, बल्कि घर की याद (Nostalgia) और अपनी पहचान को बचाए रखने का एक जरिया बन जाता है।

संसद में हालिया चर्चा का महत्व

दिसंबर 2025 में संसद में वन्दे मातरम् के 150 वर्ष पूर्ण होने पर विशेष चर्चा के दौरान लोकसभा अध्यक्ष ने इसे स्वतंत्रता संग्राम, राष्ट्रीय समरसता और भारतीय लोकतंत्र की साझा विरासत का प्रतीक बताया। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने इसे सिर्फ एक गीत नहीं, बल्कि वह उर्जा कहा जिसने दासता के अंधकार में भी देश जागृत रखा। दूसरी ओर विपक्ष ने यह तर्क रखा कि इसकी ऐतिहासिक विरासत का सम्मान करते हुए संवैधानिक मूल्यों और विविधताओं को भी समान महत्व दिया जाना चाहिए। इस चर्चा का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह था कि संसद ने वन्दे मातरम् को केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के भारत की सांस्कृतिक पहचान से जोड़कर देखा।

वन्दे मातरम्' को लेकर वैचारिक मतभेद, राजनीति और आज के युवा मानस का अंतर्संबंध बेहद संवेदनशील और गहरा है। स्वतंत्रता संग्राम में सबको एक सूत्र में पिरोने वाला यह महामंत्र, आजादी के बाद के दशकों में कई बार राजनीतिक खींचतान और वैचारिक ध्रुवीकरण का केंद्र बन गया। परंतु, आज की डिजिटल रूप से जागरूक और तार्किक युवा पीढ़ी इस पूरे परिदृश्य को एक बिल्कुल नए और परिपक्व दृष्टिकोण से देख रही है। युवा पीढ़ी के लिए 'वन्दे मातरम्' का सीधा और खूबसूरत अर्थ है—अपनी मातृभूमि के प्रति कृतज्ञता, उसकी प्रकृति का सम्मान और देशवासियों की सेवा। वे राजनीति के शोर को दरकिनार कर, इस गीत की मूल भावना (एकता और प्रगति) को अपने काम और व्यवहार में उतारने को प्राथमिकता दे रहे हैं।

आज के पढ़े–लिखे युवाओं के लिए 'वन्दे मातरम्' किसी धर्म विशेष का नहीं, बल्कि भारत के स्वतंत्रता संग्राम के साझा इतिहास का हिस्सा है। युवा इस बात से भली–भांति परिचित हैं कि इस गीत को धुन में पिरोने वाले रबींद्रनाथ टैगोर थे और आजादी की लड़ाई में अशफाक उल्ला खान, भगत सिंह और बिस्मिल जैसे हर वर्ग के क्रांतिकारियों ने इस नारे को बुलंद किया था। इसलिए, युवा वर्ग इसे राजनीतिक दलों के संकीर्ण चश्मे से देखने के बजाय एक ऐतिहासिक विरासत के रूप में देखता है।

वैश्विक परिदृश्य में 'वन्दे मातरम्' और प्रवासी युवा

वैश्विक परिदृश्य में 'वन्दे मातरम्' और प्रवासी भारतीय युवा (Diaspora Youth) का संबंध बेहद अनूठा और भावनात्मक है। जब एक युवा भारत की भौगोलिक सीमाओं को पार करके किसी दूसरे देश में कदम रखता है, तो उसके लिए राष्ट्रवाद की परिभाषा और राष्ट्रीय प्रतीकों के मायने पूरी तरह बदल जाते हैं। 21वीं सदी के इस डिजिटल और वैश्वीकृत युग में, विदेशों में रह रहे युवाओं के लिए 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं, बल्कि उनकी अस्मिता (Identity), जड़ों (Roots) और वैश्विक गौरव का सबसे बड़ा संवाहक बन गया है।

वैश्विक परिदृश्य में प्रवासी युवा 'वन्दे मातरम्' के सबसे आधुनिक और प्रगतिशील ब्रांड एंबेसडर हैं। वे अपनी आधुनिक जीवनशैली, तकनीकी विशेषज्ञता और पश्चिमी देशों के तौर–तरीकों को अपनाते हुए भी अपने दिल के एक कोने में इस महामंत्र को संजोकर रखते हैं। उनके लिए 'वन्दे मातरम्' का सीधा सा मतलब है–''मैं दुनिया में कहीं भी रहूँ, मेरा दिल हमेशा हिंदुस्तानी रहेगा।''

भारत में रहते हुए जो प्रतीक अक्सर सामान्य लगते हैं, सात समंदर पार जाते ही वे अमूल्य हो जाते हैं। न्यूयॉर्क, लंदन, सिडनी या टोरंटो जैसे शहरों में पढ़ रहे या काम कर रहे युवा जब इस गीत को सुनते हैं, तो यह उन्हें अपनी

मिट्टी, परिवार और संस्कृति की याद दिलाता है। यह उनके 'होमसिकनेस' (घर की याद) का सांस्कृतिक उपचार बन जाता है। विदेशी बहुसांस्कृतिक (Multicultural) समाज में अपनी विशिष्ट पहचान बनाए रखने के लिए युवा इस गीत का सहारा लेते हैं। यह उन्हें भीड़ में एक 'गौरवशाली भारतीय' के रूप में स्थापित करता है।

वैश्विक मंचों पर सांस्कृतिक राजदूत

आज दुनिया के शीर्ष विश्वविद्यालयों (जैसे Harvard, Oxford, MIT) और बहुराष्ट्रीय कंपनियों (Google, Microsoft) में भारतीय युवाओं का दबदबा है। ये युवा वैश्विक मंचों पर भारत की 'सॉफ्ट पावर' को प्रदर्शित करने के लिए 'वन्दे मातरम्' को एक माध्यम बनाते हैं। विदेशी विश्वविद्यालयों में होने वाले 'इंटरनेशनल स्टूडेंट फेस्टिवल्स' या 'इंडिया नाइट्स' की शुरुआत या समापन अक्सर वन्दे मातरम् की आधुनिक धुनों से होता है। प्रवासी युवा इस गीत को केवल पारंपरिक रूप में नहीं गाते। वे इसे वेस्टर्न क्लासिकल इंस्ट्रूमेंट्स, जैज या रॉक संगीत के साथ मिलाकर 'फ्यूजन म्यूजिक' तैयार करते हैं, जिसे उनके विदेशी दोस्त भी बड़े चाव से सुनते हैं और सराहते हैं।

सफलता और राष्ट्रवाद का अद्भुत संगम

प्रवासी युवाओं के लिए 'वन्दे मातरम्' केवल एक सांस्कृतिक गान नहीं है, बल्कि यह उनकी सामूहिक सफलताओं के जश्न का संगीत है। जब भारतीय मूल के युवा अंतरिक्ष में जाते हैं, किसी वैश्विक खेल प्रतियोगिता में पदक जीतते हैं या वैश्विक सीईओ (CEOs) बनते हैं, तब प्रवासी समुदाय सोशल मीडिया और सामुदायिक सभाओं में 'वन्दे मातरम्' की धुनों के साथ अपनी खुशी का इजहार करता है। किसी भी वैश्विक संकट के समय (जैसे महामारी या युद्ध क्षेत्र से भारतीयों का रेस्क्यू) जब भारत सरकार 'वन्दे मातरम्' के जज्बे के साथ अपने नागरिकों की मदद करती है, तो प्रवासी युवाओं का अपनी मातृभूमि के प्रति विश्वास और सम्मान कई गुना बढ़ जाता है।

आधुनिक सोचः बिना किसी विवाद के शुद्ध राष्ट्रप्रेम

भारत के घरेलू परिदृश्य में वन्दे मातरम् को लेकर भले ही कभी–कभार राजनीतिक या वैचारिक बहस होती हो, लेकिन वैश्विक परिदृश्य में प्रवासी युवा इन सभी विवादों से पूरी तरह मुक्त हैं। उनके लिए इस गीत की केवल एक ही परिभाषा है–देश से बिना शर्त प्यार। विदेशों में रह रहे विभिन्न धर्मों, जातियों और राज्यों (पंजाब, गुजरात, केरल, बंगाल आदि) के भारतीय युवा जब किसी अंतरराष्ट्रीय मंच पर इकट्ठा होते हैं, तो वे सभी मतभेदों को भुलाकर 'वन्दे मातरम्' के नारे तले एक हो जाते हैं। यहाँ यह गीत **''अखंडता और एकता का वैश्विक सूत्र''** बन जाता है।

युवा पीढ़ी के सामने चुनौतियाँ

'वन्दे मातरम्' और राष्ट्रभक्ति की मूल भावना को आत्मसात करने के मार्ग में आज की युवा पीढ़ी के सामने कई ऐसी सूक्ष्म और व्यावहारिक चुनौतियाँ हैं, जो पिछली पीढ़ियों के समय नहीं थीं। आज का युवा एक ऐसे चौराहे पर खड़ा है जहाँ एक तरफ उसका गौरवशाली अतीत है और दूसरी तरफ तेजी से बदलता वैश्विक परिवेश।

आज का युवा एक 'ग्लोबल विलेज' (वैश्विक गांव) में रह रहा है। हॉलीवुड, कोरियन पॉप (K-Pop) और पश्चिमी जीवनशैली के बढ़ते प्रभाव के बीच अपनी सांस्कृतिक जड़ों को बचाए रखना एक बड़ी चुनौती है। आधुनिक शिक्षा और करियर की अंधी दौड़ में युवाओं के पास देश के वास्तविक इतिहास और 'वन्दे मातरम्' जैसे गीतों के पीछे छिपे क्रांतिकारियों के बलिदान को गहराई से समझने का समय नहीं है। इसके कारण देशभक्ति कभी–कभी केवल कुछ विशेष दिनों (15 अगस्त या 26 जनवरी) तक ही सीमित होकर रह जाती है, जिसे 'अस्थायी राष्ट्रवाद' भी कहा जा सकता है।

डिजिटल युग ने अभिव्यक्ति को आसान तो बनाया है, लेकिन इसने देशभक्ति को एक 'ट्रेंड' में भी बदल दिया है। रील्स बनाना, स्टेटस लगाना या देशभक्ति के गानों पर लाइक–शेयर पाना आज की युवा पीढ़ी के लिए आसान है। लेकिन चुनौती यह है कि यह जुड़ाव केवल 'वर्चुअल' (आभासी) बनकर रह जाता है। सिर्फ सोशल मीडिया पर 'वन्दे मातरम्' लिख देने को ही युवा कई बार अपनी जिम्मेदारी मान लेते हैं, जबकि जमीन पर नागरिक कर्तव्यों (जैसे टैक्स देना, कानून का पालन करना, कचरा न फैलाना) को निभाने में वे पीछे छूट जाते हैं।

भाषा और भावार्थ

वन्दे मातरम्' मूल रूप से संस्कृत और बांग्ला भाषा के अनूठे मिश्रण से बना है। आज की कॉन्वेंट और अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा प्रणाली से निकले बहुत से युवाओं को इस गीत की भाषा (जैसे– सुजलाम्, सुफलाम्, मलयजशीतलाम्) के वास्तविक और गहरे अर्थ पता नहीं होते। जब युवा किसी चीज का अर्थ नहीं समझ पाते, तो उनका उससे भावनात्मक जुड़ाव कम हो जाता है। वे इसे केवल एक 'कठिन गान' मानकर कोरस में गा तो लेते हैं, लेकिन उसकी आत्मा को महसूस नहीं कर पाते।

युवाओं के सामने सबसे बड़ी चुनौती 'आधुनिक होने' और 'पश्चिमी होने' के अंतर को समझने की है। कई बार युवा पीढ़ी को लगता है कि अपनी भाषा, संस्कृति या राष्ट्रीय गीतों के प्रति गर्व जताना 'पिछड़ापन' है। इस हीनभावना (Inferiority Complex) के कारण वे अपनी ही समृद्ध विरासत से कतराने लगते हैं। इन चुनौतियों के बावजूद, रास्ता बंद नहीं हुआ है।

आज के युवाओं को यह समझने की आवश्यकता है कि 'वन्दे मातरम्' कोई धार्मिक या संकीर्ण नारा नहीं है, बल्कि यह अपनी पर्यावरण–पारिस्थितिकी (Eco-system) और मातृभूमि के प्रति सम्मान जताने का एक जरिया है। जब युवा इस गीत के अर्थ को अपनी आधुनिक जीवनशैली (जैसे– स्टार्टअप्स, पर्यावरण संरक्षण, और सामाजिक न्याय) से जोड़ लेंगे, तो ये सभी चुनौतियाँ स्वतः समाप्त हो जाएंगी। 'वन्दे मातरम्' केवल 19वीं या 20वीं सदी के संघर्ष का गान नहीं था; यह 21वीं सदी के आत्मनिर्भर और सशक्त भारत का विजन भी है। आज की युवा पीढ़ी इस गीत को एक नए, आधुनिक और प्रगतिशील नजरिए से देख रही है। वे रूढ़िवादिता से दूर, इस गीत की ऊर्जा को देश के विकास, नवाचार और वैश्विक मंच पर भारत का मस्तक ऊंचा करने में लगा रहे हैं। जब तक इस देश का युवा अपनी मातृभूमि की मिट्टी से जुड़ा रहेगा, तब तक 'वन्दे मातरम्' की गूंज फीकी नहीं पड़ सकती। यह गीत कल भी प्रेरणा था, आज भी गौरव है, और आने वाले कल में भी विकसित भारत का मार्गदर्शक रहेगा।

भारतीय कला और संगीत का जीवंत वाहक : वन्दे मातरम्

–रणधीर कुमार
प्रशासनिक अधिकारी एवं राजभाषा अधिकारी,
महापत्तन न्यायनिर्णायिक बोर्ड, मझगांव, मुंबई

भारतीय सांस्कृतिक चेतना का अमर स्वर...

कला जब राष्ट्र की आत्मा से संवाद करती है, तब वह केवल सौन्दर्य की अभिव्यक्ति नहीं रहती, वह सभ्यता की स्मृति, संस्कृति की संवाहिका और स्वाधीनता की चेतना बन जाती है। 'वन्दे मातरम्' इसी राष्ट्रीय आत्मबोध का वह दिव्य उद्‌घोष है जिसने भारतीय कला, संगीत और रंगमंच को केवल प्रेरित ही नहीं किया, अपितु उन्हें राष्ट्रनिर्माण के सशक्त माध्यम में रूपांतरित कर दिया।

मानव सभ्यता के इतिहास में कुछ रचनाएँ समय, भूगोल और परिस्थितियों की सीमाओं का अतिक्रमण कर किसी राष्ट्र की सामूहिक चेतना का स्थायी प्रतीक बन जाती हैं। वे केवल साहित्यिक कृतियाँ नहीं रहतीं, बल्कि सांस्कृतिक स्मृति, राष्ट्रीय अस्मिता और जनभावना की जीवंत अभिव्यक्ति बन जाती हैं। भारतीय संदर्भ में 'वन्दे मातरम्' ऐसी ही कालजयी रचना है। यह केवल एक गीत नहीं, बल्कि भारतीय आत्मा का वह उदात्त स्वर है जिसने दासता के अंधकार में स्वतंत्रता की ज्योति प्रज्वलित की और आज भी राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक गौरव तथा सभ्यतागत निरंतरता का प्रेरणास्रोत बना हुआ है।

किसी राष्ट्र की पहचान केवल उसके राजनीतिक मानचित्र से नहीं, बल्कि उसकी संस्कृति, साहित्य, संगीत, कला और लोकस्मृतियों से निर्मित होती है। भारत जैसे बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक देश में यह सत्य और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। विविधताओं के मध्य भारतीय सांस्कृतिक चेतना ही वह सूत्र है, जिसने देश को सदैव एकता प्रदान की। इसी सांस्कृतिक दृष्टि से बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 'आनंदमठ' में 'वन्दे मातरम्' की रचना करते हुए मातृभूमि को करुणामयी, समृद्ध और शक्तिरूपिणी माता के रूप में प्रतिष्ठित किया तथा भारतीय राष्ट्रवाद को सांस्कृतिक आधार प्रदान किया।

'वन्दे मातरम्' का राष्ट्रवाद किसी संकीर्ण राजनीतिक विचार पर आधारित नहीं है। इसमें भूमि माता है, नदियाँ जीवनदायिनी हैं, पर्वत धैर्य के प्रतीक हैं और प्रकृति राष्ट्रजीवन की आधारशिला है। इस प्रकार यह गीत भारतीय कला–दर्शन के मूल तत्व प्रकृति, अध्यात्म और मानव के समन्वय को अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त करता है। इसी सांस्कृतिक गहराई के कारण 'वन्दे मातरम्' साहित्य की सीमाओं से निकलकर चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत, नृत्य, रंगमंच, लोककलाओं और सिनेमा तक पहुँचा। भारतीय कला–जगत की प्रत्येक विधा ने इसे अपनी संवेदना के अनुरूप नए रूप और नए अर्थ प्रदान किए।

भारतीय कला सदैव समाज की सामूहिक चेतना का दर्पण रही है। अजंता के भित्तिचित्रों से लेकर चोलकालीन कांस्य प्रतिमाओं, मधुबनी, पट्टचित्र, पहाड़ी और राजस्थानी चित्रशैलियों से लेकर लोकनाट्यों तक प्रत्येक युग की कला ने अपने समय की सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्त किया है। उन्नीसवीं शताब्दी में जब भारत औपनिवेशिक दमन और सांस्कृतिक हीनभावना से जूझ रहा था, तब साहित्य, चित्रकला, संगीत और रंगमंच

राष्ट्रीय पुनर्जागरण के वाहक बने और 'वन्दे मातरम्' इस सांस्कृतिक जागरण का केंद्रीय स्वर बनकर उभरा।

वन्दे मातरम्' का जन्म साहित्य में हुआ, पर उसका विकास भारतीय संस्कृति में हुआ। इसकी शक्ति केवल संगीत में नहीं, बल्कि उसके सांस्कृतिक दर्शन में निहित है। ''सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम् शस्यश्यामलाम्'' जैसी पंक्तियाँ भारतभूमि के प्राकृतिक वैभव को मातृभाव से जोड़ती हैं। इसी कल्पना को चित्रकारों ने भारतमाता के रूप में, संगीतज्ञों ने रागों में, रंगकर्मियों ने मंच पर और लोक–कलाकारों ने जनजीवन में साकार किया।

किसी राष्ट्र की दीर्घजीवी पहचान उसके सांस्कृतिक प्रतीकों से निर्मित होती है। 'वन्दे मातरम्' की विशिष्टता इसी में है कि यह राष्ट्रप्रेम को केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और नैतिक उत्तरदायित्व के रूप में स्थापित करता है। यह हमें स्मरण कराता है कि मातृभूमि का वंदन केवल शब्दों का उच्चारण नहीं, बल्कि उसकी प्रकृति, सांस्कृतिक विरासत, भाषाई विविधता और सामाजिक समरसता के संरक्षण का संकल्प भी है। इसी कारण भारतीय कलाकारों ने प्रत्येक युग में इसे नए माध्यमों और नई पीढ़ियों के अनुरूप पुनः अभिव्यक्त किया है।

भारतीय कलाओं में 'वन्दे मातरम्' की अभिव्यक्ति

यदि साहित्य किसी राष्ट्र का विचार है, तो चित्रकला उसकी दृष्टि और मूर्तिकला उसकी स्मृति है। भारत की कला–परंपरा सदैव प्रकृति, अध्यात्म और लोकजीवन के समन्वय से विकसित हुई है। 'वन्दे मातरम्' ने इस परंपरा को राष्ट्रीय चेतना का नया आयाम प्रदान किया और कलाकारों को यह विश्वास दिया कि कला सौंदर्य के साथ–साथ राष्ट्रजागरण का माध्यम भी बन सकती है।

वन्दे मातरम्' की सर्वाधिक प्रभावशाली कलात्मक अभिव्यक्ति अवनीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रसिद्ध चित्रकृति 'भारत माता' (1905) में दिखाई देती है। चार भुजाओं वाली तपस्विनी भारतमाता के करकमलों में पुस्तक, धान की बालियाँ, श्वेत वस्त्र और अक्षय पात्र ज्ञान, समृद्धि, त्याग और आध्यात्मिकता के प्रतीक हैं। कलाकार ने शक्ति का चित्रण शस्त्रों से नहीं, बल्कि ज्ञान, करुणा और आत्मसंयम से किया, जो 'वन्दे मातरम्' की मूल भावना का दृश्य रूप है। इस चित्र ने स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भारतमाता की अवधारणा को राष्ट्रीय चेतना का स्थायी प्रतीक बना दिया।

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट ने भारतीय चित्रकला को औपनिवेशिक प्रभाव से मुक्त करने का महत्त्वपूर्ण प्रयास किया। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर, नंदलाल बोस, असित कुमार हलदार और क्षितीन्द्रनाथ मजूमदार जैसे कलाकारों ने भारतीय इतिहास, लोकजीवन और राष्ट्रवादी भावनाओं को अपनी कला का आधार बनाया। उनकी चित्रकृतियों में प्रकृति, मातृत्व और अध्यात्म का समन्वय 'वन्दे मातरम्' की काव्यात्मक संवेदना का दृश्य विस्तार बन गया।

नंदलाल बोस ने भारतमाता की अवधारणा को जनजीवन से जोड़ा। उनके चित्रों में किसान, बुनकर, कुम्हार, श्रमिक और लोकजीवन के सामान्य पात्र भारत की वास्तविक शक्ति के प्रतीक हैं। उनकी कला ने राष्ट्रवाद को श्रम, सेवा और आत्मनिर्भरता से जोड़ते हुए 'वन्दे मातरम्' की व्यापक सांस्कृतिक भावना को साकार किया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भारतमाता, स्वतंत्रता सेनानियों और राष्ट्रीय प्रतीकों की मूर्तियों में भी 'वन्दे मातरम्'

की सांस्कृतिक चेतना प्रतिबिंबित हुई। भारतीय मूर्तिकारों ने मातृभूमि को करुणा, धैर्य और आत्मबल की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित किया, जहाँ पुस्तक, कमल, धान की बालियाँ और ध्वज जैसे प्रतीक ज्ञान, समृद्धि और राष्ट्रीय गौरव का संदेश देते हैं।

यदि शास्त्रीय कला ने 'वन्दे मातरम्' को सांस्कृतिक प्रतिष्ठा दी, तो लोककलाओं ने उसे जन–जन तक पहुँचाया। मधुबनी में भारतमाता और प्रकृति का समन्वय, पट्टचित्र और पटुआ कला में स्वदेशी चेतना, वारली में सामुदायिक जीवन तथा फड़, पिथौरा, गोंड, कलमकारी और कांगड़ा–पहाड़ी चित्रशैलियों में राष्ट्रीय विषयों का समावेश इस गीत की व्यापक सांस्कृतिक प्रेरणा को अभिव्यक्त करता है।

इस प्रकार भारतीय चित्रकला, मूर्तिकला और लोककलाओं में 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत का दृश्य रूपांतरण नहीं, बल्कि भारतीय राष्ट्रचेतना की कलात्मक अभिव्यक्ति है। इसने कलाकारों को यह संदेश दिया कि कला केवल सौंदर्य की साधना नहीं, बल्कि राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण की भी सशक्त शक्ति है। आज भी भारतमाता के हाथों में पुस्तक, धान की बालियाँ और कमल का चित्र देखते ही 'वन्दे मातरम्' की अमर पंक्तियाँ अनायास स्मृति में गूँज उठती हैं–''सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्...''

'वन्दे मातरम्' में जहां तक संगीतात्मकता की बात है तो वैदिक ऋचाओं के सामगान से लेकर मंदिरों की स्तुतियों, सूफी कव्वालियों, भक्तिकालीन पदावलियों और लोकजीवन के मंगलगीतों तक भारतीय संगीत ने सदैव समाज की आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना को स्वर प्रदान किया है। 'वन्दे मातरम्' इसी परंपरा का अमर स्वर है। वह केवल साहित्यिक कृति न रहकर भारतीय जनमानस की सामूहिक चेतना का संगीत है।

स्वतंत्रता आंदोलन के प्रत्येक चरण में इसने संघर्ष को स्वर, पीड़ा को धैर्य और आशा को संकल्प में रूपांतरित किया। निस्संदेह, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में करोड़ों लोगों को एक सूत्र में बाँधने वाला यह सबसे प्रभावशाली राष्ट्रीय गीत था। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपनी संगीत–दृष्टि से 'वन्दे मातरम्' को नई सांगीतिक प्रतिष्ठा प्रदान की। भक्ति, प्रकृति और मानवता के समन्वय ने इसे भारतीय संस्कृति की आध्यात्मिक अभिव्यक्ति के रूप में स्थापित किया। भारतीय शास्त्रीय संगीत की दोनों प्रमुख परंपराओं–हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत–ने इसे समान श्रद्धा से अपनाया।

यदि शास्त्रीय संगीत ने 'वन्दे मातरम्' को कलात्मक ऊँचाई दी, तो लोकसंगीत ने उसे जनजीवन का अभिन्न अंग बना दिया। राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान भोजपुरी, अवधी, मैथिली, ब्रज, राजस्थानी, पंजाबी, मराठी, गुजराती, असमिया, उड़िया, तमिल, तेलुगु और मलयालम सहित अनेक भाषाओं में इसके लोकरूप विकसित हुए। ढोलक, मंजीरा, एकतारा, बाँसुरी और नगाड़ों जैसे लोकवाद्यों के साथ इसका सामूहिक गायन जनजागरण और राष्ट्रीय चेतना का सशक्त माध्यम बन गया। भारतीय शास्त्रीय नृत्य परंपराओं में 'वन्दे मातरम्' को राष्ट्रभक्ति और सांस्कृतिक चेतना की प्रभावशाली अभिव्यक्ति के रूप में रूपायित किया गया। भरतनाट्यम, कथक, ओडिसी, कुचिपुड़ी, मणिपुरी और मोहिनीअट्टम के माध्यम से भारतमाता, प्रकृति और राष्ट्रीय समर्पण के भावों को कलात्मक रूप से प्रस्तुत किया गया, जिसने राष्ट्रप्रेम को सौंदर्यात्मक अनुभूति में रूपांतरित कर दिया।

स्वतंत्रता संग्राम में 'वन्दे मातरम्' राष्ट्रीय जागरण का सांस्कृतिक मंत्र बन गया। बंग–भंग विरोधी आंदोलन (1905), स्वदेशी आंदोलन, सत्याग्रह, छात्र आंदोलनों और राष्ट्रीय सभाओं में इसके सामूहिक गायन ने जनसमूह को संगठित किया, जबकि अनेक क्रांतिकारियों ने बलिदान के क्षणों में भी इसका उद्‌घोष किया। स्वतंत्रता के बाद आकाशवाणी, दूरदर्शन, शैक्षणिक संस्थानों तथा आधुनिक संगीतकारों ने इसकी गरिमा को अक्षुण्ण रखते हुए नई पीढ़ियों तक इसकी प्रेरणा पहुँचाई।

इस प्रकार 'वन्दे मातरम्'न केवल कलात्मक अभिव्यक्ति है, बल्कि राष्ट्रभक्ति, सांस्कृतिक एकता और नागरिक चेतना का सशक्त माध्यम भी है।

भारतीय रंगमंच एवं अन्य सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में 'वन्दे मातरम्'

जब कोई गीत मंच पर अभिनय बन जाता है, पर्दे पर दृश्य बन जाता है और जनसमूह के हृदय में संकल्प बनकर धड़कने लगता है, तब वह केवल संगीत नहीं रहता, बल्कि राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना का जीवंत इतिहास बन जाता है। 'वन्दे मातरम्' ने भारतीय रंगमंच, सिनेमा और आधुनिक संचार माध्यमों को यही ऐतिहासिक दायित्व प्रदान किया। भारतीय परंपरा में रंगमंच को केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि लोकशिक्षा, सांस्कृतिक संवाद और नैतिक चेतना का माध्यम माना गया है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में नाटक को 'पंचम वेद' कहा गया है, क्योंकि उसमें साहित्य, संगीत, नृत्य, अभिनय और चित्रकला का समन्वय होता है। इसलिए राष्ट्रीय चेतना के उदय के साथ रंगमंच उसकी सबसे प्रभावशाली सार्वजनिक अभिव्यक्ति बन गया।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब तथा उत्तर भारत की नाट्य मंडलियों ने इतिहास, संस्कृति और स्वदेशी चेतना पर आधारित नाटकों का मंचन किया। इन प्रस्तुतियों में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से 'वन्दे मातरम्' राष्ट्रीय भावना का केंद्रीय स्वर बनकर उपस्थित रहा।

रंगमंच और लोकनाट्य ने 'वन्दे मातरम्' की राष्ट्रीय चेतना को जन–जन तक पहुँचाया। बंगाल के रंगकर्मियों ने प्रतीकों और रूपकों के माध्यम से औपनिवेशिक शासन का विरोध किया तथा नाटकों का समापन 'वन्दे मातरम्' के सामूहिक गायन से किया, जो राष्ट्रीय संकल्प का प्रतीक बन गया।

इसी प्रकार नौटंकी, तमाशा, जात्रा, यक्षगान, भवाई, स्वांग, बुर्राकथा तथा अन्य लोकनाट्य परंपराओं ने स्वतंत्रता, स्वदेशी और राष्ट्रीय गौरव का संदेश जनभाषा में प्रसारित किया। इन प्रस्तुतियों में कलाकार और दर्शक सामूहिक गायन के माध्यम से राष्ट्रभक्ति की एकता का अनुभव करते थे। भारतीय जन नाट्य संघ (IPTA) ने संगीत, नाटक और कविता को जनजीवन से जोड़ते हुए भारतीय रंगमंच को नई दिशा दी। उसके सांस्कृतिक अभियानों में राष्ट्रीय एकता और जनजागरण के मूल्यों को प्रमुखता मिली, जिनमें 'वन्दे मातरम्' राष्ट्रचेतना के स्थायी प्रतीक के रूप में निरंतर उपस्थित रहा।

आगे चलकर भारतीय सिनेमा ने इस गीत को दृश्य और श्रव्य दोनों माध्यमों से नई पीढ़ियों तक पहुँचाकर उसकी राष्ट्रीय विरासत को और सुदृढ़ बनाया। इसी तरह भारतीय सिनेमा ने 'वन्दे मातरम्' को केवल राष्ट्रभक्ति के गीत के रूप में नहीं, बल्कि त्याग, संस्कृति, मानवीय मूल्यों और राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया। स्वतंत्रता के बाद अनेक फिल्मों में इसकी मूल गरिमा को बनाए रखते हुए इसे विविध रूपों में अपनाया गया। फिल्मों और वृत्तचित्रों में भारतमाता, हिमालय, गंगा, किसान, सैनिक, वैज्ञानिक, शिक्षक तथा सामान्य नागरिकों की सामूहिक छवि के माध्यम से इसकी सांस्कृतिक कल्पना को साकार किया गया। इस प्रकार भारतीय सिनेमा ने राष्ट्र को साझी सांस्कृतिक चेतना और राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में स्थापित किया।

समय के साथ 'वन्दे मातरम्' की प्रस्तुति की शैली बदली, किंतु उसका मूल संदेश सदैव अक्षुण्ण रहा। आधुनिक संगीत संयोजन, कोरल गायन और नई तकनीकों ने इसे नई पीढ़ी तक पहुँचाया, जबकि इसकी सांस्कृतिक गरिमा बनी रही। आकाशवाणी, दूरदर्शन, विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, सैनिक अकादमियों तथा राष्ट्रीय समारोहों के माध्यम से इसका सामूहिक गायन राष्ट्रीय एकता और नागरिक उत्तरदायित्व की भावना को निरंतर सुदृढ़ करता रहा।

इक्कीसवीं शताब्दी में डिजिटल मंचों और सामाजिक मीडिया ने 'वन्दे मातरम्' को वैश्विक पहचान प्रदान की है। विश्वभर में बसे भारतीय राष्ट्रीय अवसरों पर इसका सामूहिक गायन कर अपनी सांस्कृतिक पहचान और मातृभूमि से भावनात्मक जुड़ाव व्यक्त करते हैं। सांस्कृतिक कूटनीति के प्रभावी माध्यम के रूप में भी यह गीत भारत की सभ्यतागत विरासत और सांस्कृतिक मूल्यों का परिचय विश्व तक पहुँचा रहा है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसकी समावेशी दृष्टि है, जो भाषा, क्षेत्र और संप्रदाय से ऊपर उठकर मातृभूमि, प्रकृति और सांस्कृतिक एकता का संदेश देती है।

समकालीन भारत में 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता

स्वतंत्रता के लगभग आठ दशकों बाद भी 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता अक्षुण्ण है। स्वतंत्रता संग्राम के समय यह राजनीतिक दासता के विरुद्ध संघर्ष का मंत्र था। आज यह सांस्कृतिक आत्मविश्वास, राष्ट्रीय एकात्मता और उत्तरदायी नागरिकता का प्रेरक स्वर है। वैश्वीकरण, तकनीकी परिवर्तन और सांस्कृतिक संवाद के इस युग में इसकी प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है, क्योंकि यह भारत की उस सभ्यतागत दृष्टि का प्रतिनिधित्व

करता है जिसमें प्रकृति, संस्कृति और मानव परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक ही जीवन–दर्शन के पूरक तत्व हैं। 'वन्दे मातरम्' हमें स्मरण कराता है कि राष्ट्र केवल राजनीतिक संरचना नहीं, बल्कि साझा सांस्कृतिक चेतना, ऐतिहासिक स्मृति और नैतिक उत्तरदायित्व का जीवंत रूप है।

भारतीय सौंदर्यशास्त्र में कला का लक्ष्य केवल मनोरंजन या सौंदर्य–बोध नहीं, बल्कि सत्य, शिव और सुंदर की अनुभूति है। संस्कृतनिष्ठ बांग्ला में रचित होने पर भी 'वन्दे मातरम्' सम्पूर्ण भारत की सांस्कृतिक धरोहर बन गया। विभिन्न भारतीय भाषाओं, संगीत परंपराओं और कलात्मक अभिव्यक्तियों ने इसे अपने–अपने स्वर दिए, पर इसका मूल भाव कभी परिवर्तित नहीं हुआ। यही भारतीय संस्कृति की विशिष्टता है–विविधता का सम्मान करते हुए एकात्मता की स्थापना। डिजिटल युग में भी 'वन्दे मातरम्' केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि भविष्य की सांस्कृतिक दिशा है। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, सांस्कृतिक संस्थानों और प्रवासी भारतीय समुदायों में इसकी रचनात्मक उपस्थिति नई पीढ़ी को अपनी सभ्यतागत जड़ों से जोड़ती है। साथ ही, भारतीय संगीत, योग, आयुर्वेद और शास्त्रीय कलाओं की भाँति यह गीत भी विश्व के समक्ष भारत की समावेशी, मानवीय और आध्यात्मिक दृष्टि का प्रभावी परिचायक है।

अंततः 'वन्दे मातरम्' की वास्तविक शक्ति उसके शब्दों में नहीं, बल्कि उस सांस्कृतिक दर्शन में निहित है जो भारत को केवल भूभाग नहीं, बल्कि एक जीवंत सभ्यता के रूप में देखता है। जब तक भारतीय संस्कृति में प्रकृति के प्रति श्रद्धा, मानव के प्रति करुणा और मातृभूमि के प्रति समर्पण का भाव जीवित रहेगा, तब तक 'वन्दे मातरम्' केवल राष्ट्रीय गीत नहीं रहेगा; वह भारतीय सभ्यता की चेतना, राष्ट्रीय अस्मिता का अमर स्वर और भविष्य के भारत की सांस्कृतिक दिशा बना रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ :

1. बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय – आनंदमठ।
2. श्री अरविन्द – Bande Mataram and Nationalism.
3. डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी – The Fundamental Unity of India.
4. डॉ. कपिला वात्स्यायन – Traditional Indian Theatre तथा भारतीय कला पर विभिन्न ग्रंथ।
5. नाट्यशास्त्र – भरतमुनि।
6. संगीत रत्नाकर – शार्ङ्गदेव।
7. रवीन्द्रनाथ ठाकुर – राष्ट्र, संस्कृति एवं संगीत संबंधी निबंध।
8. भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार (National Archives of India)।
9. संगीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली।
10. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र (IGNCA), नई दिल्ली।
11. साहित्य अकादेमी द्वारा प्रकाशित भारतीय कला एवं संस्कृति संबंधी ग्रंथ।
12. संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के प्रकाशन।
13. राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा प्रकाशित हिंदी दिवस स्मारिकाएँ।
14. प्रसार भारती आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के राष्ट्रीय अभिलेख।

भारतीय कला, संगीत और रंगमंच में 'वन्दे मातरम्'

–गौरव मिश्रा
सहायक प्रबंधक (राजभाषा)
भारतीय रिजर्व बैंक, मुंबई

'वन्दे मातरम्' जो हम सभी भारतीयों को कश्मीर से कन्याकुमारी और गुजरात से अरुणाचल प्रदेश तक एक अटूट सांस्कृतिक सूत्र में जोड़ता है, वह केवल एक राष्ट्रीय गीत या कुछ सुगठित अक्षरों का विन्यास मात्र नहीं है। यह भारत की अनंत सामूहिक चेतना, साझी अस्मिता और सनातन गौरव का एक शाश्वत, अदम्य शंखनाद है। सन् 1870 के दशक में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के अंतःकरण की अगाध गहराइयों से उपजी यह कालजयी रचना जब उनके ऐतिहासिक उपन्यास 'आनंदमठ' (1882) के माध्यम से जन–जन के कंठ तक पहुँची, तो इसने औपनिवेशिक दासता की लौह श्रृंखलाओं में जकड़े हुए आर्यावर्त को एक अभूतपूर्व संजीवनी प्रदान की। इस महामंत्र ने देश को केवल राजनीतिक परतंत्रता से मुक्ति पाने के लिए ही उद्वेलित नहीं किया, बल्कि भारतीय चित्रकला, पारंपरिक संगीत और लोक रंगमंच की मृतप्राय आत्मा को भी पुनर्जीवित कर दिया।

सच्ची कला वही है जो समाज को नव–चेतना की दिशा दिखाए और जनमानस की धमनियों में राष्ट्रीयता का ज्वार प्रवाहित करे। 'वन्दे मातरम्' की ध्वनि तरंगों ने भारतीय कला के प्रत्येक सूक्ष्म आयाम को गहराई से झंकृत किया। जहाँ श्रेष्ठ चित्रकारों ने इस दैवीय मंत्र की सूक्ष्म अनुभूतियों को अपने फलक पर उतारकर 'भारत माता' के विहंगम, अलौकिक और ममतामयी रूप को साकार किया, वहीं संगीत के साधकों ने इसकी दिव्य धुनों से सुषुप्त राष्ट्र को चेतना के धरातल पर ला खड़ा किया। इसी क्रम में, रंगमंच के समर्पित कलाकारों ने इस सिंहनाद को अपने नाटकों का मुख्य स्वर बनाकर विदेशी हुकूमत की साम्राज्यवादी नींव को हिलाकर रख दिया।

स्वतंत्रता संग्राम का महामंत्र

किसी भी युग की कलात्मक अभिव्यक्ति, शिल्पगत सौंदर्य अथवा साहित्यिक कृति की अंतरात्मा को उसकी संपूर्णता में समझने के लिए उसकी समकालीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, युगीन परिस्थितियों तथा सामाजिक–राजनीतिक परिवेश का गहन अनुशीलन करना परम आवश्यक है। उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध भारतीय इतिहास में केवल राजनीतिक उथल–पुथल का दौर नहीं था, वरन् यह भारतीय पुनर्जागरण का एक ऐसा संधिकाल था जिसने सोए हुए राष्ट्र को झकझोर कर जगा दिया था। इस कालखंड में औपनिवेशिक ब्रिटिश शासन अत्यंत सोची–समझी दमनकारी नीतियों के माध्यम से भारतीयों की मूल सांस्कृतिक पहचान, आध्यात्मिक गौरव तथा

गौरवशाली इतिहास को योजनाबद्ध तरीके से नष्ट करने पर तुला हुआ था। उनका मुख्य उद्देश्य भारतवासियों को केवल शारीरिक रूप से ही नहीं, बल्कि मानसिक और वैचारिक रूप से भी अपना चिरस्थायी दास बनाना था।

पाश्चात्य संस्कृति के इस बढ़ते अंधकार और सांस्कृतिक ह्रास के घोर संकट काल में, बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 'वन्दे मातरम्' के रूप में देश को एक ऐसा अनुपम महामंत्र प्रदान किया, जिसने पराधीनता की निराशा में डूबे करोड़ों देशवासियों के भीतर अपनी पावन मातृभूमि के प्रति साक्षात दैवीय शक्ति, अगाध श्रद्धा और आदि–शक्ति के दर्शन कराए। उन्होंने देशवासियों को यह बोध कराया कि जिस भूमि पर वे खड़े हैं, वह कोई विजित भू–भाग नहीं, बल्कि कोटि–कोटि कंठों की रक्षक साक्षात माँ जगदम्बा है।

यह कालजयी गीत मूल रूप से देववाणी संस्कृत के वैभव और समृद्ध बांग्ला भाषा के अत्यंत विरल, माधुर्यपूर्ण एवं सुगठित भाषाई सम्मिश्रण से निर्मित हुआ है। इस वंदना में भारत की पावन धरा को केवल मिट्टी, पत्थरों और नदियों से घिरा कोई निर्जीव भौगोलिक पिंड या सीमाबद्ध भूखंड नहीं माना गया, बल्कि इसे सच्ची माँ के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। बंकिम बाबू की इस अमर लेखनी ने मातृभूमि को धन–धान्य से परिपूर्ण, असीम ज्ञान की प्रदात्री, मलयज की शीतलता से युक्त और दुष्टों का संहार करने वाली शक्ति स्वरूपा साक्षात माँ दुर्गा के रूप में जन–जन के मानस पटल पर अंकित कर दिया। गीत के यही भाव आगे चलकर संपूर्ण राष्ट्र के सामूहिक संकल्प बन गए।

जब वर्ष 1905 में औपनिवेशिक सत्ता ने कुत्सित साम्राज्यवादी मंशा से 'बंग–भंग' (बंगाल विभाजन) की क्रूर घोषणा की, तो इसके विरोध में उपजा जन–आक्रोश देश का पहला राष्ट्रव्यापी आंदोलन बन गया। इस ऐतिहासिक मोड़ पर 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं रहा, बल्कि वह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का सबसे प्रखर नारा, क्रांतिकारियों का अमोघ अस्त्र और राष्ट्रभक्ति का साक्षात पर्याय बन गया। कोलकाता की सड़कों से लेकर देश के सुदूर अंचलों तक, जुलूस निकालते निहत्थे क्रांतिकारी ब्रिटिश हुकूमत की बर्बर लाठियों, संगीनों और बंदूकों की गोलियों का सामना हंसते–हंसते करते थे, और उनके कंठ से निकलने वाली अंतिम ध्वनि केवल 'वन्दे मातरम्' होती थी।

इस युगांतरकारी जन–आंदोलन की सामूहिक ऊर्जा, त्याग और बलिदान को तत्कालीन चित्रकला, शास्त्रीय संगीत तथा लोक रंगमंच ने अपनी अमर कलात्मक अभिव्यक्तियों के माध्यम से इतिहास के स्वर्ण अक्षरों में सदा–सदा के लिए सुरक्षित कर दिया। कला की इन विधाओं ने इस राजनीतिक प्रतिरोध को एक व्यापक सांस्कृतिक अधिष्ठान प्रदान किया, जिसने स्वाधीनता की अलख को घर–घर तक पहुँचा दिया।

भारतीय चित्रकला और शिल्पकला में 'वन्दे मातरम्' की अभिव्यक्ति

चित्रकला और शिल्पकला मूलतः किसी भी जीवंत समाज की अदृश्य भावनाओं, अंतर्निहित आकांक्षाओं, आध्यात्मिक संकल्पों और युगीन क्रांतियों को एक अमूर्त भाव से निकालकर जीवंत दृश्य रूप प्रदान करती है। जब कोई राष्ट्र वैचारिक या राजनीतिक पराधीनता के घोर अंधकार से गुजर रहा होता है, तब रेखाओं और रंगों का सामंजस्य जनमानस को एक नई दिशा दिखाता है। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के अमर उद्घोष 'वन्दे मातरम्' के राष्ट्रव्यापी प्रभाव से भारतीय चित्रकला के संसार में भी एक ऐसी ही अभूतपूर्व, युगांतरकारी और चेतनादायी क्रांति का सूत्रपात हुआ, जिसे कला के इतिहास में 'बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट' के नाम से सर्वोच्च प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।

इस कला आंदोलन ने पाश्चात्य चित्रकला के अंधानुकरण को पूरी तरह से नकारते हुए भारत की अपनी प्राचीन अजंता, एलोरा, राजपूत और मुगल शैलियों को पुनर्जीवित किया। 'वन्दे मातरम्' की मूल भावना – अर्थात मातृभूमि के प्रति अगाध श्रद्धा और उसमें दैवीय स्वरूप की परिकल्पना, इस नई राष्ट्रवादी कला शैली का मुख्य केंद्र बिंदु बनी।

अवनीन्द्रनाथ ठाकुर और 'भारत माता' का दृश्य रूप

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के अमर महागीत 'वन्दे मातरम्' के अंतर्निहित सौंदर्य और उसकी ओजस्वी तरंगों से अंतःप्रेरित होकर महान चित्रशिल्पी अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने वर्ष 1905 के ऐतिहासिक बंग–भंग आंदोलन के दौरान 'भारत माता' का एक अत्यंत विख्यात, अलौकिक और युगांतरकारी चित्र निर्मित किया। इस अद्वितीय चित्र ने भारतीय चित्रकला के इतिहास की दिशा और दशा को सदैव के लिए बदल कर रख दिया। अवनीन्द्रनाथ जी ने तत्कालीन समय में व्याप्त यूरोपीय कला की संहारक या हिंसक शैलियों को पूरी तरह नकारते हुए, भारत माता को एक सौम्य, शांत, करुणा की प्रतिमूर्ति और आध्यात्मिक आभा से युक्त वैष्णव सन्यासिनी के रूप में फलक पर उतारा। कला का यह अभूतपूर्व स्वरूप संपूर्ण राष्ट्र के लिए एक महान सांस्कृतिक प्रतीक बन गया, जिसमें माता को चार पावन भुजाओं के साथ दर्शाया गया था।

इन चार भुजाओं में माता ने मानव जीवन के उत्कर्ष, कल्याण और राष्ट्र के चहुंमुखी विकास के चार परम पवित्र उपहार धारण किए हुए हैं। उनके हाथों में क्रमशः शिक्षा और आत्मज्ञान की प्रदाता वेद–पुस्तिका, देश की कृषि संपदा तथा उदर पूर्ति को दर्शाती धान की सुनहरी बालियाँ, राष्ट्र के स्वावलंबन और कुटीर उद्योग का संदेश देता श्वेत वस्त्र तथा भारत की सनातन तपस्या एवं आध्यात्मिक दीक्षा का प्रतिनिधित्व करती रुद्राक्ष की पवित्र माला सुशोभित है।

यह संपूर्ण चित्र कलात्मक धरातल पर 'वन्दे मातरम्' की आरंभिक कालजयी पंक्तियों 'सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्, शस्यशामलाम् मातरम्' का साक्षात, सजीव और भावपूर्ण दृश्य रूपांतरण था। इस महान कलाकृति ने पराधीनता के अवसाद में डूबे देशवासियों के मन में बसी अमूर्त एवं अदृश्य देशभक्ति की भावना को एक मूर्त, ममतामयी और साक्षात् स्वरूप प्रदान किया। इस चित्र की दैवीय आभा से देश की साधारण, निरक्षर और ग्रामीण जनता भी सीधे–सीधे आत्मिक रूप से जुड़ सकी, जिससे मातृभूमि के प्रति सर्वस्व न्योछावर करने की एक राष्ट्रव्यापी लहर दौड़ गई।

नंदलाल बोस और राष्ट्रवादी कला

अवनीन्द्रनाथ के शिष्य नंदलाल बोस ने 'वन्दे मातरम्' की भावना को और आगे बढ़ाया। उन्होंने महात्मा गांधी के आह्वान पर कांग्रेस के सम्मेलनों, जैसे हरिपुरा सत्र के लिए भारतीय ग्रामीण जीवन और राष्ट्रीय प्रतीकों के पोस्टर बनाए। जब भारत का संविधान लिखा जा रहा था, तब नंदलाल बोस और उनके सहयोगियों ने संविधान की मूल प्रति को भारतीय इतिहास और संस्कृति के चित्रों से सजाया। संविधान के अध्यायों की शुरुआत में जो कलाकृतियाँ हैं, वे 'वन्दे मातरम्' की सांस्कृतिक चेतना का ही प्रतिबिंब हैं।

जन–कला, भित्ति चित्र और भारतीय संगीत में 'वन्दे मातरम्'

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान देश के कोने–कोने में 'वन्दे मातरम्' शब्द को दीवारों पर लिखना, देशभक्तिपूर्ण

चित्रों के माध्यम से दीवारों को सजाना एक आम बात हो गई थी। लोक कलाकारों ने अपनी पारंपरिक शैलियों (जैसे मधुबनी, पटचित्र, कालीघाट शैली) में भारत माता और स्वतंत्रता सेनानियों के चित्र बनाकर इस मंत्र को जन–जन की कला बना दिया।

संगीत सीधे हृदय पर आघात करता है। 'वन्दे मातरम्' की साहित्यिक सुंदरता और भावुकता ने भारत के महानतम संगीतकारों को आकर्षित किया। इस गीत को अलग–अलग समय पर विभिन्न रागों और धुनों में पिरोया गया, जिससे इसकी पहुंच और प्रभाव व्यापक होता गया।

रवींद्रनाथ ठाकुरः प्रथम संगीतमय प्रस्तुति

वन्दे मातरम्' को सबसे पहले धुन में बांधने और उसे गाने का श्रेय गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर को जाता है। उन्होंने सन् 1896 के कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में इस गीत को अपनी जादुई आवाज और स्वरलिपि के साथ गाया था। गुरुदेव ने इसे 'राग देस' पर आधारित एक गंभीर और गरिमामयी धुन में ढाला था। यह धुन इतनी प्रभावशाली थी कि इसने पूरे पंडाल में उपस्थित जनसमूह को भाव–विभोर कर दिया और यहीं से यह गीत राष्ट्रीय सम्मेलनों का अभिन्न हिस्सा बन गया।

पंडित ओंकारनाथ ठाकुर की प्रस्तुति

भारतीय शास्त्रीय संगीत के शिखर पुरुष पंडित ओंकारनाथ ठाकुर का नाम 'वन्दे मातरम्' के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में दर्ज है। 15 अगस्त 1947 को जब भारत आजाद हुआ, तो आकाशवाणी से सुबह 6:30 बजे पंडित ओंकारनाथ ठाकुर की आवाज में 'वन्दे मातरम्' का गायन प्रसारित हुआ था। उन्होंने खड़े होकर, अत्यंत ओजपूर्ण और शास्त्रीय शुद्धता के साथ इसे गाया था। उनकी प्रस्तुति में मातृभूमि के प्रति जो तड़प और भक्ति थी, उसने हर भारतीय की आँखों को नम कर दिया था।

भारतीय रंगमंच और सिनेमा में 'वन्दे मातरम्'

रंगमंच समाज का दर्पण होता है और इसमें जनभावनाओं को उद्वेलित करने की असीम क्षमता होती है। औपनिवेशिक काल में रंगमंच ही वह माध्यम था जिसने 'वन्दे मातरम्' के संदेश को आम जनता तक सीधे नाटक, संवाद और गीतों के माध्यम से पहुँचाया। बंकिमचंद्र के उपन्यास 'आनंदमठ' का जब रंगमंच पर नाट्य रूपांतरण किया गया, तो बंगाल के थियेटरों में भारी भीड़ उमड़ने लगी। नाटक के दौरान जब अभिनेता मंच पर 'वन्दे मातरम्' चिल्लाते थे, तो दर्शक दीर्घा में बैठे लोग भी अपनी सीटों से उठकर नारे लगाने लगते थे। इस नाटक और गीत के प्रभाव से ब्रिटिश सरकार इतनी डर गई कि उसने सन् 1876 में 'ड्रामेटिक परफॉर्मेंस एक्ट' (नाट्य अभिनय नियंत्रण अधिनियम) लागू कर दिया, ताकि देशभक्तिपूर्ण नाटकों पर प्रतिबंध लगाया जा सके। लेकिन कला को डंडे के दम पर नहीं रोका जा सकता था; कलाकारों ने गुप्त रूप से और प्रतीकात्मक रूपों में 'वन्दे मातरम्' का मंचन जारी रखा।

लोक रंगमंच में पैठ

जब भारतीय मनोरंजन जगत में मूक सिनेमा के मौन युग की समाप्ति हुई और वर्ष 1931 में बोलती फिल्मों का ऐतिहासिक दौर शुरू हुआ, तो इस नवोदित सशक्त माध्यम ने भी रंगमंच की समृद्ध देशभक्तिपूर्ण विरासत को सहर्ष अंगीकार कर लिया। सिनेमा ने 'वन्दे मातरम्' की अद्भुत शक्ति को पहचाना और इसे जनमानस तक

पहुँचाने का एक राष्ट्रव्यापी माध्यम बनाया। इस यात्रा का सबसे भव्य और ऐतिहासिक शिखर वर्ष 1952 में प्रदर्शित हुई फिल्म 'आनंदमठ' के रूप में सामने आया। संगीत सम्राट हेमंत कुमार के कालजयी संगीत निर्देशन में और सुर साम्राज्ञी लता मंगेशकर की दिव्य, ओजस्वी आवाज में रिकॉर्ड किया गया 'वन्दे मातरम्' का वह स्वरूप आज भी प्रत्येक सुनने वाले के रोंगटे खड़े कर देता है। इस विशिष्ट चलचित्र ने बंकिम बाबू के उपन्यास के मूल कथानक, रंगमंच की भव्यता और राष्ट्रीय स्वाभिमान के जज्बे को बड़े पर्दे पर पूरी प्रामाणिकता के साथ उतारा, जिसने इस गीत को आज की पीढ़ी के दिलों में भी हमेशा के लिए अमर कर दिया।

'आनंदमठ' के बाद के दशकों में भी भारतीय सिनेमा ने इस महामंत्र से निरंतर प्रेरणा ली और इसे अपनी विभिन्न कथाओं का मुख्य आधार बनाया। चाहे वह श्वेत–श्याम सिनेमा के दौर की प्रसिद्ध फिल्म 'लीडर' (1964) हो, नब्बे के दशक की राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत फिल्म 'क्रांतिवीर' (1994) हो, या फिर समकालीन और आधुनिक दौर की देशप्रेम पर आधारित अन्य कई बहुचर्चित फिल्में हों, 'वन्दे मातरम्' की गूँज हमेशा बनी रही। सिनेमाई विधा में इस पावन गीत का प्रयोग सदैव उन विशिष्ट और भावुक दृश्यों में किया जाता है, जहाँ फिल्म का मुख्य नायक अथवा पूरा समाज अपनी चरम राष्ट्रीय चेतना, अटूट संकल्प और मातृभूमि के लिए सर्वस्व बलिदान करने की भावना से सराबोर होता है। इस प्रकार, भारतीय सिनेमा ने रंगमंच की उस क्रांतिकारी मशाल को बुझने नहीं दिया, बल्कि अपनी भव्य तकनीकी प्रस्तुतियों और सुरीले संगीत के माध्यम से 'वन्दे मातरम्' को प्रत्येक युग के दर्शकों का कंठहार बनाए रखा।

वन्दे मातरम्: समकालीन प्रासंगिकता

आज इक्कीसवीं सदी में भारत एक वैश्विक महाशक्ति बनने की ओर अग्रसर है। कला, संगीत और रंगमंच के क्षेत्र में भी नित नए प्रयोग हो रहे हैं। डिजिटल मीडिया, ग्राफिक्स और आधुनिक फ्यूजन संगीत के इस दौर में भी 'वन्दे मातरम्' की प्रासंगिकता रत्ती भर भी कम नहीं हुई है। आज भी जब देश का कोई खिलाड़ी ओलंपिक के मंच पर तिरंगा लहराता है, या जब गणतंत्र दिवस के अवसर पर राजपथ पर सेना की टुकड़ियाँ गुजरती हैं, तो पृष्ठभूमि में गूंजता 'वन्दे मातरम्' हर भारतीय के दिल में देशप्रेम की हिलोरे उठती हैं।

निष्कर्षतः, कहा जा सकता है कि बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का यह अमर गीत केवल अतीत की गौरवगाथा नहीं है, बल्कि यह हमारे वर्तमान का संकल्प और उज्ज्वल भविष्य का मार्गदर्शक है। जब तक भारत की कला में संवेदनशीलता रहेगी, जब तक भारतीय संगीत में सुर और ताल का अस्तित्व रहेगा, और जब तक भारतीय रंगमंच पर सत्य और न्याय का मंचन होता रहेगा, तब तक 'वन्दे मातरम्' अपनी पूरी भव्यता, दिव्यता और ओजस्विता के साथ कलाकारों को प्रेरित करता रहेगा और राष्ट्र की आत्मा को स्पंदित करता रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ:

1. बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय (1882)–आनंदमठ (मूल बांग्ला एवं इसके प्रामाणिक हिंदी अनुवाद)।
2. अवनीन्द्रनाथ ठाकुर (1905)–भारत माता चित्र और बंगाल कला शैली (Bengal School of Art) का इतिहास, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली के अभिलेख।
3. नंदलाल बोस (1950)–भारत का मूल संविधान (हस्तलिखित प्रति), भारत के राष्ट्रीय अभिलेखागार (National Archives of India) में सुरक्षित नंदलाल बोस और शांति निकेतन के कलाकारों की चित्रकला की रिपोर्ट।

4. रवींद्रनाथ ठाकुर (1896)—कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में 'वन्दे मातरम्' की स्वरलिपि और राग देस का गायन इतिहास, संगीत नाटक अकादमी पत्रिका।

5. पंडित ओंकारनाथ ठाकुर (15 अगस्त 1947)—आकाशवाणी (All India Radio) दिल्ली अभिलेखागार, आजादी की प्रथम सुबह के ऐतिहासिक गायन की आधिकारिक रिकॉर्डिंग और विवरण।

6. नाट्य अभिनय नियंत्रण अधिनियम (Dramatic Performances Act, 1876)— ब्रिटिश भारत के गृह विभाग के ऐतिहासिक दस्तावेज और भारत में लोक रंगमंच (जात्रा, तमाशा) पर इसके प्रभाव का इतिहास।

7. फिल्म आनंदमठ (1952)—संगीतकार हेमंत कुमार और गायिका लता मंगेशकर का संगीत इतिहास, राष्ट्रीय फिल्म अभिलेखागार (NFAI), पुणे।

प्रपत्र–4 (देखिए नियम–8) **पं.सं. 3246/77**

प्रेस तथा पुस्तक पंजीकरण अधिनियम

समाचार पत्रों का पंजीकरण (केंद्रीय) नियम

''राजभाषा भारती'' के स्वामित्व तथा विवरणों की सूचना

1.	प्रकाशन का स्थान	नई दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम	इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स
4.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
5.	प्रकाशन का नाम व पता	राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, एन.डी.सी.सी.–2 भवन, चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
6.	संपादक का नाम व पता	श्री वीरेन्द्र कुमार, सहायक निदेशक (पत्रिका), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, एन.डी.सी.सी.–2 भवन, चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
7.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	अप्रयोज्य

मैं, वीरेन्द्र कुमार घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह./–

प्रकाशक का हस्ताक्षर

कवर डिजाइन एवं टाइपसेटिंग–इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स, चावड़ी बाजार, दिल्ली–6

वन्दे मातरम् : भारतीय कला, संगीत और रंगमंच का अमर स्वर

–रिंकल शर्मा
कहानीकार एवं नाटककार
कौशांबी, गाजियाबाद

कल्पना कीजिए कोलकाता, कांग्रेस अधिवेशन का वह क्षण, जब पंडाल ठसाठस भरा हो और मंच पर स्वयं रवींद्रनाथ टैगोर एक ऐसे गीत को अपनी आवाज दे रहे हों जिसे सुनकर हजारों लोग सिहर उठे थे। कुछ ही वर्षों बाद वही गीत ब्रिटिश हुकूमत के लिए इतना खतरनाक हो जाता है कि सार्वजनिक स्थलों पर इसके गायन तक पर पहरा बिठा दिया जाता है। भला एक गीत इतना बेचैन क्यों कर देता है किसी साम्राज्य को? शायद इसलिए कि 'वन्दे मातरम्' का वास्तविक अर्थ केवल उसका उच्चारण करना नहीं, बल्कि उस भारत को समझना है जिसे यह गीत सुजलाम्, सुफलाम्, शस्यश्यामलाम् और मातृरूप में देखता है। भारतीय कला में यह दृश्य है, संगीत में स्वर है और रंगमंच में जीवंत इतिहास और इन तीनों के मिलन से 'वन्दे मातरम्' एक गीत से आगे बढ़कर राष्ट्र की सांस्कृतिक स्मृति बन जाता है।

वन्दे मातरम्।
सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्।
शस्यश्यामलाम् मातरम्।
वन्दे मातरम्।

वन्देमातरम् का उद्गम और सांस्कृतिक विस्तार

हालांकि ''वन्दे मातरम्'' की रचना बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने सन् 1875 के आसपास की और इसे अपने बहुचर्चित उपन्यास ''आनंदमठ'' (1882) में समाहित किया। यह उपन्यास संन्यासी विद्रोह की पृष्ठभूमि पर रचा गया था, जिसमें मातृभूमि को दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती के समवेत रूप में चित्रित किया गया। संस्कृतनिष्ठ बांग्ला में लिखा यह स्तोत्र मातृभूमि की तीन छवियाँ प्रस्तुत करता है–सुजला–सुफला धरती, दु:खहरणी करुणामयी माँ और शक्ति–स्वरूपा रणचंडी। यह त्रिविध रूप कल्पना ही आगे चलकर चित्रकला और रंगमंच में दृश्य–प्रतीकों का आधार बनी और यहीं से आरंभ हुआ इस गीत का उन तमाम कला–रूपों में प्रवेश जो आगे चलकर इसकी असली पहचान गढ़ने वाले थे।

वैसे बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के अलावा एक और व्यक्ति थे जिन्होंने वन्दे मातरम् का विस्तार किया। जी हाँ, ''वन्दे मातरम्'' के सांस्कृतिक विस्तार में पत्रकार अरविंद घोष की भूमिका को भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने न केवल इस स्रोत का अंग्रेजी में काव्यात्मक अनुवाद किया बल्कि 1906 में इसी नाम से एक क्रांतिकारी दैनिक समाचार–पत्र ''वन्दे मातरम्'' का संपादन भी संभाला जोकि बंगाल में राष्ट्रवादी विचारों के प्रसार का प्रमुख माध्यम बना।

इसी दौर में अनुशीलन समिति और युगांतर जैसे क्रांतिकारी संगठनों ने इस गीत को अपना संघर्ष–मंत्र बना

लिया जिससे यह स्रोत साहित्य और कला की परिधि से निकलकर प्रत्यक्ष राजनीतिक प्रतिरोध का प्रतीक बन गया। यह उल्लेखनीय है कि इसी राजनीतिक ऊर्जा ने आगे चलकर संगीतकारों, चित्रकारों और नाटककारों को भी प्रेरित किया कि वे अपनी कला के माध्यम से इस भावना को जन–जन तक पहुँचाएं। कहा जा सकता है कि वन्दे मातरम, पत्रकारिता और कला एवं राजनीति के बीच की कड़ी सिद्ध हुआ।

वन्दे मातरम्: जब रंग और रेखा में उतरा

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान कला ने राष्ट्रवादी चेतना को जन–जन तक पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। खासकर भारतीय चित्रकला में 'वन्दे मातरम्' ने मातृभूमि की एक सशक्त सांस्कृतिक छवि दी। चित्रकला के क्षेत्र में वन्दे मातरम् की भावना को सबसे सशक्त दृश्य रूप दिया था –अवनींद्रनाथ टैगोर ने।

सन् 1905 में बंग–भंग के विरुद्ध उठे स्वदेशी आंदोलन के उग्र माहौल में उन्होंने 'भारत माता' शीर्षक से एक जलरंग चित्र बनाया। यह चित्र प्रत्यक्षतः वन्दे मातरम् की उन पंक्तियों की दृश्य अभिव्यक्ति था, जिनके द्वारा मातृभूमि को सुजला–सुफला और वरदा के रूप में वर्णित किया गया। अवनींद्रनाथ की यह कृति बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट की आधारशिला बनी और पाश्चात्य यथार्थवादी शैली को त्यागकर भारतीय लघुचित्र और अजंता की परंपराओं से प्रेरणा का रूप सिद्ध हुई।

इस प्रेरणामयी दृश्य भाषा को अवनींद्रनाथ के शिष्यों–नंदलाल बोस, असित कुमार हलदार, क्षितींद्रनाथ मजूमदार आदि ने और आगे बढ़ाया। नंदलाल बोस ने आगे चलकर महात्मा गांधी के दांडी मार्च और स्वतंत्रता संग्राम के अनेक प्रसंगों को अपने रेखाचित्रों में उकेरा। इन रेखाचित्रों में मातृभूमि–पूजा की वही भावना निहित थी जो वन्दे मातरम् में मूर्त हुई थी। इस प्रकार एक साहित्यिक स्रोत से जन्मी ''भारत माता'' की छवि क्रमशः लोक–चेतना का इतना अभिन्न अंग बन गई कि आज भी सार्वजनिक स्थलों, कैलेंडर–चित्रों और स्मारकों में यह रूपक बना हुआ है। कोलकाता के जोरासाँको स्थित ठाकुरबाड़ी से निकली यह चित्रकला–परंपरा राष्ट्रीय आंदोलन की सांस्कृतिक चेतना की धुरी बनी।

वन्दे मातरम् : जब कंठ में उतरा

'वन्दे मातरम्' की सबसे बड़ी शक्ति उसका संगीतात्मक स्वभाव है। इसकी पंक्तियों में लय, आरोह–अवरोह और सामूहिक गायन की अद्भुत क्षमता है। संगीत के क्षेत्र में वन्दे मातरम् की सबसे निर्णायक घटना 1896 में घटी जब रवींद्रनाथ टैगोर ने कोलकाता में आयोजित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में इसे स्वयं अपनी बनाई धुन में गाया। टैगोर ने इसे शास्त्रीय राग देस पर आधारित मधुर स्वर–रचना दी जोकि आज भी सबसे प्रचलित और मान्यताप्राप्त धुन मानी जाती है।

यह घटना केवल एक संगीत–प्रस्तुति भर नहीं थी; यह क्षण था जब साहित्य औपचारिक रूप से राष्ट्रीय संगीत परंपरा में प्रवेश कर गया। हालांकि इससे पहले संगीतज्ञ जदुनाथ भट्टाचार्य (जिन्हें जदु भट्ट के नाम से भी जाना जाता है) जोकि बंकिमचंद्र के परिचित थे, ने इस गीत को स्वरबद्ध किया था। कालांतर में अनेक संगीतकारों जैसे– हरिपद चट्टोपाध्याय और तिमिरबरन भट्टाचार्य इत्यादि ने इसे अपने–अपने ढंग से प्रस्तुत किया।

आधुनिक युग में हेमंत कुमार ने 1952 में बनी फिल्म ''आनंदमठ'' के लिए इसकी जो धुन तैयार की वह लता मंगेशकर के स्वर में अमर हो गई और आज भी सार्वजनिक समारोहों में सर्वाधिक गाई जाने वाली प्रस्तुतियों में गिनी जाती है। स्वतंत्रता के पचास वर्ष पूरे होने के अवसर पर 1997 में ए.आर. रहमान ने ''माँ तुझे सलाम'' शीर्षक से वन्दे मातरम् का एक समकालीन, पॉप–फ्यूजन संस्करण प्रस्तुत किया, जिसने युवा पीढ़ी को इस गीत से नए सिरे से जोड़ा। इसके अतिरिक्त पंडित भीमसेन जोशी, एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी और लता मंगेशकर जैसे दिग्गज कलाकारों ने भी इसे अपने कंठ से अलंकृत किया।

एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी का कर्नाटक शैली में गाया संस्करण दक्षिण भारत में विशेष लोकप्रियता रखता है और यह दर्शाता है कि यह गीत क्षेत्रीय संगीत–परंपराओं की सीमाओं को लांघकर एक अखिल भारतीय स्वर बन गया। महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रत्येक संगीतकार ने इस रचना को अपने युग की संवेदना के अनुसार ढाला। कहीं यह भक्ति–भाव प्रधान है तो कहीं ओजस्वी मार्च–संगीत जैसा और कहीं सिम्फनी की भव्यता लिए हुए। यह विविधता स्वयं में इस बात का प्रमाण है कि वन्दे मातरम् किसी एक निश्चित संगीत–रूप में बँधा नहीं बल्कि प्रत्येक पीढ़ी ने इसे नए स्वर दिए।

गायन के अतिरिक्त वाद्य–संगीत के क्षेत्र में भी वन्दे मातरम् ने गहरी छाप छोड़ी। शहनाई–सम्राट उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ ने इस धुन को अपनी शहनाई पर बजाकर एक ऐसा आयाम दिया जहाँ बिना शब्दों के भी गीत की भावना पूर्ण रूप से संप्रेषित होती है। यह इस बात का प्रमाण है कि इस रचना की मूल भावना भाषा और शब्दों से परे केवल स्वर–संरचना में भी उतनी ही सशक्त बनी रहती है। इसी तरह सितार, सरोद और वायलिन पर भी अनेक कलाकारों ने इसकी प्रस्तुतियाँ दीं। यह गीत शुद्ध शास्त्रीय संगीत–सभाओं का भी हिस्सा बन गया।

'वन्दे मातरम्' : जब मंच में गूँजा

भारतीय रंगमंच ने वन्देमातरम के द्वारा स्वतंत्रता–संग्राम और राष्ट्रवादी चेतना को जीवंत बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। मंच पर जब कोई पात्र दमन, भय या पराधीनता के बीच 'वन्दे मातरम्' का उद्‌घोष करता है, तो वह क्षण केवल संवाद नहीं रह जाता; वह अन्याय के विरुद्ध खड़े होने की घोषणा बन जाता है। बीसवीं सदी के प्रारंभ में विशेषतः 1905 के बंग–भंग विरोधी आंदोलन के दौरान बंगाल के सार्वजनिक रंगमंच ने वन्दे मातरम् को अपनी प्रस्तुतियों का अभिन्न अंग बना लिया।

कोलकाता के अनेक नाट्यगृहों में देशभक्तिपूर्ण नाटकों के मध्यांतर में यह गीत सामूहिक स्वर में गाया जाता था जिससे दर्शकों में राष्ट्रीय भावना का संचार होता। ब्रिटिश सरकार इस गीत की शक्ति से इतनी आशंकित थी कि उसने सार्वजनिक स्थलों पर इसके गायन पर प्रतिबंध लगाने के प्रयास किए परंतु उनके विरोध ने गीत की लोकप्रियता को और बढ़ाया ही।

बांग्ला रंगमंच के जनक माने जाने वाले गिरीश चंद्र घोष सहित अनेक नाटककारों ने ऐतिहासिक और पौराणिक विषयों पर आधारित नाटकों में राष्ट्रवादी प्रतीकों का समावेश किया जिनमें मातृभूमि की पूजा केंद्रीय भाव के रूप में उभरती थी। ''आनंदमठ'' पर आधारित नाट्य–रूपांतरण भी इसी दौर में मंचित हुए जिनमें संन्यासी विद्रोहियों के मुख से वन्दे मातरम् का सामूहिक गायन दर्शकों में देशभक्ति की लहर पैदा करता था। इन प्रस्तुतियों में गीत, संवाद और दृश्य–सज्जा का ऐसा समन्वय रचा जाता था कि रंगमंच स्वयं एक राजनीतिक अनुष्ठान बन जाता।

आगे चलकर 1940 के दशक में इंडियन पीपल्स थिएटर एसोसिएशन (इप्टा) जैसे प्रगतिशील रंगमंच आंदोलनों ने भी राष्ट्रीय गीतों की इस परंपरा को आत्मसात किया। यद्यपि उनका केंद्रीय भाव सामाजिक–आर्थिक न्याय की ओर उन्मुख हो गया। उत्पल दत्त और बलराज साहनी जैसे रंगकर्मियों ने अपने नाटकों में देशभक्ति और सामाजिक चेतना को साथ–साथ पिरोया जिसके कारण वन्दे मातरम् की मूल भावना नए राजनीतिक संदर्भों में भी प्रासंगिक बनी रही।

स्वतंत्रता के पश्चात हबीब तनवीर जैसे रंगकर्मियों ने लोक–रंगमंच की परंपराओं को पुनर्जीवित करते हुए राष्ट्र–निर्माण के प्रश्नों को नए ढंग से मंच पर उठाया और मातृभूमि के प्रति वही आदिम श्रद्धा किसी न किसी रूप में झलकती रही जो बंकिमचंद्र के मूल स्तोत्र में निहित थी। इस प्रकार वन्दे मातरम् की मूल भावना–मातृभूमि के प्रति समर्पण के साथ–साथ रंगमंच के बदलते सरोकारों के साथ भी विभिन्न रूपों में जीवित रही।

इतना ही नहीं, वन्दे मातरम् ने रंगमंच से आगे बढ़कर सिनेमा में भी अपनी जगह बनाई। सिनेमा ने 'वन्दे मातरम्' को और अधिक व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाया। भारतीय फिल्मों में यह गीत कभी स्वतंत्रता–आंदोलन की पृष्ठभूमि में सुनाई दिया, कभी सैनिकों और देशभक्तों के उत्साह का स्वर बना और कभी मातृभूमि के प्रति भावनात्मक समर्पण का प्रतीक। बड़े पर्दे पर जब किसी दृश्य में तिरंगा, बलिदान, संघर्ष और 'वन्दे मातरम्' का स्वर एक साथ उपस्थित होते तो दर्शक के भीतर देशभक्ति की भावना स्वतः जाग उठती।

इस भावना को जागृत रखने में सबसे पहले हेमेन गुप्ता निर्देशित फिल्म ''आनंदमठ'' (1952) मील का पत्थर सिद्ध हुई। इसमें हेमंत कुमार द्वारा संगीतबद्ध और लता मंगेशकर द्वारा गाया गया वन्दे मातरम् संस्करण इतना लोकप्रिय हुआ कि यह स्वतंत्र भारत में इस गीत की सर्वाधिक प्रचलित प्रस्तुतियों में से एक बन गया। इस फिल्म ने बंकिमचंद्र के मूल उपन्यास की कथा को दृश्य–माध्यम में पुनर्जीवित करते हुए नई पीढ़ी तक इस गीत की पहुँच बनाई। इसके पश्चात अनेक फिल्मों में वन्दे मातरम् के विभिन्न अंश या पूर्ण गीत का प्रयोग हुआ। स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती (1997) के अवसर पर ए.आर. रहमान का ''माँ तुझे सलाम'' संस्करण दूरदर्शन और निजी चैनलों पर व्यापक रूप से प्रसारित हुआ और घर–घर तक पहुंचा।

सिनेमा ने वन्दे मातरम् को न केवल संरक्षित किया बल्कि प्रत्येक पीढ़ी की सांगीतिक संवेदना के अनुरूप उसका पुनराविष्कार भी किया। मनोज कुमार जैसे निर्देशकों की फिल्मों ने भी (यद्यपि वे सीधे वन्दे मातरम् पर आधारित नहीं थीं) उसी मातृभूमि–भक्ति की भावना को अपने कथानकों में जीवंत रखा और परोक्ष रूप से इस गीत की सांस्कृतिक विरासत को आगे बढ़ाया। बाद के दशकों में बनी अनेक जीवनी–परक फिल्मों जैसे– नेताजी सुभाषचंद्र बोस पर आधारित फिल्में और स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि पर बनी अन्य कृतियों में भी वन्दे मातरम् के अंश पार्श्व–संगीत के रूप में प्रयुक्त हुए और यह गीत ऐतिहासिक सिनेमा की एक अनिवार्य ध्वनि–संपदा बन गया। दूरदर्शन के राष्ट्रीय प्रसारणों तथा सिनेमाघरों में फिल्म–प्रदर्शन से पूर्व बजाए जाने वाले देशभक्ति गीतों की सूची में भी वन्दे मातरम् नियमित रूप से शामिल रहा जिसने आम दर्शक के मन में इस गीत और सिनेमाई अनुभव के बीच एक स्थायी जुड़ाव बना दिया।

वन्दे मातरम् : सांस्कृतिक संबंध

कह सकते हैं कि वन्दे मातरम् की विशिष्टता यही है कि इसने भारतीय कलाओं के बीच एक अद्भुत अंतर्संबंध स्थापित किया। जहाँ साहित्य ने इसे भावनात्मक ढाँचा दिया वहीं संगीत ने उसे स्वर की गति प्रदान की,

चित्रकला ने उसे स्थायी दृश्य–रूप में ढाला और रंगमंच एवं सिनेमा ने उसे सामूहिक अनुभव में बदल दिया। यह चतुर्विध कलात्मक संगम भारतीय सौंदर्यशास्त्र की उस प्राचीन अवधारणा की याद दिलाता है जहाँ काव्य, संगीत, नृत्य और चित्र परस्पर अभिन्न माने जाते थे। ठीक वैसे ही जैसे प्राचीन भारत में नाट्यशास्त्र की परंपरा में सभी कलाएँ एक–दूसरे की पूरक थीं।

यदि साहित्य दृष्टि से देखें तो वन्दे मातरम् का छंद–विन्यास भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना उसका भाव–संसार। संस्कृत और बांग्ला के मिश्रित काव्य–रूप में रचित यह स्तोत्र अनुष्टुप छंद की लय पर आधारित है, जिसकी गेयता ने ही इसे संगीतकारों के लिए इतना सहज बना दिया। यही कारण है कि जहाँ अन्य देशभक्ति गीतों को स्वरबद्ध करने में संगीतकारों को शब्दों के साथ जूझना पड़ता है वहीं वन्दे मातरम् मानो स्वयं ही एक धुन की तरह प्रवाहित होता चला जाता है।

यह काव्य और संगीत के बीच की उस सहज एकात्मकता का प्रमाण है जिसकी चर्चा भरत मुनि के नाट्यशास्त्र में भी मिलती है जहाँ पद्य और स्वर को अलग–अलग नहीं बल्कि एक ही सृजनात्मक प्रक्रिया के दो पक्ष माना गया है। हालांकि मातृभूमि को देवी के रूप में देखने की यह दृष्टि भारतीय चिंतन में नई नहीं थी अपितु पृथ्वी को ''वसुंधरा'' या ''भूदेवी'' मानने की परंपरा वैदिक काल से चली आ रही है। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने इसी प्राचीन आध्यात्मिक चेतना को आधुनिक राष्ट्रवाद के साँचे में ढाला और यही कारण है कि यह गीत केवल राजनीतिक क्रांति का उद्घोष न होकर एक गहरी सांस्कृतिक निरंतरता का प्रतीक बन गया।

वन्दे मातरम् : समकालीन प्रासंगिकता

कला के दायरे में वन्दे मातरम् की उपस्थिति केवल चित्रफलक, मंच और परदे तक सीमित नहीं रही; इसने मूर्तिकला और सार्वजनिक स्मारकों में भी अपना स्थान बनाया। वाराणसी के भारत माता मंदिर से लेकर देश के अनेक शहरों में स्थापित भारत माता की प्रतिमाओं तक अवनींद्रनाथ की मूल परिकल्पना बार–बार त्रिआयामी रूप में गढ़ी गई। भारतीय डाक विभाग ने भी समय–समय पर बंकिमचंद्र, अरविंद घोष और स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े स्मारक डाक–टिकट जारी किए जिन पर वन्दे मातरम् से जुड़े प्रतीक अंकित रहे। दूरदर्शन पर प्रसारित स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस के कार्यक्रमों में यह गीत वर्षों से नियमित रूप से बजाया जाता रहा है। इस प्रकार यह गीत मुद्रित शब्द से निकलकर पत्थर, धातु और विद्युत–तरंगों तक–हर उस माध्यम में उतरा जिससे सामूहिक स्मृति का निर्माण होता है।

आज वन्दे मातरम् भारतीय सांस्कृतिक जीवन में जीवंत उपस्थिति रखता है–स्कूली प्रार्थना सभाओं से लेकर स्वतंत्रता दिवस समारोहों तक और शास्त्रीय गायकों की प्रस्तुतियों से लेकर समकालीन फ्यूजन बैंड्स के प्रयोगों तक। दृश्य कला में 'भारत माता' का रूपांकन आज भी सार्वजनिक स्मारकों और लोकप्रिय छवियों में दिखाई देता है। अंततः कह सकते हैं कि 'वन्दे मातरम्' की यही खासियत है कि यह कभी केवल शब्द बनकर नहीं रहा। यह रंग बनकर कैनवस पर उतरा, स्वर बनकर कंठ–कंठ में गूँजा, संवाद बनकर मंच पर गरजा और अंततः परदे पर एक राष्ट्र की स्मृति में सदा के लिए अंकित हो गया। इस गीत की सच्ची शक्ति यही है कि ये रचना हर कला–माध्यम से होकर गुजरती है और हर बार कुछ नया रूप धारण कर लेती है।

वन्दे मातरम् : राष्ट्रीय एकता, भाषा एवं संस्कृति का सेतु

–विभा शर्मा
कनिष्ठ वाणिज्यिक कार्यकारी
भारतीय कपास निगम लिमिटेड,
श्रीगंगानागर, राजस्थान

भारत केवल एक भौगोलिक सीमा में बसा राष्ट्र नहीं है, बल्कि यह विविधताओं के विराट उद्यान के समान है, जहाँ अनेक भाषाएँ, बोलियाँ, वेशभूषाएँ, परम्पराएँ, आस्थाएँ और जीवन–पद्धतियाँ एक साथ विकसित हुई हैं। इस विविधता के बीच जो तत्व भारत को एक सूत्र में बाँधता है, वह केवल संविधान या शासन व्यवस्था नहीं, बल्कि राष्ट्र के प्रति साझी भावनात्मक चेतना है। इसी चेतना को स्वर देने वाले कुछ अमर प्रतीकों में 'वन्दे मातरम्' का स्थान अत्यंत विशिष्ट है। यह केवल दो शब्दों का उद्घोष नहीं, बल्कि मातृभूमि के प्रति समर्पण, सम्मान, प्रेम और राष्ट्रीय आत्मगौरव का ऐसा मंत्र है जिसने भारतीय जनमानस को स्वतंत्रता संग्राम के कठिनतम क्षणों में भी साहस, आत्मबल और त्याग की प्रेरणा प्रदान की।

'वन्दे मातरम्' का शाब्दिक अर्थ है–''हे मातृभूमि! मैं तुम्हें नमन करता हूँ।'' किंतु इसका वास्तविक अर्थ इससे कहीं अधिक व्यापक है। यह उद्घोष भारत की मिट्टी, नदियों, पर्वतों, खेतों, वनों, संस्कृति, सभ्यता, ज्ञान परंपरा और करोड़ों भारतीयों की सामूहिक चेतना के प्रति श्रद्धा व्यक्त करता है। इसमें किसी एक भाषा, धर्म, जाति अथवा क्षेत्र की नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारत की आत्मा का स्पंदन सुनाई देता है।

आज जब वैश्वीकरण, डिजिटल संस्कृति और तीव्र सामाजिक परिवर्तन के दौर में अनेक नई चुनौतियाँ हमारे सामने हैं, तब 'वन्दे मातरम्' का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। यह हमें स्मरण कराता है कि आधुनिकता तभी सार्थक है जब उसकी जड़ें अपनी संस्कृति, अपनी भाषा और अपने राष्ट्रीय चरित्र से जुड़ी रहें। राष्ट्र की प्रगति केवल आर्थिक उपलब्धियों से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक आत्मविश्वास और सामाजिक एकता से भी मापी जाती है। इस दृष्टि से 'वन्दे मातरम्' राष्ट्रीय एकता, भाषा और संस्कृति को जोड़ने वाला सशक्त सेतु है।

वन्दे मातरम् की उत्पत्ति

उन्नीसवीं शताब्दी का भारत राजनीतिक दासता, सामाजिक चुनौतियों और मानसिक पराधीनता से जूझ रहा था। विदेशी शासन केवल भारतीय संसाधनों का दोहन नहीं कर रहा था, बल्कि भारतीय समाज के आत्मविश्वास को भी कमजोर करने का प्रयास कर रहा था। ऐसे समय में भारतीय साहित्य ने राष्ट्रचेतना के पुनर्जागरण का दायित्व संभाला।

इसी राष्ट्रीय जागरण की पृष्ठभूमि में महान साहित्यकार बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय ने 'वन्दे मातरम्' की रचना की। उन्होंने मातृभूमि को एक जीवंत, करुणामयी, समृद्ध और शक्ति स्वरूपा माता के रूप में चित्रित किया। यह कल्पना भारतीय सांस्कृतिक परंपरा से जुड़ी हुई थी, जहाँ पृथ्वी, नदियों, वृक्षों और प्रकृति को मातृस्वरूप मानने की भावना प्राचीन काल से विद्यमान रही है।

'वन्दे मातरम्' की सबसे बड़ा विशिष्टता यह है कि इसमें राष्ट्र को केवल राजनीतिक इकाई नहीं माना गया, बल्कि सांस्कृतिक चेतना के रूप में देखा गया। भारत की हर नदी, हर खेत, हर वन, हर भाषा और हर संस्कृति इस मातृरूप का अभिन्न अंग बन जाती है। यही कारण है कि यह गीत केवल साहित्यिक रचना नहीं रहा, बल्कि करोड़ों भारतीयों के हृदय की धड़कन बन गया।

स्वतंत्रता आंदोलन एवं वन्दे मातरम्

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अनेक ऐसे अवसर आए जब हथियारों से अधिक प्रभाव शब्दों ने डाला। 'वन्दे मातरम्' ऐसा ही शब्द–संगीत था जिसने लाखों भारतीयों को भय से मुक्त कर साहस के मार्ग पर अग्रसर किया। जब देश के विभिन्न प्रांतों में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध आंदोलन प्रारंभ हुए, तब 'वन्दे मातरम्' जनसभाओं, छात्र आंदोलनों, सत्याग्रहों और प्रभात फेरियों का प्रमुख उद्घोष बन गया। यह नारा सुनते ही लोगों के भीतर आत्मविश्वास जाग उठता था। अनेक स्वतंत्रता सेनानियों ने कारावास, लाठीचार्ज और यातनाओं का सामना करते हुए भी इसी उद्घोष को अपनी शक्ति बनाया।

इस उद्घोष की विशेषता यह थी कि इसे समझने के लिए किसी विशेष भाषा का ज्ञान आवश्यक नहीं था। बंगाल का युवक, पंजाब का किसान, गुजरात का व्यापारी, तमिलनाडु का विद्यार्थी अथवा राजस्थान का ग्रामीण–सभी इसके भाव को समान रूप से अनुभव करते थे। यही भावनात्मक एकता स्वतंत्रता आंदोलन की सबसे बड़ी शक्ति बनी।

स्वतंत्रता का संघर्ष केवल राजनीतिक अधिकार प्राप्त करने का आंदोलन नहीं था; वह आत्मसम्मान और सांस्कृतिक स्वाभिमान की पुनर्स्थापना का भी अभियान था। 'वन्दे मातरम्' ने इस अभियान को भावनात्मक आधार प्रदान किया। इसने भारतीयों को यह विश्वास दिलाया कि वे किसी पराधीन समाज के सदस्य नहीं, बल्कि एक गौरवशाली सभ्यता के उत्तराधिकारी हैं।

राष्ट्रीय एकता का प्रतीक

भारत की सबसे बड़ी विशेषता उसकी विविधता है। यहाँ सैकड़ों भाषाएँ और हजारों बोलियाँ बोली जाती हैं। अलग–अलग प्रदेशों की जीवनशैली, भोजन, वेशभूषा और लोकपरंपराएँ भिन्न हैं। यदि कोई तत्व इन विविधताओं को विरोध का कारण बनने से रोकता है, तो वह साझा राष्ट्रीय भावना है। 'वन्दे मातरम्' इसी राष्ट्रीय भावना का सशक्त प्रतीक है। यह किसी क्षेत्र विशेष का नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारत का गीत है। इसमें भाषा की सीमाएँ समाप्त हो जाती हैं और भावनाएँ प्रमुख हो जाती हैं। जब कोई भारतीय 'वन्दे मातरम्' कहता है, तब वह अपने राज्य, जाति, भाषा या धर्म से ऊपर उठकर केवल भारत का नागरिक बन जाता है।

आज भी राष्ट्रीय पर्वों, शैक्षणिक संस्थानों, सांस्कृतिक आयोजनों तथा अनेक सार्वजनिक अवसरों पर 'वन्दे मातरम्' का सामूहिक गायन लोगों में एकात्मता की भावना को प्रबल बनाता है। यह हमें स्मरण कराता है कि हमारी विविध पहचानें महत्वपूर्ण हैं, परंतु उनसे ऊपर हमारी राष्ट्रीय पहचान है। यही विचार भारत की लोकतांत्रिक और सांस्कृतिक शक्ति का आधार है।

राष्ट्रीय एकता केवल सीमाओं की सुरक्षा से नहीं बनती; वह नागरिकों के मन में परस्पर विश्वास, सम्मान और साझा उत्तरदायित्व की भावना से निर्मित होती है। 'वन्दे मातरम्' इस भावना को शब्द प्रदान करता है। यह हमें सिखाता है कि भारत की समृद्धि तभी संभव है जब उसकी सभी भाषाएँ, संस्कृतियाँ और समुदाय एक–दूसरे के सम्मान के साथ आगे बढ़ें।

भारतीय भाषाओं को जोड़ने वाला सेतु

भारत को यदि भाषाओं का उद्यान कहा जाए तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। यहाँ हिन्दी, संस्कृत, बांग्ला, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, मराठी, गुजराती, पंजाबी, असमिया, उड़िया, कश्मीरी, उर्दू सहित अनेक भाषाएँ और सैकड़ों बोलियाँ अपनी–अपनी सांस्कृतिक विरासत को समृद्ध करती हैं। प्रत्येक भाषा अपने भीतर इतिहास, साहित्य, लोकज्ञान और सामाजिक अनुभवों का अमूल्य भंडार समेटे हुए है। इन विविध भाषाओं के बीच संवाद और आत्मीयता का भाव ही भारत की वास्तविक शक्ति है।

'वन्दे मातरम्' इसी आत्मीयता का प्रतीक है। यद्यपि इसकी रचना बांग्ला और संस्कृतनिष्ठ शैली में हुई, परन्तु इसका संदेश किसी एक भाषा तक सीमित नहीं रहा। समय के साथ इसका अनुवाद और गायन भारत की अनेक भाषाओं में हुआ। इसके शब्दों का भाव प्रत्येक भारतीय के हृदय तक पहुँचा क्योंकि मातृभूमि के प्रति प्रेम किसी भाषा का मोहताज नहीं होता। यह गीत हमें यह भी सिखाता है कि भाषाओं में प्रतिस्पर्धा नहीं, बल्कि सहयोग होना चाहिए। कोई भी भाषा छोटी या बड़ी नहीं होती। प्रत्येक भाषा भारत की सांस्कृतिक धरोहर है। जब हम अपनी मातृभाषा का सम्मान करते हुए अन्य भारतीय भाषाओं का भी आदर करते हैं, तभी राष्ट्रीय एकता और अधिक सुदृढ़ होती है। 'वन्दे मातरम्' इसी समन्वयवादी दृष्टिकोण का प्रेरक है।

संस्कृति का प्रतीक

भारतीय संस्कृति का मूल स्वर समन्वय, सहिष्णुता, करुणा और प्रकृति के प्रति सम्मान रहा है। यहाँ विभिन्न परम्पराओं ने एक–दूसरे से सीखते हुए विकास किया है। यही कारण है कि भारत की संस्कृति समय के अनेक उतार–चढ़ाव के बाद भी अपनी मौलिकता बनाए रखने में सफल रही है। 'वन्दे मातरम्' इस सांस्कृतिक विरासत का कलात्मक चित्र प्रस्तुत करता है। इसमें मातृभूमि को हरे–भरे खेतों, शीतल पवन, निर्मल जल, सुगंधित वनस्पतियों और समृद्ध प्रकृति के रूप में देखा गया है। यह दृष्टि भारतीय संस्कृति की उस भावना को प्रकट करती है जिसमें प्रकृति और मानव के बीच गहरा संबंध माना गया है। यह गीत केवल भूमि की वंदना नहीं करता, बल्कि उन नैतिक मूल्यों का भी सम्मान करता है जिन पर भारतीय समाज का निर्माण हुआ है। सत्य, त्याग, सेवा, परिश्रम, सहिष्णुता और आत्मबल जैसे आदर्श इसकी भावभूमि में निहित हैं। यही मूल्य किसी भी राष्ट्र की वास्तविक सांस्कृतिक शक्ति होते हैं।

राष्ट्रीय चरित्र निर्माण करने वाला

किसी भी राष्ट्र की प्रगति केवल तकनीकी विकास से नहीं होती। उसके नागरिकों का चरित्र, अनुशासन, कर्तव्यनिष्ठा और सामाजिक उत्तरदायित्व ही उसकी सबसे बड़ी पूँजी होते हैं। 'वन्दे मातरम्' नागरिकों में राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करता है। जब कोई व्यक्ति अपनी मातृभूमि को माता के रूप में देखता

है, तब उसके मन में स्वाभाविक रूप से सेवा, संरक्षण और समर्पण का भाव उत्पन्न होता है। वह सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करता है, पर्यावरण का सम्मान करता है, कानून का पालन करता है और समाज के विकास में अपना योगदान देने का प्रयास करता है।

इस प्रकार 'वन्दे मातरम्' केवल भावनात्मक उद्घोष नहीं, बल्कि आदर्श नागरिक बनने की प्रेरणा भी है। आज भ्रष्टाचार, सामाजिक विभाजन, हिंसा और स्वार्थ जैसी चुनौतियों के बीच यह संदेश और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है। यदि प्रत्येक नागरिक राष्ट्रहित को व्यक्तिगत हित से ऊपर रखे, तो भारत का सर्वांगीण विकास अधिक तीव्र गति से संभव हो सकता है।

युवा पीढ़ी एवं वन्दे मातरम्

भारत विश्व के सबसे युवा देशों में से एक है। आने वाले वर्षों में राष्ट्र की दिशा और दशा का निर्धारण मुख्यतः युवाओं के हाथों में होगा। इसलिए आवश्यक है कि आधुनिक शिक्षा के साथ उनमें राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक आत्मविश्वास का भी विकास हो। आज का युवा विज्ञान, तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, अंतरिक्ष अनुसंधान और वैश्विक प्रतिस्पर्धा के युग में आगे बढ़ रहा है। यह सराहनीय है, किन्तु विकास तभी स्थायी होगा जब वह अपनी सांस्कृतिक जड़ों से भी जुड़ा रहे। 'वन्दे मातरम्' युवाओं को यही संदेश देता है कि आधुनिकता और परम्परा परस्पर विरोधी नहीं हैं। ज्ञान और प्रगति के साथ राष्ट्रीय मूल्यों का संरक्षण भी उतना ही आवश्यक है। विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में यदि छात्रों को 'वन्दे मातरम्' के ऐतिहासिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक महत्व से परिचित कराया जाए, तो उनमें देश के प्रति गर्व और उत्तरदायित्व की भावना और अधिक सुदृढ़ होगी।

वैश्वीकरण के युग में प्रासंगिकता

इक्कीसवीं शताब्दी वैश्वीकरण का युग है। आज विश्व के राष्ट्र एक–दूसरे से आर्थिक, तकनीकी और सांस्कृतिक रूप से जुड़ चुके हैं। ऐसे समय में अपनी राष्ट्रीय पहचान को सुरक्षित रखना प्रत्येक देश के लिए महत्वपूर्ण चुनौती है। वैश्विक नागरिक बनने का अर्थ अपनी संस्कृति को भूल जाना नहीं है। वास्तव में वही राष्ट्र विश्व में सम्मान प्राप्त करता है जो अपनी भाषा, संस्कृति और परम्पराओं पर गर्व करता है।

जापान, दक्षिण कोरिया और अनेक यूरोपीय देशों ने आधुनिक विकास के साथ अपनी सांस्कृतिक पहचान को भी सुरक्षित रखा है। भारत भी तभी विश्वगुरु बनने की दिशा में प्रभावी भूमिका निभा सकता है जब वह अपनी सांस्कृतिक आत्मा को सुदृढ़ बनाए रखे। 'वन्दे मातरम्' हमें यह प्रेरणा देता है कि हम विश्व के साथ कदम मिलाकर चलें, लेकिन अपनी जड़ों को कभी न भूलें। यह गीत हमें स्मरण कराता है कि राष्ट्रीय अस्मिता और वैश्विक सहभागिता एक–दूसरे की पूरक हो सकती हैं।

समकालीन संदर्भ

आज भारत विज्ञान, अंतरिक्ष, डिजिटल तकनीक, कृषि, शिक्षा, खेल और उद्यमिता के क्षेत्र में निरंतर नई उपलब्धियाँ प्राप्त कर रहा है। इन उपलब्धियों के साथ–साथ सामाजिक समरसता, भाषाई सम्मान और

सांस्कृतिक एकता को भी समान महत्व देना आवश्यक है। 'वन्दे मातरम्' आज भी हमें यह संदेश देता है कि किसी भी प्रकार का क्षेत्रवाद, भाषावाद, जातिवाद अथवा संकीर्णता राष्ट्रहित के अनुकूल नहीं है।

जब तक भारत का प्रत्येक नागरिक स्वयं को पहले भारतीय और उसके बाद अन्य किसी पहचान से जोड़ेगा, तब तक राष्ट्रीय एकता की भावना अक्षुण्ण बनी रहेगी। इस प्रकार 'वन्दे मातरम्' केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए प्रेरणा का स्रोत है। यह राष्ट्र की आत्मा को जागृत रखने वाला ऐसा सांस्कृतिक मंत्र है जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी भारतीयों को एक सूत्र में बाँधता रहेगा।

राष्ट्रीय एकता के समक्ष चुनौतियाँ और वन्दे मातरम् का संदेश

भारत एक लोकतांत्रिक और बहुलतावादी राष्ट्र है। यहाँ विचारों, भाषाओं, धर्मों और संस्कृतियों की विविधता हमारी सबसे बड़ी शक्ति है। किन्तु समय–समय पर क्षेत्रवाद, भाषावाद, जातीय वैमनस्य, सांप्रदायिक तनाव, सामाजिक असमानता तथा डिजिटल माध्यमों से फैलने वाली भ्रामक सूचनाएँ राष्ट्रीय एकता के लिए चुनौती बन जाती हैं। ऐसी परिस्थितियों में केवल कानून पर्याप्त नहीं होता; नागरिकों के मन में राष्ट्र के प्रति गहरी आत्मीयता और उत्तरदायित्व की भावना भी आवश्यक होती है। 'वन्दे मातरम्' इसी आत्मीयता का संदेश देता है। जब हम भारत को केवल भूमि का टुकड़ा नहीं, बल्कि अपनी मातृभूमि के रूप में देखते हैं, तब विभाजनकारी प्रवृत्तियों के लिए हमारे मन में स्थान नहीं बचता। मातृभूमि के प्रति प्रेम हमें यह सिखाता है कि मतभेद हो सकते हैं, परन्तु मनभेद नहीं होने चाहिए। विविधता का सम्मान करते हुए एकता बनाए रखना ही भारतीयता का वास्तविक स्वरूप है।

शिक्षा और संस्कारों में वन्दे मातरम् का महत्व

शिक्षा का उद्देश्य केवल रोजगार प्राप्त करना नहीं, बल्कि श्रेष्ठ नागरिक तैयार करना भी है। यदि विद्यार्थियों में प्रारम्भ से ही देशप्रेम, सामाजिक उत्तरदायित्व, अनुशासन, सहिष्णुता और संवैधानिक मूल्यों के प्रति सम्मान विकसित किया जाए, तो राष्ट्र का भविष्य और अधिक उज्ज्वल होगा। 'वन्दे मातरम्' का अध्ययन केवल एक गीत के रूप में नहीं, बल्कि भारतीय इतिहास, साहित्य, संस्कृति और राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में किया जाना चाहिए। इससे नई पीढ़ी समझ सकेगी कि स्वतंत्रता केवल एक ऐतिहासिक घटना नहीं, बल्कि अनगिनत बलिदानों का परिणाम है। यह समझ उन्हें अपने अधिकारों के साथ–साथ अपने कर्तव्यों का भी बोध कराएगी। परिवार, विद्यालय और समाज यदि मिलकर बच्चों में राष्ट्रप्रेम के साथ मानवीय संवेदनाएँ भी विकसित करें, तो 'वन्दे मातरम्' का संदेश व्यवहार में भी दिखाई देगा। तब यह उद्घोष केवल औपचारिकता नहीं रहेगा, बल्कि जीवन का आदर्श बन जाएगा।

पर्यावरण संरक्षण और मातृभूमि के प्रति दायित्व

'वन्दे मातरम्' का भाव केवल राष्ट्रप्रेम तक सीमित नहीं है, बल्कि प्रकृति के प्रति श्रद्धा भी सिखाता है। यदि मातृभूमि हमारी माता है, तो उसके पर्वत, नदियाँ, वन, खेत और जैव–विविधता भी हमारी साझा धरोहर हैं। इसलिए पर्यावरण संरक्षण भी राष्ट्रसेवा का ही एक रूप है। आज जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, जल संकट

और वनों की कटाई जैसी समस्याएँ पूरे विश्व के सामने हैं। भारत के नागरिकों का दायित्व है कि वे स्वच्छता, जल संरक्षण, वृक्षारोपण और प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग को अपने जीवन का हिस्सा बनाएँ। मातृभूमि की रक्षा केवल सीमाओं की रक्षा से नहीं, बल्कि उसके प्राकृतिक वैभव को सुरक्षित रखने से भी होती है।

विकसित भारत के निर्माण में वन्दे मातरम् का महत्व

आज भारत आत्मनिर्भरता, नवाचार, वैज्ञानिक अनुसंधान, डिजिटल प्रगति, कृषि विकास, महिला सशक्तिकरण और वैश्विक नेतृत्व की दिशा में निरंतर आगे बढ़ रहा है। इन उपलब्धियों के पीछे करोड़ों नागरिकों का परिश्रम और राष्ट्र के प्रति समर्पण निहित है। 'वन्दे मातरम्' हमें यह प्रेरणा देता है कि हम अपने–अपने क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करें और अपने ज्ञान, कौशल तथा प्रतिभा का उपयोग राष्ट्रहित में करें।

एक शिक्षक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देकर, एक किसान अन्न उत्पादन बढ़ाकर, एक वैज्ञानिक नवाचार करके, एक चिकित्सक सेवा देकर, एक सैनिक सीमा की रक्षा करके तथा एक सामान्य नागरिक ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का पालन करके राष्ट्र निर्माण में योगदान दे सकता है। राष्ट्रप्रेम केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि कर्मप्रधान जीवन का आधार होना चाहिए। यही 'वन्दे मातरम्' की वास्तविक भावना है।

युवाओं की भूमिका

भारत विश्व के सबसे युवा देशों में से एक है। यह जनसांख्यिकीय शक्ति तभी राष्ट्र की सबसे बड़ी पूँजी बन सकती है जब युवा वर्ग अपने ज्ञान, ऊर्जा और नवाचार को राष्ट्रीय विकास की दिशा में समर्पित करे। 'वन्दे मातरम्' का संदेश युवाओं को केवल भावनात्मक राष्ट्रप्रेम तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उन्हें राष्ट्रनिर्माण में सक्रिय सहभागिता के लिए प्रेरित करता है। सच्चा राष्ट्रप्रेम केवल शब्दों में नहीं, बल्कि ईमानदार कर्म, अनुशासन, नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व में दिखाई देता है।

आज का युवा विज्ञान, प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, उद्यमिता, खेल, कला तथा अनुसंधान जैसे अनेक क्षेत्रों में भारत का भविष्य गढ़ रहा है। यदि वह अपनी प्रतिभा का उपयोग केवल व्यक्तिगत सफलता तक सीमित न रखकर समाज और राष्ट्र के कल्याण के लिए भी करे, तो भारत विकास के नए आयाम स्थापित कर सकता है। प्रत्येक युवा अपने क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त कर राष्ट्र की प्रगति में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकता है। युवाओं का यह भी दायित्व है कि वे भारत की भाषाई और सांस्कृतिक विविधता का सम्मान करें। किसी भी भाषा, धर्म, जाति अथवा क्षेत्र के प्रति भेदभाव की भावना राष्ट्रीय एकता को कमजोर करती है। इसके विपरीत परस्पर सम्मान, सहयोग और संवाद की संस्कृति भारत की लोकतांत्रिक परंपरा को सुदृढ़ बनाती है। 'वन्दे मातरम्' का मूल संदेश भी यही है कि विविधताओं के मध्य एकता ही भारत की सबसे बड़ी पहचान है। डिजिटल युग में युवाओं की जिम्मेदारी और अधिक बढ़ गई है। उन्हें सामाजिक मीडिया का उपयोग सकारात्मक विचारों के प्रसार, सत्य जानकारी साझा करने और समाज में सद्भाव बनाए रखने के लिए करना चाहिए। अफवाहों, घृणा और विभाजनकारी विचारों से दूर रहकर वे एक जागरूक एवं उत्तरदायी नागरिक का आदर्श प्रस्तुत कर सकते हैं।

इसके साथ ही पर्यावरण संरक्षण, स्वच्छता, महिला सम्मान, सामाजिक सेवा तथा संवैधानिक मूल्यों के प्रति निष्ठा जैसे कार्यों में सक्रिय भागीदारी भी सच्चे राष्ट्रप्रेम का परिचायक है। निस्संदेह, यदि भारत का युवा वर्ग 'वन्दे मातरम्' की भावना को अपने विचारों, व्यवहार और कर्म में उतार ले, तो वह केवल अपने जीवन को ही नहीं, बल्कि राष्ट्र के भविष्य को भी नई ऊँचाइयों तक पहुँचा सकता है। ऐसे जागरूक, चरित्रवान और कर्तव्यनिष्ठ युवा ही विकसित, समरस और आत्मनिर्भर भारत के वास्तविक निर्माता सिद्ध होंगे।

'वन्दे मातरम्' भारतीय राष्ट्रजीवन का अमूल्य सांस्कृतिक प्रतीक है। यह केवल एक गीत या उद्घोष नहीं, बल्कि भारत की आत्मा का स्वर है। इसमें राष्ट्रीय एकता की शक्ति, भाषाई समन्वय की भावना, सांस्कृतिक गौरव की अनुभूति और मातृभूमि के प्रति अटूट समर्पण का संदेश निहित है। इसने स्वतंत्रता संग्राम में जन–जन को प्रेरित किया और आज भी प्रत्येक भारतीय को अपने राष्ट्र के प्रति कर्तव्यनिष्ठ रहने की प्रेरणा देता है। भारत की वास्तविक शक्ति उसकी विविधता में निहित एकता है। जब विभिन्न भाषाएँ परस्पर सम्मान के साथ विकसित हों, विभिन्न संस्कृतियाँ एक–दूसरे को समृद्ध करें और प्रत्येक नागरिक स्वयं को सबसे पहले भारतीय माने, तभी 'वन्दे मातरम्' का वास्तविक अर्थ साकार होगा।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इस उद्घोष को केवल शब्दों तक सीमित न रखें, बल्कि अपने आचरण में भी उतारें। ईमानदारी, परिश्रम, सामाजिक समरसता, पर्यावरण संरक्षण, महिला सम्मान, राष्ट्रीय संपत्ति की रक्षा और संविधान के प्रति निष्ठा–ये सभी 'वन्दे मातरम्' की भावना के व्यावहारिक रूप हैं। अंततः कहा जा सकता है कि 'वन्दे मातरम्' अतीत की गौरवगाथा, वर्तमान की प्रेरणा और भविष्य की दिशा–तीनों का अद्भुत संगम है। जब तक भारत की धरती पर राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक गौरव और मातृभूमि के प्रति प्रेम जीवित रहेगा, तब तक 'वन्दे मातरम्' की अमर ध्वनि प्रत्येक भारतीय के हृदय में गूँजती रहेगी और राष्ट्र को एकता, प्रगति तथा मानवीय मूल्यों के पथ पर आगे बढ़ाती रहेगी।

''राष्ट्र की सबसे बड़ी शक्ति उसकी सेना नहीं, उसके जागरूक और संस्कारित नागरिक होते हैं; और ऐसे नागरिकों की चेतना को जागृत करने वाली अमर पुकार है– 'वन्दे मातरम्'।''

भारतीय भाषाओं में वन्दे मातरम् की अभिव्यक्ति

—**हरे राम मिश्र**
सहायक कमांडेंट (सेवानिवृत्त)
केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल

'वन्दे मातरम्' केवल दो शब्दों का मेल नहीं है, बल्कि यह भारत की शाश्वत आत्मा, देश के करोड़ों लोगों की गहरी देशभक्ति और हमारी सांस्कृतिक पहचान का वह चमकता हुआ महामंत्र है, जिसने गुलामी के घने अंधेरे को खत्म करके आजादी के नए सवेरे का रास्ता साफ किया। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की अमर लेखनी से निकला यह राष्ट्रीय गीत मूल रूप से संस्कृत और बांग्ला भाषा के बेहद सुंदर संगम से बना है। इसकी इसी खास भाषाई बनावट के कारण यह गीत किसी एक राज्य या प्रांत की सीमा में बंधकर नहीं रहा, बल्कि पूरे भारत की भाषाई चेतना का सबसे बड़ा आधार बन गया।

भारत एक ऐसा देश है जहाँ थोड़ी—थोड़ी दूरी पर भाषा और संस्कृति बदल जाती है। हमारे यहाँ कहा भी गया है कि ''कोस—कोस पर पानी बदले, चार कोस पर बानी''। इतने विविधता से भरे देश में 'वन्दे मातरम्' ने एक ऐसी व्यापक और सर्वमान्य भाषा का रूप ले लिया, जिसने अलग—अलग राज्यों के लोगों को राष्ट्रभक्ति के एक ही धागे में पिरो दिया। विभिन्न भारतीय भाषाओं में इस पावन मंत्र की अभिव्यक्ति, इसके काव्यानुवाद और इसके भावात्मक प्रसार का अध्ययन करना वास्तव में भारत की भाषाई एकता और हमारे सांस्कृतिक संबंधों के गौरवशाली इतिहास को फिर से जीने जैसा है।

इस महान राष्ट्रीय उद्घोष ने देश की सभी प्रमुख भाषाओं के साहित्य को गहराई से प्रभावित किया। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान जब हिंदी, तमिल, तेलुगु, मराठी, गुजराती और कन्नड़ जैसी भाषाओं के लेखकों और कवियों ने अपने साहित्य की रचना की, तब 'वन्दे मातरम्' उनके लिए सबसे बड़ी प्रेरणा बना। इस गीत ने उत्तर से लेकर दक्षिण तक और पूर्व से लेकर पश्चिम तक पूरे देश में वैचारिक क्रांति की एक नई लहर पैदा कर दी थी। इसने यह साबित किया कि भले ही हमारी भाषाएं अलग हों, लेकिन देश को लेकर हमारी भावना और हमारी प्रतिज्ञा बिल्कुल एक है।

संस्कृत और बांग्ला भाषा के शब्दों का अनुपम समन्वय

बंकिमचंद्र ने जब अपने उपन्यास 'आनंदमठ' में इस गीत को लिखा, तब उनके मन में भारत माता का वह पावन रूप तैर रहा था जो 'सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्' जैसी प्राकृतिक सुंदरता से सजा हुआ था। इस गीत की शुरुआती लाइनें पूरी तरह से संस्कृत के शुद्ध तत्सम शब्दों से सजी हैं। 'शस्यश्यामलाम्', 'शुभ्रज्योत्स्ना', 'पुलकितयामिनीम्' और 'फुल्लकुसुमित द्रुमदल शोभिनीम्' जैसे शब्द न केवल कविता की सुंदरता को बढ़ाते हैं, बल्कि वे भारत की उस मूल भाषा से जुड़े हैं जो प्राचीन काल से देश के विचारों का मुख्य आधार रही है। संस्कृत शब्दों के इसी अधिक प्रयोग के कारण देश के सुदूर दक्षिण में स्थित तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम जैसी भाषाओं के बोलने वालों को भी यह गीत बिल्कुल पराया नहीं लगा, क्योंकि इन भाषाओं के साहित्य में भी संस्कृत के शब्द गहरे रचे—बसे थे।

गीत के दूसरे हिस्से में जब कवि 'के बॉले माँ तुमि अबले' जैसी सरल बांग्ला भाषा की लाइनों का प्रयोग करते हैं, तब वे देश की इस वंदना को कठिन साहित्य के ऊँचे शिखर से उतारकर आम जनता की भावनाओं और जनमानस के बीच ले आते हैं। भाषा का यही अनोखा तालमेल था जिसने इस पूरी रचना को एक साथ बेहद महान, आदरणीय और साथ ही साथ आम लोगों के लिए बहुत आसान और समझने योग्य बना दिया। इस भाषाई संतुलन ने पूरे भारत को एक सूत्र में बांधने का काम किया।

हिंदी साहित्य और वन्दे मातरम्: राष्ट्रीय चेतना का नया सवेरा

आधुनिक हिंदी साहित्य का जन्म और उसका विकास भारत के आजादी के आंदोलन के साथ–साथ हुआ है। भारतेंदु हरिश्चंद्र से लेकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और छायावाद के महान कवियों तक, सभी हिंदी लेखकों ने 'वन्दे मातरम्' की मूल भावना को अपनी कविताओं का मुख्य आधार बनाया। भारतेंदु युग में जब हमारा देश अपनी खोई हुई पहचान को खोज रहा था, तब इस महामंत्र ने हिंदी लेखकों को सोचने का एक नया नजरिया दिया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस गीत के सुंदर भावों और देश के लिए इसकी उपयोगिता को समझते हुए इसके सीधे, सरल और शुद्ध हिंदी अनुवादों को बहुत बढ़ावा दिया।

हिंदी की राष्ट्रीय काव्यधारा के प्रमुख कवि पंडित माखनलाल चतुर्वेदी की प्रसिद्ध कविता 'पुष्प की अभिलाषा' हो या सुभद्रा कुमारी चौहान की 'झांसी की रानी', इन सभी अमर रचनाओं के अंदर 'वन्दे मातरम्' की वही गूँज सुनाई देती है जो देश के लिए सब कुछ न्यौछावर करने की सीख देती है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने जब अपनी प्रसिद्ध किताब 'भारत–भारती' लिखी, तो उन्होंने मानो बंकिमचंद्र के इसी छोटे से मंत्र को एक बहुत बड़ी कहानी के रूप में देश के सामने रख दिया। हिंदी साहित्य में 'वन्दे मातरम्' केवल एक भाषा से दूसरी भाषा में किया गया अनुवाद बनकर नहीं रहा, बल्कि वह पूरे उत्तर भारत की सोच को जगाने वाली आवाज बन गया। इसी आवाज ने हिंदी भाषी क्षेत्रों के किसानों, मजदूरों और युवाओं के दिलों में जोश भरा और उन्हें ब्रिटिश शासन के खिलाफ मजबूती से खड़े होने की हिम्मत दी। इस प्रकार इस गीत ने आम जनता को देश की आजादी के लिए एकजुट करने में सबसे बड़ी भूमिका निभाई।

दक्षिण भारत में भाषाई मिलन: महाकवि भारती और सुदूर दक्षिण की गूँज

आमतौर पर लोगों के मन में यह गलतफहमी रहती है कि उत्तर और दक्षिण भारत के बीच भाषा की बहुत बड़ी खाई है, लेकिन 'वन्दे मातरम्' ने इस धारणा को पूरी तरह से तोड़ दिया। सुदूर दक्षिण के तमिल भाषी इलाके में इस मंत्र को आजादी की मशाल बनाने का पूरा श्रेय महाकवि सुब्रमण्यम भारती को जाता है। भारती जी ने बंकिमचंद्र के इस गीत का तमिल भाषा में ऐसा ओजस्वी और सुंदर अनुवाद किया, जिसने दक्षिण के समुद्री तटों से लेकर मदुरै के ऐतिहासिक मंदिरों तक देशभक्ति की एक अनोखी लहर पैदा कर दी। उन्होंने 'वन्दे मातरम्' को केवल एक साधारण गीत नहीं माना, बल्कि उसे अपनी पूजनीय शक्ति माता का साक्षात् रूप समझा। उनके तमिल अनुवाद में वह ताकत और ऊर्जा थी जो ब्रिटिश शासकों को डराने के लिए काफी थी।

इसी तरह आंध्र प्रदेश की तेलुगु भूमि पर कंदुकूरी वीरेशलिंगम और गड़िचेर्ला हरि सर्वोत्तम राव जैसे विद्वानों ने इस मंत्र को अपनी पत्रिकाओं और जनसभाओं की मुख्य आवाज बनाया। तेलुगु साहित्य में 'वन्दे मातरम्' की गूँज वहाँ के पारंपरिक लोकगीतों और कविताओं के माध्यम से फैली, जिससे यह गीत वहाँ के स्वतंत्रता सेनानियों का सबसे बड़ा संबल बन गया।

कन्नड़ और मलयालम साहित्य में भी राष्ट्रकवि एम. गोविंद पाई और वल्लथोल नारायण मेनन ने अपनी कविताओं में 'वन्दे मातरम्' की मूल भावनाओं को शामिल किया। इन कवियों ने यह साबित कर दिया कि भले ही हमारे लिखने की लिपि और बोलने की भाषाएं अलग–अलग हों, लेकिन अपने देश के लिए धड़कने वाले दिल और समर्पण की भावना पूरे भारत में बिल्कुल एक जैसी है। इस प्रकार इस गीत ने उत्तर और दक्षिण को जोड़ने वाले एक मजबूत पुल का काम किया।

पश्चिम भारत में राष्ट्रभक्ति का स्वरः मराठी और गुजराती साहित्य

मराठी साहित्य और संस्कृति हमेशा से ही छत्रपति शिवाजी महाराज की वीरता और महान संतों की ज्ञान परंपरा से प्रेरित रही है। जब लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने अपने अखबारों 'केसरी' और 'मराठा' के जरिए आजादी की लड़ाई को आम जनता का आंदोलन बनाया, तब 'वन्दे मातरम्' महाराष्ट्र के क्रांतिकारियों का मुख्य नारा बन गया। मराठी साहित्य में इस गीत का प्रभाव 'पोवाडा' (वीर रस के लोकगीत) और 'लावणी' जैसी मशहूर लोक शैलियों में साफ तौर पर देखा गया। वीर सावरकर ने जब अपनी प्रसिद्ध पंक्तियाँ 'ने मजसी ने परत मातृभूमीला' (मुझे वापस मेरी मातृभूमि ले चलो) लिखीं, तब उनके दिल में बंकिमचंद्र की उसी भारत माता के प्रति सम्मान और उनसे मिलने की तड़प धड़क रही थी।

दूसरी तरफ गुजराती साहित्य में महात्मा गांधी के आने और उनके सत्याग्रह आंदोलन के साथ 'वन्दे मातरम्' की भावना एक नए रूप में सामने आई। झवेरचंद मेघाणी, जिन्हें गांधी जी ने 'राष्ट्रीय शायर' का खिताब दिया था, उन्होंने अपनी कविताओं और रचनाओं के माध्यम से इस मंत्र को गुजरात के हर नागरिक की जुबान पर ला दिया। गुजरात में सुबह–सुबह निकलने वाली प्रभात फेरियों में गाए जाने वाले 'वन्दे मातरम्' के सुर आत्मबल, अहिंसा और देश के प्रति गहरी श्रद्धा का सबसे बड़ा प्रतीक बनकर उभरे। इस तरह देश के पश्चिमी हिस्से ने भी इस गीत को अपनी लोक–संस्कृति का हिस्सा बना लिया।

उर्दू साहित्य और साझी संस्कृति की अभिव्यक्ति

यह बहुत ही दिलचस्प और जरूरी ऐतिहासिक सच है कि 'वन्दे मातरम्' के प्रभाव से उर्दू साहित्य भी दूर नहीं रहा। भारत की मिली–जुली संस्कृति (गंगा–जमुनी तहजीब) के असर के कारण कई प्रगतिशील उर्दू शायरों और लेखकों ने इस मंत्र की मूल भावना को खुले दिल से अपनाया। उर्दू भाषा के मिजाज के हिसाब से इसका मतलब 'ऐ मादरे वतन, मैं तुझे सलाम करता हूँ' या 'मातृभूमि की वंदना' के रूप में निकाला गया।

बिस्मिल अजीमाबादी की मशहूर रचना 'सरफरोशी की तमन्ना' हो या अल्लामा इकबाल का लिखा 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा', इन सभी रचनाओं की सोच उसी मातृभूमि की तारीफ से जुड़ी है जिसकी

शुरुआत बंकिमचंद्र ने 'वन्दे मातरम्' के जरिए की थी। उर्दू के कई अखबारों और पत्रिकाओं ने इस गीत की अहमियत को समझा और देश के लिए इसके महत्व पर कई लेख लिखे। इसने यह साफ कर दिया कि देशभक्ति की कोई एक धार्मिक या भाषाई सीमा नहीं होती और आजादी की भावना सबके लिए एक थी।

संगीत, रंगमंच और कलाओं में भाषाई समन्वय

किताबों के पन्नों से बाहर निकलकर 'वन्दे मातरम्' ने जब संगीत और नाटक की दुनिया में कदम रखा, तो एक नया इतिहास बन गया। संगीत की अपनी एक ऐसी भाषा होती है जो शब्दों के बंधनों को तोड़कर सीधे दिल को छू लेती है। गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर ने 1896 के कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में खुद इस गीत की धुन 'राग देस' में बनाई और इसे अपनी सुरीली आवाज में गाया। उनके इस संगीतात्मक रूप ने देश की सभी भाषाई सीमाओं को पार करते हुए पूरे भारत में अपनी पहचान बनाई।

आजादी मिलने के बाद, पंडित ओंकारनाथ ठाकुर ने देश की संसद के केंद्रीय कक्ष में अपनी ओजस्वी शास्त्रीय गायकी से इस गीत को गाया। उनके इस गायन ने देश की अलग–अलग भाषाओं के लोगों को एक ही सुर में बांध दिया। बाद में, लता मंगेशकर की सुरीली और अमर आवाज में 'आनंदमठ' फिल्म के लिए गाया गया यह गीत देश के कोने–कोने में गूँज उठा। चाहे असम के चाय बागान हों या पंजाब के हरे–भरे खेत, यह हर भारतीय की जुबान पर चढ़ गया।

आधुनिक दौर में संगीतकार ए.आर. रहमान के 'वन्दे मातरम्–मां तुझे सलाम' एलबम ने तो भाषाओं को जोड़ने का एक अनोखा रिकॉर्ड बना दिया। इस नए रूप में हिंदी, तमिल और अंग्रेजी के शब्दों का ऐसा बेहतरीन तालमेल था जिसने देश की उस युवा पीढ़ी को भी अपनी मिट्टी से जोड़ दिया, जो आधुनिकता के रंग में रंगकर अपनी भाषाई विरासत को भूल रही थी। इस प्रकार संगीत के माध्यम से इस गीत ने पूरे भारत को एकजुट करने का काम किया।

भाषाई एकात्मता और शाश्वत सांस्कृतिक सेतु

आखिर में, भारतीय भाषाओं में 'वन्दे मातरम्' के प्रसार का इतिहास असल में भारत के एक मजबूत देश के रूप में वैचारिक और सांस्कृतिक रूप से दोबारा खड़े होने की कहानी है। अलग–अलग राज्यों के लेखकों, कवियों और विचारकों ने अपनी–अपनी मातृभाषा की सुंदरता और शैली के हिसाब से इस महामंत्र को अपनाया, उसे और बेहतर बनाया तथा आम जनता के दिलों तक पहुँचाया।

वन्दे मातरम् गीत इस बात का जीता–जागता और प्रत्यक्ष प्रमाण है कि भारत की भाषाएँ ऊपर से देखने में भले ही अलग लगती हों, उनकी लिखने की लिपियाँ अलग हों और उनके बोलने–उच्चारण करने के तौर–तरीके भी भिन्न हों, लेकिन जब बात हमारे राष्ट्र की पहचान, उसके मान–सम्मान और उसके गौरव की आती है, तो उन सभी भाषाओं के भीतर से निकलने वाली आवाज, उनका मुख्य विचार और उनकी भावना की गहराई बिल्कुल एक जैसी होती है।

'वन्दे मातरम्' ने भारत की विभिन्न भाषाओं के बीच एक ऐसा मजबूत और कभी न टूटने वाला सांस्कृतिक पुल बनाया है, जो आने वाले कई युगों तक हमारे देश की ''विविधता में एकता'' के मूल मंत्र को हमेशा सुरक्षित और अटूट बनाए रखेगा। यह पावन गीत आज के आधुनिक भारत में भी उतना ही जरूरी, जिंदा और जोश भरने वाला है, जितना आजादी के आंदोलन के कठिन और तूफानी दिनों के दौरान था।

संदर्भः

1. देवराज उपाध्यायः सन् 1974; आधुनिक हिंदी कथा साहित्य और बंकिमचंद्र
2. मैथिलीशरण गुप्तः सन् 1912; भारत–भारती
3. अरविंद घोषः सन् 1909; वन्दे मातरम् (साप्ताहिक पत्र के लेखों का संग्रह)
4. बंकिमचंद्र चट्टोपाध्यायः सन् 1882; आनंदमठ
5. बाल गंगाधर तिलक (संपादक): सन् 1881; केसरी (मराठी) एवं द मराठा (अंग्रेजी)
6. महावीर प्रसाद द्विवेदी (संपादक): सन् 1900; सरस्वती (मासिक पत्रिका)
7. नागरीप्रचारिणी सभाः सन् 1896; नागरीप्रचारिणी पत्रिका
8. सुब्रमण्यम भारतीः सन् 1908; स्वदेश गीतंगल (तमिल काव्य संग्रह)

वन्दे मातरम् और राष्ट्रीय चेतना का परिप्रेक्ष्य

–डॉ. नवलकिशोर भाभड़ा
प्रोफेसर (सेवानिवृत्त)
हिंदी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, अजमेर

'वन्दे मातरम्' मात्र एक साहित्यिक रचना या गीत नहीं है, यह भारत की अखंड एवं एकात्म राष्ट्रीय चेतना का जीवंत एवं जागृत महामंत्र है, इसमें हमारे देश का बहुरंगी प्राकृतिक सौंदर्य और सनातन संस्कृति रूपायित होती है। इसमें हमारे देश की मिट्टी की गंध रची–बसी है। इसमें हमारे देश के दिल की धड़कन है, उसकी आत्मा के स्पंदन की अनुगूंज है। विख्यात भारतीय रचनाकार श्री बंकिमचंद्र चटर्जी द्वारा रचित एवं उनके बांग्ला उपन्यास 'आनंदमठ' में प्रकाशित इस महान एवं ऐतिहासिक गीत, 'वन्दे मातरम्' की 150वीं जयंती आज हम प्रेरणास्फूर्त गर्व और गौरव भाव के साथ पूरे देश में मना रहे हैं। 'वन्दे मातरम्' हमारा संविधानसम्मत राष्ट्रीय गीत है जो हमारे स्वाधीनता आंदोलन का ऊर्जास्वित उद्‌घोष और आजादी के दीवानों में प्राण फूंकने वाला शंखनाद बन गया था। 'वन्दे मातरम्' गीत में भारत भूमि की माता के रूप में वंदना की गई है। इस गीत की मातृभूमि वंदना हमारी सनातन संस्कृति एवं राष्ट्रीय चेतना की परंपरा का अभिन्न अंग है।

अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में कहा गया है, 'माता भूमि, पुत्रोअहं पृथिव्याः' भूमि माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ। इसीलिए आज भी हम 'वन्दे मातरम्' गाकर भारत माता का स्तवन करते हैं। यद्यपि धरती के बिना राष्ट्र की कल्पना नहीं की जा सकती, लेकिन धरती व आकाश का फैलाव मात्र राष्ट्र नहीं है। इसलिए डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने राष्ट्र के तीन अंग माने हैं– धरती, उस पर रहने वाले जन और जन की संस्कृति, तीनों से मिलकर राष्ट्र बनता है। अतः भारतीय मनीषा भूमि को माता मानती है। ऋग्वेद में भी मातृभूमि के प्रति लगाव व्यक्त हुआ है–'उपसर्प मातरं भूमिम्' अर्थात् अपनी मातृभूमि के पास चलो या रहो। मातृभूमि के प्रति यह लगाव ही राष्ट्रीय भावना का प्रेरणापरक संबल है। राष्ट्रप्रेम में अपनी मातृभूमि के कण–कण से प्यार होता है– अपनी भूमि, जल, नदियाँ, वृक्ष, वनस्पति, पर्वत श्रृंखलाएं, चांदनी, धूप, मलयज शीतल हवा के झकोरे, सब। 'वन्दे मातरम्' में भी अपनी मातृभूमि के बहुविध, सुरम्य सौंदर्य और वैशिष्ट्य का वंदन है।

वैदिक परंपरा में हरे केशवाले वृक्षों को 'पशुपति' माना गया है– 'वृक्षेम्यः हरिकेशेभ्यः पशूनां पतये नमः'। इसलिए हमारे यहाँ पीपल और तुलसी के वृक्ष को पूजा सहेजा जाता है। ऋग्वेद के 'नदी सूक्त' में नदियों का स्तवन किया गया है। हमारी नदी कल्पा, मातृकल्पा संस्कृति है। यही राष्ट्र प्रेम की भावना भारतीय चिंतन और साहित्य परंपरा में व्यक्त हुई है। वाल्मीकि रामायण में भगवान राम का कथन है, 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' अर्थात् जन्मभूमि जननी स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है।

भारतीय चिंतन परंपरा में मातृभूमि के प्रति रागात्मक भाव और उसकी वंदना का यही स्वर 'वन्दे मातरम्' गीत में प्रतिध्वनित हुआ है और उसका अजस्र और अक्षुण्ण प्रभाव आधुनिक हिन्दी साहित्य में भी मुखर हुआ है। यह अनूठा और उल्लेखनीय संयोग है कि 'वन्दे मातरम्' गीत की रचना भारतीय स्वाधीनता संघर्ष के प्रथम सुनियोजित प्रयास 1857 की क्रांति की पृष्ठभूमि में हुई थी। इस क्रांति से निश्चय ही भारतीय जनमानस में राष्ट्रप्रेम और राष्ट्रीय चेतना का उन्मेष हुआ। इसी कालखंड में ही हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के प्रथम चरण 'भारतेंदु युग' का साहित्य

रचा जा रहा था। इस युग में देशभक्ति और राष्ट्रीय चेतना के स्वर मुखर होने लगे थे। देशकाल विवशताओं के कारण इस युग में राजभक्ति और देशभक्ति के मिश्रित लेकिन व्यथातुर स्वर में भारतेंदु कहते हैं–

''अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी,
पै धन विदेश चलि जात, यहै अति ख्वारी''

'भारत दुर्दशा' नाटक में भी यही व्यथा व्यक्त हुई है– 'अहह! भारत दुर्दशा न देखी जाई।' राष्ट्रीय जागरण के लिए अपनी भाषा के प्रति अनुराग को व्यक्त करते हुए भारतेंदु कहते हैं– 'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल' यानी अपनी भाषा की उन्नति ही सभी उन्नतियों का आधार है। उल्लेखनीय है कि इस युग में पहली बार खड़ी बोली में गद्य रचना प्रारंभ हुई और निबंध, नाटक, अनुवाद और विभिन्न पत्रिकाओं के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना और जागृति को संबल मिला।

द्विवेदी युग में नवजागरण, समाज सुधार, राष्ट्रप्रेम और मातृभूमि वंदना की और अधिक प्रभावक्षम छवियां रूपायित हुई हैं। यह वह दौर था, जब भारतमाता के प्रति समर्पित स्तवन का 'वन्दे मातरम्' गीत पूरे देश की जुबान पर गूंजने लगा था और स्वाधीनता सेनानियों के जुलूस का नारा बन गया था। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध 'मातृभूमि' कविता में 'वन्दे मातरम्' की ही तरह भारतमाता के उन्मुक्त प्राकृतिक सौंदर्य की वंदना है–

''नीलांबर परिधान हरित पट पर सुंदर है
सूर्य–चन्द्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है
नदियाँ प्रेम प्रवाह फूल तारे मंडन है
बंदीजन खगवृंद शेषफन सिंहासन है
करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस वेष की
हे मातृभूमि तू सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की''

गुप्त जी की 'भारत भारती' ने तो जैसे स्वाधीनता आंदोलन को चरमोत्कर्ष पर पहुँचा दिया। देश के हर गली कूचे में उसकी राष्ट्रचेतनापरक पंक्तियाँ गूंजने लगीं–

''हम कौन थे, क्या हो गये हैं, और क्या होंगे अभी
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएं सभी''

यह काव्यांश भारत के गौरवशाली अतीत का स्मरण कर अपनी वर्तमान गुलामी और दुर्दशा पर विचार और भविष्य पर आत्ममंथन करके पुनः अपने विश्व गुरु और वैभवशाली बनने की भावप्रवण प्रेरणा देता है। स्वाधीनता की चेतना के उद्‌बोधन के लिए उसका ऐतिहासिक महत्त्व है। इसे स्वाधीनता संग्राम की गीता भी कहा जा सकता है। मातृभूमि पर निछावर होने की सर्वाधिक लोकप्रिय एवं भावप्रवण कविता थी माखनलाल चतुर्वेदी की–''पुष्प की अभिलाषा'', जिसमें पुष्प की एकमात्र, अंतिम अभिलाषा है मातृभूमि पर शीश चढ़ाने वालों के पथ पर बिछ जाना। आज भी यह कविता देश प्रेम का एक अप्रतिम प्रतिमान है, लोगों का कंठहार है।

महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन के दौरान और उसके बाद आजादी मिलने तक पूरा भारत जैसे एकजुट

होकर स्वाधीनता आंदोलन में कूद पड़ा। पूरे देश में देश की आजादी के लिए सब कुछ न्यौछावर करने की जबर्दस्त लहर व्याप्त हो गई। साहित्य रचना में भी इसका प्रेरणादायक प्रस्ताव प्रतिबिंबित हुआ। छायावादी कवियों ने भी राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रभावक्षम उद्घोष किया। जयशंकर प्रसाद ने विशेषतः भारत के प्राचीन सांस्कृतिक गौरव का चित्रण अपने नाटकों और काव्य रचना में किया है। चंद्रगुप्त नाटक में विदेशी बाला कार्नेलिया भारत के राष्ट्रीय गौरव एवं प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन करते हुए कहती है–

''अरुण यह मधुमय देश हमारा,
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक
सहारा''

इस गीत में 'वन्दे मातरम्' की मूल भावना की स्पष्ट प्रतिगूंज है। इसी नाटक में वीर रस से ओतप्रोत एक गीत में हिमालय के शिखर से भारत माता प्राणप्रण से संघर्ष, विजय प्राप्ति एवं निरंतर बढ़ते चलने का आह्वान करती है–

''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो बढ़े चलो।''

यह प्राणप्रण से स्वाधीनता के लिए संघर्ष एवं अडिग प्रमाण का प्रेरणास्फूर्त आह्वान गीत है। राष्ट्रीय चेतना एवं नवजागरण की दृष्टि से निराला की 'जागो फिर एक बार' कविता भी उल्लेख्य है–

''जागो फिर एक बार!
प्यारे जगाते हुए हारे सब तारे तुम्हे
अरुण पंख तरुण किरण खड़ी खोलती है द्वार...
शेरों की माँद में आया है आज स्यार
जागो फिर एक बार!''

यह विद्रोही एवं क्रांतिकारी संदेश भी स्वात्रंत्य चेतना की काव्यमय गूंज है, जिसमें 'वन्दे मातरम्' गीत का नवोन्मेष है।

छायावादोत्तर स्वच्छंद काव्यधारा में भी दिनकर, हरिवंश राय बच्चन, नरेंद्र शर्मा एवं अंचल आदि कवियों ने स्वाधीनता के संघर्ष, जीवट एवं नवजागृति का संदेश दिया। इनमें सबसे प्रखर और ओजस्वी स्वर था राष्ट्रकवि दिनकर का जिन्होंने अपनी 'हिमालय के प्रति' कविता में हिमालय के संबोधित करते हुए भारत के प्राचीन वैभव और वर्तमान पराधीन दुर्दशा पर क्षोभ व्यक्त करते हुए कहा है–

''कितनी मणियाँ लुट गई, मिटा कितना मेरा वैभव अशेष!
तू ध्यानमग्न ही रहा, इधर, वीरान हुआ प्यारा स्वदेश!''

उधर, कथा साहित्य में भी प्रेमचंद जैसे कथाकारों ने रंगभूमि, कर्मभूमि और गोदान जैसे उपन्यासों में स्वाधीनता

संघर्ष, सामाजिक चेतना, ग्रामीण और शहरी जीवन एवं तत्कालीन जीवन के यथार्थ का चित्रण किया है। यशपाल के उपन्यासों में भी सामाजिक चेतना एवं क्रांतिकारी विचारों का उद्घाटन किया गया है।

इस तरह हिंदी साहित्य का स्वाधीनता आंदोलन एवं राष्ट्रीय चेतना जागृत करने में उल्लेखनीय एवं महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। स्वाधीनता की चेतना एवं राष्ट्रीय नवजागरण से संबद्ध साहित्य आज भी हमारे मन में ऊर्जा एवं उत्साह का संचार कर हमें अनुप्राणित करता है। आज भी 'वंदेमातरम्' गीत एवं उसी परंपरा से जुड़ा साहित्य हमें सांस्कृतिक गौरव, राष्ट्रप्रेम, स्वाधीनता की रक्षा एवं निरंतर प्रगति की रचनात्मक प्रेरणा देता है। साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं उसका चेहरा भी है अर्थात् साहित्य अपने देशकाल की स्थितियों को प्रतिबिंबित ही नहीं करता, प्रभावित भी करता है। साहित्य अपने सामाजिक सरोकारों का निर्वहन करते हुए समाज को नई संवेदना एवं जागृति भी प्रदान करता है। युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप वर्तमान काल में भारतीय जनमानस में राष्ट्रप्रेम एवं नवजागरण का भाव जागृत करने की ऐतिहासिक पहल का श्रेय निस्संदेह बंकिम बाबू के 'वन्दे मातरम्' गीत को जाता है। यद्यपि वैदिक काल से हमारी चिंतन एवं साहित्य की परंपरा में मातृभूमि–वंदन का भाव प्रतिभासित होता है, लेकिन पराधीनता एवं दमन की तत्कालीन स्थितियों में राष्ट्रीय गौरव बोध एवं राष्ट्रप्रेम के भाव का साहित्य में प्रवर्तन, पुनराख्यान तथा पल्लवन करने में 'वन्दे मातरम्' गीत का अविस्मरणीय एवं ऐतिहासिक योगदान है।

मातृभूमि वंदन और राष्ट्रीय गौरवबोध की उसी पारंपरिक पृष्ठभूमि में हिंदी साहित्य में देशभक्ति, राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक गौरवगान, प्रेरणास्फूर्त उद्बोधन, अदम्य जीवट, स्वाधीनता की रक्षा एवं निरंतर प्रगति का जीवन्त एवं प्रभावक्षम चित्रण हुआ है, जिससे आज भी हमें रचनात्मक प्रेरणा मिलती है। हमें अपने राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम्' पर गर्व है। हमें गर्व है कि भारतभूमि हमारी मातृभूमि है, जिसका देवगण भी स्तुतिगान करते हैं–

'गायन्ति देवाः किल गीतकानि,
धन्यास्तु ते भारत भूमिभागे'

वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना

–निहारिका शर्मा
शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय

"वही है रक्त, वही है देश, वही साहस है, वैसा ज्ञान।
वही है शांति, वही है शक्ति, वही हम दिव्य आर्य–संतान।
जिएं तो सदा, इसी के लिए, यही अभिमान रहे यह हर्ष।
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारतवर्ष।"(1)

– जयशंकर प्रसाद

उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध भारतीय इतिहास में केवल राजनीतिक परिवर्तन का समय नहीं था, बल्कि यह भारतीय समाज के आत्मबोध, सांस्कृतिक पुनर्स्मरण और राष्ट्रीय चेतना के क्रमिक विकास का भी काल था। अंग्रेजी शासन के कारण जहाँ एक ओर भारतीय समाज राजनीतिक पराधीनता का अनुभव कर रहा था, वहीं दूसरी ओर साहित्य, पत्रकारिता, शिक्षा और सामाजिक सुधार आंदोलनों के माध्यम से एक नए राष्ट्रीय मानस का निर्माण भी हो रहा था। "साहित्य अंततः साहित्य ही है– वह परिस्थितियों के सहित अथवा सम्मिलित प्रभाव की अभिव्यंजना है। साहित्य मानव के संपूर्ण व्यक्तित्त्व की वाणी है, अविभक्त जीवन की इकाई का प्रतिबिम्ब है।"(2) इस नवजागरण में साहित्य ने केवल भावनाओं की अभिव्यक्ति नहीं की, बल्कि भारतीय समाज को उसके इतिहास, संस्कृति और सामूहिक अस्मिता से पुनः परिचित कराया। इसी व्यापक राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में 'वन्दे मातरम्' का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

'वन्दे मातरम्' भारतीय राष्ट्रवाद का ऐसा सांस्कृतिक प्रतीक है जिसने राजनीतिक स्वतंत्रता के विचार को भावनात्मक गहराई प्रदान की। यह गीत बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के उपन्यास 'आनंदमठ' में प्रकाशित हुआ। यद्यपि इसका जन्म साहित्यिक कृति के रूप में हुआ, किंतु शीघ्र ही यह साहित्य की सीमाओं से बाहर निकलकर राष्ट्रीय आंदोलन की आवाज बन गया। यह गीत भारतीय भूमि को केवल एक भूभाग के रूप में नहीं देखता, बल्कि उसे ऐसी जननी के रूप में प्रस्तुत करता है जिसके प्रति सम्मान, कृतज्ञता और समर्पण प्रत्येक नागरिक का नैतिक दायित्व है। यही कारण है कि 'वन्दे मातरम्' धीरे–धीरे राष्ट्रीय स्वाभिमान और स्वतंत्रता की आकांक्षा का पर्याय बन गया।

'वन्दे मातरम्' में राष्ट्रीयता का स्वर

'वन्दे मातरम्' की राष्ट्रीयता किसी राजनीतिक घोषणा–पत्र की तरह प्रत्यक्ष नहीं है, बल्कि वह सांस्कृतिक अनुभूति के माध्यम से विकसित होती है। बंकिमचंद्र भारतभूमि का चित्रण ऐसी माता के रूप में करते हैं जो अपने पुत्रों का पालन–पोषण करती है, उन्हें जीवन, अन्न, जल और आश्रय प्रदान करती है। मातृभूमि के प्रति यह भावनात्मक संबंध राष्ट्रप्रेम को स्वाभाविक बना देता है। यहाँ राष्ट्र केवल शासन–व्यवस्था का नाम नहीं, बल्कि साझा संस्कृति, स्मृतियों और जीवन–मूल्यों का प्रतीक है।

गीत में प्रकृति के विविध रूप—लहलहाते खेत, शीतल समीर, हरित वनस्पति और सुगंधित पुष्प—भारत की समृद्धि के संकेत मात्र नहीं हैं, बल्कि वे उस सांस्कृतिक संपदा का भी बोध कराते हैं जिसे सुरक्षित रखने का उत्तरदायित्व प्रत्येक भारतीय का है। इस प्रकार राष्ट्रप्रेम किसी बाहरी आग्रह से उत्पन्न नहीं होता, बल्कि मातृभूमि के प्रति आत्मीयता से विकसित होता है।

स्वतंत्रता आंदोलन के समय इस गीत ने लोगों में साहस और आत्मविश्वास का संचार किया। विदेशी शासन के विरुद्ध संघर्ष करने वाले लोगों के लिए यह केवल गान नहीं था, बल्कि मानसिक शक्ति का स्रोत था। 'वन्दे मातरम्' का उच्चारण स्वयं में प्रतिरोध का प्रतीक बन गया। इस प्रकार इस गीत की राष्ट्रीयता केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि कर्मप्रधान भी है, क्योंकि यह व्यक्ति को राष्ट्रहित में सक्रिय होने की प्रेरणा देती है।

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय बंगाल के निवासी थे और उनकी साहित्यिक अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम बांग्ला भाषा थी। इसके बावजूद उन्होंने 'वन्दे मातरम्' में अत्यंत संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग किया। यह निर्णय उनकी दूरदर्शी राष्ट्रीय दृष्टि का परिचायक है। संस्कृत भारतीय सांस्कृतिक परंपरा की आधारभूत भाषा रही है। भारत की अधिकांश आधुनिक भाषाओं के शब्दकोश, व्याकरण और साहित्य पर उसका गहरा प्रभाव दिखाई देता है। बंकिमचंद्र ने यह अनुभव किया कि यदि किसी गीत को समूचे भारत की चेतना का प्रतीक बनाना है, तो उसकी भाषा ऐसी होनी चाहिए जो किसी एक क्षेत्र की सीमा में बँधी न हो। संस्कृतनिष्ठ शब्दावली इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सर्वाधिक उपयुक्त थी। यहाँ यह तथ्य विशेष उल्लेखनीय है कि उन्होंने अपनी क्षेत्रीय पहचान को राष्ट्रीय उद्देश्य के अधीन रखा। उन्होंने ऐसा गीत रचा जिसकी भाषिक संरचना भारतीय सांस्कृतिक विरासत से जुड़ी हुई थी और जिसे विभिन्न प्रांतों के लोग समान श्रद्धा के साथ स्वीकार कर सकें। इस प्रकार 'वन्दे मातरम्' भारतीय भाषाई विविधता के मध्य एक साझा सांस्कृतिक सूत्र का निर्माण करता है।

भाषिक स्तर पर एकात्मता और राष्ट्रीय आंदोलन

भारत की सबसे बड़ी विशेषता उसकी भाषाई बहुलता है। अनेक भाषाएँ, बोलियाँ और सांस्कृतिक परंपराएँ होने के बावजूद भारतीय समाज को एक सूत्र में बाँधना स्वतंत्रता आंदोलन की सबसे बड़ी आवश्यकता थी। 'वन्दे मातरम्' ने इस दिशा में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

गीत की भाषा किसी विशेष प्रदेश की पहचान नहीं बनती, बल्कि वह भारतीय संस्कृति की सामूहिक धरोहर के रूप में सामने आती है। संस्कृतनिष्ठ शब्दावली के कारण उत्तर और दक्षिण, पूर्व और पश्चिम—सभी क्षेत्रों के शिक्षित समाज ने इसे सहज स्वीकार किया। यही कारण था कि यह गीत बंगाल तक सीमित नहीं रहा, बल्कि राष्ट्रीय सभाओं, छात्र आंदोलनों, सार्वजनिक आयोजनों और स्वतंत्रता संग्राम के अनेक चरणों में समान उत्साह से गाया जाने लगा।

जब विभिन्न भाषाएँ बोलने वाले लोग एक स्वर में 'वन्दे मातरम्' का गायन करते थे, तब उनके बीच क्षेत्रीय भेद गौण हो जाते थे और राष्ट्रीय पहचान प्रमुख हो उठती थी। इस प्रकार भाषा यहाँ विभाजन का कारण न होकर राष्ट्रीय एकता का माध्यम बन जाती है। यही भाषिक एकात्मता आगे चलकर स्वतंत्रता आंदोलन की सामाजिक शक्ति बनी, क्योंकि उसने लोगों को यह अनुभव कराया कि विविधता के बावजूद उनकी राष्ट्रीय चेतना एक है।

साहित्य : जनजागरण का सबसे प्रभावशाली माध्यम

किसी भी राष्ट्र के निर्माण में साहित्य की भूमिका केवल मनोरंजन तक सीमित नहीं होती। साहित्य समाज की चेतना को दिशा देता है, उसके विचारों को प्रभावित करता है और उसके भीतर नए मूल्यों का विकास करता है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। "जिस प्रकार भक्ति आन्दोलन ने हिंदी को कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, मीरा जैसे रचनाकार दिए, उसी प्रकार स्वाधीनता आन्दोलन की देन प्रेमचंद, रामचंद्र शुक्ल, निराला, प्रसाद, पन्त और महादेवी हैं।"[(3)]

औपनिवेशिक शासन के समय प्रत्यक्ष राजनीतिक विरोध पर अनेक प्रकार के प्रतिबंध लगाए जाते थे, किंतु साहित्य विचारों के प्रसार का अपेक्षाकृत स्वतंत्र माध्यम था। कवियों, कथाकारों और नाटककारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय जनता में स्वाधीनता की आकांक्षा, आत्मसम्मान और राष्ट्रीय गौरव की भावना को सशक्त बनाया। साहित्य ने लोगों को यह समझाया कि पराधीनता केवल राजनीतिक समस्या नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और मानसिक चुनौती भी है।

'वन्दे मातरम्' इसी साहित्यिक शक्ति का सर्वोत्तम उदाहरण है। इस गीत ने पाठकों और श्रोताओं के भीतर ऐसा भावात्मक संबंध स्थापित किया कि मातृभूमि के लिए त्याग और संघर्ष एक नैतिक आदर्श बन गया। साहित्य ने लोगों को केवल प्रेरित ही नहीं किया, बल्कि उन्हें एक साझा राष्ट्रीय उद्देश्य से भी जोड़ा। यही कारण है कि स्वतंत्रता आंदोलन को जन–आंदोलन का स्वरूप देने में साहित्य की भूमिका अत्यंत निर्णायक सिद्ध हुई।

देशभक्ति साहित्य की व्यापक परंपरा

स्वतंत्रता आंदोलन के समय राष्ट्रीय चेतना केवल एक गीत या एक लेखक तक सीमित नहीं रही। भारतीय भाषाओं के अनेक साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रप्रेम और स्वाधीनता की भावना को जन–जन तक पहुँचाया। कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध और पत्रकारिता–साहित्य की प्रत्येक विधा राष्ट्रीय उद्देश्य से जुड़ती दिखाई देती है। देशभक्ति से ओतप्रोत गीत जनसभाओं में गाए जाते थे, ऐतिहासिक नाटक लोगों को अपने गौरवशाली अतीत की याद दिलाते थे, कहानियाँ सामान्य नागरिक के भीतर आत्मसम्मान और कर्तव्यबोध उत्पन्न करती थीं तथा उपन्यास सामाजिक चेतना का विस्तार करते थे। साहित्य ने प्रत्यक्ष रूप से लोगों को हथियार नहीं दिए, बल्कि उन्हें विचार, साहस और आत्मविश्वास प्रदान किया। यही मानसिक परिवर्तन स्वतंत्रता आंदोलन की वास्तविक शक्ति बना। इस काल में लिखी गई अनेक रचनाएँ यह सिद्ध करती हैं कि साहित्य समाज के परिवर्तन का प्रभावी साधन है। जब राजनीतिक भाषणों की पहुँच सीमित थी, तब गीतों की ध्वनि, कविताओं की पंक्तियाँ, नाटकों के संवाद और कहानियों के पात्र सामान्य जनता के मन में स्वतंत्रता का स्वप्न जगा रहे थे। इस प्रकार साहित्य भारतीय राष्ट्रीय चेतना का संवाहक बनकर उभरा और 'वन्दे मातरम्' उस साहित्यिक परंपरा का सर्वाधिक प्रभावशाली प्रतीक सिद्ध हुआ। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि 'वन्दे मातरम्' केवल एक राष्ट्रीय गीत नहीं, बल्कि भारतीय राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक एकात्मता और साहित्यिक जागरण का जीवंत दस्तावेज है। इसकी भाषा, भावभूमि और वैचारिक संरचना यह प्रमाणित करती है कि साहित्य राजनीतिक परिवर्तन का मौन, किंतु अत्यंत प्रभावशाली आधार बन सकता है। भारतीय स्वतंत्रता

आंदोलन में इस गीत ने जिस प्रकार भावनात्मक, भाषिक और सांस्कृतिक स्तर पर लोगों को एक सूत्र में बाँधा, वह हिंदी साहित्य और भारतीय राष्ट्रवाद के इतिहास में सदैव स्मरणीय रहेगा।

"हर पराधीन देश में राष्ट्रीयता की भावना का उदय पुनरुत्थान–भावना से होता है। विजेता जाति प्रायः विजित जाति को दबाने के लिए उसमें से सभी प्रकार की शक्तियों का अपहरण करने का प्रयत्न करती है। भारतवर्ष पर अपनी साम्राज्यवादी छाया डालने के बाद अंग्रेजों ने भी यही किया। उन्होंने भारतीयों के आत्म–गौरव को कुचलने के लिए हर तरह की कोशिश की। उनको बर्बर और असभ्य कहा; उनकी सांस्कृतिक परंपरा को तुच्छ ठहराया; उन्हें शुरू से ही हार खानेवाला साबित किया और भारतीयों के मन में यह भाव भरने की कोशिश की कि अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण सदा से ही भारतवासी अकर्मण्य, परलोक की चिंता करनेवाले तथा सैनिक भाव से हीन रहे हैं। अंग्रेजों ने हर तरह भारत के इतिहास को विकृत करने की कोशिश की।"[4] भारतीय राष्ट्रीय चेतना का यह पुनर्जागरण केवल अतीत के गौरव का स्मरण भर नहीं था, बल्कि उसके माध्यम से वर्तमान की पराधीनता के विरुद्ध आत्मविश्वास का निर्माण भी था। इसी कारण हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय भावना किसी एक विचारधारा तक सीमित नहीं रही; उसने इतिहास, संस्कृति, भाषा, स्वाभिमान और जनजीवन को एक सूत्र में बाँध दिया। छायावादी कवियों ने जहाँ सांस्कृतिक स्मृतियों के सहारे राष्ट्रीय अस्मिता को स्वर दिया, वहीं उससे पहले भारतेंदु युग ने इस चेतना की पहली सशक्त नींव रखी। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने यह अनुभव कर लिया था कि राजनीतिक दासता केवल शासन परिवर्तन का प्रश्न नहीं है, बल्कि वह मनुष्य की चेतना, आत्मसम्मान और सामाजिक दृष्टि को भी प्रभावित करती है। इसलिए उन्होंने साहित्य को जनजागरण का माध्यम बनाया और अपने नाटकों, निबंधों तथा पत्रकारिता के द्वारा जनता को अपने समय की वास्तविकताओं से परिचित कराया।

भारतेंदु हरिश्चंद्र का नाटक 'भारत–दुर्दशा'[5] राष्ट्रीय चेतना के प्रारंभिक और प्रभावशाली दस्तावेजों में गिना जाता है। इस नाटक में उन्होंने प्रत्यक्ष राजनीतिक भाषण देने के स्थान पर प्रतीकों और व्यंग्य का सहारा लिया। भारतमाता की दयनीय स्थिति के माध्यम से उन्होंने यह स्पष्ट किया कि विदेशी शासन ने केवल देश की आर्थिक व्यवस्था को ही नहीं, बल्कि उसके आत्मविश्वास और सांस्कृतिक गरिमा को भी आघात पहुँचाया है। नाटक का उद्देश्य पाठक या दर्शक में केवल करुणा उत्पन्न करना नहीं है, बल्कि उसे यह सोचने के लिए प्रेरित करना है कि यदि समाज स्वयं जागृत नहीं होगा, तो उसकी दीनता समाप्त नहीं हो सकती। इस प्रकार 'भारत–दुर्दशा' राष्ट्रीय भावना को भावुकता तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे सामाजिक उत्तरदायित्व और आत्मजागरण से जोड़ देता है। भारतेंदु के यहाँ राष्ट्रप्रेम का अर्थ अतीत की प्रशंसा भर नहीं, बल्कि वर्तमान की कमजोरियों की पहचान कर उन्हें दूर करने का संकल्प भी है।

यही राष्ट्रीय चेतना आगे चलकर हिंदी कविता में और अधिक व्यापक रूप में विकसित हुई। छायावादी युग के कवियों ने राष्ट्रीयता को केवल राजनीतिक संघर्ष के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे सांस्कृतिक पुनर्जागरण और आत्मगौरव की पुनर्स्थापना के रूप में प्रस्तुत किया। जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटक 'चंद्रगुप्त' और 'स्कंदगुप्त' इसी दृष्टि के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। इन नाटकों में इतिहास का उपयोग केवल अतीत का वर्णन करने के लिए नहीं किया गया है, बल्कि वर्तमान को प्रेरणा देने के लिए किया गया है। 'स्कंदगुप्त' में विदेशी आक्रमणों

के विरुद्ध संघर्ष केवल एक राजा की विजय नहीं है, बल्कि संपूर्ण राष्ट्र की अस्मिता की रक्षा का प्रतीक बन जाता है। इसी प्रकार 'चंद्रगुप्त' में राष्ट्रीय एकता, सुदृढ़ नेतृत्व और सांस्कृतिक स्वाभिमान को इस प्रकार चित्रित किया गया है कि पाठक अपने समकालीन राष्ट्रीय आंदोलन से उसका संबंध सहज ही स्थापित कर लेता है। प्रसाद के नाटकों का इतिहास वस्तुतः वर्तमान की राष्ट्रीय आकांक्षाओं का कलात्मक रूपांतरण है।(6)

इसी राष्ट्रीय चेतना को काव्य में ओजस्वी स्वर देने वालों में सुभद्रा कुमारी चौहान का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उनकी कविताएँ प्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता आंदोलन की प्रेरणा बनती हैं। 'झाँसी की रानी' कविता केवल लक्ष्मीबाई के शौर्य का वर्णन नहीं करती, बल्कि भारतीय स्त्री–शक्ति, आत्मसम्मान और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष की भावना को जन–जन तक पहुँचाती है। कविता का प्रत्येक दृश्य पाठक के भीतर साहस और स्वाभिमान का संचार करता है।

"चमक उठी सन् सत्तावन में
वह तलवार पुरानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह, हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी।"(7)

इसी प्रकार 'वीरों का कैसा हो वसंत' में कवयित्री ने वसंत को केवल प्रकृति के उल्लास का प्रतीक नहीं रहने दिया, बल्कि उसे राष्ट्र के लिए बलिदान और कर्म की प्रेरणा से जोड़ दिया। उनके यहाँ राष्ट्रप्रेम भावनात्मक होने के साथ–साथ कर्मप्रधान भी है। यही कारण है कि उनकी कविताएँ स्वतंत्रता आंदोलन के दिनों में जनसभाओं और छात्र आंदोलनों में उत्साह का स्रोत बनीं।

राष्ट्रीय चेतना का एक विशिष्ट और गहन रूप सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के काव्य में भी दिखाई देता है। निराला की राष्ट्रीयता केवल विदेशी शासन के विरोध तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह सामाजिक विषमता, रूढ़ियों और मानसिक दासता के विरोध में भी व्यक्त होती है। उनकी प्रसिद्ध कविता 'जागो फिर एक बार' भारतीय समाज को निष्क्रियता छोड़कर नवचेतना अपनाने का संदेश देती है।

"शेरों की माँद में आया है आज स्यार
जागो फिर एक बार"(8)

इसी प्रकार 'राम की शक्ति–पूजा' में राम का संघर्ष केवल पौराणिक प्रसंग नहीं रह जाता, बल्कि अन्याय के विरुद्ध सत्य और शक्ति के संघर्ष का सार्वकालिक प्रतीक बन जाता है। निराला के लिए राष्ट्र का उत्थान तभी संभव है जब समाज अन्याय, शोषण और जड़ता से मुक्त होकर आत्मबल अर्जित करे। इसलिए उनकी राष्ट्रीय भावना राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ सामाजिक और मानवीय मुक्ति की भी पक्षधर है।

छायावादी युग के अन्य कवियों में भी राष्ट्रीय भावना विविध रूपों में व्यक्त हुई। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की कविताओं में ओज, संघर्ष और क्रांतिकारी उत्साह का स्वर स्पष्ट सुनाई देता है। उनकी रचनाएँ युवाओं को

पराधीनता स्वीकार न करने और राष्ट्रहित में त्याग के लिए प्रेरित करती हैं। इसी प्रकार मैथिलीशरण गुप्त ने भारतीय इतिहास, संस्कृति और परंपरा के माध्यम से राष्ट्रीय आत्मविश्वास को पुनर्जीवित किया। उनकी कविताओं में राष्ट्र के गौरव, सामाजिक सुधार और जनजागरण का समन्वय दिखाई देता है। सियारामशरण गुप्त ने गांधीवादी आदर्शों, करुणा और मानवीय संवेदना को राष्ट्रीय चेतना से जोड़ते हुए यह स्थापित किया कि राष्ट्र का निर्माण केवल संघर्ष से नहीं, बल्कि नैतिक मूल्यों और सामाजिक समरसता से भी होता है। "राष्ट्रीय आन्दोलन के तूफानी दिनों के नौजवान ब्रिटिश साम्राज्यवाद की संगीनों के विरूद्ध सीना तानकर चल रहे थे। उस समय उनकी ओर से उसने (बालकृष्ण शर्मा नवीन) माँग की – ''कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल–पुथल मच जाए, एक हिलोर इधर से आये, एक हिलोर उधर से आए।"[9]

इस प्रकार हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का विकास एक सतत प्रक्रिया के रूप में दिखाई देता है। भारतेंदु ने उसकी आधारशिला रखी, द्विवेदी युग ने उसे वैचारिक दिशा दी और छायावादी साहित्यकारों ने उसे सांस्कृतिक गहराई तथा कलात्मक ऊँचाई प्रदान की। यहाँ राष्ट्रीयता किसी संकीर्ण राजनीतिक आग्रह का नाम नहीं है, बल्कि आत्मगौरव, सांस्कृतिक अस्मिता, सामाजिक जागरण और मानवीय मूल्यों का समन्वित स्वरूप है। यही कारण है कि हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना आज भी केवल इतिहास का विषय नहीं, बल्कि भारतीय समाज की सांस्कृतिक स्मृति और लोकतांत्रिक चेतना की एक जीवंत धरोहर के रूप में प्रासंगिक बनी हुई है।

'वन्दे मातरम्' और हिंदी की राष्ट्रीय काव्य–धारा का तुलनात्मक परिदृश्य

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित 'वन्दे मातरम्' केवल एक गीत नहीं, बल्कि भारतीय राष्ट्रवाद की चेतना का वह आदि–स्वर है जिसने देश की सुप्त आत्मा को झकझोर कर रख दिया। जब इस मंत्र की गूँज हिंदी भाषी क्षेत्रों में पहुँची, तो इसने भारतेंदु युग से लेकर छायावाद और प्रगतिवाद तक के हिंदी कवियों को एक नई वैचारिक ऊर्जा से भर दिया। 'वन्दे मातरम्' में जहाँ मातृभूमि का स्वरूप साक्षात देवी (दुर्गा और लक्ष्मी) के रूप में उभरता है, वहीं हिंदी साहित्य के मूर्धन्य कवियों ने भी इसी तर्ज पर राष्ट्र का मानवीकरण किया। मैथिलीशरण गुप्त ने जहाँ भारत–भारती में देश को प्रकृति का पुण्य लीला–स्थल और एक पावन मंदिर माना, वहीं जयशंकर प्रसाद ने इतिहास के पन्नों से भारत के स्वर्णिम काल को समेटते हुए इसे 'मधुमय देश' के रूप में प्रतिष्ठित किया। दोनों ही धाराओं में भूगोल महज मिट्टी का विस्तार नहीं, बल्कि एक जीवंत, पूजनीय और ममतामयी माता के रूप में पूजित हुआ है।

शिल्प, संवेदना और अभिव्यक्ति के धरातल पर देखें तो दोनों के बीच एक गहरा आंतरिक संबंध दिखाई देता है, भले ही उनकी बाहरी बनावट में अंतर हो। 'वन्दे मातरम्' अपनी मूल प्रकृति में तत्सम–प्रधान, गंभीर और मंत्रोच्चारण की लय से युक्त संस्कृत–निष्ठ बांग्ला रचना है, जो पाठक के भीतर एक सात्विक और आध्यात्मिक राष्ट्रप्रेम जगाती है। इसके विपरीत, हिंदी की राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य–धारा (विशेषकर माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान और रामधारी सिंह 'दिनकर') ने खड़ीबोली की ओजस्वी क्षमता का उपयोग किया। हिंदी कवियों ने स्तुतिपरक शैली से आगे बढ़कर आव्हनात्मक रुख अपनाया। जहाँ बंकिम बाबू 'शस्य–श्यामलां मातरम्' कहकर प्रकृति की सुंदरता की वंदना करते हैं, वहीं माखनलाल चतुर्वेदी की 'पुष्प की अभिलाषा' मातृभूमि की बलिवेदी पर शीश चढ़ाने वाले वीरों के पैरों तले कुचले जाने में अपना

सौभाग्य ढूंढती है। दिनकर की रचनाओं में तो यह राष्ट्रचेतना जनक्रांति का रूप ले लेती है, जहाँ वे सिंहासन खाली करने की उद्घोषणा करते हैं।

निष्कर्ष

संक्षेप में, 'वन्दे मातरम्' यदि भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का बीज–मंत्र था, तो हिंदी का राष्ट्रीय काव्य उस बीज से प्रस्फुटित हुआ वह पल्लवित वृक्ष है जिसने जन–जन को अपनी छांव और ओज से आंदोलित किया। बंकिमचंद्र ने जिस आध्यात्मिक राष्ट्रवाद की नींव रखी थी, हिंदी के राष्ट्रकवियों ने उसे युगीन समस्याओं, गुलामी के आक्रोश और आम जनता के अधिकारों से जोड़कर अधिक व्यावहारिक, व्यापक और जनमुखी बना दिया। दोनों विधाओं का मूल स्वर एक ही था–अतीत के गौरव से प्रेरणा लेकर वर्तमान की बेड़ियों को काटना और एक संप्रभु, जागृत राष्ट्र का निर्माण करना।

"हाँ वृद्ध भारतवर्ष ही संसार का सिरमौर है,
ऐसा पुरातन देश कोई विश्व में क्या और है।"[10]

–मैथिलीशरण गुप्त

सन्दर्भ सूचीः

1. सिंह, नामवर, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, सोलहवाँ संस्करण, पृष्ठ सं. – 73
2. सिंह, नामवर, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, सोलहवाँ संस्करण, पृष्ठ सं – 71
3. त्रिपाठी, विश्वनाथ, हिंदी साहित्य का इतिहास, ओरिएण्टल ब्लैकस्वान, पृष्ठ सं– 110
4. सिंह, नामवर, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, सोलहवाँ संस्करण, पृष्ठ सं.– 72
5. कुमार, सिद्धांत, भारत दुर्दशा – संवेदना और शिल्प, अनुपम प्रकाशन, पृष्ठ सं.– 54
6. प्रसाद, जयशंकर, चन्द्रगुप्त, लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ सं– 137
7. https://www.hindwi.org/kavita/jhansi-ki-rani-subhadrakumari-chauhan-kavita
8. सिंह, नामवर, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, सोलहवाँ संस्करण, पृष्ठ सं.– 75
9. सिंह बच्चन, आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ सं– 237
10. प्रभाकर, प्रभात कुमार, वस्तुनिष्ठ हिंदी कविता, प्रभाकर प्रकाशन, पृष्ठ सं– 148

राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में 'वन्दे मातरम्'

–सत्येन्द्र कुमार शर्मा
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
यूको बैंक, कोलकाता

स्वाधीनता संग्राम के जयघोष 'वन्दे मातरम्' के संदर्भ में राष्ट्रीय चेतना पर विचार करते समय किसी शायर की पंक्तियां याद आ गईं–

'किस्सा–ए–अजमत–ए–माजी को न मुहमिल समझो।
क़ौमें जाग उठती हैं अक्सर इन्हीं अफ़सानों से।'

अर्थात् इतिहास में दर्ज अस्मिता की घटनाओं को अर्थहीन न समझो। अक्सर इन घटनाओं से राष्ट्र जाग उठते हैं।

भारतीय स्वाधीनता के इतिहास में 'वन्दे मातरम्' एक ऐसी ही घटना है जिसने भारतीय राष्ट्रीय चेतना को सहसा जगा दिया था। बंग प्रदेश में कन्याओं को मां कहकर संबोधित करने की परंपरा रही है, वहां प्रयोजन–सिद्धि के लिए मां की वंदना करना पहला और आखिरी उपचार रहा है। न जाने किस साधना–क्षण में, किस प्रयोजन से बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की लेखनी से वन्दे मातरम् निःसृत हुआ और परिणामतः पूरा राष्ट्र अंगड़ाई लेकर जाग उठा।

इस गीत की रचना के 150 वर्ष पूरे हो चुके हैं, भारत अपनी स्वाधीनता के अमृत काल में सधे कदमों और महत्वाकांक्षी स्वप्न के साथ आगे बढ़ रहा है। सदियां बदल गईं हैं पर वन्दे मातरम् आज भी प्रेरणा का अजस्र स्रोत बना हुआ है।

वन्दे मातरम् केवल एक गीत नहीं, बल्कि भारतभूमि की आत्मा से निकला वह अमर स्वर है, जिसने डेढ़ शताब्दी से अधिक समय तक देश के जन–मन को राष्ट्रीय चेतना, साहस और स्वाभिमान से अनुप्राणित किया है। वन्दे मातरम् का महत्व केवल इसलिए नहीं है कि यह स्वतंत्रता आंदोलन का एक शाश्वत उद्घोष बना, बल्कि इससे भी बड़ा कारण यह था कि पहली बार इस मंत्र ने भारत की राष्ट्रीय एकात्मता का सूत्र गढ़ा। वास्तव में, वन्दे मातरम् उन्नीसवीं शताब्दी के भारत की अभीप्सा का यथार्थ उद्घोष था।

सुविदित है कि इस बांग्ला–संस्कृत मिश्रित गीत की रचना बंकिमचंद्र चटर्जी ने 7 नवंबर 1875 को की थी, जो 1882 में प्रकाशित उनके उपन्यास 'आनंदमठ' का अंग बना। आनंदमठ के इस बीजतत्त्व को समझे बिना हम वन्दे मातरम् के भावप्रवाह को नहीं जान सकते। यह उपन्यास बंगाल में हुए संन्यासी विद्रोह की घटना पर केंद्रित है। वस्तुतः "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः" की वैदिकी अवधारणा आधुनिक काल में अंग्रेजों को चुनौती देने के लिए भारत माता के रूप में अवतरित हुई और इसके मंत्रद्रष्टा ऋषि बने बंकिमचंद्र चटर्जी। हालांकि, राष्ट्रीय चेतना जागृत करने वाले गीतों की परंपरा बंगाल में पूर्व से ही चल पड़ी थी, जो अंग्रेजों के दमन का ही नहीं अपितु उनके द्वारा थोपे जा रहे ब्रिटिश सम्राट के प्रति भक्ति के गान 'गॉड सेव द किंग' अथवा 'गॉड सेव द क्वीन' का एक प्रत्युत्तर भी था।

1896 में कविगुरु रवींद्रनाथ ठाकुर द्वारा इसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में सार्वजनिक रूप से गाया गया। बाद में यदुनाथ भट्टाचार्य द्वारा रचित धुन ने इसे जन–जन तक पहुंचाया और शीघ्र ही स्वतंत्रता संग्राम का प्रेरक मंत्र बन गया।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान यह गीत केवल गायन का विषय ही नहीं रहा, बल्कि क्रांतिकारियों, स्वतंत्रता सेनानियों और आम जनता के लिए संकल्प, संघर्ष और साहस की शक्ति बना। बांग्ला और संस्कृत के अद्भुत समन्वय से रचित इसकी पंक्तियाँ मातृभूमि को शक्ति, भक्ति, विद्या और धर्म के रूप में प्रतिष्ठित करती हैं। यह गीत केवल एक रचना नहीं, बल्कि मातृभूमि के प्रति समर्पण की जीवंत और भावपूर्ण अनुभूति है।

महर्षि अरविंद, जिन्होंने इस गीत को भारतीय राष्ट्रवाद का प्राण माना, उन्होंने इसके आध्यात्मिक पक्ष की व्याख्या करते हुए कहा था, वन्दे मातरम् एक 'प्राण–प्रतिष्ठा' है। यह 'भारत के पुनर्जन्म का मंत्र है।' इसमें भारत की पावन आत्मा कुछ इस तरह से धड़कती है कि देश–प्रेम का भाव भक्ति बन जाता है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के वीर सपूतों ने इस गीत को राष्ट्र की पुकार का रूप दे दिया। नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने इसे आजाद हिन्द फौज की मार्चिंग धुन के रूप में चुना। वन्दे मातरम् के 150 वर्ष पूरे होने पर सरकार द्वारा आयोजित विशेष कार्यक्रम में प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि "वन्दे मातरम् एक मंत्र है, एक स्वप्न है, एक संकल्प है, एक ऊर्जा है। यह गीत माँ भारती की आराधना है। वन्दे मातरम् भारत की आजादी का उद्घोष था और यह हर दौर में प्रासंगिक है।"

स्वाधीनता आंदोलन और साहित्य

स्वाधीनता आंदोलन का गहरा प्रभाव भारतीय साहित्य पर भी पड़ा। भारतीय भाषाओं में नवजागरण के अनुकूल नए विषयों को अपनाने, समाज सुधार के विभिन्न आयामों पर लिखने तथा स्वाधीनता संग्राम के नेताओं और घटनाओं पर विवेचन करने की परंपरा चली। ब्रिटिश राज की सत्ता का केंद्र बंगाल रहा इसलिए अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव और प्रतिरोध में राष्ट्रीय चेतना और पुनरुत्थान की साहित्यिक शक्तियां सर्वप्रथम वहीं दिखाई पड़ीं। 'वन्दे मातरम्' इसका शाश्वत उदाहरण है। तत्पश्चात् हिंदी, मराठी, गुजराती, तमिल, तेलुगू, कन्नड़, मलयालम, असमिया आदि साहित्यों में भी इन आंदोलनों की गूंज एक साथ सुनाई पड़ी।

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल तो पूर्णतया राष्ट्रीय चेतना की भावना से ओतप्रोत है। एक साहित्यकार अपने युगीन परिवेश से अछूता नहीं रह सकता। यही कारण है कि स्वाधीनता दौर में हिंदी साहित्य में भी राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम की लहर दौड़ रही थी। यह राष्ट्रीय चेतना हिंदी साहित्य में बखूबी परिलक्षित होता है। स्वतंत्रता संग्राम की लहर ने हिंदी साहित्यकारों को राष्ट्रवादी साहित्य की गंगा बहाने के लिए प्रेरित किया।

आधुनिक हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का स्पंदन

भारतेंदु हरिश्चंद्र को हिंदी गद्य का पितामह माना जाता है। उन्होंने अपने नाटकों और निबंधों के माध्यम से देश की गरीबी, अशिक्षा और विदेशी शासन की बुराइयों को उजागर किया। उनका नाटक 'भारत–दुर्दशा' देश की दयनीय स्थिति पर गहरा व्यंग्य करता है और लोगों को जागने की प्रेरणा देता है। काशी नगरी प्रचारिणी

सभा द्वारा 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन 1899 में किया गया। भाषा, साहित्य, कला और संस्कृति के क्षेत्र में इस पत्रिका का महत्वपूर्ण योगदान है।

इसके पश्चात अनेक पत्रिकाएं प्रकाशित हुईं, जिनमें सबसे प्रमुख 'स्वराज' पत्रिका थी। इसका मुख्य उद्देश्य देश को आजाद कराना और जनमानस में देशभक्ति की भावना जागृत करना था। 'स्वराज्य' पत्रिका के संपादन–पद के लिए प्रकाशित विज्ञापन की भाषा आज भी अविस्मरणीय मानी जाती है। विज्ञापन में लिखा था– 'चाहिए स्वराज्य के लिए एक संपादक। वेतन दो सूखी रोटियाँ, एक गिलास ठंडा पानी और संपादकीय के लिए दस साल जेल।' यह विज्ञापन राष्ट्रीय प्रेरणा से ओत–प्रोत था। और इस पत्रिका के संपादक बने– शांति नारायण भटनागर।

'मतवाला' पत्रिका, जिसके सह–संपादक निराला और शिवपूजन सहाय थे, में प्रकाशित टिप्पणियाँ, आज भी लोगों की जुबान पर है– 'खींचो न कमानों को न तलवार निकालो। जब तोप मुकाबिल है तो अखबार निकालो।' जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटक जैसे–चंद्रगुप्त, स्कंदगुप्त इस युग के बेहतरीन उदाहरण हैं, जो भारत के प्राचीन स्वर्णिम इतिहास की याद दिलाकर देशभक्ति जगाते हैं। मुंशी प्रेमचंद ने अपनी कहानियों और उपन्यासों– गोदान, कर्मभूमि, सोजे वतन में गांव, किसानों, दलितों और स्वतंत्रता आंदोलन का सच्चा चित्र पेश किया। उनकी रचनाओं ने आम जनता को अन्याय के खिलाफ लड़ना सिखाया। आधुनिक हिंदी काव्य का तो विकास ही उस समय हुआ, जबकि समूचे राष्ट्र में ब्रिटिश शासकों के विरुद्ध स्वतंत्रता का आन्दोलन चल रहा था। अतः आधुनिक हिंदी काव्य में राष्ट्रीयता की व्यंजना होना स्वाभाविक था।

आधुनिक हिंदी काव्यधारा में राष्ट्रीय चेतना का स्पंदन

भारतेंदु हरिश्चन्द्र राष्ट्रीय चेतना के प्रबल उन्नायकों में से थे। भारतेंदु का काल राजनीतिक दृष्टि से नवजागरण का काल कहा जा सकता है, क्योंकि इस काल में जिस राजनीतिक भावना का उद्भव हुआ, उसका भारतीय राष्ट्रीयता के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतेंदु युग में राष्ट्रीय चेतना के स्वरूप को अनेक रूपों में व्यक्त किया गया। परतंत्र भारत में जहाँ बोलने की आजादी नहीं थी वहाँ भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने भारतीय जनता को अपनी भाषा को अंगीकार करने की बात कही। उल्लेखनीय है कि भारतेंदु ने हिंदी गद्य के उन्नयन के साथ–साथ परंपरागत ब्रज भाषा काव्य की धारा का भी अनुगमन किया। इन्होंने आरंभ में ब्रज भाषा में काव्य रचना की जिसमें राष्ट्रीय चेतना अंगड़ाई ले रही थी–

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल,
बिन निज भाषा–ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।"

भारतेंदु की कुछ कविताओं में तो राष्ट्रीयता का स्वर बहुत तेज है। उन्होंने अपने नाटक 'भारत–दुर्दशा' में राष्ट्र की दुर्दशा का चित्रण करते हुए भारत की जनता को जागृत करने का प्रयत्न किया। वे समस्त भारतवासियों को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि इस समय, अंग्रेजों के राज में, भारत की वह दुर्दशा हो चुकी है जो मुझसे देखी नहीं जाती और जिस पर हम सभी भारतीयों को चिंता और चिंतन करना चाहिए।

साहित्य समाज को जागृत करने वाला सबसे सशक्त साधन है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मत है कि सारे मानव समाज को सुन्दर बनाने का नाम साहित्य है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने साहित्य को समाज एवं राष्ट्र को जगाने वाला साधन माना है। जब हमारा देश गुलाम एवं जनता उपेक्षित थी तब देश के साहित्यकारों ने समाज को सचेत करने के लिए उनकी गौरव गाथा को सुनाया। हिंदी साहित्यकारों ने अपने–अपने तरीके से, अपनी भाषा–बोली एवं लेखनी द्वारा किसी न किसी रूप में समाज को सचेत करने का काम किया। लोगों में राष्ट्रीयता का अभाव नहीं था। वह गुलामी के कारण दब सी गयी थी। साहित्यकारों ने राष्ट्रीयता की चिंगारी को धीरे–धीरे प्रज्ज्वलित किया।

'भारत–भारती' : हिंदी काव्य में राष्ट्रीय चेतना का पाञ्चजन्य

मैथिली शरण गुप्त ने 1914 में प्रकाशित 'भारत–भारती' रचना में राष्ट्रीय गौरव को पुनः स्थापित करने का प्रयत्न किया। उन्होंने प्राचीनता के आलोक में वर्तमान समस्याओं का हल खोजने की कोशिश की, जिसमें वह पूरी तरह से सफल भी हुए हैं। इसी रचना के आधार पर महात्मा गाँधी ने मैथिली शरण गुप्त को राष्ट्रकवि की उपाधि प्रदान की। परतंत्रता दौर के कवि अतीत को याद कर जनता में राष्ट्रीय चेतना का प्रकाश फैलाते हैं। प्राचीन भारत के गौरवशाली इतिहास को याद कर कवि की लेखनी चीत्कार उठती है:

हम कौन थे, क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी।
आओ विचारें आज मिलकर, यह समस्याएं सभी।।

भारतेंदु हरिश्चन्द की राष्ट्रीयता की प्रतिछाया मैथिलीशरण गुप्त में भी स्पष्ट दिखाई पड़ती है। वे लिखते हैं कि–

जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर–पशु निरा और मृतक समान है।

छायावादी हिंदी काव्यधारा में राष्ट्रीय चेतना का स्पंदन

छायावाद के काव्य पुरोधा तो ब्रिटिश सत्ता से आँख से आँख मिलाकर राष्ट्रीयता के गीत गाते हैं। कविवर सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने भारतीय अस्मिता एवं गौरव को संस्कृति एवं राष्ट्र–धर्म को अपनी रचना के माध्यम से जन–मन तक पहुँचाने का कार्य किया। वे 'अणिमा' में संकलित अपनी कविता 'भारत ही जीवन–धन' में लिखते हैं कि –

भारत ही जीवन–धन
ज्योतिर्मय परम–रमण
सर–सरिता वन उपवन।

निराला जी ने राष्ट्रीय चेतना से ओत–प्रोत अनेक कविताओं की रचना की। वह वीणावादिनी से यही वरदान माँगते हैं कि मेरे प्रिय भारत देश की जनता को स्वतंत्रता रूपी नव अमृत मंत्र दे दो। निराला द्वारा रचित भारत माता की वंदना कविता उद्धृत है:

भारति, जय, विजयकरे!
कनक–शस्य–कमलधरे
लंका पदतल शतदल,
गर्जितोर्मि सागर–जल
धोता–शुचि चरण युगल
स्तव कर बहु–अर्थ–भरे।

मैथिलीशरण गुप्त के बाद राष्ट्रीयता का स्वर माखनलाल चतुर्वेदी ने संभाला। इन्होंने भारत एवं भारतीयता के साथ ही राष्ट्र के गौरवशाली परम्परा, साहित्य एवं संस्कृति को अपनी रचनाओं का आधार स्तम्भ बनाया। वे लिखते हैं कि –

प्यारे भारत देश
गगन–गगन तेरा यश फहरा
पवन–पवन तेरा बल गहरा
क्षिति–जल–नभ पर डाल हिंडोले
चरण–चरण संचरण सुनहरा
ओ ऋषियों के त्वेष
प्यारे भारत देश।।

माखनलाल चतुर्वेदी क्रांतिकारियों के हाथों की हथकड़ियों को गहना कहते हैं। वह लिखते हैं कि ब्रिटिश राज के अहंकार का कुआँ एक दिन सूख जायेगा। भारत की जनता ब्रिटिश सत्ता को उखाड़कर फेंक देगी। उनमें राष्ट्रीयता अंग्रेज शासकों के प्रति विद्रोह के रूप में प्रस्फुटित हुआ है। उन्होंने अपनी कविताओं के द्वारा अनेक युवकों को राष्ट्र के लिए आत्म–बलिदान की प्रेरणा दी है। उनकी 'जवानी' शीर्षक कविता, जो अत्यंत ओजस्वी और देशभक्ति से परिपूर्ण है, की कुछ पंक्तियाँ–

द्वार बलि का खोल चल, भूडोल कर दें,
एक हिम–गिरि एक सिर का मोल कर दें
मसल कर, अपने इरादों–सी, उठा कर,
दो हथेली हैं कि पृथ्वी गोल कर दें?
रक्त है? या नसों में क्षुद्र पानी !
जाँच कर, तू सीस दे–देकर जवानी ?

अंग्रेजी शासनकाल में स्वतंत्रता के लिए लिखना आग से खिलवाड़ करना था। प्रेमचंद की 'सोजे वतन' रचना को अंग्रेजी सत्ता ने जब्त कर लिया था। छायावादी कवियों की लेखनी आग उगल रही थी। उन्हें जैसे किसी का डर ही नहीं था। ऐसा प्रतीत होता है कि छायावादी कवियों ने सिर पर कफन बाँध लिया हो। सुमित्रानंदन पंत ने इसी समय प्रसिद्ध कविता 'भारत माता' लिखी। भारत माता गाँवों में निवास करने वाली लाखों करोड़ों अशिक्षित, दलित, शोषित, भूखी, नंगी जनता के हृदय में निवास करती हैं।

भारतमाता
ग्रामवासिनी।
खेतों में फैला है श्यामल
धूल भरा मैला सा आँचल,
गंगा यमुना में आँसू जल,
मिट्टी की प्रतिमा
उदासिनी।

प्रगतिवादी हिंदी काव्यधारा में राष्ट्रीय चेतना का स्पंदन

आधुनिक हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का जो स्वरूप मिलता है वह मूल रूप से राष्ट्रवादी साहित्यकारों ने जगाया था। उनके दिलो–दिमाग में राष्ट्र–भक्ति, राष्ट्र–प्रेम, मानवीय मूल्य साहित्य, संस्कृति एवं धर्म के उत्थान की भाव–वृत्ति व्याप्त थी। आधुनिक हिंदी साहित्य में राष्ट्रकवि दिनकर जी प्रखर ओजस्वी विद्रोही एवं राष्ट्रवाद से पूर्ण प्रेरित कवि हैं। उनकी रचना में धर्म, संस्कृति लोक–चेतना, लोक–राग एवं भारतीय दर्शन की गाथा देखने को मिलती है। उन्होंने भारतीय समाज को जगाने के साथ ही साथ आम भारतीयों के मन में राष्ट्रीयता का स्वर डालते हुए लिखा कि –

जागो गौतम! जागो महान!
जागो, अतीत के क्रान्ति–गान !
जागो, जगती के धर्म–तत्व
जागो, हे! जागो बोधिसत्व !

वास्तव में देखा जाए तो दिनकर का काव्य आम जनमानस में राष्ट्रीयता का भाव भरने वाला है। वे लिखते हैं कि –

दहक रही मिट्टी स्वदेश की, खौल रहा गंगा का पानी,
प्राचीरों में गरज रही है जंजीरों से कसी जवानी।
अर्पित करो समिध, आओ, हे समता के अभियानी !
इसी कुंड से निकलेगी भारत की लाल भवानी।

आगे, वे अपनी पद्य–नाटिका 'मगध–महिमा' में राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता को सर्वोपरि रखते हुए लिखते हें कि –

नहीं चाहते किसी देश को हम निज दास बनाना,
पर, स्वदेश का एक मनुज भी दास न कहीं रहेगा।

कवि की लेखनी में यदि अपने देश के प्रति प्रेम और गौरव ही न झलकता हो तो उसका काव्य ही निरर्थक है। प्रसिद्ध कवि रामधारी सिंह दिनकर ने "कलम आज उनकी जय बोल" कविता में राष्ट्रीय अस्मिता के लिए बलिदान हो जाने वाले देशभक्त वीरों के लिए आह्वान करते हुए लिखा हैः

कलम, आज उनकी जय बोल
जला अस्थियां बारी–बारी
चटकाई जिनमें चिंगारी,
जो चढ़ गये पुण्यवेदी पर,
लिए बिना गर्दन का मोल।
कलम, आज उनकी जय बोल।

गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' की कविता 'स्वदेश' का यह छन्द–बन्ध जन–जन की जिह्वा पर आद्यन्त विराजमान रहा है, जो युवाओं और देशभक्तों के दिलों में देश–प्रेम की भावना जगाने के लिए अत्यंत लोकप्रिय थी–

जो भरा नहीं है भावों से,
बहती जिसमें रस–धार नहीं।
वह हृदय नहीं है पत्थर है,
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

राष्ट्रीय चेतना के काव्य में महिलाएं किसी से पीछे नहीं थीं। वह पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही थीं। सुभद्राकुमारी चौहान की कविताएँ क्रांतिकारियों का स्वर बन गयी। 'वीरों का कैसा हो वसंत', 'झांसी की रानी', 'जलियांवाला बाग में वसंत' आदि कविताओं ने जनता के अंतस में उत्साह का संचार कर दिया।

अपनी एक कविता में सुभद्राकुमारी चौहान ने अपने गीतों में नवयुवकों को स्वतंत्रता के लिए मर–मिटने का आह्वान किया है। वे एक बहन के रूप में अपने देश के भाइयों को चुनौती देती हुई कहती हैं 'अगर तुम्हें देश (भारत माता) के स्वतंत्र न होने की पीड़ा है, तो राखी बंधवाने के बजाय देश की खातिर जेल जाकर हथकड़ी पहनो!

आते हो भाई? पुनः पूछती हूँ–
कि माता के बंधन की है लाज तुमको?
तो बंदी बनो, देखो बंधन है कैसा,
चुनौती यह राखी की है आज तुमको।

आज, यदि हम वन्दे मातरम् की इस सुदीर्घ डेढ़ सौ वर्षों की यात्रा को शब्दों में समेटना चाहें तो कहना होगा कि यह गीत हमारे सामूहिक भाव का वह दीपक है, जो हर युग में नए अर्थों के साथ जलता रहा है। वन्दे मातरम् गीत में भारत की चिरंतन गतिशील आत्मा प्रकट होती है। प्रकृति की सारी सुषमा से समन्वित, सारी कामनाओं को पूरा करने वाली, मधुर वाणी वाली, निर्मल, अतुलनीय, ज्ञान और शक्ति से परिपूर्ण भारत माता की स्निग्ध, तरल और जीवंत छवि समावेशी ढंग से चराचर जगत के लिए प्रीति और सौख्य का भाव जगाती है। यह सारे भेदभावों से परे एक आत्मीय प्रतिमा को रूपायित करती है।

वन्दे मातरम् का अर्थ है समग्र जीवन को स्वीकार करने की दिशा में अग्रसर होना। इस राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन में जहां लाखों योद्धाओं ने अपने प्राणों की आहुति दी, वहीं हिंदी साहित्य के साहित्यकार भी इस दौड़ में पीछे नहीं रहे और अपनी लेखनी के माध्यम से जन–जन में राष्ट्रीय चेतना और गौरव का भाव प्रस्फुटित किए। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान हिंदी साहित्यकारों की सर्जना न केवल हिंदी की श्रेष्ठ सर्जना हैं अपितु राष्ट्रीय चेतना की उदात्त भावना से ओत–प्रेत उच्च कोटि के राष्ट्रीय गान भी हैं। ये गीत देश के प्रति अनुराग की भावना जगाने के साथ–साथ जननी जन्म भूमि के पावन चरणों पर श्रद्धानत हो, आत्म बलिदान कर देने की प्रेरणा प्रदान करते हैं।

संदर्भ सूचीः

1. भारतेन्दु हरिश्चन्द– 'भारत दुर्दशा'
2. जयशंकर प्रसाद की रचनाएं
3. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला– 'अणिमा' काव्य संग्रह
4. मैथिलीशरण गुप्त की रचना– 'भारत भारती'
5. माखन लाल चतुर्वेदी की रचना
6. राष्ट्र कवि दिनकर की रचना
7. भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय चेतना– प्रो. रचना शर्मा
8. हिंदी पत्रकारिता और राष्ट्रीय चेतना– डॉ. पंकज विरमाल
9. विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख

वन्दे मातरम् : हिंदी साहित्य और युगबोध

—डॉ. आल अहमद
अतिथि सहायक आचार्य (हिंदी),
मौलाना आजाद उर्दू विश्वविद्यालय, लखनऊ

अपनी मातृभूमि, संस्कृति, भाषा, इतिहास तथा परंपराओं के प्रति सम्मान, समर्पण और उत्तरदायित्व की सामूहिक भावना को राष्ट्रीय चेतना कहा जाता है। यह ऐसी प्रेरक शक्ति है जो नागरिकों को राष्ट्र की एकता, अखंडता, स्वाधीनता तथा गौरव के प्रति सजग और उत्तरदायी बनाती है। राष्ट्रीय चेतना के आधार पर व्यक्ति अपने व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठकर राष्ट्रहित को प्राथमिकता देने का प्रयास करता है। भारतीय संदर्भ में यह चेतना विविध सांस्कृतिक परंपराओं, ऐतिहासिक अनुभवों तथा साझा राष्ट्रीय मूल्यों से निर्मित हुई है, जिसने समय—समय पर समाज को एक सूत्र में बाँधने और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने का कार्य किया है।

भारतीय राष्ट्रीय चेतना के इतिहास में वन्दे मातरम् का विशिष्ट और गौरवपूर्ण स्थान है। यह केवल एक साहित्यिक रचना या राष्ट्रीय गीत नहीं, बल्कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राष्ट्रीय स्वाभिमान, सांस्कृतिक गौरव तथा मातृभूमि के प्रति समर्पण का सशक्त उद्घोष बनकर उभरा। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत मूलतः उनके उपन्यास आनंदमठ (1882) में प्रकाशित हुआ, जहाँ मातृभूमि को देवीस्वरूपा माता तथा राष्ट्रशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। उस समय भारत ब्रिटिश शासन के अधीन था और राष्ट्रीय भावना को संगठित करने की आवश्यकता तीव्रता से अनुभव की जा रही थी। ऐसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में वन्दे मातरम् भारतीय समाज में राष्ट्रप्रेम, आत्मगौरव और स्वतंत्रता—संकल्प की भावना को अभिव्यक्त करने वाला एक प्रभावशाली साहित्यिक माध्यम बनकर सामने आया।

वन्दे मातरम् में मातृभूमि को केवल भौगोलिक इकाई के रूप में नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और राष्ट्रीय सत्ता के रूप में चित्रित किया गया है। गीत में भारत की प्राकृतिक संपन्नता, हरित धरा, जल, वनस्पति तथा सांस्कृतिक वैभव का अत्यंत सौंदर्यपूर्ण और भावपूर्ण चित्रण मिलता है। मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, भक्ति और समर्पण का यह स्वर भारतीय सांस्कृतिक परंपरा, प्रकृति—चेतना तथा राष्ट्रप्रेम का समन्वित रूप प्रस्तुत करता है। यही कारण है कि वन्दे मातरम् केवल एक काव्यात्मक अभिव्यक्ति न रहकर भारतीय राष्ट्रीय अस्मिता का स्थायी सांस्कृतिक प्रतीक बन गया।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान वन्दे मातरम् राष्ट्रीय संघर्ष का प्रेरणादायी उद्घोष बन गया। स्वतंत्रता सेनानियों ने इसे राष्ट्रीय एकता, आत्मबल तथा स्वाधीनता के प्रतीक के रूप में अपनाया। अनेक आंदोलनों, सार्वजनिक सभाओं, जुलूसों तथा राष्ट्रीय आयोजनों में इसके सामूहिक गायन ने जनसामान्य में राष्ट्रप्रेम, आत्मविश्वास और स्वतंत्रता के प्रति समर्पण की भावना को सुदृढ़ किया। इस प्रकार वन्दे मातरम् ने केवल भावनात्मक प्रेरणा ही नहीं दी, बल्कि स्वतंत्रता आंदोलन को वैचारिक और सांस्कृतिक ऊर्जा भी प्रदान की। इसलिए इसका अध्ययन केवल साहित्यिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि भारतीय राष्ट्रीय चेतना के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दस्तावेज के रूप में भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

साहित्यिक दृष्टि से वन्दे मातरम् अपनी काव्यात्मक अभिव्यक्ति, प्रकृति–चित्रण, प्रतीकात्मकता तथा भाव–सौंदर्य के कारण भारतीय साहित्य की कालजयी कृतियों में प्रतिष्ठित है। इस गीत में राष्ट्रप्रेम और भक्ति का ऐसा अद्वितीय समन्वय मिलता है, जिसमें मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, सांस्कृतिक गौरव तथा राष्ट्रीय समर्पण को कलात्मक गरिमा के साथ अभिव्यक्त किया गया है। इसकी भाषा, बिंब–योजना, प्रतीक–विधान और भावात्मक प्रभाव इसे केवल राष्ट्रीय गीत ही नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक चेतना की उत्कृष्ट साहित्यिक अभिव्यक्ति भी सिद्ध करते हैं। इसी प्रकार हिंदी साहित्य ने भी अपने विकासक्रम में राष्ट्रीय चेतना को निरंतर सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की है। हिंदी के अनेक साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रप्रेम, सांस्कृतिक अस्मिता, राष्ट्रीय एकता तथा स्वतंत्रता–चेतना के विचारों का व्यापक प्रसार किया। परिणामस्वरूप वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य के मध्य एक स्वाभाविक वैचारिक एवं सांस्कृतिक साम्य स्थापित होता है। दोनों की प्रेरणा का मूल आधार मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, राष्ट्रीय स्वाभिमान तथा सांस्कृतिक गौरव है। इस दृष्टि से वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य के अंतर्संबंधों का अध्ययन भारतीय राष्ट्रवाद के सांस्कृतिक स्वरूप तथा उसके साहित्यिक विकास को समझने के लिए अत्यंत आवश्यक और औचित्यपूर्ण है।

जैसा कि हम जानते हैं कि वर्तमान वैश्वीकरण के युग में, जब विश्व स्तर पर सांस्कृतिक, आर्थिक तथा तकनीकी संपर्क निरंतर बढ़ गया हैं, तब राष्ट्रीय मूल्यों, सांस्कृतिक पहचान तथा राष्ट्रीय एकता के संरक्षण का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। ऐसे समय में 'वन्दे मातरम्' तथा हिंदी साहित्य भारतीय समाज को उसकी ऐतिहासिक विरासत, सांस्कृतिक अस्मिता और राष्ट्रीय मूल्यों से जोड़ने में सक्षम है। यही कारण है कि इस विषय का अध्ययन केवल ऐतिहासिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि समकालीन सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में भी समान रूप से प्रासंगिक एवं आवश्यक है।

वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना : राष्ट्र–निर्माण के परिप्रेक्ष्य में

वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य का संबंध भारतीय राष्ट्रीय चेतना की समान वैचारिक पृष्ठभूमि पर आधारित है। दोनों की प्रेरणा का मूल स्रोत मातृभूमि के प्रति गहन अनुराग, सांस्कृतिक गौरव, राष्ट्रीय स्वाभिमान तथा राष्ट्रीय एकता की भावना है। यद्यपि वन्दे मातरम् एक गीत के रूप में अभिव्यक्त हुआ और हिंदी साहित्य ने कविता, उपन्यास, नाटक, कहानी, निबंध तथा अन्य साहित्यिक विधाओं के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति प्राप्त की, फिर भी दोनों का मूल उद्देश्य समान रहा–भारतीय समाज में राष्ट्रप्रेम, सांस्कृतिक अस्मिता और राष्ट्रीय चेतना को जागृत, सुदृढ़ तथा व्यापक बनाना। एक ओर वन्दे मातरम् ने अपनी भावपूर्ण, लयात्मक और प्रेरणादायी अभिव्यक्ति के माध्यम से जनमानस के हृदय में राष्ट्रभक्ति की भावना का संचार किया, वहीं दूसरी ओर हिंदी साहित्य ने उसी राष्ट्रीय भावना को वैचारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आधार प्रदान करते हुए उसे स्थायित्व दिया। इस प्रकार वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य भारतीय राष्ट्रवाद की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के दो ऐसे परस्पर पूरक माध्यम हैं, जिन्होंने एक–दूसरे को निरंतर शक्ति, प्रेरणा और वैचारिक समर्थन प्रदान किया।

हिंदी साहित्य में व्यक्त राष्ट्रीय भावना का मूल स्वर भी वही है जो वन्दे मातरम् में प्रतिध्वनित होता है–मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, उसकी प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक गरिमा के प्रति गौरव तथा उसके संरक्षण के लिए समर्पण। यही भाव राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध कृति भारत–भारती में भी अत्यंत प्रभावशाली रूप में अभिव्यक्त हुआ है–

"भूलोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला–स्थल कहाँ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहाँ।"

इन पंक्तियों में भारतभूमि के प्राकृतिक वैभव और सांस्कृतिक महिमा का जो गौरवपूर्ण चित्र उपस्थित हुआ है, वही भाव वन्दे मातरम् में भी भारतमाता की वंदना के रूप में व्यक्त होता है। दोनों रचनाएँ भारतीय भूमि को केवल भौगोलिक इकाई नहीं मानतीं, बल्कि उसे सांस्कृतिक चेतना और राष्ट्रीय अस्मिता के जीवंत प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित करती हैं।

वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य दोनों का मूल उद्देश्य राष्ट्र के प्रति प्रेम, समर्पण तथा राष्ट्रीय चेतना का विकास करना है। दोनों की अभिव्यक्ति में मातृभूमि के प्रति गहन श्रद्धा, राष्ट्रीय गौरव की अनुभूति तथा स्वतंत्रता के प्रति अटूट प्रतिबद्धता का समान स्वर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इन दोनों में राष्ट्र को केवल राजनीतिक सत्ता या भौगोलिक सीमाओं के रूप में नहीं देखा गया, बल्कि उसे एक ऐसी मातृशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है जिसके प्रति प्रत्येक नागरिक का नैतिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक दायित्व है। यही कारण है कि वन्दे मातरम् के भाव और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय अभिव्यक्तियाँ भारतीय जनमानस के हृदय में समान रूप से स्थान बना सकीं। स्वतंत्रता आंदोलन के समय इन दोनों की राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत अभिव्यक्तियों ने सामान्य जनता, विद्यार्थियों, युवाओं तथा बुद्धिजीवियों में राष्ट्रीय चेतना का संचार किया और उन्हें देश की स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीय सम्मान के लिए एकजुट होने की प्रेरणा प्रदान की। राष्ट्र के प्रति समर्पण और आत्मोत्सर्ग की यही भावना माखनलाल चतुर्वेदी की अमर कविता 'पुष्प की अभिलाषा' में अत्यंत मार्मिक रूप से अभिव्यक्त हुई है–

"मुझे तोड़ लेना वनमाली,
उस पथ पर देना तुम फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने
जिस पथ जाएँ वीर अनेक।"

इन पंक्तियों में व्यक्त मातृभूमि के लिए सर्वस्व समर्पित कर देने की भावना वन्दे मातरम् की राष्ट्रीय चेतना से पूर्णतः सामंजस्य रखती है। यहाँ राष्ट्रप्रेम केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति नहीं रह जाता, बल्कि त्याग, कर्तव्य और बलिदान का जीवंत आदर्श बनकर सामने आता है। यही आदर्श भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के समय जनमानस की प्रेरक शक्ति बना।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य दोनों ने भारतीय राष्ट्रीय चेतना को केवल भावात्मक आधार ही नहीं दिया, बल्कि उसे वैचारिक गहराई, नैतिक दृढ़ता और सांस्कृतिक व्यापकता भी प्रदान की। दोनों ने मिलकर भारतीय समाज में ऐसी राष्ट्रीय भावना का निर्माण किया जिसमें राष्ट्र के प्रति प्रेम, सांस्कृतिक आत्मगौरव, राष्ट्रीय उत्तरदायित्व तथा स्वतंत्रता के प्रति समर्पण एक–दूसरे से अविभाज्य रूप में जुड़े हुए दिखाई देते हैं। यही कारण है कि भारतीय राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया में वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य का योगदान समान रूप से महत्वपूर्ण तथा ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यंत मूल्यवान माना जाता है।

गीत और साहित्य दोनों जन–जागरण के अत्यंत प्रभावशाली माध्यम हैं, यद्यपि उनकी अभिव्यक्ति की प्रकृति, शैली और प्रभाव में स्वाभाविक भिन्नता दिखाई देती है। गीत अपनी लयात्मकता, संगीतमयता और भावात्मक

तीव्रता के कारण सीधे जनमानस के हृदय को स्पर्श करता है तथा अल्प समय में व्यापक जनसमूह को एक साझा भावना से जोड़ने की क्षमता रखता है। इसके विपरीत साहित्य विचारों, अनुभवों और जीवन–मूल्यों को अधिक गहन, व्यापक और स्थायी रूप प्रदान करता है। साहित्य केवल भावनात्मक प्रेरणा तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह व्यक्ति के चिंतन, दृष्टिकोण और सामाजिक उत्तरदायित्व का भी निर्माण करता है। इस दृष्टि से गीत तत्काल प्रेरणा प्रदान करता है, जबकि साहित्य उस प्रेरणा को वैचारिक दृढ़ता और सांस्कृतिक आधार देकर दीर्घकालीन राष्ट्रीय चेतना में रूपांतरित करता है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान इन दोनों माध्यमों ने परस्पर पूरक भूमिका निभाई। जहाँ वन्दे मातरम् जैसे राष्ट्रीय गीतों ने जनता में उत्साह, साहस और संघर्ष की भावना का तत्काल संचार किया, वहीं हिंदी साहित्य ने उसी राष्ट्रीय भावना को इतिहास, संस्कृति और राष्ट्रीय उत्तरदायित्व से जोड़कर अधिक व्यापक स्वरूप प्रदान किया। परिणामस्वरूप राष्ट्रीय चेतना केवल आंदोलन का नारा न रहकर भारतीय समाज की सामूहिक जीवन–दृष्टि का अभिन्न अंग बन गई। राष्ट्रीय जागरण की इसी सृजनात्मक शक्ति को हिंदी साहित्य के अनेक कवियों ने अपनी रचनाओं में प्रभावशाली स्वर प्रदान किया। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की प्रसिद्ध कविता 'विप्लव–गान' में कवि का यह आह्वान केवल काव्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि पराधीन भारत के जनमानस को जागृत करने का सशक्त उद्घोष है–

'कवि! कुछ ऐसी तान सुनाओ,
जिससे उथल–पुथल मच जाए।''

इन पंक्तियों में निहित क्रांतिकारी चेतना उस राष्ट्रीय भावभूमि का प्रतिनिधित्व करती है, जिसका उद्देश्य समाज को जड़ता, निराशा और पराधीन मानसिकता से मुक्त कर सक्रिय राष्ट्रीय जीवन की ओर प्रेरित करना है। यही जागरण वन्दे मातरम् के स्वर में भी विद्यमान है, जिसने स्वतंत्रता आंदोलन के समय लाखों भारतीयों के मन में आत्मविश्वास, साहस और राष्ट्रभक्ति का संचार किया।

वन्दे मातरम् तथा हिंदी साहित्य ने भारतीय संस्कृति, इतिहास और स्वतंत्रता–संघर्ष को राष्ट्रीय पहचान प्रदान करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। दोनों ने भारतीय समाज को उसकी गौरवशाली सांस्कृतिक परंपराओं, ऐतिहासिक विरासत और राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति पुनः जागरूक किया। इनकी अभिव्यक्तियों में भारत केवल एक भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि एक ऐसी सांस्कृतिक सभ्यता के रूप में उपस्थित होता है जिसकी ऐतिहासिक स्मृतियाँ, प्राकृतिक संपदा और आध्यात्मिक परंपराएँ राष्ट्रीय गौरव का आधार हैं। वन्दे मातरम् ने भारतमाता के प्रतीक के माध्यम से मातृभूमि के प्रति श्रद्धा और आत्मीयता की भावना को सशक्त बनाया, जबकि हिंदी साहित्य ने भारतीय इतिहास, संस्कृति और स्वतंत्रता–संघर्ष के विविध पक्षों को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान कर राष्ट्रीय चेतना को अधिक व्यापक और स्थायी स्वरूप दिया।

वन्दे मातरम् तथा हिंदी साहित्य दोनों ने भारतीय संस्कृति, परंपरा और आध्यात्मिक मूल्यों को राष्ट्रीय चेतना से जोड़ने का अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किया। इनकी अभिव्यक्तियों में राष्ट्र केवल राजनीतिक सत्ता अथवा भौगोलिक सीमाओं का पर्याय नहीं है, बल्कि वह भारतीय संस्कृति, जीवन–दर्शन, नैतिक मूल्यों और आध्यात्मिक परंपराओं से निर्मित एक जीवंत सांस्कृतिक सत्ता के रूप में प्रतिष्ठित होता है। इन दोनों की दृष्टि में राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसकी सांस्कृतिक चेतना, नैतिक आदर्शों और मानवीय मूल्यों में निहित है। इसीलिए वन्दे मातरम् मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, सम्मान और आत्मीयता का भाव उत्पन्न करता है, जबकि हिंदी

साहित्य उसी भावना को व्यापक सांस्कृतिक संदर्भ प्रदान करते हुए व्यक्ति और समाज के मध्य राष्ट्रीय उत्तरदायित्व की चेतना विकसित करता है।

महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की वंदना–कविता 'भारति, जय, विजय करे' में भी भारतमाता का यही सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक स्वरूप अत्यंत प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त हुआ है–

''भारति, जय, विजय करे,
कनक–शस्य–कमलधरे!''

इन पंक्तियों में भारत केवल भूमि नहीं, बल्कि समृद्धि, संस्कृति, ज्ञान और आध्यात्मिक चेतना की अधिष्ठात्री शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित है। यही भाव वन्दे मातरम् की मूल संवेदना से पूर्णतः सामंजस्य रखता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य ने मिलकर भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की ऐसी वैचारिक आधारभूमि निर्मित की, जिसमें राष्ट्रप्रेम, सांस्कृतिक अस्मिता, ऐतिहासिक गौरव और आध्यात्मिक जीवन–दृष्टि एक–दूसरे के पूरक रूप में विकसित होते हैं।

समकालीन भारत में वन्दे मातरम् की प्रासंगिकता केवल एक ऐतिहासिक राष्ट्रीय गीत के रूप में नहीं है, बल्कि वह आज भी राष्ट्रीय एकता, देशभक्ति, सांस्कृतिक गौरव और राष्ट्रीय अस्मिता का एक सशक्त प्रतीक बना हुआ है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जिस गीत ने लाखों देशवासियों में आत्मबल, साहस और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष का संकल्प उत्पन्न किया था, वही गीत आज भी प्रत्येक भारतीय को अपने राष्ट्र, उसकी संस्कृति और उसके गौरवशाली इतिहास के प्रति उत्तरदायित्व का बोध कराता है। राष्ट्रीय पर्वों, शैक्षणिक संस्थानों, सांस्कृतिक आयोजनों तथा सार्वजनिक जीवन के विभिन्न अवसरों पर वन्दे मातरम् की उपस्थिति केवल एक औपचारिक परंपरा नहीं है, बल्कि वह राष्ट्रीय एकात्मता और सांस्कृतिक निरंतरता का सजीव प्रतीक है। इसकी प्रेरणा नागरिकों को यह स्मरण कराती है कि राष्ट्र के प्रति सम्मान, समर्पण और सेवा प्रत्येक व्यक्ति का नैतिक कर्तव्य है। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' की प्रसिद्ध कविता 'हिमालय'–

''मेरे नगपति! मेरे विशाल!
साकार, दिव्य, गौरव विराट''

इसमें हिमालय केवल एक पर्वत नहीं, बल्कि भारत के आत्मगौरव, सांस्कृतिक वैभव और राष्ट्रीय शक्ति का प्रतीक बनकर उभरता है। यही भाव वन्दे मातरम् में मातृभूमि की महिमा और उसकी वंदना के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। दोनों रचनाएँ भारतीय राष्ट्र की सांस्कृतिक गरिमा को उसके प्राकृतिक, ऐतिहासिक और आध्यात्मिक वैभव से जोड़ते हुए राष्ट्रीय चेतना को और अधिक सुदृढ़ बनाती हैं। हिंदी साहित्य वर्तमान समय में भी राष्ट्रीय मूल्यों, लोकतांत्रिक चेतना, सामाजिक समरसता तथा सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण और संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

साहित्य समाज का दर्पण होने के साथ–साथ उसकी चेतना का संवाहक भी होता है। समकालीन हिंदी साहित्य वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों, बदलते जीवन–मूल्यों तथा विविध राष्ट्रीय सरोकारों को रचनात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए राष्ट्रीय चेतना को नई दृष्टि देता है। इसके माध्यम से राष्ट्रीय एकता, सामाजिक उत्तरदायित्व,

लोकतांत्रिक आदर्श, सांस्कृतिक विविधता तथा मानवीय मूल्यों के प्रति समाज में व्यापक जागरूकता का विकास होता है। इस प्रकार हिंदी साहित्य अतीत की गौरवगाथा का केवल स्मरण नहीं कराता, बल्कि वर्तमान समय की चुनौतियों के अनुरूप राष्ट्रीय जीवन को नई वैचारिक दिशा भी प्रदान करता है।

युवा वर्ग किसी भी राष्ट्र की सबसे महत्वपूर्ण शक्ति और उसके भविष्य का आधार होता है। राष्ट्र की प्रगति, सामाजिक विकास तथा लोकतांत्रिक मूल्यों की सुदृढ़ता उसके युवाओं की चेतना, दृष्टि और उत्तरदायित्व पर निर्भर करती है। ऐसे में भारतीय इतिहास, संस्कृति और हिंदी साहित्य से उनका परिचय केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं, बल्कि राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। हिंदी साहित्य के अध्ययन से युवा अपने राष्ट्र के गौरवपूर्ण इतिहास, सांस्कृतिक विरासत तथा स्वतंत्रता–संघर्ष के आदर्शों से परिचित होते हैं, जिससे उनमें राष्ट्रप्रेम, सामाजिक उत्तरदायित्व, नैतिक मूल्यों तथा राष्ट्रीय एकता के प्रति सम्मान की भावना विकसित होती है। वन्दे मातरम् जैसी प्रेरणादायी राष्ट्रीय अभिव्यक्तियाँ उनके मन में मातृभूमि के प्रति श्रद्धा, समर्पण और राष्ट्रीय स्वाभिमान का भाव जागृत करती हैं तथा उन्हें उत्तरदायी नागरिक बनने की प्रेरणा देती हैं। युवाओं में राष्ट्रसेवा और आत्मोत्सर्ग की इसी भावना को कवि सोहनलाल द्विवेदी ने अत्यंत प्रेरक शब्दों में अभिव्यक्त किया है–

''हो जहाँ बलि शीश अगणित,
एक सिर मेरा मिला लो।''

इन पंक्तियों में व्यक्त त्याग, समर्पण और राष्ट्रहित के लिए सर्वस्व अर्पित करने की भावना वन्दे मातरम् में निहित राष्ट्रीय चेतना के साथ पूर्ण सामंजस्य स्थापित करती है। इसी प्रकार स्वतंत्रता–संघर्ष में वीरता, आत्मसम्मान और राष्ट्रनिष्ठा के आदर्श को सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपनी अमर कविता 'झाँसी की रानी' में अमिट शब्दों में अभिव्यक्त किया है–

''खूब लड़ी मर्दानी, वह तो झाँसी वाली रानी थी।''

यह पंक्ति भारतीय नारी–शक्ति, साहस और राष्ट्रभक्ति का ऐसा अमर प्रतीक है जिसने अनेक पीढ़ियों में राष्ट्रीय स्वाभिमान और स्वतंत्रता के प्रति समर्पण की भावना को प्रेरित किया है। इस प्रकार हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय काव्यधारा और वन्दे मातरम् दोनों ने मिलकर भारतीय समाज में ऐसी राष्ट्रीय चेतना का निर्माण किया, जो केवल स्वतंत्रता–संघर्ष तक सीमित नहीं रही, बल्कि राष्ट्र–निर्माण, सांस्कृतिक संरक्षण, लोकतांत्रिक मूल्यों तथा उत्तरदायी नागरिकता की निरंतर प्रेरक शक्ति बन गई। वर्तमान वैश्वीकरण और तीव्र सामाजिक परिवर्तन के युग में भी इन दोनों की प्रासंगिकता अक्षुण्ण है, क्योंकि राष्ट्रीय अस्मिता, सांस्कृतिक निरंतरता और लोकतांत्रिक समाज के सुदृढ़ निर्माण के लिए इनका अध्ययन और संरक्षण समान रूप से आवश्यक है।

वर्तमान भारत में वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य दोनों की प्रासंगिकता राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न आयामों में आज भी स्पष्ट रूप से विद्यमान है। यद्यपि समय के साथ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा वैश्विक परिस्थितियों में व्यापक परिवर्तन हुए हैं, तथापि राष्ट्रप्रेम, सांस्कृतिक चेतना, राष्ट्रीय एकता, लोकतांत्रिक मूल्य तथा सामाजिक समरसता जैसे मूलभूत आदर्श आज भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के समय थे। यही कारण है कि वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य का महत्व केवल ऐतिहासिक संदर्भों तक सीमित

नहीं रह गया है, बल्कि वे आज भी राष्ट्रीय जीवन को दिशा प्रदान करने वाले प्रेरक स्रोत के रूप में अपनी सार्थक उपस्थिति बनाए हुए हैं। बदलते सामाजिक परिवेश, वैश्वीकरण, तकनीकी विकास तथा सांस्कृतिक विविधताओं के बीच भी दोनों भारतीय समाज को उसकी ऐतिहासिक विरासत, सांस्कृतिक मूल्यों और राष्ट्रीय पहचान से निरंतर जोड़ने का कार्य कर रहे हैं।

समकालीन समाज में राष्ट्रीय चेतना का स्वरूप भी अधिक व्यापक हो गया है। आज राष्ट्रप्रेम का अर्थ केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि संविधान के प्रति निष्ठा, लोकतांत्रिक मूल्यों का सम्मान, सामाजिक उत्तरदायित्व, सांस्कृतिक सहअस्तित्व तथा राष्ट्रीय विकास में सक्रिय सहभागिता से भी है। हिंदी साहित्य इन सभी आयामों को अपनी विविध साहित्यिक विधाओं के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करता है। समकालीन रचनाकार राष्ट्रीय सरोकारों को वर्तमान सामाजिक चुनौतियों के साथ जोड़ते हुए नागरिक चेतना को अधिक संवेदनशील, उत्तरदायी और मानवीय बनाने का प्रयास कर रहे हैं। इस प्रकार हिंदी साहित्य अतीत की राष्ट्रीय चेतना को वर्तमान की आवश्यकताओं से जोड़ते हुए भविष्य के लिए भी एक सशक्त वैचारिक आधार निर्मित करता है। वन्दे मातरम् भारतीय राष्ट्रीय चेतना का एक कालजयी, प्रेरणादायी और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण प्रतीक है। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत केवल राष्ट्रीय गीत के रूप में ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, बल्कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राष्ट्रीय स्वाभिमान, सांस्कृतिक गौरव, मातृभूमि के प्रति समर्पण तथा राष्ट्रीय एकता का सशक्त उद्घोष भी रहा है। इसकी भाव–संरचना में निहित राष्ट्रप्रेम और सांस्कृतिक चेतना ने भारतीय जनमानस को स्वतंत्रता–संग्राम के लिए प्रेरित करने में ऐतिहासिक भूमिका निभाई तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भी राष्ट्रीय जीवन को निरंतर प्रेरणा प्रदान करती रही।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य भारतीय राष्ट्रीय चेतना के दो ऐसे परस्पर पूरक आधार हैं, जिन्होंने राष्ट्रप्रेम को भावात्मक, सांस्कृतिक, वैचारिक और सामाजिक सभी स्तरों पर समृद्ध किया है। वन्दे मातरम् ने जहाँ राष्ट्रभावना को गीतात्मक और प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की, वहीं हिंदी साहित्य ने उसी चेतना को विचार, संस्कृति, इतिहास और सामाजिक जीवन के व्यापक संदर्भों में विकसित किया। दोनों ने मिलकर भारतीय राष्ट्रीय अस्मिता को सुदृढ़ करने, सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखने तथा राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया को वैचारिक शक्ति प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वर्तमान वैश्वीकरण और तीव्र सामाजिक परिवर्तन के युग में भी इन दोनों की प्रासंगिकता अक्षुण्ण है। राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक पहचान, लोकतांत्रिक मूल्यों तथा उत्तरदायी नागरिकता के सुदृढ़ विकास के लिए वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य का अध्ययन, संरक्षण तथा समुचित संवर्धन समान रूप से आवश्यक है। इसलिए इन्हें केवल अतीत की सांस्कृतिक धरोहर मानकर सीमित नहीं किया जा सकता, बल्कि वर्तमान और भविष्य के भारत के नैतिक, सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय जीवन के प्रेरणास्रोत के रूप में भी स्वीकार किया जाना चाहिए।

संदर्भः

1. गुप्त, मैथिलीशरण. भारत–भारती. चिरगाँवः साहित्य सदन
2. चतुर्वेदी, माखनलाल. हिमकिरीटिनी (जिसमें पुष्प की अभिलाषा संकलित है). नई दिल्लीः भारतीय ज्ञानपीठ

3. दिनकर, रामधारी सिंह. रेणुका (जिसमें हिमालय के प्रति संकलित है). नई दिल्लीः लोकभारती प्रकाशन
4. चौहान, सुभद्रा कुमारी. मुकुल (जिसमें झाँसी की रानी संकलित है). प्रयागः हिन्दी साहित्य सम्मेलन
5. द्विवेदी, सोहनलाल. भैरवी. इलाहाबादः भारती भंडार
6. प्रसाद, जयशंकर. लहर (जिसमें अरुण यह मधुमय देश हमारा संकलित है). वाराणसीः भारती भंडार
7. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी. अर्चना (जिसमें भारति, जय विजय करे संकलित है). इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन,
8. शर्मा, बालकृष्ण 'नवीन' कुंकुम (जिसमें विप्लव–गान संकलित है). नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन
9. बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय – आनंदमठ।
10. मैथिलीशरण गुप्त – भारत–भारती।
11. रामधारी सिंह 'दिनकर' – संस्कृति के चार अध्याय।
12. रामधारी सिंह 'दिनकर' – हुंकार।
13. माखनलाल चतुर्वेदी – हिमतरंगिणी।
14. सुभद्रा कुमारी चौहान – मुकुल।
15. भारतेंदु हरिश्चंद्र – भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी तथा अन्य राष्ट्रीय चेतना संबंधी निबंध।
16. (आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास; महावीर प्रसाद द्विवेदी, सरस्वती पत्रिका के संपादकीय लेख)द्वितीयक स्रोत
17. आचार्य रामचंद्र शुक्ल – हिंदी साहित्य का इतिहास।
18. हजारीप्रसाद द्विवेदी – हिंदी साहित्य की भूमिका।
19. हजारीप्रसाद द्विवेदी – भारतीय संस्कृति की देन।
20. रामविलास शर्मा – भारतेंदु हरिश्चंद्र और हिंदी नवजागरण।
21. रामविलास शर्मा – भारतीय साहित्य और हिंदी जाति।
22. नामवर सिंह – आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ।
23. नंददुलारे वाजपेयी – हिंदी साहित्य : बीसवीं शताब्दी।
24. नगेंद्र (संपादक) – हिंदी साहित्य का इतिहास।
25. बच्चन सिंह – हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास।
26. डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय – आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास।
27. भारतीय राष्ट्रवाद एवं स्वतंत्रता आंदोलन
28. बिपिन चंद्र – India's Struggle for Independence.

29. बिपिन चंद्र – India Since Independence.

30. सुमित सरकार – Modern India (1885–1947)

31. आर. सी. मजूमदार – History of the Freedom Movement in India.

32. ताराचंद – History of the Freedom Movement in India.

33. शोध–पत्रिका–आलोचना।

34. नागरी प्रचारिणी पत्रिका।

35. हिंदी अनुशीलन पत्रिका

समकालीन भारतीय साहित्य (Sahitya Akademi द्वारा प्रकाशित)।

36. इंद्रप्रस्थ भारती पत्रिका।

37. परिशोध पत्रिका।

38. राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय (National Digital Library of India), (https://ndl.iitkgp.ac.in\utm_source(chatgpt.com) – शोध–पुस्तकों एवं संदर्भ सामग्री के लिए।

39. इंटरनेट आर्काइव (Internet Archive), (https://archive.org\utm_source(chatgpt-com) – पुरानी पुस्तकों के डिजिटल संस्करण।

40. डिजिटल लाइब्रेरी ऑफ इंडिया, (https://dli.iitkgp.ac.in\utm_source(chatgpt.com) – दुर्लभ भारतीय ग्रंथों के लिए।

41. साहित्य अकादेमी, (https://sahitya-akademi.gov.in\utm_source(chatgpt.com) – भारतीय साहित्य संबंधी प्रामाणिक जानकारी।

42. भारत सरकार, संस्कृति मंत्रालय, (https://indiaculture.gov.in\utm_source(chatgpt.com) – भारतीय संस्कृति एवं विरासत संबंधी सामग्री।

43. प्रेस सूचना ब्यूरो (PIB), (https://pib.gov.in\utm_source(chatgpt.com) – सरकारी ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ।

44. राष्ट्रीय अभिलेखागार, भारत, (https://nationalarchives.nic.in\utm_source(chatgpt.com) – ऐतिहासिक दस्तावेजों के लिए।

45. शोधगंगा, (https://shodhganga.inflibnet.ac.in\utm_source(chatgpt.com) – एम.फिल. एवं पीएच.डी. शोध–प्रबंध।

46. यूजीसी–केयर (UGCCARE), (https://ugccare.unipune.ac.in\utm_source(chatgpt.com) – शोध–पत्रिकाओं की प्रामाणिक सूची।

वन्दे मातरम् : हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय धारा और युगीन चेतना का अंतर्संबंध

–प्रो. गौरी त्रिपाठी
आचार्य, हिंदी विभाग
गुरु घासीदास केंद्रीय विश्वविद्यालय
बिलासपुर, छत्तीसगढ

वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना का अंतर्संबंध बहुत समृद्ध रहा है। भारतवर्ष का कोई भी नागरिक होश संभालते ही अपने स्कूल की प्रार्थना सभा में वन्दे मातरम् गाता है और यह गीत उसके मन में जीवन पर्यंत राष्ट्रीय चेतना का बीज डाल देता हैं। एक तरह से यह गीत स्वाधीनता आंदोलन का प्रयाण गीत था जिसने पूरे हिंदुस्तानियों के मन में स्वाधीनता आंदोलन और स्वतंत्रता के उत्साह को भर दिया।

कुछ रचनाएं, रचनाकार अपने समय के बहुत महत्वपूर्ण हस्ताक्षर होते हैं। वैसे भी समाज में साहित्य का स्थान महत्वपूर्ण है। कितना भी कठिन समय क्यों ना रहा हो, साहित्य ने, रचनाकारों ने, कवियों ने इस समाज को रास्ता दिखाया है। स्वतंत्रता आंदोलन का समय भारतीय नागरिकों के लिए एक कठिन समय रहा था, जब उन्हें कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता था। ऐसे में कई रचनाकारों के गीतों ने हम में फिर से उत्साह का रंग भर दिया था। हमारा समय कितना भी कठिन क्यों न रहा हो रचनाकारों ने उसे अपने तरीके से आसान बनाने की हर संभव कोशिश की थी। उदाहरण के लिए बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का यह महत्वपूर्ण गीत–

वन्दे मातरम्
सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्
शस्यश्यामलम् मातरम्

वन्दे मातरम् गीत आज 150 वर्ष पूर्ण कर चुका है लेकिन इसकी महत्ता, प्रासंगिकता निरंतर बढ़ती ही जा रही है। यह ऐसा गीत है जिसको गाते समय हम पूरे भारतवासी एक मन हो जाते हैं। वह साहित्यकार कितना महान रहा है जिसने एक गीत के सहारे पूरे भारतवर्ष के नागरिकों को एक सूत्र में बांध दिया हो। हालांकि उस समय भी समाज कई स्तरों पर विभाजित भी था। ऐसे समय में इस गीत ने पूरे समाज को एक ही भावना में जोड़ा। कितनी आश्चर्य और सुखद बात है कि आज भी यह गीत भारत की सभी भाषाओं में सभी समुदायों में एक साथ सहज ही स्वीकार्य है। इसलिए यह गीत अपनी स्वाभाविकता में ही राष्ट्रीय एकता और संस्कृत तत्वों का एक अद्भुत उदाहरण बन गया।

कभी–कभी रचनाकारों की एक ही कृति बेहद महत्वपूर्ण हो जाती है। इसी क्रम में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की कालजयी कृति 'आनंदमठ' रही है जिसके अंतर्गत पहली बार हम सब ने मातृभूमि के प्रति सर्वश्रेष्ठ निछावर करने के महत्वपूर्ण जज्बे को सुना था। यह वह दौर था जब बंगाल का विभाजन चल रहा था। इसी दौरान वन्दे मातरम् महज गीत ही नहीं रहा बल्कि प्रतिरोध और उत्साह जगाने का एक बड़ा माध्यम बन गया। इस कृति ने सीधे–सीधे भारतवर्ष के सभी नागरिकों से अपना संबंध जोड़ लिया। 'वन्दे मातरम्' सिर्फ बंगाल या किसी खास भाषा तक सीमित नहीं रहा बल्कि इस गीत ने पूरे देश को अपने में समा लिया। इस गीत के साथ

ही साथ पूरा देश राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन के संग्राम में उठ खड़ा हुआ था। साहित्यकारों ने भी अपने–अपने तरीके से यह युद्ध लड़ा, इसकी तैयारी की।

वन्दे मातरम् के ही समानांतर पूरे देश में स्वाधीनता आंदोलन का साहित्य लिखा जाने लगा था। सुब्रमण्यम भारती के साथ–साथ माखनलाल चतुर्वेदी, रविंद्रनाथ टैगोर, मैथिली शरण गुप्त ऐसे अनेक नाम है जो एक साथ देशभक्ति की रचनाएं लिख रहे थे। साथ ही साथ स्वतंत्रता आंदोलन में सीधे–सीधे हिस्सा ले रहे थे।

स्वतंत्रता आंदोलन के समय का हिंदी साहित्य बहुत समृद्ध रहा है।

हिंदी साहित्य में खासतौर पर कविता में यह कालखंड छायावादी कविता के नाम से जाना जाता है। छायावादी कविता कल्पना प्रतीक और प्रकृति की कविता के साथ–साथ राष्ट्रीय सांस्कृतिक आंदोलन की भी कविता थी। वह पूरा कालखंड ही जैसे राष्ट्रीय जागरण का काव्य था।

शेरों की मांद में आया है आज स्यार
जागो फिर एक बार[1]

माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और सुभद्रा कुमारी चौहान जैसे रचनाकारों ने इसी वन्दे मातरम् के दर्शन को अपनी कविताओं में और ज्यादा स्थापित और प्रसारित किया।

आज वन्दे मातरम् की 150वीं वर्षगांठ मनाई जा रही है। 'आनंदमठ' उपन्यास बंगाल के सन्यासी विद्रोह (1763–1800) पर आधारित था जिसके अंतर्गत राष्ट्रवादी चेतना का उदय होता है 1896 में कोलकाता अधिवेशन में रविंद्र नाथ टैगोर सर्वप्रथम इस गीत को गाते हैं और इस गीत को राष्ट्रीय पहचान मिलती है। समस्त भारतीय भाषाओं का यह अद्भुत राष्ट्रीय गीत है। यह गीत हमें राष्ट्र प्रेम की भावना से भर देता है।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में स्वामी विवेकानंद की शिष्या भगिनी (सिस्टर) निवेदिता ने 'वंदे मातरम' के विचार और भावना को जन–जन तक पहुँचाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने इसे केवल एक नारा नहीं, बल्कि राष्ट्रीय चेतना और एकता का दिव्य मंत्र माना। उन्होंने कोलकाता स्थित अपने बालिका विद्यालय में प्रतिदिन की शुरुआत 'वंदे मातरम' गान के साथ

कराई। इस गीत के माध्यम से उन्होंने छोटी बच्चियों और युवतियों के मन में देशभक्ति व राष्ट्रवाद की अलख जगाई। वर्ष 1904 के आसपास, स्वदेशी आंदोलन के दौरान सिस्टर निवेदिता ने भारत के पहले राष्ट्रीय ध्वज का प्रारूप तैयार किया था। इस ऐतिहासिक झंडे के मध्य भाग में भगवान इंद्र के अस्त्र 'वज्र' (महर्षि दधीचि के त्याग का प्रतीक) और श्वेत कमल के साथ बंगाली भाषा में 'वंदे मातरम' लिखा हुआ था। श्री अरविंद और बिपिन चंद्र पाल के साथ मिलकर उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में इस महामंत्र की गूंज को और अधिक सशक्त बनाया।

मनुष्य की तमाम संवेदनाओं के बीच राष्ट्रीय चेतना भी बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अंततः हम समाज के ही होते हैं और समाज लगभग हर राष्ट्र को उसमें रहने वाले हर मनुष्य को प्रभावित करता है। इसे ही हम राष्ट्रीय चेतना कहते हैं, हम कहीं भी रहें अपने राष्ट्र के नाम पर हम एकजुट हो जाते हैं। यह राष्ट्रीय चेतना राष्ट्र की पहचान और उसकी मर्यादा से जुड़ी हुई होती है। राष्ट्रवादी रचनाकारों के अंतर्गत हम बहुत सारे रचनाकारों को ले सकते हैं जो सीधे–सीधे राष्ट्रीय चेतना से जुड़ते हैं और अपनी रचनाओं में भी राष्ट्रीय चेतना का चित्रांकन करते हैं। मैथिली शरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर, इकबाल और रविंद्र नाथ टैगोर भारतीय भाषाओं में बहुत सारे नाम हैं जिन्होंने राष्ट्रीय चेतना पर काम किया और अपनी रचनाओं में राष्ट्र प्रेम को सर्वोपरि रखते गए।

आजादी के आंदोलन में तथा राष्ट्रीय चेतना की भूमिका में सभी भारतीय भाषाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। हिंदी साहित्य की अगर बात करें तो यह स्वतंत्रता आंदोलन में बहुत मुखर और रचनात्मक रहा है अगर हिंदी कविता में माखनलाल चतुर्वेदी और सुभद्रा कुमारी चौहान की कविताएं ओजस्वी राष्ट्र प्रेम की कविताएं हैं तो दक्षिण से सुब्रमण्यम भारती की कविताएं भी देश प्रेम के ही गीत गाती हैं।

स्वाधीनता आंदोलन के समय हिंदी कविता अपने स्वाधीनता प्रेम को लेकर काफी सक्रिय हो उठी थी। कविताएं केवल प्रेम और सौंदर्य पर ही नहीं लिखी जाती थीं बल्कि जीवन के जिस भी क्षेत्र में पराधीनता और असमानता दिखाई पड़ती थी कविता उसे स्पर्श करती थी। राष्ट्रीय जागरण का देशव्यापी प्रभाव स्वाधीनता आंदोलन और कविता के संदर्भ में हम समझ सकते हैं। जाहिर सी बात है कविता सीधे–सीधे तो नहीं लेकिन स्पष्ट और अमूर्त तरीके से स्वाधीनता आंदोलन की कहानी कहने लगी थी, वैसे भी कविता की सार्थकता रोजनामचा होने में तो है नहीं जो सीधे–सीधे किसी बात को लिखें। कविता एक संवेदनात्मक प्रतिक्रिया के तौर पर घटित होती है फिर वह किसी भी काल परिस्थितियों की क्यों ना हो।

वैसे तो भारत का प्रथम स्वाधीनता आंदोलन 1857 वाले विद्रोह को माना जाता है लेकिन तब तक वह आम जनमानस का आंदोलन नहीं था। लगभग तीन दशक बाद जब 1885 में पहली बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का गठन हुआ तो उसके मंचों से आजादी की तो नहीं, लेकिन भारतीयों के लिए सुविधाओं की मांग उठनी शुरू हुई।

अंग्रेजी राज्य में भारत की दुर्दशा और आजादी की बात राजनीतिक मंचों से भी पहले ''भारत भारती'' नामक अपने काव्य में पहली बार बहुत व्यवस्थित ढंग से द्विवेदी युग के कवि श्री मैथिली शरण गुप्त ने उठाई–

भू–लोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला स्थल कहाँ ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहाँ।
संपूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है?
उसका कि जो ऋषि भूमि है, वह कौन? भारतवर्ष है।[2]

हिंदी का प्रथम राष्ट्रीय कवि हम मैथिलीशरण गुप्त को मानते हैं। उनकी प्रसिद्ध देशभक्तिपूर्ण रचना "भारत भारती" को यह गौरव प्राप्त था। स्वयं महात्मा गांधी उन्हें राष्ट्रकवि की पदवी प्रदान करते हैं। हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना की एक लंबी परंपरा रही है जिसके अंतर्गत आदिकालीन कविता से लेकर आधुनिक काल और अब तक राष्ट्रकवि अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते चले आ रहे हैं।

अपनी मातृभूमि के प्रति हर व्यक्ति को लगाव होता है। जन्म भूमि को स्वर्ग से भी बड़ा दर्जा दिया गया है। स्वाधीनता संग्राम के दौरान वन्दे मातरम् हमारे लिए प्रेरणा स्रोत बना और महत्वपूर्ण रूप में राष्ट्रीय जागरण का एक मूल मंत्र रहा है।

नीलांबर परिधान हरित पट पर सुंदर है,
सूर्य–चंद्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है।
नदियां प्रेम–प्रवाह फूल तारे मंडन हैं,
बंदी जन खग–वृन्द शेष फन सिंहासन है।[3]

हिंदी साहित्य में माखनलाल चतुर्वेदी एक ऐसा नाम है जिनको "भारतीय आत्मा" के नाम से जाना जाता था। वे हिंदी साहित्य के एक प्रमुख राष्ट्रीय कवि और पत्रकार भी थे, उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रूप से भागीदारी की और भारतीय जनमानस में स्वतंत्रता की भावना को बहुत मजबूत किया। हिंदी की राष्ट्रीय चेतना माखनलाल चतुर्वेदी की कविताओं से बहुत समृद्ध हो जाती है। 'हिमतरंगिणी', 'हिम किरीटिनी' जैसी कृतियों में उन्होंने ओज और माधुर्य की कविताओं को प्रस्तुत किया है जिसको सुनकर वीरता का संचार होता है। "पुष्प की अभिलाषा" माखनलाल चतुर्वेदी जी की अमर रचना है। इस कविता को माखनलाल चतुर्वेदी जी ने बिलासपुर सेंट्रल जेल में लिखा था जिससे हम आज ही प्रेरणा लेते हैं।

चाह नहीं, मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ
चाह नहीं, प्रेमी–माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ[4]

सुभद्रा कुमारी चौहान भी राष्ट्रीय आंदोलन से सीधे तौर पर जुड़ी थीं। साथ ही अपनी रचनाओं में तो वह राष्ट्र प्रेम को ही प्रमुख स्थान देती थी। उनकी प्रसिद्ध कविता झांसी की रानी है जिसे सुनकर आज भी हमारे अंदर जोश उत्पन्न हो जाता है।

वैसे तो हिंदी साहित्य स्वाधीनता आंदोलन के समय में पूरी तरह से ओतप्रोत था लेकिन कविताओं में सबसे मुखर अभिव्यक्ति हुई है। सुमित्रानंदन पंत प्रकृति के सुकुमार कवि माने जाते हैं, वे भी प्रकृति प्रेम के साथ–साथ स्वतंत्रता आंदोलन और भारत माता पर भी कविता लिखते हैं। भारत माता कविता में वह केवल भारत माता की गाथा नहीं गाते हैं बल्कि पूरे भारतवर्ष का चित्र खींचते हैं उन्हें सभी भारतवासियों की चिंता है

भारतमाता
ग्रामवासिनी।।
खेतों में फैला है श्यामल
धूल भरा मैला सा आँचल
गंगा यमुना में आँसू जल,
मिट्टी की प्रतिमा
उदासिनी![5]

प्रसाद जी ने अपनी कविताओं के साथ–साथ अपने नाटकों में भी राष्ट्रीय चेतना का संदेश दिया है चाहे वह 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' जैसी कविता हो या "हिमाद्रि तुंगश्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती" जैसा प्राण गीत हो, हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय कविताओं में पराधीनता से लड़ने के उपाय बताए गए हैं। हम कह सकते हैं कि राष्ट्रीय आंदोलन में जहां लाखों योद्धाओं ने अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया वही हिंदी साहित्य के कवि भी बिल्कुल भी पीछे नहीं थे उन्होंने अपनी कलम से भी राष्ट्रीय आंदोलन की लड़ाई लड़ी।

प्रसाद जी ने अपने नाटकों में देशभक्ति के उच्चतम स्वरूप दिखाएं हैं। कथा सम्राट प्रेमचंद 'सोजे वतन' जैसी रचना लिखते हैं जिसे अंग्रेजी सरकार द्वारा प्रतिबंधित और जब्त कर लिया जाता है। रचनाकार हमेशा अपने समय की आवाज को अपनी रचनाओं में चित्रित करते हैं।

रामधारी सिंह दिनकर की कविताएं भी राष्ट्रीय चेतना में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, उन्होंने अपनी ओजस्विता से हिंदी कविता को बहुत समृद्ध किया है।

दो राह, समय के रथ का घर्घर–नाद सुनो,
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।[6]

दिनकर भी वही गीत गाते हैं जो बंकिमचंद्र गाते हैं, दोनों के स्वर, तरीके, भाषा अलग हो सकती है लेकिन यह सभी रचनाकार भारत माता के ही कल्याण में अपने जीवन को उत्सर्ग भी कर रहे हैं।

राष्ट्रीय चेतना में स्वराज एक बड़ा शब्द बनकर उभरा था। स्वराज की कामना हर देशभक्त का पहला सपना था। कौमी तराना से लेकर राष्ट्रीय गीत लिखे जा रहे थे। श्रीधर पाठक ने भी हिंद वंदना के नाम से एक कौमी तराना लिखा था जो प्रभात फेरी में भी गाया जाता था। रचनाकारों की लेखनी ने वाकई प्रबल संबल प्रदान किया। कई ऐसे भी रचनाकार थे जिनकी रचनाओं पर प्रतिबंध भी लगा और उन रचनाकारों को भी कैद कर लिया गया लेकिन फिर भी हिंदी की राष्ट्रीय चेतना आगे बढ़ती ही गई। सोहनलाल द्विवेदी की कविताओं में भी राष्ट्रीय चेतना का स्वर बहुत प्रबल दिखाई पड़ता है जिसे सुनकर अपना सर्वस्व समर्पण करने की होड़ सी मच जाती है।

वंदना के इन स्वरों में, एक स्वर मेरा मिला लो।
वंदिनी माँ को न भूलो, राग में जब मत्त झूलो,
अर्चना के रत्नकण में, एक कण मेरा मिला लो।
जब हृदय का तार बोले श्रृंखला के बंद खोले,
हो जहाँ बलि शीश अगणित, एक सिर मेरा मिला लो।[7]

लगभग हर कालखंड में देश भक्ति और स्वाधीन चेतना एक गहरे मूल्य के तौर पर विद्यमान रही है। हिंदी साहित्य के प्रारंभिक कालखंड का साहित्य जिसे वीरगाथा काल या चारण युग भी कहा जाता है, वहां भी राष्ट्रीय चेतना के तत्व दिखाई पड़ते हैं। भक्ति कालीन कविता जिसे हम सिर्फ भक्ति तक सीमित कर देते हैं उस कालखंड में भी भक्त कवियों ने स्वाधीन होने को, मनुष्य होने पर ज्यादा जोर दिया है। वहां तो मानुष प्रेम को अत्यधिक महत्व दिया गया और यह मानव प्रेम कहीं ना कहीं राष्ट्र की, व्यक्ति की स्वाधीन चेतना से जुड़ा हुआ मामला होता है। रसखान को तो मैं मध्यकाल का पहला राष्ट्र प्रेमी कवि मानती हूँ जो सिर्फ और सिर्फ भारत भूमि में ही जन्म लेना चाहता है। उसे कुछ और की चाहना नहीं है। वह किसी भी रूप में यहां तक कि पशु, पक्षी या पत्थर के रूप में भी भारतवर्ष, अपनी जन्म भूमि को दोबारा पाना चाहता है। सच्चे अर्थों में यह स्वाधीन चेतना या राष्ट्रीय प्रेम की चेतना की कविता कहलाएगी।

अंततः कहा जा सकता है कि वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना का मूल रंग एक ही है। दोनों जगह राष्ट्रीयता का ही संदर्भ मुख्य है। राष्ट्रीय चेतना या स्वाधीन चेतना जरूरी नहीं कि किसी एक पंक्ति में या किसी एक नारे में दिखाई पड़े। देखना यह होता है कि उस समाज के मूल साहित्य में राष्ट्रीय चेतना कहां तक व्याप्त है। इस आधार पर अगर देखे तो वन्दे मातरम् कविता निश्चित तौर पर बड़े फलक तक जाती है। आज भी वन्दे मातरम् गीत हमारे लिए महत्वपूर्ण स्थान रखता है। दुनिया का कोई भी साहित्य हमें चेतना संपन्न बनाता है फिर वह स्वाधीन राष्ट्रीय चेतना ही क्यों ना हो। हिंदी साहित्य का संसार अपनी राष्ट्रीय चेतना को स्थापित करने में मूर्त और अमूर्त रूप से बहुत सफल रहा है। आज के वर्तमान समय में वन्दे मातरम् और हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय चेतना को एक साथ स्मरण करना अपने आप में एक गौरवपूर्ण संवेदना है। हमारा साहित्य आने वाले दिनों में इन गीतों की राष्ट्रीय चेतना से समृद्ध होता रहेगा।

संदर्भ सूची

1. रामविलास शर्मा, रागविराग राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
2. मैथिली शरण गुप्त, भारत भारती
3. मैथिलीशरण गुप्त मातृभूमि
4. माखनलाल चतुर्वेदी पुष्प की अभिलाषा
5. सुमित्रानंदन पंत, 'भारत माता' कविता
6. सिंहासन खाली करो कि जनता आती है, रामधारी सिंह दिनकर, कविता कोष
7. सोहनलाल द्विवेदी, चर्चित राष्ट्रीय गीत भाग 2 संपादक नरेश चंद्र चतुर्वेदी

20 फरवरी, 2026 को अगरतला (त्रिपुरा) में आयोजित पूर्व, पूर्वोत्तर एवं उत्तरी क्षेत्रों के संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर दीप प्रज्वलित करते हुए माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी एवं अन्य मंचासीन अतिथिगण

20 फरवरी, 2026 को अगरतला (त्रिपुरा) में आयोजित पूर्व, पूर्वोत्तर एवं उत्तरी क्षेत्रों के संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन में पुरस्कार विजेताओं को शील्ड प्रदान करते हुए माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी एवं अन्य मंचासीन अतिथिगण

वन्दे मातरम्

वन्दे मातरम्, वन्दे मातरम्।
सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्,
शस्यश्यामलाम् मातरम्।
वन्दे मातरम्।।

शुभ्रज्योत्स्ना पुलकितयामिनीम्,
फुल्लकुसुमित द्रुमदलशोभिनीम्,
सुहासिनीम् सुमधुरभाषिणीम्,
सुखदाम् वरदाम् मातरम्।
वन्दे मातरम्।।

कोटि-कोटि कण्ठ कल-कल निनाद कराले,
कोटि-कोटि भुजैर्धृत खरकरवाले,
के बॉले माँ तुमि अबले,
बहुबलधारिणीं नमामि तारिणीम्,
रिपुदलवारिणीं मातरम्।
वन्दे मातरम्।।

तुमि विद्या तुमि धर्म, तुमि हृदि तुमि मर्म,
त्वम् हि प्राणाः शरीरे, बाहुते तुमि माँ शक्ति,
हृदये तुमि माँ भक्ति, तोमारेइ प्रतिमा गड़ि मन्दिरे-मन्दिरे।
वन्दे मातरम्।।

त्वम् हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी,
कमला कमलदलविहारिणी,
वाणी विद्यादायिनी, नमामि त्वाम्
नमामि कमलाम् अमलाम् अतुलाम्,
सुजलां सुफलां मातरम्।
वन्दे मातरम्।।

श्यामलाम् सरलाम् सुस्मिताम् भूषिताम्,
धरणीम् भरणीम् मातरम्।
वन्दे मातरम्, वन्दे मातरम्।।

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, एन डी सी सी -II भवन, नई दिल्ली-110001
के लिए इन्दु कार्ड एण्ड ग्राफिक्स, चावड़ी बाजार, दिल्ली द्वारा मुद्रित